ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -**शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१ 12 07 1962 हे मानव! यथार्थ आस्तिक बन

जीते रहो, मुनिवरोंआज कैसा मधुर समय आया !, जिस सौन्दर्य समय में मधुर वेद पाठ कर रहे थे। प्रातःकाल का समय तो बेटाहमें किसी किसी काल में प्राप्त होता ! है। आज प्रातःकाल में मधु शान्ति का पाठ कर रहे थे और प्रभु से याचना कर रहे थे आप मधु हैं। आपका बनाया हुआ संसार !कि हे विष्णुभी मधु है, रहे हम प्राणी जो जीव भाव बने बैठे हैं, हमारे हृदयों में नाना त्रुटियां हैं, चिन्ताएं हैं। हे विधाताआप ! तो विष्णु हैं, शेष नाग पर शयन करने वाले हैं। हे भगवान्हमारा वह कौन सा काल ! आए गा। जब हम भी शेषनाग शैय्या पर शयन करने वाले बनेंगे। हम मानव तो अवश्य हैं, परन्तु इतने अभागे नहीं, यदि अभागे होते तो आपके नियम के अनुकूल हमें यह मानव योनि प्राप्त न होती।

हमारा हृदय तो चाहता है कि हम शान्तिदायक बन जाएं, शेषनाग पर स्थित हो जाएं, इससे भी ऊँचा स्थान हो जाएं, परन्तु क्या करें, यह स्थिति तो उसी काल में आएगी जब विधाताआपके बनाएं हुए सर्वज्ञ पदार्थ !, यह पांच भौतिक तन्मात्राएं, हमारे शरीर में शान्तिदायक बन करके कार्य करेंगी । परन्तु क्या करें, इतने महान दुर्भागी बने बैठे हैं। विधातायह आपका तो कोई दोष नहीं !, हमारे कर्मो का ही दोष है, जो आपके आँगन में नहीं आ रहे हैं। अभागे इसलिए हैं, कि आपके नियन्त्रण में कार्य नहीं करते। हे विधाताजब तक आपकी करूणा न होगी !, दया न होगी तब तक हम कदापि भी आपके आँगन में न आ सकेंगे। हे विधाताहमारे हृदय में शान्ति उत्पन्न ! करो, आज हम नास्तिक बनते जा रहे हैं, नास्तिक से आस्तिक बनाओ।

आज हम क्या करें, व्याकुल ही होना पड़ रहा है। हम तो अभागे नहीं थे, परन्तु क्या करें, आपके इस प्राकृतिक विचित्र खेल ने, हमें इतना तुच्छ बना दिया है। जब आपकी करूणा हो जाती है, ब्रह्मचारी बन जाते हैं, हमारा जीवन उच्च विलक्षण बन जाता है। इसलिए हे विधाता दया !करो, हमारी आत्मा, हमारा अन्तःकरण सब कुछ आपके आधीन है। प्रकृति के यह नाना आवेश, नाना चमत्कार हमारे समक्ष आते हैं, तो हम इतने तुच्छ बन जाते हैं, आत्मा में इतनी दुर्बलता आ जाती है, कि आपसे

विपरीत चलने लगते हैं, यह सूक्ष्मता तो है हममें। जब विधाता आपकी करूणा हो जाएगी, तो महान बन जाएंगे।

याचना

आज मानव इसी विचार पर न बैठा रहे, कि परमात्मा की कृपा होंगी, तो अवश्य होगी। परन्तु परमात्मा से ही नित्य प्रति प्रार्थना करते रहो, कि हे विधाताआपका जो ! यह वायु मण्डल है, सूर्य है, चन्द्र मण्डल है और नाना लोक है, सबमें शान्ति हो, मार्धुता हो, जिससे भगवन्हम आपके नियन्त्रण में !, आपके अनुकूल कार्य कर सके। प्रातःकाल का सूर्य उदय हो रहा है। तीनों लोकों को प्रकाशमान कर रहा है, कितना उदार है, कितना पवित्र है। उसकी कान्ति में अपनी कान्ति लगा लो। जैसे बुद्धिमान ब्राह्मण त्रिविद्या का प्रकाश देता है, इसी प्रकार यह सूर्य भी त्रिविद्या का प्रकाश देता है, जिससे बुद्धि में भी शान्ति, हृदय में भी शान्ति, मन में भी शान्ति, सर्वत्र शान्ति ही शान्ति प्राप्त हो जाती है। जिस मानव के हृदय में शान्ति का भाव आ गया, उसका क्यों न उत्थान होगा, क्यों न वह परमात्मा के आँगन में, माता दुर्गे की गोद में, या गायत्री माता की गोद में चला जाएगा।

हे महान सूर्यतू शान्तिदायक है !, तू हमें प्रकाश देने वाला है, प्रातः से सायं काल तक तपता है और इस संसार को तपायमान कर देता है। हे विधाताऐसी तपस न ! दे, जिससे अकाल पड़ जाएं, ऐसा विराट रूप न धर, जिससे संसार नष्ट हो जाएं। आप तो देव है, प्रभु ने सविता सत्ता दी है, उसका सदुपयोग करो, आपके महान तेज में उषा किरणों में हमारा जीवन ऐसा महान बन जाऐगा, कि जैसे आप तपायमान हो रहे हो, ऐसे ही हम इस संसार को तपायमान कर सकें, जब तक हममें आपके गुण न आएंगे, हम किसी मानव को तपायमान न कर सकेंगे, यही आपकी मधुरता है, जिसको प्राप्त हो जाती है, वह इस लोक और परलोक दोनों में महान बन जाते है। जिस मानव के हृदय में शान्ति नहीं, जो नाना प्रकार के संकल्प विकल्प में लगा रहता है, वह मानव यहाँ भी दुःखी और परलोक जाने पर भी दुखी होता है। जिस पर दया हो गई, वह मानव शक्ति को प्राप्त हो जाता है।

हे विधाताआपका यह महान वायु भी हमारे लिए शान्तिदायक हो। जब हमारा ! आत्मा इस शरीर को त्याग कर, वायु मराडल में जाएं, तो शान्तिदायक वायु हमें आकर्षण कर लेवे, हमें शान्ति पाठ पढ़ावे, जब शान्ति पाठ हमारे समक्ष आएंगा, तो उसे पाकर के हम प्राणों में लय हो जाएंगे, यह प्राण हमारे जीवन को उत्सव देने वाला है।

हे देववेदों ने आपको मित्र कहा है !हे सखा !, जो आपसे मित्रता कर लेता है, उसे संसार में किसी मानव को मित्र बनाने की आवश्यकता नहीं, आप ऐसे मित्र हैं, कि हमारे हृदय की सब इच्छाएं पूर्ण होती रहती है। परन्तु प्रभु तो अनन्त है, हम अनन्त नहीं। प्रभु को मित्र कौन बनाएगा? मुनिवरोंआज मानव का यह केवल सीमित ! विचार है। अरे, सीमित विचार न बनाओ। यह आत्मा भी तो अनन्त है, जैसा परमात्मा अनन्त है। आत्मा भी तो उसके प्रवाह में जाकर अनन्त बन जाता है। जब उसको मित्र बना लेता है, तो उसके गुण उसमें आ जाते हैं। जब मित्र के गुण आ जाते है तो जैसा मित्र अनन्त है, वैसा ही मित्र भाव भी अनन्त बन जाता है। उसको वही मित्र बनाएगाजो महान इस प्रकृति के आवेशों को अपने , स्वार्थो को और अपनी क्लिष्टताओं को त्याग देता है, प्रभु में महान श्रद्धा हो जाती है, कि प्रभु मेरा मित्र है।

आज मानव यह विचार लगाए बैठा है कि प्रभु को कौन मित्र बनाएगा। अरे, प्रभु को मित्र बनाएगा, जो मित्र के योग्य है। अरे, मित्र के योग्य तो यह आत्मा है, आज नाना प्रकार के प्रश्न पाते हैं, परन्तु सब का उत्तर केवल यह है कि प्रभु ऐसा महान है, पवित्र मित्र है, कि उसको महान मित्र विचारने से मानव की कान्ति, मानव का विश्वास, ऐसा विचित्र बन जाएगा, कि यह संसार उसके लिए तुच्छ बन जाएगा। यह आत्मा मधुर बन करके, उस प्रभु के आँगन में, उस गायत्री माता की गोद में चला जाएगा, जहाँ जाकर के कोई दुर्गुण नहीं रहता। ऐसा पवित्र आत्मा बन जाता है, कि वह प्रभु आपसे आप अपने आँगन में धारण कर लेता है। ,

आज मानव नास्तिकता को क्यों प्राप्त हो जाता है? उसका प्रभु में विश्वास क्यों नहीं होता?

नास्तिकता क्यों

मुनिवरोंवह इसलिए नहीं होता !, क्योंकि वह भौतिकता में लगा हुआ है। प्रकृति के आवेशों में आ करके, उसकी बुद्धि नास्तिक बन गई हैं। उसने अपने जीवन को समाप्त कर लिया है। मानव ने यह नहीं जाना कि तू नास्तिक हो गया है। नास्तिक क्या पदार्थ है? नास्तिकता के कौन से तत्त्व तेरे द्वारा है? तेरा हृदय तो नास्तिक नहीं हुआ है, तेरा आत्मा तो उस परमात्मा का पुत्र बना बैठा है, आत्मा तो नास्तिक नहीं। अरे, तेरा मन का संकल्प इतना तुच्छ बन गया है, कि संसार के ऐसे ऐसे तत्त्वों को बटोर कर, तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर देता है, जिसके द्वारा मन का संकल्प ऐसा बन गया है कि भौतिकता में तूने कभी परलोक नहीं विचारा है। तूने अपना जीवन यहीं तक सीमित बना लिया है। इस सृष्टि को यहीं तक सीमित मान लिया है। यह मान करके तेरे हृदय में नास्तिकता आ गई है। अरे, यह नास्तिकता किस काल तक रहेगी? उस काल तक रहेगी, जब तक इन मन के अवेशों में रहोगे। जब मन से इन प्रकृति के आवेशों को पृथक कर दोगे, उसी काल में आस्तिकता आ जाएगी। नास्तिकता वाला पदार्थ तो मन है। आत्मा तो अपने पिता परमात्मा का पुत्र है उसमें तो नास्तिकता आती ही नहीं।

मन का सदुपयोग

मुनिवरोंआगे प्रश्न आता है !, कि यह आत्मा हृदय में रहता है। इसी की ही रश्मियां मन को चला रही हैं। मन तो जड़ पदार्थ है। यदि जड़ को नास्तिकता आ गई, तो कोई बात नहीं, अरे, जड़ को तो नास्तिकता आती ही नहीं। तो क्या यह विचारें, कि आत्मा को नास्तिकता, आ गई? नही नही, आत्मा को नास्तिकता नही आती । बेटा ! जैसे सूर्य का प्रकाश आ रहा है, हम सूर्य के प्रकाश का दुरूपयोग करे या सदुपयोग करें इसमें सूर्य का कोई दोष नहीं इसमें हमारे संस्कारों का दोष हैं, सूर्य उदय होने से पूर्व अपने स्थान से पृथक हो, नित्य कर्म स्नान आदि से निवृत्त हो करके, उस सूर्य से, उस आदित्य से उस महान ब्रह्मचर्यता को उस बुद्धिदायक तेज को प्राप्त करते है, तो यह है उसका सदुपयोग। और यदि सूर्य उदय से पूर्व हम अपने स्थानों से पृथक

नहीं होते, निद्रा में रहते हैं, नेत्रों का सम्बन्ध सूर्य की किरणों से नहीं करते, बुद्धिदायक तेज को धारण नहीं करते, तो यह है इसका दुरूपयोग। इसमें सूर्य का कोई दोष नहीं, इसमें हमारे आलस्य और प्रकृति के आवेशों का दोष है। इसीलिए मुनिवरोयह जो आत्मा है !, यह तो महान है, यह तो रश्मियां देने वाला है। परन्तु हमारे अन्तःकरण में ऐसे संस्कार जमे हुए हैं जिन संस्कारों से हम आत्मा के प्रकाश का दुरूपयोग करते हैं। अपने इन तुच्छ संस्कारों के अनुकूल स्वार्थ के वशीभूत हमारा आत्मा कष्ट को प्राप्त हो जाता है। आज हमें आत्मा को ऊँचा बनाना है। अपने मन को इन प्राकृतिक आवेशों से पृथक प्रभु चिन्तन में लगाना है, नास्तिकता को त्यागना है।

मुनिवरोंजब मानव में नास्तिकता आ जाती है तो उसकी जीवन नौका !, उस नौका की तरह हो जाती है जो गंगा में जा रही है, जो न इस पार पहुँच पा रही है, और न उस पार पहुँच रही है। और मध्य में ही डूबकर समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार जिस मानव में नास्तिकता आ गई है, वह न तो इतना क्लिष्ट बना, न दुराचारी बना, परन्तु भौतिकता में पहुँच गया है। और न वह इतना उच्च है, कि वह आत्मा की राश्मियों को अपने आँगन में धारण करने वाला हो। मध्यम में पहुँच गया है, और नास्तिकता आ गई। अब तेरा अन्तिम काल आ गया हैं, अब यह तेरी जीवन नौका डूबने वाली है। अगले जन्मों में वह योनि प्राप्त होगी, जहाँ परमात्मा के नाम लेने से तो गया, आत्मा का प्रकाश भी तेरे समक्ष न आवेगा।

सबसे बड़ा नास्तिक

मुनिवरोंनास्तिक किसको कहते हैं !?आज मानव कहता है कि नास्तिक उसको कहते हैं, जो परमात्मा का चिन्तन नहीं करता है। हम उसको नास्तिक नहीं कहा करते। अरे, नास्तिक उसको कहते हैं, जो अपने कंठ से ऊपर ऊपर परमात्मा का चिन्तन कर रहा है और हृदय में महान क्लिष्टता है। अन्तःकरण में ऐसे तुच्छ संस्कार, कि कोई कन्या हमारे नेत्रों के समक्ष आई, तो हृदय से यह नहीं विचारा कि यह कन्या मेरी माता है, मेरी भौजाई है। परन्तु क्लिष्ट भावनाओं से उसे पत्नी के रूप में विचारता है,

अऔर चाहता है कि यह मेरे द्वारा आ जाएं। दूसरों का द्रव्य मेरे द्वारा आ जाएं। दूसरों की निन्दा करता रहूँ, और प्रभु का चिन्तन भी करता रहूँ वह मुनिवरोंसबसे बड़ा ! नास्तिक है।

ऐसे नास्तिकों के लिए परमात्मा से प्रार्थना किया करते है, कि हे प्रभुऐसे नास्तिकों ! से हमें बचा, ऐसा नास्तिक नहीं चाहिए, जो आपका चिन्तन भी कर रहा है, और आपकी अमृती आड़ में महान पाप करने वाला हो। ऐसे महान नास्तिक से विधाता ! हमें बचाना। इस नास्तिक से तो वहीं नास्तिक सुन्दर है, जो यह कह रहा है, कि परमात्मा नहीं है, सृष्टि प्रारम्भ हुई है और आप ही बन गई है। अरे, यह वाक्य उन महान पापी नास्तिकों से जो परमात्मा के आँगन में आकर के अपना महान स्वार्थ पूर्ण कर रहे हैंकरोड़ों गुणे सुन्दर माने गएं हैं। परन्तु यह नास्तिक भी सुन्दर नहीं ,, जो यह कहते हैं, परमात्मा को न मानकर मानव कहाँ जाएगा, कौन से लोक में जाएगा, माता पिता के मधु भावों से यह हमारा गृह आश्रम चल रहा है, यह जो संसार है, यह भी परमात्मा का बनाया हुआ है, जड़ पदार्थ जैसे अग्नि है, जल है, वायु है, पृथ्वी है इनको मिलाने के लिए कोई न कोई सत्ता अवश्य होती है, जब तक मानव ने यह नहीं जाना, तब तक यह आस्तिकता नहीं जानी।

मुनिवरोंआज हमारा मधुर वेद क्या कह रहा है। परमात्मा का चिन्तन हृदय से ! करो। हृदय पवित्र हो जाएगा। आज तुम परमात्मा का चिन्तन कर रहे हो परन्तु व्यवहार तुच्छ बन गएं हैं। दूसरे जीवों को भक्षण करते हो, यह तुम्हारी नास्तिकता है, यह आस्तिकता नहीं। हमारे आचार्यों ने तो कहा है कि ऐसे नास्तिक तो संसार में एक प्रकार के भार हुआ करते हैं। आज पृथ्वी पर भार नहीं बनना है। अपने जीवन को हर प्रकार से ऊँचा बनाना है। अपने आहार व्यवहारों को ऊँचा बनाना है। इस विषय में महानन्द जी सायं काल को ऊँचा व्याख्यान देंगे। हम तो कल उच्चारण कर चुके हैं। हमारा तो मधु पाठ का व्याख्यान चल रहा है।

मुनिवरोंआज वेद पाठ के पश्चात् प् !रभु की वह प्रार्थना की, जिसे पूर्व के ऋषि मण्डल विराजमान होकर किया करते थे। प्रभु से कहा करते थे कि विधाताआपने !

कैसी बसन्त ऋतु बनाई, जिसमें मानव का आत्मा उत्सव मनाता है, हर काल में जब ऋतु परिवर्तन होता है, तो मानव का हृदय उत्सव मनाता है। परन्तु जो मानव पापी होता है, ब्रह्मचर्य सत्ता को नष्ट करने वाला होता है, उसके हृदय में इतने तुच्छ संस्कार मल विक्षेप आवरण आ जाते हैं, कि जब उसका ऋतु काल आता है, तो कहता है कि हे परमात्मन् मेरे जीवन को समाप्त कर दो !। परन्तु ऋषि मण्डल कहता है, कि प्रत्येक ऋतु में हमें उत्सव मिलता रहे। प्रत्येक ऋतु में उस मानव का हृदय नीरोग, स्वस्थ रहता है, जो अपने ब्रह्मचर्य को ऊँचा बनाता है, उसकी रक्षा करता है, वह ऋषिता को प्राप्त हो जाता है। हम इस महान प्रार्थना का अधिक आदेश न दे सके, अब तो हम अपने आदेशों को समाप्त करने वाले हैं क्योंकि आज प्रभु की बहुत याचना की है।

मुनिवरोंअन्त में वेद ने प्रभु को नेति नेति कहा हैं आज हमें विचारना है कि प्रभु को ! नेति क्यों कहते हैं? वेद नाम प्रकाश का है, जब यह प्रकाश हमारे में प्रविष्ट हो जाता है, तो यह आत्मा उस प्रकाश को पा करके उस महान नेति प्रकाश में लय हो जाता हैं। प्रभु वह प्रकाश है, जो इन वेदों का प्रकाश करने वाला है। जो प्रकाश को भी प्रकाशित करने वाला हो, वह प्रकाश और भी महान माना जाएगा। जैसे एक गृह में विद्युत प्रकाश दे रही है, वह विद्युत कहाँ से आई? वह महान सूर्य, चन्द्रमा, वायु, जल, इन सब ही के संयोग से प्रकाशित हुई और वैज्ञानिकों ने उसे अपने अधिकार में लिया, गृह से प्रकाश होने लगा। कोई मानव कह रहा है कि विद्युत महान है परन्तु वह परमात्मा इतना महान है, जो सूर्य, चन्द्रमा, वायु, जल इन सबको अपनी सविता देकर के इस विद्युत को उत्पन्न किया है। तो मुनिवरोंजो मानव जीवन के ! लिए वेद विद्या प्रकाशित करने वाला हो, वह महान है, वह प्रकाश का भी प्रकाश है, इसलिए वेद ने नेति नेति कहा है। क्योंकि वेद के प्रकाश को अच्छी प्रकार पाने के पश्चात्, उसे अपने में धारण करने वाला बन जाता है। अहायह प्रकाश किसके लिए ! दिया है? आत्मा के लिए दिया है। और कहा है कि हे आत्मातू संसार में चल ! और ऊँचा कार्य कर। तू प्रकाशवान बन। जब तू महान प्रकाशवान बन जाएगा, तू मेरे

में लय हो जाएगा और मेरे में प्राप्त हो करके, संसार के नाना दुःखों से पृथक हो जाएगा। जैसे मैं शेषनाग की शैय्या पर स्थिर हो रहा हूँतू भी शेष नाग !हे आत्मा , की शैय्या स्थिर हो जाएगा और लक्ष्मी तेरे चरणों में ओत प्रोत हो जाएगी।

मुनिवरोंयह शेष नाग हमारा मन है !, जिसमें यह काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि हमें डसने वाले विष हैं, इन सबकी नेती बना करके, सबका सब शेष बन करके मन में लय हो जाएगा और आत्मा के अनुकूल कार्य करने लगेगा। अर्थात् जब मन अपने इन काम, क्रोध, मद, लाभ मोह आदि पर विजय पा लेता है और आत्मा के आधीन कार्य करने लगता है तो वही आत्मा का शेष नाम की शैय्या पर स्थिर होना कहा जाता है।

कैसा यह प्रातःकाल का मधु आदेश, जो आज कंठस्थ आया। बेटामधु पाठ तो न ! किसी द्वितीय काल में आदेश !जाने क्या क्या कह रहा था। समय मिलेगा तो बेटा देंगे । आज तो अब हमारा आदेश समाप्त होने जा रहा है। आज मानव को विचारना चाहिए, अपने हृदय को आस्तिक बनाना चाहिए। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या को अपने हृदय से प्रभु का चिन्तन करना चाहिए।

मानव का वास्तविक सौन्दर्य

आज का मानव, आज की माताएं, प्रतिदिन अपनी त्वचा को सजाने का कार्य करती रहती है। परन्तु यह नहीं विचारा, कि यह जो तेरी त्वचा है, यह तो महान पृथ्वी से बनी है, और पृथ्वी में लय हो जाएगी। परन्तु हे माता !तेरी सुन्दरता वह है, जब तेरे कंठ में अस्तिकता होगी। तेरे हृदय में उदारता होगी। तेरा मन तेरे वश में होगा। जब तक तेरा मन प्रत्येक स्तरों से सजा हुआ न होगा, तब तक हे मातातेरी सुन्दरता ! त्वचा को सजाने से कुछ नहीं बनेगा। अरे !का कुछ नहीं बनेगा। हे मानव, जब तक हमारा मन, हमारा श्वास, प्रश्वास ओ३म् के नाम से बिंधा हुआ ही नहीं, तो बेटा ! हमारा त्वचा का क्या सजा हुआ है। और क्या हमारा शरीर सजा हुआ है, हम तो भौतिक तत्त्वों को, पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले तत्त्वों को, सुन्दरता माने बैठे हैं। अरे, मानव यह तेरी सुन्दरता !नहीं, तेरा वास्तविक सौन्दर्य तो वह है, जब इन प्राणों की

डोरी बनाई जाएगी और ओ३म् के मनके बनाएं जाएंगे। यह मनउन मनकों से सजा , हुआ होगा, और श्वास प्रश्वास ओ३म् से विधा हुआ होगा। यह मन उन मनकों में लय होगा उस समय मानव तुम्हारा कंठ, तुम्हारा सौन्दर्य, तुम्हारा तेज, तुम्हारा ब्रह्मचर्य उस मन को प्राप्त होकर के आत्मा को प्राप्त हो जाएगा। और आत्मा परमात्मा को प्राप्त हो जाएगा। यह है मानव का वास्तविक सौन्दर्य।

मुनिवरोंअब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है !, हमारे आदेशों का मुख्य अभिप्राय यही था, कि मानव को उच्च बनने के लिए प्रभु की याचना करनी चाहिए, और माता गायत्री की गोद में जाना चाहिए। यह हमारा आदेश था। यह प्रातः काल था। प्रातः काल में तो बेटाकुछ नहीं किया। समय था !, जब था, अब क्या है। वह काल ऐसा था, जिस काल में, ऋषियों का समूह, ऋषियों का मण्डल, विराजमान होता था और जब जटा पाठ में, मधु पाठ किया जाता था, तो बेटामार्ग में पक्षीगण भी शान्त हो ! जाते थे। सिंह तक आकर विराजमान हो जाते थे, और मधुपाठ को पाते थे। आज तो उच्चारण करने का कोई समय ही नहीं। अब यह आदेश समाप्त हो गया है। कुछ शान्ति पाठ होगा। प्रातः बजे जोर बाग में द 7िया हुआ प्रवचन।

२ 22 08 1962 महानन्द जी के नाना प्रश्नों का उत्तर

जीते रहो, देखों मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम ! तुम्हारे समक्ष, वेदों का गान गा रहे थे। आज हम पूर्व मन्त्रों में उस प्रभु की याचना कर रह थे जो हमारे जीवन का साथी बना हुआ है, अन्तः करण में विराजमान है, महान इस सृष्टि का निर्माण करने वाला है।

आज जब हम विचार लगाते है, दार्शनिक और यौगियों पर जाते हैं, तो सब ही महान आचायों का अब तक एक ही मन्तवय प्रस्तुत हुआ है, कि किसी भी मानव को किसी भी देव कन्या को यदि अपने जीवन को ऊँचा बनाना है, तो परिश्रम की आवश्यकता है। भगवान कृष्ण ने यह ही कहा कि भाईपरमात्मा को जानने के लिए निष्काम ! और इन्द्रियों को शासन में करना है, मन की तीव्र गति और अन्तःकरण को जानना है।

कर्म की निष्कामता

मुनिवरोंमहानन्द जी ने एक समय ऐसा कहा कि महार !मेरे प्यारे !ाजा कृष्णा ने अर्जुन से कहा था कि हे अर्जुनतू आज मुझे प्राप्त हो !, जो भी कार्य करना है वह निष्काम कर। आज के मानव ने इस रहस्य को जाना नही। यह क्यों कहा है? जब हम गुरू के द्वार जाते हैं, तो गुरू कहते हैं कि हे शिष्ययदि तुझे जिज्ञासु बनना है !, तो जो तेरे पास है वह मुझे दे। मेरे समीप होकर के और मेरे अर्पण होकर के कार्य कर। यह ही अभिप्राय महाराजा कृष्णा और महाराजा अर्जुन के सम्बन्ध में पाया जाता है। गुरू शिष्य का सम्बन्ध होने के नाते महाराजा कृष्णा ने यही कहा कि यदि तुझे महान कार्य करना है, महान बनना है तो अपने जीवन के जितने साकल्य है, जितनी योजनाएं है, जितने संकल्प विकल्प हैं सब मेरे अर्पण कर और निष्काम कार्य कर। आज जिनका तू मोह कर रहा है, वह तो पूर्व ही नष्ट हुए है। यह आज नहीं तो कल अवश्य नष्ट हो जाएंगे। महाराजा कृष्णा के इन आदेशों को मान कर अर्जुन ने युद्ध किया।

महापुरुषों के प्रति दायित्व

आज मानव यह कह रहा है कि महाराजा कृष्णा ने भिन्न भिन्न शब्दार्थो में यह कहा है कि मैं सर्वज्ञ हूँ मैं शक्तिमान हूँ। मानव ने इस रहस्य को जाना नही। जिन गुरूओं ने उस विद्या को जाना है, जिससे अपने आत्म तत्त्व को जाना जाता है, महान् अपनी कलाओं को जाना जाता है, वह गुरू कहा करता है, कि मैंने सब कुछ जाना , परमात्मा ने मुझे सब शक्ति प्रदान की है, मैं तेरे पापों को अवश्य नष्ट कर दूंगा। परन्तु आज मानव यह कहता है कि सिद्धान्त के अनुसार पाप शान्त नही होते, भोगने ही पड़ते है।

मुनिवरोंजब शिष् !य जिज्ञासु बन जाता है और यह मान लेता है, कि तेरे जा पाप है, वह गुरू के अर्पण है ते पाप तो उसी को भोगने पड़ते है, परन्तु उसके मन का संकल्प हो जाता है, कि तेरे जो पाप है, वह गुरू के अर्पण हैं, तेरे द्वारा कुछ नहीं। और इस प्रकार वह योगी और जिज्ञासु बन जाता है। आज हमें इन विचारों को

विचारना है।

मुनिवरोंएक का नही !, सब ही महान व्यक्तियों का ऐसा ही मन्तवय माना गया है। भगवान राम से भी हनुमान ने जब माता सीता के लिए लंका जाने लगे, तो पूछा कि महाराजमैं कौन सी शक्ति से जाँऊ !? उस समय राम ने कहा था, कि तेरे में जो भय है, जो तेरे हृदय में साकल्य है, उन सब को मेरे में अर्पण कर, अपने अंहकार को, मेरे अर्पण कर और तू माता सीता की खोज कर, मैंने वह शक्ति पाई है, कि मैं उन पर विजय प्राप्त कर लूंगा। आज उन्हीं विचारों को लेकर अपने जीवन को ऊँचा बनाना है। मेरे प्यारेलोमश मुनि ने ब !हुत कुछ कहा, कि हमारे हृदय का गौरव तो यही है कि ऐसी महान आत्माओं को परमात्मा न मान कर इसको शक्तिमान तथा महान आत्मा मान कर उनकी पूजा करें, तो हमारे जीवन का एक बहुत ऊँचा रहस्य बन जाएगा। काव्य लिखने वालों ने महाराजा राम व कृष्ण के (जैसे तुलसीदास) सम्बन्ध मेंऐसी रचना की, कि उन्हें भगवान के तुल्य माना । परन्तु तार्किक समाज में उनका कोई मूल्य नही माना गया। जिन महान आत्माओं ने उनके जीवन के रहस्य को जाना और जिनके जीवन को देखा वह इन वार्त्ताओं को जानते है। आज मानव बहुत दूर चला जाता है, और कह रहा है कि यदि वह उत्पन्न न होते, तो इस कार्य को कौन करता, परमात्मा यदि न आता, तो उस अमुक व्यक्ति को कौन नष्ट करता?

अरे, मानवयह तो तेरा एक विकल्प है। यह जो माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ हैं !, पञ्चभौतिक शरीर से उत्पन्न हुआ है, उसका आज नही तो कल अवश्य विनाश हो जाएगा। उसका शरीर छूटना अनिवार्य है। आज परमात्मा को यदि यह कह दिया जाएं, कि वह जन्म लेकर किसी के शरीर को नष्ट करने आया है, तो यह तुलना कदापि भगवान से नही आती। दार्शनिक समाज में यह वार्त्ता कदापि भी मान्य न होगी, जिसने माता के शरीर से जन्म लिया है, माता के गर्भाशय से जिसकी पालना हुई है, उसका इस शरीर से छूट जाना अनिवार्य है।

आज मानव यह कहे, कि यह आत्मा तो अनादि है, आत्मा तो नष्ट नही होती। हमारा वाक्य कह रहा है, ब्रह्म विचार भी कह रहा है, आत्मा परमात्मा के महान तत्त्व भी

कह रहे है, कि शरीर तो नाशवान है और इनमें रहने वाला आत्मा अनादि है, उसका न कभी अन्त है, न उत्पति है। आज हमें विचार लगाना चाहिए, उसका तो इस सृष्टि में प्रकृति के आँगन में आकर नाना रूपान्तर होता रहता है।

आज हम व्याख्यान देते देते बहुत दूर चले गए। हम उच्चारण कर रहे थे, परमपिता परमात्मा की याचना कर रहे थे। उस प्रभु ने इस संसार को बनाया है, वह महान प्रभु हमारे जीवन का साथी बना हुआ है। हमारे हृदय में उसका वास हो रहा है, हमारें जीवन की महान योजना बन रही है। आज हमें वेद के प्रचार से अपने जीवन को, अपने राष्ट्र को, अपनी मानवता को ऊँचा बनाना हैं।

हर युग में भगवान राम व भगवान कृष्ण

कल के व्याख्यान में मेरे प्यारेमहानन्द जी ने नाना प्रकार के प्रश्न किए और यह ! कहा कि क्या जब यह त्रेता या द्वापर काल आता है तो हर युग में राजा दशरथ एक ही होता है? या उनके पुत्र भगवान राम हर युग में जन्म लेते है? इसका कुछ निर्णय दीजिए, महर्षि बाल्मीकि ने इस सम्बन्ध में अपनी कुछ ऐसी लेखनी दी है, कि जहाँ तक अमुक आत्माओं का सम्बन्ध है, उनका तो रूपान्तर नही किया जाता, परन्तु ऐसा अनिवार्य माना है, कि हर युग मे मर्यादा का ऐसा महान व्यक्ति उत्पन्न होता है कि उनकी महानता से उनको राजा राम कहा जाता है, महाराजा कृष्णा कहा जाता है।

जैसे मुनिवारोहमारे यहाँ राजा जनक की एक वार्त्ता मानी जाती है कि जो महान ! व्यक्ति अपने धार्मिकता से अपने मन को विदेह बना लेता है वह महान व्यक्ति उस राज्य का राजा जनक चुना जाता है। इसी प्रकार इन्द्र की उपाधि है। जो एक सौ एक अश्वमेध यज्ञ कर लेता है उसे महान इन्द्र की उपाधि प्राप्त हो जाती है। हर महान चतुर्युगी में ऐसा माना गया है कि प्रत्येक चतुर्युगी में ऐसी महान आत्मा आ करके परमात्मा की विभूतियां दे करके, संसार को मर्यादा में बांध करके, वह संसार से अपना पुनः उत्थान करके चला जाता है।

मुनिवरोंहमें यह व्याख्यान तो देना नही !, जो हम प्रारम्भ करने लगे। आज हमें महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर भी देना है। सृष्टि का प्रकरण भी हमारा चलता रहता

है, यह तो बहुत गहन विषय है। आज हम संसार में इतने राजा महराजा हुए, जितनी महान चतुर्युगियां हुई हैं, हम उन राजाओं की गणना, किसी द्वितीय काल में द्वितीय साहित्यों के प्रमाण से देगें।

सूर्य विज्ञान के ज्ञाता महाराजा हनुमान

एक काल में मेरे प्यारेमहानन्द जी ने ऐसा कहा कि महाराजा हनुमान ने सूर्य को ! अपने मुख में अर्पण कर लिया था। अहायह हमारा गौरव है !, हम गौरव के सहित कह रहे हैं कि महान योगी ने सूर्य को अपने मुख में लिया था। परन्तु कैसे अर्पण कर लिया? यह मानव को जान लेना चाहिए। उस महान योगी ने महान ब्रह्मचारी ने, महान तार्किक ने महाराजा राम के मन्त्री ने सूर्य के महान विज्ञान को जाना। उसके एक एक, कण के महत्व को जाना और वह विज्ञान उसके कण्ठ था। इसलिए यह वाक्य अवश्य मानने वाला हो जाता है, कि उन्होंने सूर्य को नहीं, सूर्य के महान गुणों को, महान उसके विज्ञान को अपने मुखारबिन्दु में अर्पण कर लिया था।

आज प्रत्येक मानव यह कह रहा है, मेरे प्यारेमहानन्द जी ने भी एक का !ल में यह कहा था कि ब्रह्मचारी वानर, जिसको हनुमान कहा जाता है, वह चौदह सौ अश्वनों के समुद्र को लांघ कर पार गया था। यह कोई महत्व दायक आदेश नही। महर्षि बाल्मीकि ने इसमें ऐसी महान लेखनी दी है कि उन्होंने अपनी यौगिक क्रियाओं से इस समुद्र को पार किया। बेटातुमन !े देखा होगा, कि योगी अपने प्राणों की एकाग्र मुद्रा बना लेते हैं, और जल पर ऐसे चले जाते हैं, जैसे यह पार्थिव शरीर वाला पृथ्वी पर चला करता है। इसी प्रकार योगी महान अपने शरीर को इतना आविष्कारमय बना लेते हैं, कि मन की जो गति है, वह समुद्र पार जाने वाली है। मन की गति को जानने से, यह भी क्रिया आ जाती है, कि समुद्र इस प्रकार अवश्य पार हो जाता है। आज मानव को बहुत गम्भीरता से यौगिक क्रियाओं पर जाना है।

प्रत्येक मन्वन्तर में अयोध्या

मुनिवरोंदेखो !, आज हमें यह साहित्य का वाक्य तो नहीं उच्चारण करना था। आज तो यह उच्चारण करना था, जैसा कल उच्चारण कर रहे थे, कि महाराज स्वायम्भु मनु

महाराज ने इस महान अयोध्या नगरी का निर्माण किया। इस अयोध्या नगरी का निर्माण करते हुए, इसमें उन्होंने राष्ट्र के लिए बहुत से नियम बनाएं। उसके आधार से राष्ट्र चलने लगा। प्रत्येक मन्वन्तर में अयोध्या का निर्माण नवीन रूपों से किया जाता है। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने कल एक प्रश्न और किया था !, कि जब प्रारम्भ में प्रभु ने सृष्टि उत्पन्न की थी, तो क्या देव और दैत्य आरम्भ से आए या प्रारम्भ में दैत्य नहीं थे? यदि प्रारम्भ में नहीं थे, तो कहाँ से आए? परमात्मा ने जब यह सृष्टि महान व्यक्तियों की बनाई है, महान आत्माओं का संसार बनाया है, इसमें कोई पापी न था, तो यह पाप कहाँ से आया? कौन से स्थान में छिपा हुआ था? क्या वह कलियुग में ऐसा है, सतोयुग में नहीं रहता?

मुनिवरोंइसका उत्तर यह है कि दैत्य और देवता प्रारम्भ स !े होते चले आए हैं। देवताओं के विपरीत कार्य करने वालों को बेटादैत्य कहा जाता है। जो महान व्यक्ति ! अपनी वैदिक संस्कृति को जानते हैं, उसके आधार से चलते हैं उनकी देवताओं में संज्ञा होती है। जो उनकी संस्कृति पर नाना प्रकार की आलोचनाएं और उसको नष्ट करने के लिए योजनाएं बनाते हैं, अर्थात् ज्ञान को न जानकर के तुच्छ बुद्धि से नाना प्रकार की योजना बनाते हैं, उनको हमारे यहाँ दैत्यों की गिनती में माना गया है। हमारे यहाँ नहीं, वैदिक काल में यह माना गया है, हमारे दार्शनिक समाज में इसी प्रकार माना गया हैं।

मुनिवरोंसृष् !टि के प्रारम्भ में अपने कर्मो के वशीभूत हो करके सब ही ने जन्म धारण किया। उसी समय प्रकृति भिन्न भिन्न हुई। जिसके कारण, मुनिवरोंयह ! अनिवार्य है कि प्रारम्भ में सृष्टि निर्माण के लिए अधिक महान व्यक्तियों के कारण उन दैत्यों का प्रभाव अधिक न हो सका।

व्याकरण

मुनिवरोंदेखो !, व्याकरण कहाँ से आई? वेदों के मन्त्रों को उच्चारण करने का स्वर कहाँ से आया?

मुनिवरोंइसके सम्बन्ध में हमारे यहाँ ऐसा माना गया है !, दार्शनिकों ने, मेरे गुरु ब्रह्मा

ने ऐसा कहा है कि सृष्टि का निर्माण तो महान उस विश्वकर्मा प्रभु ने किया, परन्तु यह व्याकरण की महानता हुई सत्संगों से। हमारे ब्रह्मरन्ध्र में, महान मस्तिष्क में जहाँ त्रिवेणी का स्थान है, यहाँ नाना शब्दार्थो का कोष माना गया है। उस कोष को लेकर योगियों ने उसका निर्माण किया। उन योगियों के, हम महान आभारी बने बैठे हैं। हमारे आदि ब्रह्मा ने अपने को जाना। पांच तत्त्व शरीर में है, उन्हें जाना। पांचों प्राणों का सम्बन्ध करके, यह पञ्च भौतिक जो कार्य कर रहे हैं, उनमें नाना प्रकार की ध्वनि होती है। उस ध्वनि को जाना और उसको जानकर लेखनी लिखी। मानो उसे ही यह व्याकरण का और शब्दार्थो का विशेष ज्ञान हुआ।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक काल में ऐसा कहा कि जब महाराजा शिव ने डमरू ! बजाया तो माता पार्वती नाचने लगी, उस डमरू में से जो शब्द निकले, उन शब्दों से व्याकरण बन गया। महर्षि पाणिनी ने उनका संशोधन किया। आज जब हम इसे तार्किकता से और गम्भीरता से विचारते हैं, तो यह वाक्य यथार्थ हो जाता है। महाराजा शिव अपना डमरू बजाते हैं, तो प्रकृति रूपी माता पार्वती नाचने लगती है। डमरू की ध्वनि को लेकर यह व्याकरण बनाया। मुनिवरोंशिव के डमरू की वह ! ध्वनि ब्रह्मा ने जानी, महर्षि पाणिनि ऋषि ने नहीं?

मुनिवरोंहमारे यहाँ काव्य में ! नहीं ब्रह्म विचार में ऐसा माना गया है, कि पाणिनि नाम आत्मा का है, जो परमात्मा के सम्मुख होती हुई महान, उसके डमरू का अनुभव किया करती। शिव परमात्मा को कहते हैं और पार्वती नाम प्रकृति का है। आदि ब्रह्मा ने अपने को जाना। महान डमरू का शब्दार्थ सुना, जो पांचों स्वरों को लेकर डमरू बजा करता है, माता पार्वती नाचती है, उससे नाना ध्वनियों का प्रसार होता है।

आज यह कहेंगे कि पाणिनि आत्मा को क्यों मान लिया। मुनिवरोंपाणिनि नाम के ! ऋषि भी हुए। आदि ब्रह्मा ने कहा कि पाणिनि महान आत्मा को कहते हैं जो महान इसके शब्दों की लेखनी लिखने वाला होता है। आदि ब्रह्मा ने उस महान लेखनी से वेदों का यह विशाल ज्ञान कराया, वह लेखनी लिखी, जिसको पा करके आज मानव

अपने जीवन में अनुभव कर रहा है कि हम भी अपने काव्य की अश्वनि कर सकते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरु जीहम स्वयं को जान जाएं !, तो हम भी ब्रह्मा बन जाएंगे? क्योंकि अपने पाणिनि आत्मा को कहा है। इस से ब्रह्मा बन जाएं।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाआज तुम्हें ब्रह्मा बनने की कोई आवश्यकता नहीं !, क्योंकि यदि आदि ब्रह्मा, जिन्होंने इसका निर्माण किया, कुछ सूक्ष्मता कर देते, तो बेटाआज तुम ! भीब्रह्मा बन सकते थे। उन्होंने उन ध्वनियों का प्रसार किया है, मानव उनको जान भी जाता है, परन्तु वह ब्रह्मा से आगे नहीं जाता। परमपिता परमात्मा की असीम कृपा से, जिस वाक्य का प्रसार कर दिया है, उसका कोई भी व्यक्ति संशोधन नहीं कर सकता। आज बेटातुम ब्रह्मा बन जाओ !, परन्तु उन्हीं के आदेशों को लेकर आगे चल सकते हो, परन्तु नवीन वाक्य कोई न बना सकोगे। क्योंकि जिसने पूर्णता को पा लिया, वह अपूर्ण वाक्य कोई नियुक्त नहीं करेगा, जैसे चारों ऋषियों से, परमात्मा के आधार से, इन वेदों का प्रसार हुआ। परन्तु प्रत्येक वेदमन्त्र में ज्ञान और विज्ञान भरा हुआ है। आज कोई मानव कहें, कि ऐसे मन्त्र तो और भी घड़े जा सकते हैं, मनगढ़न्त मन्त्र और भी बन सकते हैं। परन्तु यह कदापि नहीं, क्योंकि जिन ऋषियों ने परमात्मा की महान असीम कृपा से वह मन्त्र बनाएं हैं, उनमें कोई सूक्ष्मता नहीं। न्यूनता नहीं। द्वितीय, बेटाकोई भी इस प्रकार के वेदमन्त्र मनगढ़न्त नहीं बना ! सकता। यदि बना भी लिए जाएं तो उसके आँगन में जाकर न तो उसका छन्द ही बनता है, न कोई सार मिलता है, न उसकी सन्धि मिलती है। इसलिए वह असफल हो जाता है।

मुनिवरों आज हमारा यह एक आदेश चल रहा था। मानव को !विचार लगा लेना चाहिए, गम्भीरता से विचारना चाहिए, आज मानव मान अपमान में चला जा रहा है, और यह मानता चला जा रहा है, कि आज हम महाराजा कृष्ण को भगवान माने और जो यदि न माने, तो उससे रुष्ट हो जाओ, उसे नष्ट करते रहो। यह मानव को कदापि भी विचार न लगाना चाहिए। मेरे प्यारेलोमश ने ऐसा कहा है !, कि महाराजा

कृष्ण को यदि भगवान माना जाता है तो वह उनके गौरव को, उनकी महानता को कलंकित करना है। यह वाक्य यथार्थ है। परन्तु यदि किसी को शास्त्रार्थ करना है, तो वह अपनी आत्मा को इतना बलिष्ठ बनाएं कि हमारे सूक्ष्म शरीर की आत्मा में आकर शास्त्रार्थ करने के लिए नियुक्त हो जाएं। हम गौरव के सहित वाक्य उच्चारण कर रहे हैं। आज मानव को यह नहीं मान लेना चाहिए कि आज महाराजा कृष्ण को भगवान नहीं माना हैतो इसमें हमारे धर्म की हानि हो गई ,, हम नास्तिक बन गएं हैं। अरे, मानवआज तो तुम केवल भगवान कृष् !ण उच्चारण ही कर रहे हो और अन्तःकरण में, कुछ भरा हुआ है। परन्तु जिन महान व्यक्तियों ने उस महाराजा कृष्ण के रहस्य को जाना है, उनके हृदयों से पूछो, वह क्या कह रहे है? मेरे प्यारेलोमश का हृदय ! क्या कह रहा है? उनका हृदय उनके जीवन के कण कण से परिपक्व हो रहा है, पवित्र बन रहा है। आज तुम तो मुख से उच्चारण कर रहे हो।

योगिराज कृष्ण

मुनिवरोंआज मानव को विचारना चाहिए कि विरोधी बनना है !, तो किसके विरोधी बनें? अरे, हम तो तब जानें यदि तुम्हें विरोध करना है तो मान अपमान हो शान्त कर दो। इसी में हमारी महानता है। आज तुम्हें घृणा करनी है तो उन व्यक्तियों से नहीं, जिन्होंने महाराजा राम व कृष्ण को भगवान नहीं माना। अरे, घृणा करनी है तो अपने काम, क्रोध, मद, लोभ आदि से करो। इससे हमारे जीवन का पुनः उत्थान हो जाएगा। आज हमें अपने जीवन की ऊँचे शिखर पर पहुँचाना है और मानव बनना है। मानव बनने के लिए बहुत ऊँचे ज्ञान की आवश्यकता है, वैदिक रहस्य की आवश्यकता है। लोमश मुनि के जीवन की घटनाओं से प्राप्त होता है कि उन्होंने सौ सौ वर्ष मुनिवारोंवेदों के आधार से वह कार्य किया है कि उन्होंने चालीस वर्ष तक ! निद्रा का आहार भी नहीं किया। परन्तु आज मानव उसकी तुलना करना चाहता है। महाराजा कृष्ण के जीवन की एक ऐसी घटना मिल रही है, जिसका सूक्ष्मता से आज आदेश दें। जिस समय उनकी पत्नी रुक्मणी से प्रद्युम्न नामक एक बालक उत्पन्न हो गया, उसके पश्चात् महाराजा कृष्ण ने यह कहा था, कि मैं ब्रह्मचारी बनने जा रहा हूँ।

उस महान जन्म जन्मानतरों के योगी ने देखो, ऐसा किया, कि उन्होंने बारह वर्ष तक अपने जीवन का अनुसन्धान किया। बेटाद्वापर के पश्चात् किसी ने अपना जीवन ! ऐसा मन्थन नहीं किया। उनके एक एक रोम से, ऐसी ज्योति उत्पन्न होती थी, जैसे सूर्य की महान किरणें होती हैं। परन्तु आज हम उनकी महानता को कलंकित बनाना चाहते हैं। उनके कर्त्तव्यों पर दृष्टि पहुंचानी चाहिए, जिससे मानव का पुनः उत्थान हो जाएं। हमें अधिक प्रमाण नहीं देना। कल इस सम्बन्ध में बहुत कुछ कहना है। परन्तु हमारा अन्तःकरण उन महान व्यक्तियों की महानता से भरा हुआ है। आज मानव को विचारना चाहिए कि आज मानव किसका विरोधी बन रहा है? मेरे प्यारेमहानन्द ने ! कहा कि आज का मानव विरोधी बन रहा है, कि लोमश ने महाराजा कृष्ण और राम को भगवान नहीं माना। काव्य वालो ने ऐसा माना है, इसलिए लोमश का वाक्य भी न मानने वाला बन जाएगा।

मुनिवरों !आज इसे मानना हमें अनिवार्य हो जाता है। क्योंकि वहाँ उन्होंने 'राम' का विरोध नहीं किया है। 'राम' का जो विरोध करता हैवह वास्तव में अपकीर्ति को , प्राप्त हो जाता है।'राम' कहते हैं परमात्मा को, जो प्रत्येक योगी के हृदय में रमण करने वाला है, जिसने संसार का निर्माण किया है। प्रत्येक मानव प्रत्येक देवकन्या के हृदय में जिसका रमण है उसको 'राम' शब्दों से पुकारा जाता है। 'रमय' धातु से राम शब्द बनता है। मानव ने 'राम' के रहस्य को जाना नहीं। इन विचारों पर क्यों नहीं जा रहे हो। अरे, तुमने जीवन में अपनी बुद्धि से भी कार्य किया या नहीं? केवल विरोध के लिए नियुक्त हो रहे हो, कि जो राम को भगवान नहीं कहेगा, आज उनको हम नष्ट कर देंगे, उसे शत्रु बना करके उसकी निन्दा करके अपकीर्ति को प्राप्त करा देंगे। अरे, मानवतुमने उसे तो अपकीर्ति को नहीं पहुँचाया। परन्तु तुमने किसी काल ! में उसराम को नहीं जाना, तो तुम्हारे हृदय में बैठा है। तुम्हारे हृदय में जो बैठा हुआ 'कृष्ण' अंकुर है, उसको नहीं जाना, जो अन्धकार का स्वामी है। इसलिए परमात्मा को हम 'कृष्ण' रूप से पुकारा करते हैं जो अन्धकार का स्वामी हैऔर अन्तःकरण , में विराजमान है।

मुनिवरोंग्रह !ासुषुप्ति ग्रवस्था में इस शरीर में कौन जागता है !, जिससे मानव का श्वास चलता है? मुनिवरोंवह प्राण !, हमारे यहाँ कृष्ण के नाम से पुकारा गया है। क्योंकि वह ग्रन्धकार का स्वामी है। शरीर में ग्रन्धकार छाया हुग्रा है, ग्रौर वह प्राथ तीव्र गति से चल रहे हैं, शरीर की रक्षा कर रहे हैं, ग्राज मानव ने उन प्राणों को जाना नहीं, रमयवेती धातु से राम को नहीं जाना। परन्तु क्या जाना है, कि जो महाराजा राम व कृष्ण को भगवान न मानेगा, उसे नष्ट भ्रष्ट कर देंगे। ग्ररे, यह भी जाना, कि हमारे ग्रन्तःकरण में जो भी महान शत्रु बने बैठे हैं, उनको नष्ट करें। ऐसा करने से तुम्हें वह ज्ञान हो जाएगा, जिस परम ज्ञान के लिए, जो मेरे प्यारेलोमश ! ने जिसका प्रमाण दिया ग्रौर जिनका गौरव तुम्हारे समक्ष नियुक्त किया है, वह ज्ञान तुम्हें स्वयं प्राप्त हो जाएगा। जब तक मानव ज्ञान के ग्राँगन में नहीं गया, तब तक मानव को नाना प्रकार की भ्रान्तियां रहती हैं। जब मानव ज्ञान के ग्राँगन में, माता दुर्गे की गोद में, माता धेनु की गोद में, माता सरस्वती की गोद में चला जाता है, तो उस मानव को किसी से शत्रुता नहीं रहती। ग्राज हमें ग्रपने मान ग्रपमान को शान्त करना है। जब माता सरस्वती हमारे द्वार ग्रा जाएगी, उस समय हमारी वाणी पवित्र हो जाएगी। कामक्रोध ग्रादि सब शान्त हो जाएंगे ,, ग्रात्मा निर्मल हो जाएगा ग्रौर परमात्मा को जानने वाला हो जाएगा, कि तेरा परमात्मा किस स्थिति में? तेरा प्रभु कहाँ है? यह सब ही जान जावेगा। परन्तु कब? जब पहले ग्रपने को जान लोगे। जब तक ग्रपने को नहीं जाना ग्रौर यह जानने की ग्राशा करना, कि परमात्मा यहाँ हमारे द्वार ग्रा जाएं तो कदापि न ग्राएगा। वह तो तभी ग्राएगा, जब ग्रपने को जान लेंगे कि हम कौन हैं। परन्तु मानव ने यह किसी काल में निर्णय नहीं किया। ग्राज तो वह निरोधी बन रहा है, शत्रुता पर दृष्टि पहुँचा रहा है ग्रौर यह नहीं विचारा, कि ग्ररे, विरोध वाले तो बहुत वाक्य हैं, विरोध वाले तो हमारे ग्राहार व्यवहार हैं, जिनका हमें विरोधी बनना चाहिए ग्रौर विरोधी बन करके उन्हें शुद्ध ग्रौर पवित्र बनाएं। जब हम स्वयं के शत्रु समाप्त कर लेंगे, तो संसार में हमारा कोई शत्रु ही न रहेगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवानगुरु जी ग्राज तो ग्रापके वाक्य बड़े ही !

महत्वपूर्ण रहे। किसी काल में आपका हृदय भी विदीर्ण हो जाता है। आप हमारे प्रश्नों यदि हम प्रश्न न करें तो आप इन वाक्यों !का उत्तर तो भलीभांति दे रहे हैं। भगवन को उच्चारण नहीं करोगे? यह भी हमारे प्रश्नों का प्रताप है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य सब कुछ तुम्हारा हो प्रताप है। हमें इसमें बड़ी !चलो बेटा... शान्ति है, कि सर्वत्र तुम्हारी ही प्रताप हो रहा है, जिससे ऐसे गहन विषय चल देते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तब ही तो कहते हैं भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः धन्यवाद ! तो मुनिवरोंआज हम व्याख्यान देते देते दूर चले गए। ! राम !हमारा यह शान्तिदायक वाक्य कि महाराजा, महाराजा कृष्ण के जीवन पर दृष्टि पहुँचाना, उनकी वास्तविक पूजा है। दृष्टि पहुँचा करके अपने जीवन को उन्हीं के तुल्य बनाएं, यही उनका मानना है। उनको भगवान भी मान लिया जाएं, परन्तु उनके जीवन पर दृष्टि तो पहुँचाओ। दृष्टि तो पहुँचाते नहीं। तुम्हारे भगवान मानने से क्या लाभ? कोई लाभ नहीं। हमारा वाक्य कह रहा है, कि उन महान आत्माओं को उच्च बनाने के लिए, उनके जीवन के रहस्य को ऊँचा बनाने के लिए, उनके जीवन पर दृष्टि पहुँचानी है, उनके आदेशों पर चलना है। तब ही हमारा जीवन ऊँचा बनेगा। आज मानव को यह नहीं मान लेना चाहिए, कि यदि राम जन्म न लेते तो रावण को कौन नष्ट करता, यह वाक्य इसलिए यहाँ शान्त हो जाता है, कि रावण माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ। पञ्च तत्त्वों का भौतिक शरीर था, वह तो नष्ट होता ही। अपनी अवधि पर सब समाप्त हो जाते हैं। बिना समय के कोई भी मृत्यु की प्राप्त नहीं होता यह सिद्धान्त है।

मुनिवरोंरहा यह वाक्य कि यदि आज राम और रावण के जीवन की तुलना की ! जाती है, तो बहुत ही सूक्ष्मता मिलती है। रावण बलवान और वैज्ञानिक था। उस जैसा वैज्ञानिक अभी तक नहीं हुआ। परन्तु राम वैज्ञानिक थे, यौगिक थे, आत्मिक बल था। रावण में आत्मिक बल नहीं था। इसलिए राम को रावण से अधिक महानता दी जाती है।

मुनिवरोंआज हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है !, आज सबसे पूर्व प्रभु की याचना

कर रहे थे, जिस प्रभु ने संसार को बनाया है, हमारे जीवन का साथी है। महाराजा कृष्णा के सम्बन्ध में कुछ प्रारम्भ कर रहे थे, जो आदेश उन्होंने गुरु शिष्य के सम्बन्ध में दिया। अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है। कल आज से भी अधिक पवित्र वाक्य होगा, कल हम किसी प्रश्न का उत्तर नहीं देंगे।

पूज्य महानन्द जीः हास्यवह तो आपको देना ही नहीं चाहिए !गुरु जी ....., क्योंकि कोई ऐसा गम्भीर वाक्य आपके मुखारविन्द से न हो जाएं

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटायदि तुम प्रश्न न करोगे तो गम्भीर वाक्य न होंगे !?

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी हमें तो विश्वास नहीं, कि आपके मुखारबिन्द से गम्भीर विषय हो सकता है, जब तक हम प्रश्न न करें।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा न होगा तो देखा जाएगा। !

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन्आप तो अपार हैं। जब आपसे प्रश्न करते हैं !, तो उत्तर देना भी आपका कर्त्तव्य हो जाता है, वह तो हम आपकी नम्रता को जानते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंअब हमारा वह वाक्य समाप्त हो गया है। कल हमारा ! बहुत विशाल आत्मिक और सामाजिक दृष्टि से ऊँचा व्याख्यान चलेगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्जिस दिन आप यह कहा करते हैं !, कि कल व्याख्यान ऊँचा होगा उस दिन ऊँचा व्याख्यान नहीं होता।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, नहीं मूर्खानन्द। ऊँचा ही हो जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् कृपा कीजिए। !

पूज्यपाद गुरुदेवः यह महानन्द प्रश्न करता ही रहता है, शान्त नहीं रहता। किसी किसी समय यह अशुद्ध वायु का आहार कर लेते हैं जिससे इनके वाक्यों में रस नहीं रहता और यह प्रश्न करते ही चले जाते हैं।

पूज्य महानन्द जीः 'अच्छा भगवन् कृपा कीजिए। !

पूज्यपाद गुरुदेवः अब हमारे वेद मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है, इसके पश्चात् हमारा वाक्य समाप्त हो जाएगा। वेद प्रचार सप्ताह पर रात्रि को पार्क .सी.बजे बी 9विनय नगर में दिया हुआ प्रवचन

३ 06 11 1962 मर्यादा

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम ! तुम्हारे समक्ष, वेदों का मनोहर गान गा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेद मन्त्रों का अभी अभी हम तुम्हारे समक्ष पाठ कर रहे थे। आज उन वेद मन्त्रों में उस विधाता का अमूल्य ज्ञान और विज्ञान विराजमान हो रहा था। आज हम उस विधाता का गुणगान गाते हुए उच्चारण करते चले जा रहे थे, हृदय में आता चला जा रहा था, कि विधाता ने अपनी वह अमूल्य निधि संसार को प्रदान की है। आज मानव और संसार इस पर विचार नही कर रहा है। यह केवल मानव की अज्ञानता के कारण है। मेरे प्यारेमहानन्द जी नित्य प्रति प्रश्न किया करते हैं !, और उनका पुनः पुनः उत्तर देते हुए, आज हम चकित होते चले जाते हैं, परन्तु इनका एक एक प्रश्न ऐसा अमूल्य माना गया है, जिन प्रश्नों में अमूल्य निधि और महानता विराजमान हो रही है।

प्रार्थना

मुनिवरोंहमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था !? आज हम 'संभवति अर्चते' आज हमारा जो समारोह हो रहा था उसमें हम उस विधाता की अमूल्य निधि का गुणगान गा रहे थे। आज भी हमारे वेद पाठ में मर्यादा के सम्बन्ध में बहुत से शब्दार्थ आए हैं। अभी अभी उच्चारण करते जा रहे थे और विचारते चले जा रहे थे, हे देवहे !हे सखा ! तू संसार रूपी राष्ट्र का स्वामी है !मित्र, इस राष्ट्र को शान्तिदायक और महान ऊँचा बना। विधातायही नहीं !, हम संसार रूपी राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। हम सबसे पूर्व चाहते हैं, कि यह हमारा हृदय रूपी जो राष्ट्र हैं, यह हर प्रकार से ऊँचा बना रहे। यह हमारी जो हृदय रूपी अयोध्या है, इसमें वह राम विराजमान रहे, जिस रामराज्य के ऊपर संसार व्याकुल होता चला जा रहा है। हे विधाताआज हम शरीर को वह ! अयोध्या चाहते हैं, जिसमें रामराज्य हो जाए। 'रमति रामच्यते' आज जो हम योगियों के हृदय में वह रमण करने वाला, विधाता बन जाए। हमारी यह अयोध्या रूपी नगरी ऊँची बन जाए, और वह विधाता इस नगरी में ओत प्रोत हो जाए, वह विधाता इस

राष्ट्र का स्वामी बन जाए, परन्तु आज हमें परिश्रम की आवश्यकता है।

शान्ति का प्रदर्शन

हे विधाताआज हम उस राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। आज हम केवल उस राष्ट्र ! की याचना करने जा रहें हैं, जिस राष्ट्र में हमारा जन्म हो, जो राष्ट्र हमारे शरीर का एक ऊँचा भाग हो। कैसे बनाएंगे? जब तक आपकी करूणा नहीं होगी, आपकी दी हुई प्रेरणा हमें नहीं मिलेगी, तब तक हम इस संसार का, अपने शरीर रूपी राष्ट्र का उद्घाटन, किसी भी प्रकार नहीं कर सकते। न इसका निर्माण ही अच्छी प्रकार कर सकते हैं।

तो मुनिवरोंमहानन्द जी ने जैसा !आज हम विधाता की कृपा चाहते हैं। मेरे प्यारे ! पुनः पुनः प्रश्न किया है आज उनके प्रश्नों का उत्तर चला आ रहा है। यह कैसा समय बन गया है, उत्तर स्वतः ही स्वतः चला आ रहा है। क्या करें, आत्मा का जो अनुरोध होता है, आंकाक्षाएं आती हैं, वह प्रभु, पुनः पुनः संतुष्ट करता रहता है।

तो मुनिवरोंअभी अभी हमारा आदेश चल रहा था और हम परमात्मा से याचना कर ! रहे थे, कि हे परमात्माहमारे राष्ट्र और हमारे शरीर रूपी अयोध्या को ऊँचा बना। ! हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते !इसमें राम राज्य हो जाए। प्रभु, संसार का कल्याण चाहते हैं। जब संसार में रहने वाले प्राणियों का हृदय अयोध्या के तुल्य बन जाएगा, राम राज्य सबके हृदय में रमण कर जाएगा, देखो, उस काल में मुनिवरों ! देखो,शान्ति शान्ति प्रदर्शन हो जाएगी। शान्ति अपना प्रदर्शन करेगी। उस स्थान में ! वह क्रोध और मद अपने प्रदर्शनों को त्यागकर शान्ति अपना प्रदर्शन दिखलाएगी। तो वह कौन सा समय आएगा संसार में !हे विधाता, जब संसार अपनी शान्ति का प्रदर्शन करने वाला बन जाएगा। हे भगवनआज हम यह चाहते है। आपकी सृष्टि को ! उत्पन्न हुए इतना समय हो गया है परन्तु हमें तो ऐसा प्रतीत नहीं दे रहा है, जैसा आपकी सृष्टि में शान्ति का प्रदर्शन हो। तो विधातासृष्टि के प्रारम्भ में अब तक जो ! आपकी सृष्टि में शान्ति काप्रदर्शन नहीं हुआ तो अब आज हम कैसे मान लें, कि आपकी बनाई हुई सृष्टि में शान्ति का प्रदर्शन हो सकता है। परन्तु हे देवयाचना !

करना हमारा कर्त्तव्य है, करते चले जा रहे हैं।

मर्यादा

विधाताआपने जो यह संसार बनाया है !, यह ही शान्ति का चिन्ह प्रदर्शन नहीं हो रहा है। हे देवआज महान आपकी बनाई हुई !, सृष्टि में आपकी बनाई मर्यादा में वायु अधिक चल रही है, वह किसी स्थान में शान्त हो जाती है। विधाताअभी शान्त हुई ! बैठी है परन्तु एक क्षण समय में वह अपना प्रचण्ड रूप धारण कर लेती है।'सूर्य शांतं भवते अस्तिम्' ऐसा महान प्रदर्शन ऐसा अशान्त है, ऐसा प्रचण्ड रूप धारण कर लेता है, परन्तु एक स्थान में शान्त और धीमा पड़ जाता है। हे विधाताजब आपकी ! बनाई हुई, यह मर्यादा, आपका बनाया हुआ यह प्रदर्शन, हमें शान्ति में प्रतीत नहीं आया, तो विधाताहमारे में इनको विचारने के लिए बुद्धि ही नहीं ! है या यह शान्ति और अशान्ति दोनों का प्रदर्शन होता चला आ रहा है। इसी प्रकार विधाताआपके ! बनाए हुए इस महान राष्ट्र में, संसार रूपी राष्ट्र में, अशान्ति और शान्ति होती चली आई है। हे विधाताजब आपके बनाएं हुए शरीर में ही देवासुर संग्राम हो रहा है !, इसमें भी शान्ति प्रदर्शन नहीं हो रहा है, तो आज हम कैसे मान लेवे, कैसे विचार लेंवे, कि संसार में शान्ति का प्रदर्शन हो सकता है। अहायह तो हमारी बुद्धि से दूरी ! का वाक्य पहुंच चुका है। आज हमारा यह वाक्य नहीं, परन्तु आज यह तो पुनः पुनः बहुत ऊँचा व्याख्यान चला गया है। आज हम विचार लगाते चले जा रहे हैं, और अपने मन ही मन में सोच रहे हैं, कि यह मर्यादा कैसे ऊँची बनेगी? इस मर्यादा का कैसे प्रदर्शन होगा? आज हम मर्यादा को चाहते हैं? हे विधाताइस मर्यादा को चाहते ! यह मर्यादा नहीं !हैं। इस मर्यादा को पुनः पुनः ऊँचा बनाओ। विधाता, यह एक संग्राम है। विधातायह आपका बनाया हुआ संसार नहीं !, यह एक संग्राम है। कैसा संग्राम? आज देखो, इस आत्मा के द्वारा जब महान प्रकृति के अधिक गुण आ जाते हैं उस काल में इसमें नाना विकृतियां आ जाती हैं और एक समय में हे देवआपके गुण ! आ जाते हैं, अग्नि प्रचण्ड हो जाती है, और वहाँ शान्ति का प्रदर्शन बन जाता है। तो आपके बनाए हुए संसार में हमें शान्ति प्रतीत नहीं हो रही है। आज मेरे प्यारे !

महानन्द जी प्रश्न कर रहे हैं कि वह कौन सा समय आएगा जब सब राष्ट्रों का एक तुम !महान समूह बन जाएगा और शान्ति का प्रदर्शन होगा। बेटा्हारे प्रश्नों के उत्तर में आज हम यह निर्णय दे रहे हैं, कि संसार तो कदापि भी शान्ति का प्रदर्शन नहीं करेगा क्यों बेटाजब से सृष्टि तब से अब तक शान्ति का कोई प्रदर्शन नही हुआ !, हुआ भी है, यह नहीं कह सकते, जैसे अग्नि अपना प्रचण्ड रूप बना लेती है, और शान्त हो जाती है, इसी प्रकार यह देवासुर संग्राम होता रहता है। हमारे शरीर में किसी स्थान में शान्ति है, किसी स्थान में अशान्ति। ऐसी तो बेटासंसार चलता ही ! आ रहा है, यह तो बहुत ही विलक्षण व्याख्या है, जिसके ऊपर हमें पुनः पुनः विचार लगाना है।

तो मुनिवरोंअभी अभी हम ! परमात्मा से याचना कर रहे थे, कि विधाताआज हम ! अपना कल्याण चाहते हैं, आज हम आपकी शरण में आना चाहते हैं, आप हमारे माता और पिता हैं, हम पुनः से यही चाहते हैं विधाताहमें संसार से ऐसा महान ! प्रयोजन नही है हम संसार की त्रुटियां नहीं देखना चाहते, विधाता हम तो !संसार को शान्ति में देखना चाहते हैं, और जब तक हमें शान्ति नहीं मिलेगी, तब तक हम अपने हृदय को शान्ति का प्रदर्शन नहीं बना सकेंगे। आज देखो, हम अपने जीवन का प्रदर्शन करते हैं, अपने जीवन को ऊँचा बनाते हैं, परन्तु मानव दूसरों की त्रुटियों को देखता रहता है। मानव ने किसी काल में यह नहीं जाना कि मैं कौन हूँ, और मेरे द्वारा कितनी त्रुटियां है। यह न जानने के कारण, आज का संसार अशान्ति का बना बैठा है।

मर्यादा पुरूषोत्तम राम

तो मुनिवरोंहम उच्चारण कर रहे थे !, कि यह संसार का प्रदर्शन हो रहा है। आज हम भी अपना प्रदर्शन कर रहे हैं। हम भी अशान्ति में है, हमें शान्ति नहीं मिल रही है। परन्तु मनुष्य को मर्यादा कदापि भी शान्त नहीं करना चाहिए। यह मर्यादा वह पदार्थ है, जिसको त्यागने से यह संसार अशान्ति को प्राप्त हो जाता है। जब मर्यादा में चलता है, उस समय शान्ति को ग्रहण करने वाला बन जाता है। जैसे मुनिवरोंअग्नि !

जब तक मर्यादा में रहती है, तब तक यह संसार के लिए लाभदायक होती है और जब मानव अग्नि को मर्यादा से पृथक कर देता है, उसी काल में संसार का विनाश करने वाली बन जाती है। आज हमें मर्यादा को शान्त नहीं कर देना चाहिए। मर्यादा के ऊपर चलकर मर्यादा को इतना ऊँचा बना देना चाहिए, जिससे मर्यादा का एक प्रतीक हमारे समक्ष आ जाए। बेटाजिस समय भगवान राम वन को चले जा रहे थे !, उस समय मन्त्री ने कहा था कि हे रामतुम अयोध्या चलो !, मैं तो तुम्हें मार्ग दिखाने के लिए आया था । परन्तु तुम वन को मत जाओ। उस समय भगवान राम ने कहा था, मैं संसार में मर्यादा बांधने के लिए आया हूँ मेरे कोई कर्म शेष नहीं रहा है। मैं बहुत ही जन्मों से चलता चला आया हूँ, परन्तु आज मेरे लिए कोई कर्म शेष नहीं रहा है केवल मर्यादा बांधने के लिए संसार में आया हूँ और मुझे मर्यादा का प्रर्दशन करना है। आज मुझे यह निर्णय करा देना है, कि माता पिता की आज्ञा का पालन कर, मर्यादा बांधने में मुझे कोई संकोच नहीं और न मुझे कोई कष्ट है। उस समय मुनिवरोंउस मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने क्या किया !? मर्यादा बांधने के लिए बेटावह ! उसी सुबह को, विश्राम को त्याग करके, वहाँ से वन को चल दिए। यह वह मर्यादा जिसको बांधने के लिए यहाँ महापुरूष आते हैं और आकर के उस मर्यादा को बांध देते हैं। हे मुनिवरों आज हमें उस मर्यादा पर चलना है। !

तो मुनिवरोंमर्यादा पर पुनः विचार लगाना है !, आज किसी मानव को कोई पदार्थ आता है, किसी को शुभ कार्य करने आता है, तो उसकी मर्यादा तो यह है, कि वह उस कार्य को जो आता है, उसे शुभ करने का प्रयत्न करना चाहिए। उसमें हानि न पहुँचाए। हानि पहुँचाना मर्यादा से भिन्न है। उसको सुख पहुँचाना, उस कार्य को बुद्धि द्वारा पूर्ण करना, एक मर्यादा मानी जाती है। आज जो मानव, देवकन्या अपनी मर्यादा से पृथक हो जाता है, वह संसार सागर से चल बसता है। बेटाआज जो मर्यादा में ! चलता है, उसकी अवश्यमेव विजय होती है, और जो मर्यादा तोड़ देता है, नष्ट कर देता है उसका संसार सागर से अवश्य विनाश हो जाता है। वास्तव में मानव की यह मर्यादा है कि यह दूसरों के गुणों को देखता है अवगुणों पर दृष्टि नहीं पहुँचानी

चाहिए, यही मानव की मर्यादा है और यही मानव को सुख पहुँचाने वाला है, वही मानव में एक महान शान्ति का प्रदर्शन करने वाला बन जाता है।
मुनिवरोंदेखो !, द्वापर के काल की एक वार्त्ता हमारे कण्ठ में आ गई है। महानन्द जी बेटातुमने द्वापर काल को देखा होगा !?
पूज्य महानन्द जीः कृपा कीजिए भगवन् !
द्रौपदी की बटलोई
पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरोंदेखो !,द्वापर काल में ऐसा महान कार्य हुआ !, कि महाराजा धृतराष्ट्र ने अपने पुत्रों की आज्ञा पा करके, पाण्डवों को चौदह वर्ष का वन दे दिया था। देखो, वन पर्व में एक वार्त्ता आती है। जब वन में विराजमान थे, महाकेन्य ऋषि महाराज ने उन्हें एक बटलोई दी, जिसमें बेटाउनके लिए बड़ा सुन्दर भोजन ! उत्पन्न होता था। बड़ा सुन्दर और विचित्र भोजन होता था। विचित्र होने के कारण मुनिवरोंउसी ! समय उनके स्थान पर नित्य प्रति व्यक्ति भोजन किया करते थे। 986 उनका कैसा सुन्दर धार्मिक चिन्ह चलता था। बड़ा ही सुन्दर आश्चर्यजनक वाक्य !अहा महाराज युधिष्ठिर बड़े आनन्दित होकर भोजन किया करते !था। उस काल में मुनिवरों थे। उस भण्डारे का नियम था, कि जिस समय द्रौपदी भोजन कर लेती थी, उस समय बटलोई में भोजन नहीं रहता था। उसके पश्चात् भोजन उत्पन्न नहीं होता था।
एक समय सभी ऋषि मण्डल भोजन करके महाराज दुर्योधन के समक्ष जा पहुंचे और महाराजा दुर्योधन ने कहा आओ, विराजोकैसे आए !? कहाँ से विराज रहे हो? उस समय कहा कि महाराजहम ! महाराजा युधिष्ठिर के यज्ञ में से पधार रहे हैं। दुर्योधन बोले कि क्या उनके यज्ञ में से? हां, महाराजउनके यज्ञ में से आ रहे हैं। अरे !, उन कंगालों के यहाँ इतना द्रव्य कहाँ से आ गया, कि जो आज मार्ग में भी उनका इस प्रकार का यज्ञ चलता है। दुर्योधन के लिए बड़ा आश्चर्यजनक वाक्य बन गया। उस समय दुर्योधन चाहता था कि मैं पाण्डवों का किसी न किसी प्रकार से विनाश कराऊं। विनाश कराया जाए, तो कैसे कराया जाए? प्रतीत होता है, जैसे महाराज अर्जुन के अस्त्र शास्त्रों ने और भीम की गदा ने राजाओं के द्रव्य को इस मार्ग में विराजमान कर

दिया है। परन्तु क्या करें, दुर्योधन कुछ नहीं कर सकता था। सांयकाल का समय था। सब ऋषिमण्डल अपने अपने स्थान को चले गए परन्तु सारी रात्रि दुर्योधन के मन में संकल्प विकल्प होता रहा और यह सोचता रहा, मुझे पाण्डवों का विनाश कराना है। तो कैसे कराना है? उसी काल में, मुनिवरोंहमने यह सुना है कि महाराजा दुर्योधन ! को रात्रि में यह विचार आया, कि कल मैं महर्षि दुर्वासा के द्वारा जाऊंगा और उनसे प्रार्थना करूंगा कि वह उनके यज्ञ को नष्ट भ्रष्ट कर आएं, जिससे आगे के लिए उनका यज्ञ न चले। दुर्योंधन उनके विनाश की योजना बनाता रहता था।

मुनिवरोंदेखो !,सारी रात्रि संकल्प विकल्प में समाप्त हो गई। प्रातःकाल आ गया। ! प्रातः काल होते ही वह महर्षि दुर्वासा के द्वारा पहुंचे। उस समय वह सन्ध्या में विराजमान थे। वह परमात्मा का चिन्तन कर रहे थे। परमात्मा का चिन्तन समाप्त होने पर दुर्योधन ने उनके चरणों को स्पर्श किया। महर्षि दुर्वासा ने कहा कहिए दुर्योधन किस कारण आना हुआ? उन्होंने कहा कि गुरूदेवआपसे याचना करने आया हूँ। ! आज्ञा दे तो उच्चारण करूं। उच्चारण करो। जो आप कहोगे, वह मैं अवश्य पूरा करने का प्रयत्न करूंगा। दुर्योधन ने तीन वचन लिए और कहा कि महाराज मैं तो यह ! चाहता हूँ, कि पाण्डवों का यज्ञ चलता है, उसको किसी न किसी प्रकार नष्ट कराओ। तो दुर्वासा ने कहा कारण? महाराज मैं इस कारण को तो जानता ही नहीं। !

अहादुर्वासा !बेटा ! मुनि सोचते रहे। मध्यम काल आ गया। सोचते रहे, मुझे क्या करना है। उसी समय वह मार्ग में आ गए, जहाँ ऋषि मण्डल यज्ञ में से भोजन पा पाकर आ रहे थे। दुर्वासा मुनि ने देखा झुण्ड का झुण्ड शिष्य मण्डल आ रहे है। उन्होंने उनसे कहा कि अरे, कहाँ से आ रहे हो? महाराजयुधि !ष्ठिर के यहाँ यज्ञ चल रहा है, उस यज्ञ में से भोजन पाकर आ रहे हैं। अच्छाधन्य हो। किस समय भोजन ! मिलता है? उन्होंने कहा कि जब यह सूर्य शिखा पर से अलग हो जाएगा, उसी काल में द्रौपदी भोजन कर लेगी और उसके पश्चात् बटलोई में भोजन उत्पन्न नहीं होगा।

मुनिवरों ऐसा !सुना जाता है, कि दुर्वासा मुनि सोचता रहा, कि मुझे अब क्या करना है। अपना बहुत सा शिष्यमण्डल एकत्रित कर लिया। योगबल से देख लिया कि

द्रौपदी ने भोजन कर लिया है और अब भोजन नहीं रहा है। दुर्वासा मुनि अपने शिष्यमण्डल को लेकर उस स्थान पर पहुंच गए, जहाँ मर्यादा वाली महारानी द्रौपदी विराजमान थी। देखो, उस समय पाण्डव भी भोजन पाकर मार्ग में भ्रमण कर रहे थे। वहाँ जाकर महाराजा दुर्वासा विराजमान हो गए।

महारानी द्रौपदी ने दुर्वासा मुनि से कहा कि भगवनकिस प्रकार आना हुआ !? उन्होंने कहा देवीमैं आज तुम्हारे दर्शनों के लिए आय !ा हूँ, कहिए भगवनआप हस्तिनापुर ! वह दुर्योधन अब भी नग्न देवकन्याओं को सभा में !से विराज रहे हैं। क्या हे ऋषि नचाने का कार्य करता है या नहीं? दुर्वासा लज्जित होकर बोला कि नहीं देवी। अब तो नहीं करते। अच्छा शान्त होकर, द्रौपदी ने कहा कहिए दुर्वासाआप भोजन पाए !ंगे या आप भोजन पा कर आए हैं? दुर्वासा ने कहा कि पुत्रीमैं तो भोजन पाने आया ! हूँ।

अहाद्रौपदी मर्यादी वाली थी। हृदय में वार्त्ता आ समाई !, कि यह पापी मेरे पतियों को श्राप देने के लिए आया है। उनका यज्ञ नष्ट करने आया है। यह कोई न कोई ऐसी योजना सोचेंगे। अब मैं इससे अपने पतियों का अपमान नहीं देखना चाहती। उसके लिए कोई अशुद्ध वाक्य नहीं सुनाना चाहती। मुझे अपने प्राणों को शान्त कर देना चाहिए। महारानी द्रौपदी ने महाराजा दुर्वासा से कहा तो अच्छा भगवन्आप ! सरयू में स्नान करके आईए, और मैं आपके लिए भोजन नियुक्त कर रही हूँ। उसी काल में महर्षि दुर्वासा मुनि महाराज वहाँ से अपने शिष्य मण्डल को लेकर सरयू में स्नान को चल दिए और द्रौपदी ने एकान्त स्थान में महाराजा अर्जुन के अस्त्र शस्त्र युक्त हो रहे थे, पहुंचकर अपने अस्त्रों को नियुक्त किया और मन में प्रभु से प्रार्थना कर रही थी, हे विधातामैंने बहुत कष्ट पाया है !, मैं अपने प्राणों को शान्त करने जा रही हूँ, मैं अपने पतियों का अपमान नहीं देखना चाहती। आज दुर्वासा मुनि उन्हें नष्ट भ्रष्ट करने या पहुंचे हैं, मैं यह नहीं देखना चाहती।

मुनिवरोंयह याचना कर रही थी !, कि इतने में योगीराज कृष्णा वहाँ आ पहुंचे और द्रौपदी से पूछा भौजाईआप क्या कर रही हैं !? उन्होंने कहा विधाताअपने प्राण !

शान्त कर रही हूँ। क्यों शान्त कर रही हो? देखो,दुर्वासा मुनि श्राप देने आया है। मैं ! कैसे आया है !अपने पतियों का अपमान नहीं देखना चाहती। उन्होने कहा देवी? विधाताभोजन पाने आया है !, परन्तु भोजन है नहीं। न मिलेगा और न देंगे और वह हमें यहाँ से श्राप दे करके चला जाएगा।

अहामहाराज श्रीकृष्णा ने कहा !उसी समय मुनिवरों !, देवीतुम्हारे द्वारा भोजन नहीं !, तो क्या हमारे द्वारा नहीं है? हमारे द्वारा तो भोजन है।

बेटा !मन का संकल्प बड़ी योजना वाला है। योगीराज ने बेटाषोडश कलाओं को ! जाना। षोडश कलाओं को जानकर देखो, मानव के द्वारा क्या क्या प्रदीप आ जाते हैं। क्या क्या, अपने जीवन का प्रदर्शन करने वाला मानव बन जाता है।

महाराज श्रीकृष्णा ने कहा तुम्हारी बटलोई में कोई भोजन भी है? द्रौपदी व्याकुल होकर बोली, महाराजबटलोई में भोजन होता !, तो दुर्वासा को न दिया जाता। परन्तु उस बटलोई में देखो, कि एक अन्न कण लगा हुआ था इस एक अन्न कण का उन्होंने आहार किया और मन के संकल्प से दुर्वासा और उसके शिष्यमण्डल सब को तृप्ति हो गई।

पूज्य महानन्द जीः हास्ययदि आपने पा लिया !तो गुरू जी ....., तो हमारी तृप्ति हो जाया करे।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यनहीं ....., अरे, भाई ऐसा नहीं है। !

पूज्य महानन्द जीः तो आपने तो एक ऐसा वाक्य उच्चारण कर दिया, जो एक आश्चर्यजनक वाक्य है।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो हाँ, महानन्द जीयदि तुम षोडश कलाओं को जानने वाले होते !, तो तुम्हें प्रतीत हो जाता। तुमने तो षोडश कला क्या, एक कला भी अब तक नहीं जानी है।

पूज्य महानन्द जीः हास्यबिना जाने ही सुन्दर हैं !हम तो भगवन् ....., परन्तु आज तो हम यह जानना चाहते हैं कि यह कैसे हो जाता है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाजब योग का प्रकरण आएगा !, तो उच्चारण करेंगे। अब समय

आज्ञा नहीं देता है।

पूज्य महानन्द जीः कृपा कीजिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः मुनिवरोंमहानन्द जी उच्चारण करते चले जा !अभी अभी मेरे प्यारे ! रहे थे, कि यदि आप भोजन पा लिया करें, तो हमारी तृप्ति हो जाया करेगी। परन्तु यह वाक्य यह नहीं कह रहा है। आज हम कहते चले आ रहे हैं, कि यह मन का एक प्रदीप ऐसा है, जिस मन को जाने से मानव को प्रतीत हो जाता है कि यह मन क्या क्या कर देता है। आज हमें विचारना है कि यह मन क्या पदार्थ है, जिस मन के संकल्प से तृप्ति हो जाती है, जिसको यौगिक क्रियाओं से, षोडश कलाओं से जाना जाता है। समय मिलेगा तो षोडश कलाओं को उच्चारण करेंगे, बेटाआज तो समय ! आज्ञा नहीं दे रहा है। आगे बहुत कुछ उच्चारण करना है।

इतने में देखो, मुनिवरोंपाण्डव मार्ग में से आ पहुंचे और महाराज श्रीकृष्ण से बोले ! महाराजआप कैसे आ पधारे !? महाराजा श्रीकृष्ण ने कहा कि जब कण्ठ किया जाता है, तभी आ पहुंचते हैं। वह तो विराजमान हो गए। महारानी द्रौपदी ने भीम से कहा कि महर्षि दुर्वासा सरयू में स्नान करने गएं हैं उन्हें ले आइये। उनके लिए भोजन नियुक्त हो गया है। महाराजा भीम वहाँ अपनी गदा सहित सरयू जा पहुंचे, जहाँ देखो, स्नानम् ध्यानम् हो रहा था। महाराजा भीम ने दुर्वासा मुनि से कहा कि महाराजमहारानी द्रौपदी आपको भोजन के लिए कंठ कर रही है !, भोजन नियुक्त हो गया है।

अहादुर्वासा के मन में विचार आया !, कि अरे, भोजन नियुक्त हो गया है। मेरी अभिलाष पूर्ण नही होगी आज तू वचनों से मिथ्या बनजाएगा अब क्या करना है, भोजन नियुक्त हो गया है। उसी काल में मुनिवरोंदुर्वासा ने कहा !, मुझे भोजन की इच्छा नहीं है, मैं भोजन नहीं चाहता। महाराज भीम ने कहा कि महाराजया तो ! आप भोजन करने चलें अन्यथा मैं अपनीगदा से आपके ऊपर प्रहार करूंगा। अब दुर्वासा मुनि को चिंता आ पहुंची, कि आज तो तुम्हारी मृत्यु भी आई।

मुनिवरोंदुर्वासा को गदा का भय नहीं था !, दुर्वासा मुनि के हृदय में जो पाप था,

उसी का प्रहार था और वह उस काल में, उस पाप का एक महान प्रदर्शन कर रहा था। दुर्वासा मुनि जब उसके मध्यम मार्ग में आए तो कहा, भीममुझे इच्छा नहीं है। ! भीम ने तब भी यही उत्तर दिया कि चलिए, नही तो भुजाओं में गदा है, मैं आपके ऊपर प्रहार करूंगा। महर्षि मार्ग में विचारते चले जा रहे थे, कि कौन सा पदार्थ पाना चाहिए। जो पदार्थ मुझे मिलेगा, उसे ग्रहण कर लेने से इच्छा पूर्ण नहीं होगी। इसलिए आज मुझे वह पदार्थ पा लेना चाहिए, जो आज न मिले और जब वह पदार्थ न मिलेगा तो तू यहाँ से अपनी इच्छा पूर्ण करके चले जाना। दुर्वासा मुनि के हृदय में यही संकल्प विकल्प दौड़ते चले जा रहे थे। दुर्वासा के लिए महारानी द्रौपदी ने बड़ा ऊँचा आसन लगाया और उस आसन पर दुर्वासा मुनि विराजमान हो गए।

मुनिवरोमहारानी द्रौपदी महाराज श्रीकृष्ण के द्वारा जा पहुंची और योगीराज से ! कहा, महाराजदुर्वासा मुनि तो आ पहुंचे !, भोजन कहाँ है? महाराज श्रीकृष्ण ने कहा कि पूर्व प्रश्न करके आओ, कि वह क्या भोजन करेंगें।

देखो,दुर्वासा मुनि जो अपने मन में संकल्प किए बैठा है !, कि आज बिना ऋतु का आम का फल मंगाऊंगा जिसे वह देना सकेंगे तू श्राप देकर चला जाएगा, दुर्वासा यह विचार कर रहा था, कि महारानी द्रौपदी आ पहुंची और कहा, कहिए भगवन्आप ! क्या भोजन करेंगे? दुर्वासा ने कहा, पुत्रीमैंने तो आज एकादशी का व्रत किया है !, आज मैं अन्न तो पाऊंगा नहीं। देखो,मुझे तो आम का फल चाहिए। मैं बिना ऋतु ! का फल पाया करता हूँ।

अहाद्रौपदी व्याकुल हो गई और कहा कि अरे !, यह तो हमारा जीवन नष्ट करने आया है। श्रीकृष्ण से कहा, महाराज !वह तो हमारा जीवन नष्ट करने आया है। वह बिना ऋतु का, आम का फल चाहता है। महारानी द्रौपदी से श्रीकृष्ण ने कहा, उच्चारण करके आओ, कि कच्चा आम खाएंगे या पक्का आम पाएंगे। वहाँ से जाकर द्रौपदी ने दुर्वासा से कहा, कहिए महाराजकच्चा आम पाएंगे !, या पक्का? अब दुर्वासा मुनि को बड़ी चिंता हुई कि अरे, इनके द्वारा तो आम का फल है। यदि तूने कच्चा मांग लिया, तो इनके द्वारा कच्चा ही आम न हो और पक्का मांग लिया, तो पक्का ही न हो, तो वह

बड़ी चिंता में पड़ गया। दुर्वासा मुनि ने कहा पुत्रीमैं तो दोनों प्रकार के ही खाऊंगा। ! जब दुर्वासा ने ऐसा कहा, तो द्रौपदी, महाराज श्रीकृष्ण से बोली कि महाराजवह तो ! दोनों प्रकार के उच्चारण कर रहा है और एक वाक्य और कहा कि यदि मेरे मुख में आ करके पड़े, तो पाऊंगा अन्यथा नहीं पाऊंगा।

मुनिवरोंदेखो !, महाराज श्रीकृष्ण सभी योगों को जानता था। भ्रष्टयोग को भी !जानता था, जिसको मुनिवरोंप्रवाहा भवन्ति अश्वचते आपन्ति भ्रष्टामकृधे मनश्चति। महाराज ! जाओ और कहो कि मुंह ऊपर को बहा करके !श्रीकृष्ण ने कहा कि द्रौपदी आप ऊपर !विराजमान हो जाएं। उसी समय द्रौपदी ने दुर्वासा से कहा कि महाराज को मुंह बहा करके विराजमान हो जाईए आपके लिए फल आने वाला है।

अहा दुर्वासा ऊपर को मुंह बहाकर विराजमान हो गएं। !

हास्य आज हमारे महानन्द जी आम का फल पाना चाहते हैं। .....

तो मुनिवरोंअभी अभी उच्चारण हो रहा था !, महर्षि दुर्वासा मुनि विराजमान हो गए। महाराज श्रीकृष्ण ने महान यौगिक क्रियाओं से, योग सिद्धियों से उन्होंने दुर्वासा मुनि को एक चमत्कार दिखाया और उन्होंने बेटाक्षण समय में अन्तरिक्ष में एक आम का ! वृक्ष लग गया। आम का वृक्ष लगजाने के कारण उसी काल में दुर्वासा मुनि ने कुछ ही समय में देखा कि आम के वृक्ष पर पुष्प आने लगे, कुछ समय में देखा कि फल भी आने लगे, कुछ काल में देखा कि कुछ आम कच्चे हैं कुछ पक गए हैं। अब मुनिवरोंउसी काल में एक वायु चला !, जिससे बेटाअब कच्चे व पक्के दोनों आम ! झड़ने लगे, अब दुर्वासा मुनि के जो कच्चा आम लगता था तो व्रज के तुल्य और पक्का आम आता था बेटाउससे उसके सब वस्त्र भ्र !ष्ट हो जाते थे। अब दुर्वासा मुनि व्याकुल हो गएं और व्याकुल होकर के कहा, पुत्रोंमेरे प्राणों का दान दो। मैं अपने ! प्राणों का दान चाहता हूँ। मैं आपका फल नहीं चाहता।

हास्यदुर्वासा मुनि का छोटा सा मुख !महानन्द जी ....., उन आमों से बहुत बड़ा मुख बन गया और उसी समय महारानी द्रौपदी मग्न होने लगी और महाराजा कृष्ण से कहा महाराजवह तो शान्तम क्रयश्चते शान्ति को कह रहा है। उसी काल में महाराज !

कृष्णा ने कहा, उच्चारण करके आओ, उन्हें कोई बेल पत्र तो नहीं चाहिए। मुनिवरों ! देखो,द्रौपदी जो वहाँ से बहती हुई गई और दुर्वासा म !ुनि से कहा महाराजआज ! आपने एकादशी का उपवास किया है आज आपको बेल पत्र तो नहीं चाहिए। दुर्वासा यदि मेरे शरीर में इस प्रकार बेल पत्रों ने आक्रमण किया !मुनि बोले पुत्री, तो प्राणान्त हो जाएगें। मैं तो प्राणों का दान चाहता हूँ। मुझे मेरे प्राणों का दान दीजिए। दुर्वासा मुनि व्याकुल हो गए। महाराजा द्रौपदी ने कृष्णा से कहा महाराजशान्तम् ! भवतो अश्चेत महाराजा कृष्णा ने शान्ति का प्रदर्शन किया।

मुनिवरोंउसी काल में दुर्वासा मुनि ने कहा अरे !, दुर्योधनतू धर्मात्माओं को सताना ! चाहता है, नष्ट करना चाहता है, जा तेरा संसार में विनाश हो जाएगा और पाण्डवों की विजय हो जाएगी। यह दुर्वासा मुनि ने कहा परन्तु आज निर्णय कराए देते हैं, कि महाराज दुर्वासा मुनि के इतना करने से, दुर्वासा मुनि के सात जन्मों का पुण्य समाप्त हो गया। बेटासात जन्मों का पुण्य समाप्त होने से दुर्वासा मुनि वहा !ँ से बहते हुए अपने शिष्य मण्डल में जा पहुंचे, शिष्य मण्डल ने कहा कि कहिए भगवन्आप ! आनन्दित तो हैं। दुर्वासा ने कहा आनंद कहाँ, आज मेरे जीवन का सभी कुछ दुर्योधन विनाश करा चुका है। आज मेरे सात जन्मों का पुण्य समाप्त हो चुका है। आज मैं पांडवों को नष्ट करने की योजना बना करके गया, परन्तु देखा मेरे सात जन्मों का सब कर्म समाप्त हो गया।

तो मुनिवरोंइससे आज मानव को विचार लगा लेना चाहिए। आज हम दूसरों की ! त्रुटियों को, दूसरों को हानि पहुचांना चाहते हैं, दूसरों को नष्ट करने की योजना बनाते रहते हैं, यह योजनाएं न बनाओ। अन्यथा मानव के सात जन्मों के पुण्य समाप्त हो जाते है ।

मेरे प्यारेमहानन्द जी कहेंगे !, कि महाराजा कृष्णा ने यह आम का फल कैसे पान कराया और अन्तरिक्ष से कैसे आए, परन्तु बेटायह तुम्हें निर्णय करा देते है !, 'यास्तविकम भवने अश्चते' यह वास्तविक आम का प्रदर्शन नहीं था, केवल तुम्हें एक वाक्य निर्णय कराने के लिए महाराजा कृष्णा ने उस समय एक प्रतीक दिया और

महानन्द जी यह तुम जान भी चुके हो।

पूज्य महानन्द जीः गुरूदेवहम जानते है। आधुनिक काल में इसको और कुछ ! कहते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या कहते हैं बेटा । !

पूज्य महानन्द जीः इसको मस्लम् भवति अस्ते।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा, चलो, कोई बात नहीं। इसको तो तुम मान लेते हो न।

पूज्य महानन्द जीः हां हां भगवन् मान लेते हैं आपके वाक्य को। !

तो मुनिवरोंअभी अभी हम उच्चारण कर रहे थे कि मानव को विचारना चाहिए !, कि यदि मानव मर्यादा से पृथक् चलता है, तो पुण्य कर्म भी समाप्त हो जाते हैं। दुर्वासा मुनि को यह चाहिए था, कि वह पांडवों को सुख पहुंचाता, जो राजा होते हुए भी मार्ग मे आपत्ति काल में पड़े थे। उन्होंने यह तो सोचा नहीं, केवल अपने मान में आ करके, राज सम्मान के लिए, पांडवों का विनाश करने गए। अपने सात जन्मों के पुण्य को समाप्त कर बैठे। जिन सात जन्मों के पुण्य से ऋषि को उपाधि मिली, वह ऋषि उपाधि ही समाप्त हो गई। वह पुण्य ही समाप्त हो गया। देखो, यह है मानव की आकृति। बेटादुर्वासा मुनि ही नहीं !, परन्तु मर्यादा वह पदार्थ है, जिस मर्यादा में चल करके यह सब समाज का समाज सुधर जाता है और अपने कर्त्तव्यों के तट पर आ जाता है।

गंगा स्नान से पाप मुक्ति

आज हमें नारद की एक आलंकारिक रूपों में वार्त्ता कण्ठ आ गई है। देखो, एक समय सब प्रजा अपने कर्मों की मर्यादा को ऊँचा न बना करके गंगा स्नान को चली जा रही थी। मार्ग में नारद मुनि विचर रहे थे। देव ऋषि नारद ने प्रजा से कहा हे प्रजाओंआज तुम कहाँ चली जा रही हो !? उन्होंने कहा कि महाराजआज हम गंगा ! स्नान को जा रहे है। क्यों? आज जीवन में जो पाप किए है, उन सबको गंगा को अर्पण करेंगे। अहानारद ने सोचा अ !रे, गंगा तो बड़ी पापिनी है जो प्रजा के सभी पापों को एकत्रित कर लेती है और पाप एकत्रित करती चली जा रही है।

नारद मुनि गंगा के द्वारा जा पहुंचे, गंगेति गंगोत्र भस्तमम् गंगा से कहा कि तुम बड़ी पापिनी हो। तुम्हारे द्वारा प्रजा के सर्व पाप एकत्र हो गए है। गंगा ने कहा कि महाराजयह पाप मेरे द्वारा नहीं है। मैं जो समुद्रों को दे देती हूँ। समुद्र उनको ! आकर्षित कर लेता है। नारद मुनि ने सोचा यह पाप तो गंगा के द्वारा न रहकर समुद्रों के द्वारा है।

नारद मुनि वहाँ से समुद्रों के द्वार जा पहंचे और कहा कि हे समुद्रोंतुम तो ! बड़े पापी हो। तुम्हारे द्वारा तो बड़े पाप एकत्रित हो रहे है। प्रजा के सब पाप गंगा तुम्हें दे देती है। अहासमुद्रों ने कहा कि यह पाप हमारे द्वारा नहीं है। हम पापों को एकत्रित ! करते। इन सब पापों को, जब सूर्य से तेज आता है, तो इसके जलों का उत्थान होता है। यह सब पाप हम मेघों को दिया करते हैं।

नारद मुनि मेघों के द्वार जा पहुंचे, और मेघों से कहा कि अरे, मेघोतुम बड़े पापी ! देखो !हो। इस प्रजा के सब पाप तुम्हारे द्वारा एकत्रित हो रहे हैं। मुनिवरों,उन मेघो ! ने कहा कि अरे, तुम कितने भोले हो। यह पाप मेरे द्वारा क्यों होते। मैं इन सब पापों की वृष्टि कर देता हूँ, और सब वृष्टि रूप बनकर के देखो, प्रजा के द्वार पहुंच जाते हैं।

मर्यादा में शान्ति

मुनिवरोंदेखो !,इस वाक्य को विचारना चाहिए। देखो !, सब पाप प्रजा के द्वार चले गए हैं। आज मानव मर्यादा को न जानकर पापों को करता चला जा रहा है। कर्मों की मर्यादा को न जानकर, गंगा के स्नान को जा रहा है परन्तु मानव ने गंगा स्नान का रहस्य नहीं जाना। आज मानव को अपनी मर्यादा विचारनी चाहिए, और मर्यादा में चलना चाहिए। यदि मानव के द्वारा मर्यादा है, तो जीवन है, अन्यथा संसार में मानव का जीवन ही नहीं। जिस राष्ट्र में मर्यादा है वह राष्ट्र है, और जिस राष्ट्र में मर्यादा नहीं वह राष्ट्र भी बेटासंसार में न होने के तुल्य है। उनमें नाना प्रकार की आपत्तियां ! महानन्द जी कहते चले जा रहे है कि आज का राष्ट्र !हैं। जैसा मेरे प्यारे आपत्तिजनक बन रहा है परन्तु हम गौरव के सहित नहीं कहते, हम तो यह कह रहे

हैं कि यह संसार क्यों न अशान्ति वाला बनेगा जब संसार की मर्यादा ही पृथक् हो चुकी है। जब संसार में अपनी संस्कृति का प्रतीक समाप्त हो चुका है, उसे शान्त करने के लिए जा रहे हैं। शान्ति उसी काल में आएगी, जब इनके द्वारा मनोमय कोष में हो करके, अपने हृदय को पुष्टिकारक बनाने के लिए, अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए, हर प्रकार से ऊँची से ऊँची योजना बनाने से पूर्व, अपने मन की योजना को ऊँचा बनाया जाएगा। बेटाबहुत पूर्व काल में कह चुके हैं। आज एक ही राष्ट्र ही ! नहीं, मुझे तो मेरे लिए प्यारे महानन्द जी ने ऐसा कहा है, कि यह संसार ही अशान्ति में दौड़ता चला जा रहा है। आज प्रत्येक राष्ट्र में रहने वाला व्यक्ति मातृभूमि की रक्षा करने के लिए उद्यत हो रहा हैं, अवश्य करनी चाहिए। परन्तु जब तक मर्यादा नहीं आएगी तब तक शान्ति, किसी राष्ट्र में नहीं होगी। संसार में शान्ति का प्रदर्शन करना चाहिए। परन्तु शान्ति कई प्रकार से की जा सकती है। बेटाशान्ति डंडे से भी की ! जाती है। शान्ति इसी को नहीं कहते, कि मौन होकर बैठ जाओ। नहीं, शान्ति इसको कहते हैं कि जो हमारी शान्ति में बाधक बने, उसकी धूर्तता को शान्त करके हमारे हृदय में शान्ति उत्पन्न करो ।

मुनिवरोंयह शान्ति का प्रदर्शन कई प्रकार का कहा जाता है। जैसे स्वयम्भु मनु ! महाराज ने कहा है। जैसा महाराज मरीचि ने कहा है, जैसा महाराजा श्रीकृष्णा ने कहा है कि हे अर्जुन शान्ति का यही प्रतीक नहीं है। शान्ति !का प्रतीक अपने कर्त्तव्यों का पालन करना है, अपनी मर्यादा का पालन करना है। यदि मर्यादा नहीं है, शान्त बने बैठे हो, तो शान्ति का कुछ नहीं बनेगा। शान्ति के साथ साथ मर्यादा होनी चाहिए।

आज मुनिवरों हमें इस संसार को देखते हुए लाखों वर्ष हो गए हैं। देखते चले आ ! रहे है और विचारते चले आ रहे कि शान्ति के साथ साथ मर्यादा होनी चाहिए। जब तक शान्ति के साथ मर्यादा नहीं है तक तक मानव का कार्य किसी प्रकार नहीं चलेगा।

तो यह है कि आज का हमारा आदेश। उच्चारण कर रहे थे कि विधाताहमारी रक्षा !

करो। आज हम अपनी ही नहीं संसार कीरक्षा चाहते हैं। हे विधाताआप हमारे ! हृदय में शान्ति उत्पन्न करो, आज हम अपने राष्ट्र को, अपनी अयोध्या नगरी को, रामराज्य बनाना चाहते हैं, रामराज्य बनाओ। हे विधाताहमारे द्वारा नियम और ! मर्यादा दोनों होनी चाहिए, शान्ति और मर्यादा दोनों होनी चाहिए। नाना अस्त्र शस्त्रों के द्वारा हमारी मर्यादा पौष्टिक होनी चाहिए। इससे हम मर्यादा में बंधकर अशान्तिदायक व्यक्तियों को और महान धूतर्ता को नष्ट करने वाले बने। जैसा देखो, भगवान् राम के जीवन से मिलता है। जब महाराजा विश्वामित्र यज्ञ करते थे, दैत्य उसको नष्ट करना चाहते थे, उसी काल में देखो, राम अपने जीवन का सन्देश लेकर महान यज्ञ की रक्षा करने के लिए, उन धूर्तो को नष्ट करने के लिए, उन्होंने नाना योजनाएं बनाकर, उन धूर्तो को नष्ट करके यज्ञ की रक्षा की। अब हमारा आदेश समाप्त हो गया है। बेटाकल समय मिला तो एक और ऊँचा प्रदर्शन कर !ेंगे।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्आज आपका वाक्य विचित्र लगा !गुरुदेव !, परन्तु एक वाक्य हमारे आँगन में नहीं आया, यह जो आपने मन का संकल्प कहा है। पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा यह भी शनैः शनैः सभी कुछ तुम्हारे आँगन में आ जाएगा। ! अच्छा, यह आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया। अब वेदों का पाठ करेंगे इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त। वेद पाठ।

४ 20 10 1963 संध्या क्या है?

देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे (वेद) समक्ष, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गान गा रहे थे। आज कैसा सुहावना समय है। जिस सुन्दर समय में परमपिता परमात्मा ने हमें इन वेद मन्त्रों के उच्चारण करने का सुअवसर दिया। आज इस अमृतबेला में उस गान को गाएं जिससे हम देवता बन जाएं मुनिवरोंदेवता जन प्रातःकाल में कैसे अमृत को पान किया करते हैं !

आज आरम्भ के मन्त्र में ही प्रातरग्नि आ रहा था। हे प्रातःकाल की अग्नितू हवि है। ! तू हव्य पदार्थों को उत्पन्न करने वाली है। तू हमें हव्य पदार्थों का पान करा जिससे हम देवता बन जाएं और देवता गणों के समाज में विराजमान होकर देव वाणियों को

कुछ विचारें हमारी विचारधाराएं हर स्थान में देव वृत्ति ही बनी रहे।
प्रायः मानव कहते हैं, मेरे प्यारेमहानन्द जी भी कहा करते हैं कि देवता जन कौन ! से वाक्यों को विचारा करते हैं? मुनिवरोंवह हर समय दूसरों के कल्याण के लिए ही ! विचार करते हैं वह हर समय दूसरों को कुछ देते हैं वे अपनी त्रुटियों को देखकर दूसरों के गुणों को धारण करते हैं संसार में दूसरों के कल्याण की भावना जिनके हृदय में रहती है, वे देवता कहलाते हैं वे दूसरों की निन्दा नहीं करते। जो दूसरों की निन्दा करते हैं उन्हें देवता नहीं कहते। आत्मा की व्याहृतियों को जानने वाले को देवता कहते हैं
मुनिवरोंआज हमें यह प्रातःक !ाल का ऊँचा समय, बहुत समय के पश्चात् मिला। आज इस ऊँचे समय में कुछ संध्या का प्रश्न करते चले जाएं इस प्रातःकाल में प्रभु का गुणगान गाएं हे परमात्मन्तू कल्याण करने वाला है। हमारे कल्याण के लिए ! हम आपसे कल्याण चाहते हैं !नाना सामग्री उत्पन्न की है। हे प्रभु
हे इन्द्रहमारे जीवन को भी नियमित बना। !इस संसार को नियम से बनाने वाले ! जब हमारा जीवन नियमित होगा तो हम सब ही कुछ कार्य कर सकेंगे। आपने हम उस महान ज्योति को !प्रातःकाल में सूर्य को उत्पन्न किया है इसी प्रकार हे देव चाहते हैं जिससे हमारा आत्मिक कल्याण हो। वह कौन सी ज्योति है?
मुनिवरोंवह ज्योति हमारी सन्ध्या की व्याहृतियां हैं जब सन्ध्या की व्याहृतियों को ! जाना जाता है तो वह सन्ध्या वास्तव में हमारा कल्याण करा देती है। जब देवता सन्ध्या के द्वार पर जाते हैं तो सन्ध्या पुकार कर कहती है कि हे देवताओं तुम आदि मेर ा आदर करोगे, अनुकरण करोगे तो तुम संसार में देवता बन जाओगे यदि तुम मुझे ठुकराओगे तो तुम संसार में ठुकराए जाओगे।
मुनिवरोंकहते हैं कि एक समय ब्रह्मा भी देवताओं के द्वार पहुंचे। ब्रह्मा के चरणों को ! हमारे कल्याण के लिए !स्पर्श करते हुए देवताओं ने कहा कि भगवन कोई मार्ग निर्णय कीजिए। उस समय ब्रह्मा जी बोले, अरे, देवताओंआज तुम कौन से वाक्य ! से देवता बने हो, इसका मुझे कुछ प्रकाश दो।

उस समय देवताओं ने कहा, हे भगवनहम किसी का आदर करके और अनुकरण ! करके देवता बने हैं

तब ब्रह्मा ने कहा, तुम किसका आदर करते हो?

उन्होंने कहा कि हम तो संध्या का आदर करते हैं हम दुर्गा का आदर करते हैं

उस समय ब्रह्मा जी बोले, ओ देवताओं तुम कल्याण का और क्या मार्ग चाहते हो। ! मुनिवरोंदेखो !, उस समय देवताओं ने कहा, प्रभु हमें आपके मुखारविन्द की भी तो आवश्यकता है। जो आप अपने मुखारविन्द से कहेंगे वह हमारे लिए अमृत बन जाएगा।

कहते हैं, मुनिवरोंउस समय ब्रह्मा जी ने अपने मुख से इस संध्या को उत्पन्न किया ! यह जो सन्ध्या मैंने तुम्हारे लिए उत्पन्न की है इसका !और कहा कि हे देवताओं अनुकरण करो। यह सन्ध्या तुम्हें और भी देवता बना देगी। आज तुम दूसरों का आदर करके तो देवता बने हो, परन्तु इस सन्ध्या को, जो मेरे मुखारविन्द से उत्पन्न हुई है इसका अनुकरण करो।

तो मुनिवरोंकहते हैं कि सन्ध्या ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुई !, जिसके अनुकरण से ऋषि बन जाते हैं जिससे देवता बन जाते हैं मेरी माताएं दुर्गा बन जाती हैं, माँ काली बन जाती हैं जिससे अपने जीवन को ऊँचा बना लेते हैं आज हमें सन्ध्या की गोद में जाना है।

आज मानव कहते हैं कि ब्रह्मा ने इसे कैसे उत्पन्न किया? जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है तो उससे पूर्व आत्मा उस प्रभु से अनुरोध करता है कि प्रभु कर्म करने के लिए सृष्टि उत्पन्न करो। सृष्टि उत्पन्न होने के पश्चात् मुनिवरोंऐसा कहते हैं कि देवताओं ने ! यह हमारे कर्म करने का क्षेत्र तो बनाया परन्तु हमें देवता !यह याचना की कि विधाता ब्रह्मा ने अपने मुखारविन्द !बनने का और भी कुछ प्रयत्न कीजिए। कहते हैं मुनिवरों से सन्ध्या को उत्‍पन्न किया। मुनिवरोंदेखो !, सन्ध्या प्रकाश देती आई है और संसार को और भी प्रकाशमान बना दिया। जैसे मुनिवरोंआज सूक्ष्म सा प्रकाश हो रहा है ! और यदि सूर्य का प्रकाश आ जाए तो यह प्रकाश शान्त हो जाता है। वह प्रकाश

फीका पड़ जाता है। इसी प्रकार विधाता ने यह सूक्ष्म सा प्रकाश तो संसार को दिया परन्तु एक सूर्य जैसा प्रकाश सन्ध्या का आया। सन्ध्या के आते ही सबने उसको अपने में धारण करना प्रारम्भ कर दिया। उसका अनुसरण किया। तो कहते हैं बेटावहाँ ! और भी प्रकाश हो गया संसार में आत्मा के द्वारा जो मल, विशेष, आवरण थे वह भी सब शान्त होने लगे। वह इस प्रकार शान्त हो गए जैसे सूर्य उदय होने पर रात्रि की प्रभा शान्त हो जाती है। इसी प्रकार मुनिवरोंसन्ध्या के अनुकरण से मनुष्य का हृदय ! निर्मल और स्वच्छ बन जाता है जिस मनुष्य का हृदय निर्मल और स्वच्छ बन गया उसका वास्तव में कल्याण हो गया।

तो मुनिवरोंआज हमें अपना कल्याण करना है और विचारना है कि कल्याण के ! लिए सबसे मुख्य वार्त्ता क्या है? मेरे प्यारेमहानन्द जी ने निर्णय कराया कि इस ! समय संसार में प्रत्येक स्थान में माँ दुर्गा का पूजन हो रहा है। माँ दुर्गा क्या है? माँ दुर्गा भी वह सन्ध्या है।

माँ दुर्गातू वास्तव में कल्याण करने वाली है। आज के वेदपाठ में कई स्थानों में माँ ! तुझे अष्ट भुजाओं वाली कहा जाता है। तू !दुर्गा का प्रकरण आ रहा था। हे माता दुर्गे वास्तव में अष्ट भुजाओं वाली है। जब तू आठ भुजाओं को लेकर संसार में आती है तो यह संसार प्रकाशमान हो जाता है। सिंह तेरा वाहन है। तू सिंह रूपी वाहन पर सवार होकर आ, और आ करके दैत्यों को शान्त कर और देवताओं की रक्षा कर। माता दुर्गेतू वास्तव में कल्याण करने वाली है। तू वास्तव में हमारे जीवन को !, हमारे हृदय को उदार बनाने वाली है। मल, विक्षेप आवरण को शान्त करने वाली है और आत्मा निर्मल और स्वच्छ बना देती है।

मुनिवरोंदेखो !, अष्ट भुजाओं वाली दुर्गा कौन है? जिसके अष्ट भुजाएं हैं दुर्गा नाम है बेटा विद्या का। !

मुनिवरोंदेखो !, विद्या किसी के आधार पर आती है। विद्या का जो वाहन है वह भी विचित्र है। वह कौन है? वह देखो, सिंहनाद है। जिसके आधार से विद्या आती है। यह अष्ट भुजाओं वाली विद्या अष्ट भुजाओं वाली दुर्गा कौन है?

मुनिवरोंदेखो !, जब मनुष्य ज्ञान के मार्ग में जाता है तो विद्या को पान करने वाला बन जाता है। उस समय यह दुर्गा, यह विद्या इस सब ब्रह्माण्ड का जिसमें आठ दिशायें हैं उनका ज्ञान करा देती है। उसके ज्ञान और विज्ञान को जान जाता है कि पूर्व में क्या है? पश्चिम में क्या है? उत्तरायण में क्या है? दक्षिणायन में क्या है? उन दोनों के माध्यम में क्या है? आठों दिशाओं को जानने वाला जिज्ञासु मुनिवरोंदेखो !, दुर्गा का अनुकरण करता है।

दुर्गा माता की पूजा कैसे की जाती है?

दुर्गा माता की पूजा मनुष्य उस काल में कर सकता है जब उसके द्वारा ज्ञान होता है, विद्या होती है, सिंहनाद होता है। सिंहनाद कौन सा है?

मुनिवरोंदेखो !, जिससे अपराधियों को कुचला जाता है। अज्ञान रूपी पशुओं को शान्त किया जाता है। हृदय निर्मल और स्वच्छ बन जाता है। तो मुनिवरोंमाँ दुर्गे भी ! सन्ध्या है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे एक वार्त्ता प्रकट की कि गंगा में एक पर्व आता है ! और उस पर्व में जो गंगा की अमृतधारा को पान करता है वह वास्तव में अमर हो जाता है। वह निर्मल और स्वच्छ बन जाता है। वह देवता बन जाता है। वह उस गंगा की दुग्ध तुल्य धारा को पान करके संसार से पार हो जाता है।

वह कौन से पूर्व का स्थान है जिसके करने से मानव का कल्याण होता है? जिस पर्व में स्नान करने से आत्मा के मल विशेष आवरण शान्त हो जाते है। वह कौन सा निर्मल स्वच्छ जल है?

मुनिवरोंआज हम विचारते नहीं प्रातःकाल के पर्व में हमारा हृदय निर्मल और स्वच्छ ! कैसे बन सकता है? प्रातःकाल की गंगा में स्नान से बन सकता है। माता दुर्गा की पूजा से बन सकता है। आज उस सन्ध्या के अनुसरण करने से बन सकता है।

गंगा की कौन सी धारा है जिसे पर्व कहते हैं मेरे महानन्द जी ने कहा कि पूर्णिमा का एक अलौकिक समय आता है। जिस समय गंगा में एक महनता आती है। जिस पर्व के स्नान से मानव निर्मल बन जाता है।

मुनिवरोंवह गंगा हमारे शरी !रों में रमण करती चली जा रही है। वह वेग से बहती चली जा रही है। मुनिवरोंवह है हमारी सन्ध्या। जिसमें ज्ञान का प्रकरण आता है ! जो !और जिसके स्नान से हमारा हृदय निर्मल और स्वच्छ बन जाता है। मुनिवरों प्रातःकाल में सन्ध्या का अनुकरण करते हैं और एकान्त स्थान में विराजमान हो करके सन्ध्या का पान करते हैं और सन्ध्या में कहते हैं प्रातरग्नि। मुनिवरोंजब ! हमारी रक्षा करो। आज अपनी रक्षा !प्रातरग्नि का पाठ आता है तो कहते हैं हे विधाता मनुष्य सब ही कुछ !चाहते हैं यह जीवन आपका है। यह शरीर आपका है। मुनिवरों देखो, परमात्मा के अर्पण कर देता है। उस समय मनुष्य का हृदय निर्मल और स्वच्छ हो जाता है आत्मा के द्वारा जो मल, विक्षेप आवरण हमारे पाप कर्मों द्वारा, दुष्ट कर्मों द्वारा आ जाते हैं वह उस प्रकाश से सब शान्त हो जाते हैं

मुनिवरोंजैसे एक वस्त्र हैं और उसमें बड़े ही दोष हैं परन्त !ु जब वह जल के समीप जाता है तो जल उसे निर्मल और स्वच्छ बना देता है। इसी प्रकार हमें भी अपनी आत्मा के द्वारा जो मल विक्षेप आवरण हैं उनके शान्त करने के लिए हमें सबसे पूर्व माता सन्ध्या का पूजन करना है। उसके पाठ को करना है। ऋतश्च सत्यश्च का पाठ करना है जिससे हमारा वास्तविक कल्याण हो जाएगा।

आज सबसे पूर्व अपने को बनाना है। मैंने आज से पूर्व काल में कहा था कि देखो, जब मनुष्य शन्नो देवी का पाठ करता है तो कहता है हे देवीतू कल्याण करने वाली ! है। तू हमारे कंठ में आ समा। जैसे जल हमारी तृषा को शान्त कर देता है उसी तरह हमारा कंठ उस जल रूपी तृषा का इच्छुक न रहे। हे शन्नोहमारा तो उस आनन्द ! तू आ और हमारे !का इच्छुक है। जैसे जल शीतल बना देता है उसी प्रकार हे शन्नो !हमारा कंठ मधुर बने। सुन्दर बने। जिससे हे माता !कंठ में विराजमान हो। हे माता हमारे कंठ में जो वार्त्ता होगी, यथार्थ होगी। अन्तःकरण तक जाएगी। हमारे द्वारा जो विक्षेप आवरण हैं हे शन्नो देवीतेरे शान्त हो जाएंगे। जैसे जल से तृषा शान्त हो ! जाती है उसी प्रकार ज्ञान से हमारे मल, विक्षेप आवरण शान्त हो जाएंगे। जब ज्ञान का प्रकाश हो जाएगा तो अन्धकार कहा रहेगा। जैसे रात्रि को शान्त करने वाला सूर्य

प्रातःकाल में आता है और रात्रि का नाश कर देता है इसी प्रकार हे शन्नो देवीतू ! वाणी में विराजमान हो जाएगी और वाणी का प्रभाव अन्तःकरण तक जाने के पश्चात् मल विक्षेप आवरण जो हमारे पापों से बन चुके हैं वह सब शान्त हो जाएंगे। हे ह !माताम तुझसे अनुरोध करते चले जा रहे हैं संध्या में सबसे पूर्व मुनिवरोंअपने ! को बनाना है।

अहादेखो !सन्ध्या की तीन व्याहृतियां होती हैं एक मुनिवरों !, अपने को बनाना है कि मैं कौन हूँ और मैं कैसा बनूं? मेरा हृदय कैसा बने, आज मेरा कंठ कैसा बने? मेरे चक्षुः, मेरे श्रोत्र, मेरी घ्राण कैसी बने? मेरी त्वचा यह सब ही कुछ कैसे बने। अपने को परमात्मा के समर्पण कर दो। प्रत्येक इन्द्रिय के विषय को जानो। पहली व्याहृति यह है। द्वितीय व्याहृति वह है कि हम परमात्मा की सृष्टि का प्रकरण लेते हैं हम परमात्मा का गुणगान गाते हैं हे परमात्माअब हम आपके पात्र हुए हैं मैंने आज से ! पूर्व काल में कहा है कि परमात्मा के गुणगान गाने के लिए तुम पात्र बनो। जैसा मैंने यज्ञोपवीत के सम्बन्ध में भी कहा था कि यज्ञोपवीत लेने से पूर्व तुम पात्र बनो। उसके पश्चात् तुम किसी की याचना कर सकोगे।

आज मुनिवरोंजैसे किसी द्रव्यपति के द्वारा कोई सेवक है। और किसी काल में ! वह वेतन !अपने स्वामी से कहता है कि मेरा जो वेतन है वह मुझे दो। तो मुनिवरों किस काल में प्राप्त करता है। वह उसी काल में प्राप्त करता है जब वह पात्र बनता हमें सबसे पूर्व अ !है। इसी प्रकार मुनिवरोंपने को बनाना है और अपने को जानना है। जब हम अपने को जान जाएंगे तो उसके पश्चात् हम परमात्मा के गुण गाने योग्य होंगे, प्रभु का गुणगान गाएंगे। एक समय वह आएगा कि प्रभु हमारा रक्षक बन जाएगा। मुनिवरोंजब प्रभु हमारा रक्षक बन जाता है तो उस काल में वह हिंसक ! प्राणियों से जो हमें कष्ट देने वाले हैं उनसे हमारी रक्षा करता है। तो मुनिवरोंआज ! सबसे पूर्व हमें पात्र बनना है और सब कुछ परमात्मा के अर्पण कर देना है।

मुनिवरोंजैसा अभी ! अभी व्याख्यान कर रहे थे कि संध्या में सबसे पूर्व शन्नो देवी आता हैतू देवी है !हे शन्नो !, तू हमारे कंठ में विराजमान हो। मुनिवरोंवह शन्नो !

हमारे कण्ठ में विराजमान हो जाती है। इसके पश्चात् आता है। चक्षुः चक्षुः। आगे तू हमारे चक्षुओं को पवित्र !प्रत्येक इन्द्रिय के लिए प्रभु से याचना करते हैं कि हे प्रभु बना और कैसा बना कि हमारे द्वारा पाप दृष्टि न हो। यदि हमारे चक्षुओं में पापाचार की दृष्टि आ गई तो वास्तव में हम पापी बन जाएंगे और एक समय वह आएगा कि वह पाप दृष्टि हमारा मूल बन करके हमारा विनाश कर देगी।

हे विधाताहमारे जो श्रोत्र हैं यह आपकी वार्त्ता को स्वीकार करते रहें दूसरों की ! निन्दा को स्वीकार न करें ये आज गुणों को धारण करने वाले बनें दूसरों की वार्त्ताओं को श्रवण करें इसी प्रकार मुनिवरों !हमारे जो हस्त हैं यह आपके अर्पण हैं विधाता ! इन्हें पवित्र करो। भुजा हमारे पवित्र हों यशोबलम् पवित्र हो। यह कैसे पवित्र बनेंगे? जब प्रभु का गुणगान गाएंगे और इन सबको प्रभु के अर्पण कर देंगे। हम श्रद्धालु बन करके उस प्रभु का अनुकरण करते हैं तो वास्तव में हमारे भुजा विधाता से कहा करते हैं कि है विधातायशोबलम्। यह किसी प्रकार भी ऐसा कार्य न करें कि किसी ! निरपराधी को दण्ड न दें यदि निरपराधी को दण्ड देंगे, तो विधाता हमारा विनाश हो जाएगा। द्वितीय आकर हमारे पर आक्रमण करेगा। आज हम यह चाहते हैं कि हमारे भुजा पवित्र कार्य करें आज सब हम निरपराधी की रक्षा करेंगे तो वास्तव में कल्याण होगा। हे देवहम तेरे अर्पण हैं !तू आ और हे भगवन !कल्याण के करने हारे !

मुनिवरोंदेखो !, इसके पश्चात् आगे चलकर यह पद अशुद्ध मार्ग पर न चलें यह उस मार्ग में चलें जहाँ ऋषि, महर्षियों का सत्संग हो रहा हो। यह उस मार्ग को चलें जहाँ प्रभुआपका गुणगान गाया जा रहा हो। जहाँ दुराचारियों का गुणगान गाया जा रहा ! हो, उस मार्ग को न चलें, वह मार्ग मानव के कल्याण के लिए नहीं

आगे सन्ध्या की व्याहृतियां क्या कह रही हैं बेटाअंग हमारे पवित्र हों हृदय उदार ! हो, पवित्र हो।

इसी प्रकार मुनिवरोंआगे चलकर प्राणायाम क्रिया करके मार्जन किया करते हैं ! प्राणायाम से कहते हैं भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्। हे विधाताहम ! प्राणायाम करें, समाधि में लय हो जाएं जिससे हम इन भूः, भुवः, स्वः, महः, जन,

तपः लोक लोकान्तरों में पहुंच सकते हैं विधाता हमारे द्वारा और कोई साधन नहीं जिससे हम इन लोक लोकान्तरों को जान सकेंगे हम आपकी महिमा को देख सकें यह है मुनिवरों सबसे पूर्व अपने को बनाना। !

मुनिवरोंतू वास्तव में सत्यश्च है। तू !उसके पश्चात् आता है ऋतश्च सत्यश्च। हे विधाता ! वास्तव में सत्य है, पवित्र है। हे विधाताअब हम तेरे आँगन में आने योग्य हो गए हैं ! अब हम पवित्र बन गएं हैं हमने सब ही कुछ आपके अर्पण कर दिया है। उस समय प्रभु का गुणगान गाते हैं।

प्रभु का गुणगान गाने के पश्चात् प्रभुको रक्षक बनाते हैं प्रभु हमें हिंसक प्राणियों से ! बचाओ। उनसे हमारी रक्षा करो। एक समय वह आता है जब परमात्मा रक्षक बन जाता है और हमारा कल्याण करने लगता है।

मुनिवरोंप्रभु मानव का कल्याण किस काल में करता है !? जब हम प्रभु के आँगन में जाने योग्य हो जाते हैं जैसे मुनिवरोंको लोरियों का पान !माता अपने प्यारे पुत्रों ! किस काल में कराती है? जब प्यारे पुत्र व्याकुल हो जाते हैं और माता की याचना करते हैं तब वह माता अपने पुत्रों के भाव को जान लेती है कि मेरा पुत्र क्षुधा !से व्याकुल है। जिसे अपनी लोरियों में लगाकर आनन्दित करा देती है। इसी प्रकार मुनिवरोंवह परमात्मा हमारी रक्षा किस काल में करता है जब हम व्याकुल हो जाते ! हैं और व्याकुल हो करके वैराग्य हो जाता है। केवल उस परमात्मा का ध्यान रहता है। उस काल में परमात्मा हमारा रक्षक बन करके हमारा कल्याण करता है।

मुनिवरोंयह है ब्रह्मा के मुख्य से उत्पन्न हुई सन्ध्या। ब्रह्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में ! मानव कल्याण के लिए सन्ध्या को उत्पन्न किया है। यह मानव के कल्याण करने वाली वह सन्ध्या है जिसका सब ही देवताओं ने अनुकरण किया है। हे सन्ध्यातू ! वास्तव में अमृत को पान कराने वाली है। तेरे से देवता अमृत पान करते हैं यह वह सन्ध्या है जिससे ऋषि बन जाते हैं, जिससे देवता बन जाते हैं, विष्णु बन जाते हैं, शिव बन जाते हैं यह वह सन्ध्या है जिसके प्रभाव से मानव भगवान राम और भगवान कृष्ण जैसा हो जाता है। यह वह सन्ध्या है, जिसका गुणगान करके संसार में

कल्याण की भावनाएं आती हैं

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय निर्णय कराया और आधुनिक काल का एक ! आदेश दिया और कहा कि सन्ध्या का पाठ प्रारम्भ है। परन्तु यह जो मनीराम है यह यह कहीं द्रव्यों में भ्रमण कर रहा .....और ही कहीं भ्रमण कर रहा है। हास्य, तो कहीं पापाचारों में भ्रमण कर रहा है। हमने जो पूर्व पाप किए हुए हैं वह समक्ष आ जाते हैं और वह मनीराम उनमें लग जाता है।

मुनिवरोंमैंने अब से पूर्व अभी ! अभी कहा है और पूर्व भी कह चुका हूँ कि इसके लिए सबसे पूर्व अभ्यास करते करते अपने श्रोत्रों को प्रभु के अर्पण कर देना है। जब यह प्रभु में अर्पण हो जाएंगे और तुम प्रभु को अर्पण करोगे तो यह जो तुम्हारा मनीराम है यह शनैः शनैः प्रभु के अर्पण किया जाएगा, प्राणायाम के अर्पण किया जाएगा। उस समय हे मानवतुम प्रभु के आँगन में जा !ने योग्य हो जाओगे और प्रभु तुम्हारा कल्याण करेंगे। यह मन कहीं भ्रमण नहीं करेगा। मैंने आज से पूर्व काल में कहा है कि विकल्पों को त्याग दो और संकल्पों को धारण कर लो, इससे मन का विच्छेद हो जाएगा। यह मन एक संकल्प में लग करके तुम्हारा कल्याण कर देगा।

यह है मुनिवरोंआज का हमारा आदेश है !, जो प्रारम्भ हो रहा था। उच्चारण करते करते बहुत दूर चले गये। उच्चारण कर रहे थे कि हे विद्यातू हमारा कल्याण करने ! जब यह संसार तेरे आँगन में आ जाता है। राजा यदि तेरा अनुकरण !वाली है। माता करता है तो राजा महान बन जाता है। मेरी माताएं तुझे कंठ में धारण कर लेती हैं तो उनके गर्भ में वह बालक उत्पन्न होते हैं जो देवता बन जाते हैं आज तेरा अनुकरण करने वाले देवता बन जाते हैं आज तू सबको देवता बनाने वाली है।

मैंने परमपिता परमात्मा की कृपा से, उस समय को देखा है जिस समय मेरी प्यारी माताओं का अन्तःकरण पुकार कर कहता था, मानव का अन्तःकरण पुकार कर कहता था कि हम संसार में अपने भोगों को भोगने के लिए आए हैं हमें ऐसा कार्य नहीं करना कि भोग ही हमें भोग लें आज वह कर्म नहीं करना है संसार में

मुनिवरोंवह कौन ! सा भोग है संसार में, जो हमें भोग लेता है?

मुनिवरोंहमारे आचार्यों ने पूर्व काल में एक पति और पत्नी का सम्बन्ध कहा है। ! इसका अभिप्राय है जैसे परमात्मा ने सृष्टि को उत्पन्न किया है कि मानव कर्म करे। यह उत्पन्न करने वाली सृष्टि है। इसी प्रकार मेरी प्यारी माताओं का, मेरे प्यारेभद्र ! पुरुषों का ब्राह्मणों द्‌्वारा संस्कार हुआ है। आचार्यों के द्वारा प्रतिज्ञा ली है भोग भोगने के लिए परन्तु ऐसी नहीं कि भोग उल्टे हमें भोग लें मुनिवरोंआज हमें भोग ! भोगना है संसार में आज संयम को ग्रहण करना है। आज हमें पुत्र उत्पन्न करने के लिए। शैय्या को ग्रहण करना है। महात्मा दधीचि को, अश्विनी कुमारों को, नारद जैसे आचार्यों को उत्पन्न करना है। मेरी माताओं को राजा उत्पन्न करना है जो हरिश्चन्द्र को, राजा दिलीप को, महाराजा राम जैसे राजाओं को उत्पन्न करना है मुनिवरोंवे कैसे ! होंगे?

आज वे भोगों को भोगने से नहीं होंगे। वह हमारे कर्म करने से होंगे। गर्भ स्थापन हो जाएं, पति पत्नी उस प्रभु की याचना करें, उन पुत्रोंको अपने में धारण करें जिससे ! तेरे गर्भ स्थल में रहने वाले बालक के अंग प्रत्यंग में तेरी भावनाएं समा !हे माता करके वह महान दानी व पवित्र बने। वह तेरे अन्तःकरण से उत्पन्न होने वालाबालक पवित्र बने।

मुनिवरोंक्या करें !? जैसा मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय निर्णय कराया कि ! आज का संसार तो कहता है कि परमात्मा ने संसार भोग भोगने के लिए उत्पन्न किया है भोग भोगो, आज का संसार इतना चिन्तित हो गया है कि भोगों ने ही आज के संसार को बुरी तरह भोग लिया है।

मुनिवरोंहम उच्चारण करते ! करते कहाँ पहुंच गये। उच्चारण कर रहे थे, कि हे परमात्मनतू कल्याण करने वाली है। आज !तू कल्याण करने वाला है। हे सन्ध्या ! हमें सन्ध्या का पूजन करना है। सन्ध्या के गुणों को अपने में धारण करना है। हमें माता दुर्गे की याचना करनी है। हे मातातू अष्ट भुजों वाली और कल्याण करने ! वाली है। तू आ और कल्याण कर। यज्ञ करना है। उसके समीप जाना है। यह है आज का हमारा आदेश। अब यदि समय मिला तो शेष वाक्य किसी द्वितीय !बेटा

काल में प्रकट किए जाएंगे।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवनआज क !भगवन !ा आदेश हमें बहुत सुन्दर लगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य अच्छा धन्यवाद। ....

तो मुनिवरोंअब हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है। आज का हमारा आदेश ! पुकार कर कह रहा था कि यह प्रातःकाल का समय है। अमृत बेला है। आज हमें सुन्दर वेद पाठ करने का अवसर मिला। आज हमें प्रभु का और सन्ध्या का अनुकरण करने का अवसर मिला। अब यह हमारा समय समाप्त हो चुका है। कल समय मिलेगा तो शेष वार्त्ता द्वितीय काल में की जाएगी। अब कुछ वेदों का पाठ होगा। इसके बाद वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। वेद पाठ। दुर्गा अष्टमी 1963 अक्तूबर 20, प्रातः बजे भारत सेवक समाज 7, सरोजनी नगर, नई दिल्ली

५ 07 11 1963 पुष्प 07 जीवन के लिए यज्ञ

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज यह ! वेद का अमूल्य ज्ञान क्या कह रहा था, जिसको उच्चारण करते समय ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे परमपिता परमात्मा हमारे जीवन को उज्ज्वल बना रह हैं, और हमारा हृदय उस परमात्मा से मिलान करने जा रहा हो। इच्छा तो यह नहीं थी कि इतने सुंदर वेद पाठ को त्याग करके दूरी चले जाएं। परन्तु क्या करें, मेरे प्यारेमहानन्द ! जी ने कई स्थानों में संकेत कराया। आज इनके संकेतानुकूल बहुत से वाक्यों का प्रतिपादन करना, हमारा कर्त्तव्य हो जाता है।

आज मेरे प्यारे महानन्द जी !बड़े आनन्दित हुए विराजमान हैं। मुझे अभी तक ज्ञात नहीं हो सका है कि इनकी आत्मा इतना उत्सव क्यों मना रहा है। परन्तु मुझे ऐसा ज्ञात होता है जैसे यह कोई परोपकार की भावना ले करके इस यज्ञशाला में पधारे हैं।

आज हृदय तो मेरा कुछ और ही पुकार रहा है। मैं तो अपने प्रभु से कहा करता हूँ हे परमदेवतू कल्याण करने वाला है। तू हमारा ही नहीं संसार का कल्याण करने !

वाला है। आज संसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या के हृदय में उस उज्ज्वलता को दे, जो आपने सृष्टि के प्रारम्भ में, प्रत्येक वेदमन्त्र द्वारा हमें प्रेरणा दी है। उस प्रेरणा को पुनः से जागृत कर। विधाताआपने सृष्टि का निर्माण किया और सर्वप्रथम ! मानव के लिए ज्ञान का स्रोत दिया, उस आनन्द के स्रोत को आज भी दे। किसको दे? महान पात्रों को दे। आज हमारे हृदय को पवित्र बना, जिससे हम संसार में उज्ज्वल बनें। विधाताजब आपकी क !ृपा होगी, आपकी दया के पात्र बनेंगे। हे भगवनतू दया कर और इतनी दया कर !, कि हमारी आत्मा के द्वारा कोई दोष न आए। विधाताजब हमारी आत्मा के द्वारा कोई दोष न आ !ए। विधाताजब हमारी ! आत्मा के द्वारा नाना प्रकार के दोष आ जाएंगे, तो हमारा जीवन जीवन न रहेगा। प्रभुदय !ा कर।

आज हमें वक्ता नहीं बनना चाहिए। आज तो हमें अपने जीवन में संलग्न हो जाना है। जब तक हमारा स्वयं का जीवन ऊँचा न होगा, तब तक हम संसार में किसी मानव को ऊँचा नहीं बना सकते। मैंने आज से बहुत पूर्व काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रश्न किया था, कि यह संसार कैसे ऊँचा बन सकता है। उस समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक ही वाक्य कहा था, यज्ञे मम अस्ति यज्ञाः जब मानव का जीवन यज्ञ जैसा पवित्र हो जाता है, तो उसका जीवन इतना विचित्र बन जाता है, कि उसके शरीर के कण कण से उस यज्ञ की ज्योति प्रज्वलित हो जाती है। मैंने अपने गुरुदेव से कहा कि प्रभु आप भी यज्ञाः। उस समय उन्होंने कहा कि यदि मैं !यज्ञ न करता, तो मेरा जीवन यज्ञमय न होता। तो आज गुरु अस्वति विश्वम् भोगी ना ना अस्तेअहा ! आज मुझे गुरु कोई न कह सकता था। जिज्ञासु बनने के पश्चात् गुरु की उपाधि प्राप्त होती है। तो मुनिवरोंदेखो !, यह यज्ञ है।

आज मैं अपने प्यारे महानन्द जी के हृदय की वार्त्ता को जान रहा हूँ। विषय तो और ही था, परन्तु मेरे प्यारेमहानन्द जी की आन्तरिक भावना यह कह रही है !, कि गुरुदेव आज यज्ञ के सम्बन्ध में कुछ प्रकरण दें। आज मुझे यज्ञ के सम्बन्ध में पुनः से उच्चारण करने का सौभाग्य मिला हैं, मैं यज्ञ के सम्बन्ध में केवल इतने वाक्य ही

कहना चाहता हूँ कि मेरे प्यारे ऋषि मण्डल का जीवन यज्ञमय हो। वास्तव में तो ! यज्ञ के सम्बन्ध में कल मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ प्रकाश देंगे। !

यज्ञ का स्वरूप

यज्ञ वह पदार्थ है, जो मनुष्य का परमात्मा से मिलान कराता है। आज हमें यज्ञ कर्म करते हुए परमात्मा से मिलान करना है। आज यज्ञ करते हुए, हमें संसार की त्रुटियों को नहीं देखना हैं। भौतिक यज्ञ करते हुए आध्यात्मिक यज्ञ में संलग्न हो करके, परमात्मा से मिलान करना है। आज उस ब्रह्मा से मिलान करना है, जिस ब्रह्मा ने सृष्टि को रचाया है।

मानव संसार में केवल यज्ञ वेदी को रचा सकता है। जैसे परमपिता परमात्मा ने सृष्टि रूपी यज्ञ वेदी को उत्पन्न किया हैं जिसमें नाना लोक लोकान्तर हैं। परमात्मा ने देखो, ब्रह्मा बन करके, इस संसार रूपी यज्ञ के कर्मकाण्ड को बना दिया, जो आज तक चले आ रहे हैं, और उस काल तक रहेंगे, जब तक यह सृष्टि रहेगी। इसी प्रकार आज हमें यज्ञ के कर्मकाण्ड में इस प्रकार संलग्न हो जाना है, कि आज हमें जो यज्ञ का विधान बना लेवें वह संसार में अमर रहे। जिस प्रकार परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सूर्य रूपी प्रकाश दिया और तब से यह प्रकाश चलता आ रहा है और उस काल तक चलता ही रहेगा, जब तक यह संसार रहेगा। इसी प्रकार आज हमें भी वह यज्ञ करना हैं।

आज से पूर्व काल में, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि यज्ञ करो, ऐसा सुन्दर करो, ऐसी आन्तरिक भावनाओं से करो, कि जिससे तुम्हारा मिलान, उस परमपिता परमात्मा से हो जाएं। जिस प्रकार परमात्मा ने सृष्टि रूपी यज्ञ वेदी को उत्पन्न किया है, उसी प्रकार आज तुम भी भौतिक यज्ञ को उत्पन्न करो, जिससे ज्ञान और विज्ञान उत्पन्न होता है। जिससे हमें ज्ञान और विज्ञान की प्रेरणा मिलती है।

भगवान कृष्ण की यज्ञ दृष्टि

मुनिवरोंदेखो !,महाराजा कृष्ण की एक वार्त्ता मेरे कण्ठ आ गई। भगवान कृष्ण ने ! महारानी रुक्मिणी से यज्ञ के सम्बन्ध मैं क्या शब्दार्थ कहे? महाराजा अर्जुन ने महारानी

द्रौपदी से क्या क्या शब्दार्थ कहे? आज मुनिवरोंयद !ि मैं संसार की पौथी को लेकर चलता हूँ, तो विचार आता है कि यज्ञ मनुष्य का क्या से क्या कर देता है। भगवान कृष्णा से महारानी रुक्मिणी ने एक समय प्रश्न किया, कि यह तो आप यज्ञ करते हैं, यह क्यों करते हैं? इससे आपको क्या लाभ है? भगवान कृष्णा ने कहा हे देवी मैं जो ! इस यज्ञ को कर रहा हूँ, मैं चाहता हूँ कि मेरा मिलान परमात्मा से हो जाएं। मेरी जो आन्तरिक भावना है, आन्तरिक जो तरंग हैं, वह परमात्मा से प्रेरित हो। परमात्मा से सहायता लेकर संसार का कार्य, त्याग पूर्वक करता चला जाऊं। यह जो यज्ञशाला है, यह त्याग की भावना देती है। मुझे यज्ञशाला में विराजमान हो करके, कैसा त्याग मिलता है? जब होता और यज्ञमान घृत आदि अग्नि में त्यागते हैं, तो उन्हें ज्ञात नहीं, कि तूने जो त्याग किया है, इसका फल क्या होगा। हे देवीआज मैं यज्ञ कर रहा ! हूँ, परन्तु त्याग भावना से। हमने घृत, सामग्री आदि की जो भी आहुति दी, अग्नि उन सबका त्याग कर देती है, और उन्हें अन्तरिक्ष में रमण करा देती है। उसको देवता ग्रहण करते हैं। देवता उसको पान करके हमारे लिए सुख की वृष्टि करते हैं।

मुनिवरोंआज हमारे हृदय में !, यह त्याग की भावनाएं ही होनी चाहिए। यज्ञ हमें त्याग देता है, यज्ञ हमें अच्छी आत्मिक भावनाएं देता है। मुनिवरोंइस भौतिक यज्ञ के साथ ! साथ हमें आत्मिक यज्ञ भी करना है। वह आत्मिक यज्ञ क्या पदार्थ है?

आत्मिक यज्ञ मुनिवरोंवह यज्ञ है !, जो हमें परमात्मा से मिलान कराता है। हम उस माता की गोद में विराजमान हो जाते हैं, जो हमारा कल्याण करने वाली है। जिसको हमारे वेदों ने दुर्गा कहा है, माँ काली कहा है और बहुत से रूपों से पुकारा है। हम उच्चारण कर रहे थे? यज्ञाः भौति यज्ञाः। आज हमें आत्मिक यज्ञ भी करना चाहिए। होता हमारे कौन हैं? बेटाहमारी सामग्री क्या है !? कौन अग्नि है? कौन हमारा ब्रह्मा है? इसके ऊपर हमें पूर्ण अनुसन्धान करना चाहिए।

मुनिवरोंआज हमारा संकल्प व विकल्प आहुति देने वाला है !। जहाँ हम काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह सबकी सामग्री बना लेते हैं, और ज्ञान रूपी अग्नि में, इन सबको भस्म कर देते हैं, उस समय हमारा आत्मिक यज्ञ हो जाता है। इस यज्ञ का ब्रह्मा वह

है, जिसकी प्रेरणा से हम इस यज्ञ को करने के लिए विराजमान हो जाते हैं। बेटा ! यह आन्तरिक प्रेरणा हमारा आत्मा है, जो हृदय स्थल रूपी यज्ञशाला में विराजमान है। इस यज्ञ द्वारा उस आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है। जिस समय हम परमात्मा की गोद में जा बैठेंगे, उस समय हमारे आनन्द का कोई अपार न रहेगा। मुनिवरोंहमारे आदि ऋषियों ने कहा है कि जब यह आत्मा उस परमात्मा की गोद ! में विराजमान हो जाता है तो इसका जो नास्तिक परिवार है वह सब समाप्त हो जाता है और आस्तिक परिवार इसके द्वारा आ जाता है। अपने परिवार सहित यह परमात्मा में रमण कर जाता है। तो यह है मुनिवरोंआत्मिक यज्ञ !, जो आज हमें करना है। नाना इन्द्रियों के विषयों पर विचार करना है।

मुनिवरोंदेखो !, परमात्मा ने मानव का शरीर इसलिए बनाया है, कि इसमें ओज और तेज हो। रसना परमात्मा ने दी, इसमें ओज उत्पन्न करो। यह रसना है, इच्छुक किस पदार्थ की? वह है ज्ञान, वह है सरस्वती। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे निर्णय ! कराया, कि आज कल संसार में मानव इस वाणी, इस रसना के पीछे इतना है, कि अपने मानवत्व को त्याग बैठा है। इस वाणी से तो हमें मानव बनना है। इस वाणी से हमें ब्रह्मा बनना है, इस वाणी से हमें राम बनना है इस वाणी से हमें कृष्ण बनना है। इस वाणी के ऊपर हमें विचार करना है।

आज देखो,दूसरों के भक्षणम् करने से हमारा यज्ञ सम्पन्न नहीं होगा। आज जब ! तुम्हारे द्वारा आहार और व्यवहार पवित्र होंगे, तो तुम्हारी भावनाएं भी पवित्र होंगी। उच्च विचार होंगे । अपनी काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह की सामग्री बना कर, ज्ञान रूपी अग्नि मैं भस्म कर देना है। भौतिक यज्ञ के साथ आत्मिक यज्ञ भी करो, जिससे आज तुम्हारा कल्याण हो। आज कल्याण की भावनाएं तुम्हारे द्वारा आएं।

मेरे प्यारेमहानन्द ! जी ने एक समय मुझे आर्यों का प्रश्न निर्णय कराया। परमपिता परमात्मा की कृपा से मुझे वह समय देखने का सौभाग्य मिला है, जब सर्वत्र संसार में आर्यों की पताका लहराती थी। आर्यों की पताका किस काल में थी? भगवान राम के राष्ट्रों में आर्यों की पताका थी, जिन्होंने अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाया। हमारे द्वारा

मर्यादा क्या है? मुनिवरों! हमारे द्वारा एक आन्तरिक भावना और एक भौतिकवाद है। दोनों को ऊँचा बनाना है। दोनों में ज्ञान और विज्ञान की प्रेरणा देनी है। यज्ञ की मर्यादा, ज्ञान और विज्ञान से चलती है। आज ज्ञान को अपनाओ। तुम्हारा वास्तविक कल्याण होगा। आज संसार आर्य बनना चाहता है, मैं तो यह कहा करता हूँ, कि आर्यों का जीवन यज्ञमय होता है। दोनों प्रकार के यज्ञों का कर्म, उनकी भुजाओं में होता है। उनके द्वारा ओ३म् की पताका होती है, मर्यादा की पताका होती है, यज्ञ की पताका होती है, राष्ट्र की पताका होती है, तो संसार का कल्याण होता है।

कल्याण का आधार

आज यहाँ समालोचना करने से संसार का उत्थान न होगा। दूसरों की त्रुटियां देखने से संसार का कल्याण न होगा, आज अपनी त्रुटियां देखने से संसार का कल्याण होगा। मेरे प्यारेमहानन्द जी कहेंगे !, कि गुरु जी यह क्या उच्चारण करने लगे, अपनी त्रुटियों को देखकर ही संसार का कल्याण कैसे हो सकता है? सुनोजब यह संसार ! आर्य बनकर, अपनी त्रुटियों पर विचार करेगा, कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियां हैं, मैं कितना पापी हूँ, तो उस समय मानव का कल्याण होगा। आगे चलकर आगे बढ़ते रहेंगे और संसार को ऊँचा बना सकेंगे। आज संसार में हमें यह नहीं देखना, कि यह मानव किस प्रकार का है, राष्ट्र किस प्रकार का है, संसार में क्या हो रहा है। आज हमें यह देखना है, कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियां हैं? क्या वेद की पोथियों को जानने से मेरा कल्याण होगा? कदापि नहीं। इस सम्बन्ध में आदि ऋषियों ने, महाराजा वशिष्ठ जैसे आचार्यों ने कहा है कि तुम वेद की पोथियों को जानो अवश्य, परन्तु अपनी आत्मा के भाव को जानो। यह जो काम, क्रोध, मद, लोभ व मोह आदि के मल विक्षेप आवरण हैं इन्हें ज्ञान अग्नि में भस्म करके शान्त करो।

ज्ञान हमें किसी का आसरा लेने से आएगा। जब हम किसी के सहायक बन जाएंगे। जब किसी के सेवक बनकर चलेंगे। हमें सेवक बनना है, तो प्रभु का बनना है। आज प्रभु के द्वारा सब कुछ अर्पण करना है। आज प्रभु के द्वारा कौन सा पदार्थ लेकर जाएं। वह कौन सा अमृत प्रभु ने हमारे द्वारा दिया, जिसको लेकर हम प्रभु के द्वारा

जाएं? वह है बेटा यज्ञ। !

हम सांसारिक भौतिक यज्ञ करते हैं। इस यज्ञ की वासनाएं उसमें जो पवित्र आहुति देंगे वह देवताओं तक जाएगी। हमारे द्वारा जो प्राण सत्ता है, वह पवित्र होगी। जब प्राण पवित्र होंगे, तो हमारे मल विक्षेप शान्त होंगे और हमारी आत्मा निर्मल और उज्ज्वल बन करके, उस परमात्मा के द्वारा ले जाएगी। परमात्मा के द्वारा ले जाएगी, अपना किया हुआ ऊँचा स्थल। मुनिवरोंपरमात्मा का ऊँचा स्थल क्या है !? वह है ज्ञान।

मुझे महात्मा अगस्त्य मुनि की वार्त्ता बारम्बार कंठ आती रहती है। हे मातातू ! तू इस संसार में आई है !अगस्त्य को उत्पन्न कर। हे माता, तो इस यज्ञ को कर, तू अगस्त जैसे को उत्पन्न कर, जिस महात्मा अगस्त ने तीन बार आचमन करते ही समुद्र को पान कर लिया था। आज तू उस महात्मा को क्यों उत्पन्न नहीं करती है। हे माता पार्वती! तू कहाँ है? हे दुर्गे! तू कहाँ है। हे मांतू कहाँ है !? तू परमात्मा से मिलान कराने वाली है। तू किस स्थान में जा पहुँची है। मुनिवरोंम !हात्मा अगस्त्य ने तीन आचमन किए, वह क्या हैं? वह हैं ज्ञान, कर्म और उपासना। महर्षि अगस्त ने यह तीन आचमन किए और संसार रूपी समुद्र को पान किया। आज हम भौतिकवाद में हैं, आत्मिक विचार नहीं किया। यह संसार समुद्र हैं। जो मनुष्य इस समुद्र में लालायित हो जाता है वह समुद्र में गोते ही लगाता रहता है। वह बारम्बार अपने जीवन को समाप्त करता रहता है। वह जीवन और मरण में बारम्बार आता रहता है। महात्मा अगस्त्य ने कहा था कि जब मानव इस संसार रूपी समुद्र को पान करके आगे बढ़ता है, तो वास्तव में उसका कल्याण होगा।

बेटाउच्चारण करते ! करते बहुत दूरी चले गए। उच्चारण कर रहे थे यज्ञाः। आज हमें यज्ञ करना है। हमारे द्वारा जो भी कुछ है, वह सब ही कुछ यज्ञ है। मन है, यह भी यज्ञ है। 'इन्द्रियां' यह भी यज्ञ है। भौतिक यज्ञ करने के लिए जो द्रव्य हमारे द्वारा है यह भी यज्ञ है। आज हमें इसका सदुपयोग करके चलना है, यह सब यज्ञ हैं। हमारे द्वारा परमात्मा की दी हुई, जो भी सामग्री है, वह सब यज्ञ हैं। परन्तु आज हमें

विचारना है, कि इनमें से हमें कौन सा यज्ञ करना, है जिससे हमारा कल्याण होगा। जिससे हमारा परमात्मा से मिलान होगा। जब भौतिक यज्ञ के पश्चात् आत्मिक यज्ञ करेंगे, तो हम परमात्मा से मिलान कर सकेंगे। एक समय वह होगा बेटाजब हम ! परमात्मा की गोद में होंगे।

मैं तो प्रभु से कहा करता हूँ, कि हे प्रभुहम कैसे अभागे हैं !, संसार में। मैं तो भगवन्वह कर्म करना चाहता हूँ !, जिस कर्म को करके प्रभु! मैं तुम्हारी गोद में आ जाऊं। भगवन्मैंने आज से पूर्व काल में जो पाप किया है !, उसे क्षमा करो, आज मैं क्षमा चाहता हूँ। हे प्रभु! तू आज मुझे अपना और अपनाकर अपनी गोद में ले।

मुनिवरोंजब वह ज्ञान ही हमारे द्वारा न होगा !, तो प्रभु की गोद में कैसे प्राप्त होंगे। आज हम अपनी वाणी से उच्चारण तो कर रहे हैं, कि प्रभु तू मुझे अपनी गोद में ले और अपनी लोरियों में आनन्दित करा, परन्तु जब हमारा आत्मा निर्मल और पवित्र हो जाएगा, तो उस समय परमात्मा स्वयं अपने इस प्यारे पुत्र आत्मा को अवश्य अपना लेगा। जैसे मुनिवरोंमाता ! पिता अपने प्यारे योग्य बालक को जानकर स्वयं अपना लेते हैं। इसी प्रकार जब यह आत्मा परमात्मा के योग्य हो जाएगी, तो यह परमपिता परमात्मा इस आत्मा को अवश्य अपनाएगा। ऐसा कदापि नहीं हो सकता है, कि न अपनाए। वह इस आत्मा का पिता है। जब वह आत्मा निर्मल, पवित्र और दुर्गुणों से रहित हो जाएगा तो वह परमात्मा इस आत्मा को अवश्य अपनी गोद में धारण करेगा। अपनाएगा, उसी काल में, जब हम उस प्रभु की आज्ञा में कर्म करेंगे। मुनिवरोंदेखो !,मुझे उच्चारण करने का सौभाग्य मिल रहा है। आज मानव को ! परमात्मा के द्वारा जाने के लिए तथा मानसिक शान्ति पाने के लिए सबसे ऊँचा कर्म, जो हमारे ऋषि मुनियों ने, सबने कहा है, कि यदि तुम्हें आज उच्च बनना है, तो अपने जीवन को यज्ञ जानो, अपने जीवन को यज्ञमय जानो। आज संसार में जो भी मनुष्य आता है, भोग भोगने के लिए आता है परन्तु मेरे प्यारेमहानन्द जी कहा करते हैं ! कि आधुनिक काल में तो भोगों ने इन्हें भोग लिया हैं। जब मुझे महानन्द जी के यह वाक्य कंठ आते हैं, तो विचार आता है कि मेरे प्यारेक्या वाक्य कहा ! करते हैं। कैसे

सुन्दर इनके वाक्य हृदय ग्राही हैं।

मुनिवरोंदेखो !,क्या उच्चारण कर रहे थे !? उच्चारण कर रहे थे, कि मनुष्य भोग भोगने के लिए आता है। परन्तु जो भोगों को अपना जीवन दे देता है, वह मनुष्य नहीं कहलाता, वह तो एक प्रकार का पशु कहलाता है। संसार में आज हमें मानव बनना हैं, भोगों को भोगते हुए, हमें अपने जीवन को यज्ञमय व्यतीत करना है। हमें वेद रूपी गंगा मैं स्नान करना है। वेदों का स्रोत, उस परमात्मा ने आज नहीं, सृष्टि के प्रारम्भ में दिया है। इसके ज्ञान विज्ञान पर अनुसन्धान करके चलना है।

राजा रावण से एक समय महर्षि ऋकेतु ऋषि महाराज ने एक प्रश्न किया कि क्या तुमने वेदों को जाना है? रावण ने कहा कि महाराजमैं वेदों को अच्छी प्रकार ! जानता हूँ। तब महर्षि बोले तुमने वेदों को कैसे जाना है? कौन से स्थल को जाना है? राजा रावण ने कहा कि प्रभु! वह परमात्मा का अमूल्य ज्ञान है। परमात्मा की उसमें अमूल्य निधि है। तब महर्षि ने कहा की वेदों में और कुछ क्या हैं? तो राजा रावण ने कहा कि वेदों में संसार का ज्ञान विज्ञान है? वह ज्ञान क्या है? भगवन्ज्ञान ! विज्ञान यह है कि संसार का ज्ञान करो औरउसके पश्चात् भौतिक विज्ञान द्वारा देखो, इस संसार को। उस समय ऋषि ने कहा कि अरे, भौतिक विज्ञान से नहीं देखा जाएगा संसार। आज तुम सबसे पूर्व ज्ञान कर और ज्ञान के पश्चात् आन्तरिक भावना को जानो। इस आत्मा को मेरुदण्ड में ले जा करके इस आत्मा का परमात्मा ने मिलान कर दो। जब यह आत्मा परमात्मा की गोद में जाएगा, तब जानो कि संसार का यज्ञ करना, तुम्हारा सफल हुआ है। उस समय तुम्हारा भौतिक और आत्मिक यज्ञ करना सफल हो जाएगा। उस समय वह आत्मा इस संसार को भली भांति देख सकता है, जो परमात्मा ने रचाया है। इसके सब विज्ञान को जानने वाला बन जाता है।

तो मुनिवरोंयह है ! हमारा आज का आदेश, अब यह समाप्त होने जा रहा है क्योंकि समय भी अधिक हो चुका है। हम उच्चारण कर रहे थे, कि हे परमात्मातू कल्याण ! करने वाला है। आज हमारा जीवन यज्ञमय हो। यज्ञ वह है, जो हमें भौतिक विज्ञान

में लगाता है। यज्ञ वह है, जो हमें मानव जीवन की प्रेरणा देता है। आज हमें पुनः से दोनों प्रकार के भौतिक और आत्मिक यज्ञ को करना है।

मुनिवरोंदेखो !,आज से बहूत पूर्व काल हुआ !, जब हमें कुछ यज्ञ कराने का सौभाग्य मिला। मुनिवरोंउस काल में जब कजली वन में रमण किया करते थे। ! पर्वतों पर यज्ञ करने वाले, पर्वतों में यज्ञ करते हैं। संसार में यज्ञ करने वाले, संसार में यज्ञ करते है। राजा भी यज्ञ करता है। यदि राजा यज्ञ करता है तो प्रजा भी करती है, और यदि प्रजा करती है तो संसार का कल्याण हो जाता है। जब प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या यज्ञ में संलग्न हो जाएगी और जानेगा कि मेरा जो द्रव्य है, मेरा जो मन है, मेरे जो नेत्र हैं, मेरे जो श्रोत्र हैं, मेरी घ्राण है, मेरी जो वाणी है, त्वचा व उपस्थ इन्द्रियां हैं, यह सब कुछ परमात्मा ने मुझे यज्ञ के लिए ही दी है। इन सब इन्द्रियों से यज्ञ करना है। परमात्मा ने भुज क्यों दिए हैं? दूसरों का परोपकार करने के लिए, अपनी रक्षा करने के लिए। इन भुजों से देवताओं को आहुति देने वाले बनें। देवता उसे पान करेंगे, तो हमारे भुज बलिष्ठ होंगे। भुज बलिष्ठ होंगे, तो परोपकार भी कर सकते हैं और अपनी रक्षा भी स्वयं कर सकते हैं। तो मुनिवरोंउच्चारण करते ! करते बहुत दूरी चले गए । उच्चारण कर रहे थे यज्ञाः। हे भगवन्तू यज्ञ को देने ! वाला है, प्रेरणा देने वाला है भगवन्वह प्रेरणा दो !, जिससे हम अपना और इस संसार का कल्याण कर सकें। जब विधाता की दया होती है, तो हमारी आन्तरिक भावना उज्ज्वल और पवित्र हो जाती है। यह है मुनिवरोंआज का हमारा आदेश। ! सौभाग्य मिला, तो शेष वाक्य कल होंगे।

पूज्य महानन्द जीः प्रभुआज आपके वाक्य बहुत अच्छे हुए !, परन्तु अभी आपका समय नहीं हुआ।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा यह तो तुम्हारा नित्य प्रति का अभ्यास है। !

पूज्य महानन्द जीः अच्छा कल तो हमें समय देंगे। !भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यकिसी द्वितीय !नहीं बेटा ....., तृतीय काल में।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्आप अपनी वाणी यथार्थ उच्चारण किया करें। आपने !

अभी कहा था कि कल महानन्द जी कहेंगे, अब आपने ऐसा कैसे कह दिया।
पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटाकल का कल देखा जाएगा। जैसा समय होगा !, समय के अनुकूल वाक्य होंगे। मेरे प्यारेमहानन्द जी अभी ! अभी विनोद की वार्त्ता कर रहे थे। यह हर समय विनोद ही करते रहते हैं। इनका हृदय कितना उज्ज्वल और पवित्र है, जो विनोद ही विनोद करते रहते हैं। आज हमें इसी प्रकार अपने जीवन को बनाना चाहिए। हमारे वाक्यों का अभिप्राय था यज्ञाः आज वास्तव में समय का अभाव हैं। कल समय मिलेगा, तो वाक्य बड़े विचित्र होंगे। महानन्द जी उच्चारण करेंगे, तो तब भी विचित्र होंगे। अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी।
यज्ञ पण्डाल बीपार्क .सी., सरोजनी नगर का प्रवचन

६ 08 11 1963 पुष्प 07 यज्ञ वेदी की पुकार

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गाना गा रहे थे। आज से पूर्व मैंने कहा था कि हम संहिताओं का पाठ कर रहे हैं। आज मुझे इस विवाद में नहीं जाना है, कि वेद संहिताएं कितनी हैं। हमें तो आज यह उच्चारण करना है, कि यह वेद ज्ञान क्या पुकार रहा है। आज हमें पुनः से वेद रूपी वेदी पर आ जाना है, जो हमें मानव बनाने के लिए बारम्बार संकेत दे रही है। सृष्टि के प्रारम्भ में, यह वेदी पुकारती चली आ रही है, कि हे मानवतू वास्तविक मनुष्य बन !, जैसा मेरा यह वेद कहता है। इस वेदवाणी के अनुकूल अपना जीवन बना।
मुनिवरों महानन्द जी का संकेत बारम्बार प्राप्त हो रहा है। जैसा कल मैंने !यज्ञ के सम्बन्ध में कहा था आज भी यज्ञ के सम्बन्ध में प्रकाश दूंगा।
मुनिवरोंतू पुनः से इस यज्ञ वेदी पर !आज हमें यज्ञ वेदी पुकार रही है कि हे मानव ! आ, जिस वेदी पर आ जाने से, तेरा वास्तविक कल्याण होगा। तू मानव को मानव बना सकता है और अपनी मानवता को ऊँचा बना करके, संसार पर तू शासन कर सकता है। जिस यज्ञ वेदी को हमारे ऋषि मुनियों ने प्रज्वलित किया है, जिस अग्नि में अपने जीवन की आहुतियां दी हैं, अपने कण्ठ की वाणी को इस यज्ञ वेदी पर

बलि देकर, इस संसार को ऊँचा बनाया है, आज पुनः से उस यज्ञ वेदी पर आ जाना है।

हे मानवतेरा यज्ञ क्या है !? मानवतेरा यज्ञ शुभ कर्म है। त !ेरा यज्ञ तेरा धर्म है। हे मानव तेरी सात्विकता तेरा यज्ञ है। तेरी विचित्रता तेरे सदाचार में है। जब तक !तेरे द्वारा सदाचार नहीं आएगा, तू यज्ञ वेदी पर आने योग्य नहीं। आज यज्ञ वेदी पुकार रही है कि हे मानवयदि तू मेरे द्वारा आना चाहता है !, तो तू चरित्रवान बन करके आ। तू ओजस्वी और तपस्वी बन करके आ और मुझे प्रज्वलित कर।

आज मानव को यज्ञ वेदी पर आ जाना है। जिस यज्ञ पर आ करके वर्ण व्यवस्था बनती है, जिस वेदी पर आ करके, मानव के हृदय में सात्विकता ला करके संसार के कल्याण करने के लिए अपने जीवन को प्रेरित कर देता है।

आज मुझे पुनः से यज्ञ के सम्बन्ध में उच्चारण करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है और समय मिलेगा तो आगे भी यज्ञ के सम्बन्ध में उच्चारण करता चला जाऊंगा।

मुनिवरोंयह वह यज्ञ वेदी है !, यह वह वेद का ज्ञान है, जिस ज्ञान की पताका को महाराज वशिष्ठ मुनि महाराज, महर्षि पापड़ी मुनि महाराज और विश्वामित्र ने विश्वामित्र कहला करके विश्व को ऊँचा बनाया। आज हमें उस यज्ञ रूपी वेद को अपना कर विश्व को ऊँचा बनाना है। यह आज हमारी वेदी है। इस पर हमें विचारना है। हमें पुनः से उस अग्नि को प्रज्वलित करना है, जो अग्नि शान्त है। उस अग्नि को प्रज्वलित करके हमें उस अग्नि को सूर्य तक, चन्द्रमा तक बृहस्पति और ध्रुव लोकों तक पहुँचाना है।

मुनिवरोंआज यह नहीं कि संसार में ही इस यज्ञ वेदी का प्रसार करें। मैं तो प्रभु से ! मेरे में वह महानता और सत्ता दो !कहा करता हूँ हे प्रभु, कि मैं इस यज्ञ वेदी को यहाँ भी अपनाता जाऊं और सूर्य लोक में जाऊं, तो वहाँ भी इसी प्रकार की वेदी उत्पन्न कर, संसार को ऊँचा बनाता चला जाऊं। हे देवआप कल्याण करने वाले हैं। ! मुझे वह सत्ता दो, यदि मुझे आज्ञा मिले, तो मैं ध्रुव मण्डल तक जाऊं, तो वहाँ भी यज्ञ वेदी का प्रसार करूं। यज्ञमय मेरा जीवन हो।

प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या का जीवन परमात्मा ने यज्ञ वेदी के लिए दिया है। आज हमें, यज्ञ वेदी को उत्पन्न करना है। शान्त अग्नि को प्रज्वलित करना है, ज्योति देना है, जो अग्नि हमें सूर्य और चन्द्रमा तक पहुँचा दे।

मुनिवरोंदेखो !, यज्ञाः। यह वह यज्ञ वेदी है, जिस पर आ करके मानव, मानव बनता है। पापी भी मानव बनता है। दुराचारी भी सदाचारी बनता है। हे मेरे प्यारेभद्र ! आओ। इस यज्ञवेदी पर आकर अपने सदाचार को अपनाओ। यज्ञ वेदी पुकार !पुरुषो तू दुराचारी बन करके मेरे द्वारा न आ। य !रही है कि हे मानवदि दुराचारी बन करके आएगा, तो हे मानवजिसे ,मैं दूर से ही तेरी उस कल्पना को भस्म कर सकती हूँ ! तू लेकर आया है। आज तुझे संकल्प को धारण करके, मेरे द्वारा आना है। संकल्प लेकर आयेगा तो आज मैं तुझे मृत मण्डल में नहीं, सूर्य मण्डल में नहीं, चन्द्र मण्डल में नहीं ध्रुव मण्डल तक पहुँचा सकती हूँ। आज सदाचार को अपना कर पुनः से यज्ञ वेदी पर आना है।

सदाचार को अपना कर वर्ण व्यवस्था को ऊँचा बनाना है। जैसा ऋषि मुनियों ने हमें आदेश दिया हैं। बहुत काल हुआ, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझसे कहा करते थे, कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक ऋषि मण्डल का कर्त्तव्य है, कि अपनी यज्ञ वेदी की रक्षा करें। और यज्ञ वेदी क्या है? यज्ञ वेदी हमारी परम्परा है। हमारी संस्कृति, हमारा धर्म और ज्ञान है। आज हमें इस यज्ञ को ऊँचा बनाना है। इसकी रक्षा करनी है। हे प्रभुहमें वह बल दो !, वह सत्ता दो, जिससे विधाताहम संसार ! रूपी महान वेदी की रक्षा कर सकें, जिस वेदी पर नाना प्रकार के खरदूषण जैसे दैत्य आ जाते हैं। हे देवयहाँ ताड़का जैसे राक्षस यज्ञ वेदी को भ्रष्ट करने आ रहे हैं। ! मैं चाहता हूँ !विधाता, वह ताड़का आज मेरे द्वारा न आए, वह खरदूषण मेरे द्वारा न आए। आज विश्वामित्र और राम जैसे आ करके, इसकी रक्षा करें। आज उस भगवान राम वाले सदाचार को अपनाना है, जिससे यज्ञ वेदी की रक्षा होती है, दैत्यों को शान्त किया जाता है। आज हमें भगवान राम बनने की आवश्यकता है।

चरित्र

मुनिवरोंहम भगवान् राम तब तक नहीं बनेंग !े, जब तक हमारे द्वारा चरित्र न होगा। जब तक हमारे द्वारा गुरु परम्परा न होगी। हमारी परम्परा क्या है? वह है यज्ञ वेदी, जिसमें वर्ण व्यवस्था का विधान बनाया जाता है, जिसमें मानव के कल्याण का विधान बनाया जाता है। यह वह यज्ञ वेदी है। इसकी रक्षा करना प्रत्येक मानव और प्रत्येक देव कन्या का कर्त्तव्य है। उसके लिए अपने जीवन को न्यौछावर कर देना है।
आज हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था? आज हमारी यज्ञ वेदी हमें क्या क्या पुकार करके कह रही है? आज पुनः से हमें उस क्षेत्र में जाना है, जो वास्तविक है। आज मुझे सौभाग्य मिल रहा है, कि इस शुभ अवसर पर यज्ञवेदी की प्रशंसा करने आया हूँ। महानन्द जी से मुझे यज्ञ की प्रेरणा मिल रही है। उनकी प्रेरणा के आधार से आज मैं यज्ञ वेदी की प्रशंसा करने जा रहा हूँ।
मुनिवरोंयह वह यज्ञ वेदी है !, जहाँ ब्रह्मा विराजमान हो करके यज्ञमान को, होताओं को देखता है कि यह शूद्र तो नहीं हैंयह होता ब्राह्मण है और यह वैश्य है। मेरे , पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे निर्णय कराया था कि आज तुम्हें यज्ञ वेदी पर जाना है। सदाचार और विज्ञान को अपनाना है, जिस विज्ञान से तू मानव को जान सके, कि यह कौन से वर्ण में जाने योग्य है। आज तू यज्ञ वेदी पर ब्रह्मा तो बनने जा रहा है, परन्तु सबसे पूर्व मुझे यह विचारना है, कि यह कौन है, जो तेरी यज्ञ वेदी पर विराजमान है। शूद्र है, क्षत्रिय है या वैश्य है।
मुनिवरोंदेखो !, यहाँ शूद्र कौन कहा जाता है? मुझे आज से बहुत पूर्व काल में ऋषियों ने विशेष कर मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह प्रेरणा दी थी, कि शूद्र वह होता है, जो दूसरे व्यक्तियों की रक्षा नहीं करता, दूसरे जीवों का भक्षण कर जाता है। सदाचारी क्षत्रिय वैश्य वह होता है, जो दूसरों की रक्षा करता है। प्राणीमात्र की रक्षा करता है। वह यज्ञ वेदी पर आने योग्य है। आज वह यज्ञ वेदी पर आने योग्य नहीं जो अपनी रसना के आनन्द में सब धर्म कर्म त्याग बैठा है।
हे मानवयदि पापी बन करके यज्ञ वेदी पर आ !एगा, तो वह यज्ञ वेदी तुझे ऐसे भस्म कर देगी जैसे अग्नि ईन्धन को भस्म कर देती है। ऐसे ही तेरे पाप मूल बन जाएंगे।

आज तुझे यज्ञ वेदी पर आना हैतो सदाचार को अपना कर आ। तू संकल्प धारण , करके आ कि मैं आज प्रतिज्ञा करने जा रहा हूँ, कि मैं दूसरे जीवों का भक्षण नहीं करूंगा। जो अपने उदर की पूर्ति के लिए दूसरे जीवों का भक्षण करता है, वह मानव नहीं कहा जाता। वह संसार में दुराचारी और शूद्र कहा जाता है। क्षत्रिय और वैश्य वह होता है, जो अपने राष्ट्र के लिए, यज्ञ वेदी के लिए अपने जीवन को न्यौछावर करने वाला हो। वह संसार में सदाचारी कहलाता है।

मुनिवरोंसदाचारी बन करके ब्रह्मा के समीप आ जाना है !, जो ब्रह्मा ऊँचा आदेश देकर नियमों के अनुकूल कार्य में प्रेरित करता है। हे ब्रह्मातू वास्तविक ब्रह्मा है। तू ! यज्ञ वेदी पर आ करके, विधान बनाने वाला है। आज तू पुनः से और यज्ञ वेदी पर आ करके, नियम बना जो वास्तिवक नियम हैं। महाराजा रघु के यहाँ यज्ञ हुआ। सब ब्राह्मण आए। ऋषि मुनियों को चुनौती दी और उन ऋषि मुनियों को ब्रह्मा की उपाधि प्राप्त कराई गई, जो यह जानते थे, कि जो यज्ञ वेदी पर यज्ञमान, होता, अध्वर्यु और उद्गाता चुना है, वह कैसा है। वह किस भाव का है। कैसा इनका चरित्र है। यह सब कुछ योगी लोग जान लेते हैं। आज तुझे अपने जीवन की ऊँचा बनाने के लिए और दूसरों के जीवन को जानने के लिए तुझे अपने मनोविज्ञान को जानना है। आज तुझे उस मस्तिष्क विज्ञान को जानना है, हमारा आयुर्वेद कह रहा है। आज हमारी संहिता पुकार कर कह रही है। हमारा वेदमन्त्र पुकार रहा है। तुझे वेद के प्रत्येक मन्त्र पर विचार करना हैऔर उसको अपनाना है ,। वह तेरा गहना है।

हे ब्रह्मा! तेरा गहना क्या है? आज तेरा गहना यज्ञ वेदी है। आज तेरा गहना वेद हैं। आज तेरा गहना है प्रकाश, तू आज मानव को ऊँचा बना सकता है। आज तू यज्ञ वेदी पर वह आदेश दे सकता है, कि मानव यहाँ से उठकर सूर्य मण्डल, चन्द्र मण्डल, वृहस्पति मण्डल, ध्रुव मण्डल और आरुणि मण्डल तक पहुँच सकता है। आज तुझे पुनः से विचार लगा कर चलना है। तू आज उस यज्ञ वेदी पर आया है, जो वेदी परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न की थी। आज सदाचार को अपनाना है। वीरता को अपनाना है। अपने उस ब्रह्मचर्य को अपनाना है, जिस ब्रह्मचर्य से

मानव ब्रह्म में विचरण करता है। वह यज्ञ वेदी उसे अपनी गोद में धारण कर लेती है, और गोद में धारण कर परमपिता परमात्मा से मिलान करा देती है।

आज मुनिवरोंदेखो !,प्रत्येक मानव उस यज्ञ वेदी पर आया हैं आज हमें पुनः से ! विचारना है कि हमें उस यज्ञ वेदी कीरक्षा करनी है।

मुझे आज से पूर्व महानन्द जी ने कहा था कि आज का संसार यज्ञ वेदी से दूर जा रहा है। हे मानवतुझे यज्ञ वेदी से दूर नहीं जाना है !, तुझे यज्ञ वेदी पर आना है। तू भौतिक यज्ञ वेदी से तो दूर भाग रहा है, परन्तु हम तो तब जानेंगे, जब तू परमात्मा की उत्पन्न की हुई यज्ञ वेदी से बाहर चला जाएगा। आज परमात्मा ने संसार रूपी यज्ञ वेदी को रचा है। इसका ब्रह्मा भी स्वयं बना हैं यज्ञमान आत्मा बना हैं उद्गाता और अध्वर्यु, सूर्य और चन्द्रमा हैं। आज मानवतू कहाँ है !? आज, तुझे इस यज्ञ वेदी से बाहर जाने का कोई अवसर न मिलेगा।

हे मानवतू आज अपने सदाचार को अपना कर !, स्वयं यज्ञ वेदी पर आ जा। इस अग्नि को हमारे ऋषि मुनिवरोंने प्रज्वलित किया है। यह अग्नि हमें प्रकाश देती है। ! जैसे मैंने इस !यज्ञशाला में विराजमान हो करके हमें प्रेरित करती है कि हे मानव नाना घृत और सामग्री को भस्‌म किया है इसी प्रकार तू भी अपने अवगुणों को भस्म करके, तू भी संसार में वास्तविक बन। आज तू भी वह अग्नि बन, कि जो भी तेरे द्वारा आ जाएं, उसके पाप समाप्त हो जाएं।

आज तू संसार के ऐश्वर्य की कल्पना करता है। आज तू नाना प्रकार के आसन की आज्ञा कर रहा है परन्तु यह आसन न तेरे आदि में है और न अन्त में है। आज तू उस संकल्प को धारण कर जो तेरे आदि और अन्त दोनों में हो। तेरा वह वास्तविक आसन क्या है? वह है यज्ञ वेदी । हे मानवतू इस यज्ञ वेदी पर पहुँच !, जिस वेदी पर पहुँचकर इन नाना प्रकार के अवगुणों को, ईन्धन की तरह ज्ञान अग्नि में भस्म कर देगा। तू उस कल्याणकारी मार्ग में पहुँच जाएगा जो तेरा वास्तविक मार्ग है। जिस मार्ग पर जाने से तेरा वास्तविक कल्याण होगा। जब तक हमारा आत्मिक बल ऊँचा न होगा, मानवता हमारे द्वारा न होगी, ज्ञान अग्नि हमारे द्वारा न होगी, यज्ञ अग्नि

प्रज्वलित करने की सत्ता हमारे द्वारा न होगी और वर्ण व्यवस्था स्थापित करने की सत्ता न होगी तब तक हम मानव नहीं कहलाएंगे। न हम ब्रह्मा हैं, और न हम ऋषि हैं, न हम आत्मज्ञानी हैं। आत्मज्ञानी संसार में वह होता है, जिसको संसार का पूर्ण ज्ञान होता है। आज संसार में आत्मज्ञानी बनना है। आज हमें भौतिकवाद के मार्ग पर नहीं जाना है। हमें उस मार्ग को अपनाना है जिससे मानव का कल्याण हो। जिस मार्ग को अपना कर यहाँ से हमारे ऋषि मुनि चले गएं हैं। उस मार्ग को हमें पुनः से अपनाना है।

मुनिवरोंमेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने जिस समय प्राणों को त्याग !ा था, तो वह यज्ञ वेदी पर विराजमान थे। उनका हृदय मग्न हो रहा था। मुग्ध होते हुए, अपने प्राणों को त्यागा था। हृदय मुग्ध वाले मनुष्य यहाँ से जाकर सूर्य लोकों तक पहुँच जाते हैं और वहाँ भी अपने उसी कर्त्तव्य का पालन करते हैं जो वह यहाँ करते थे। त्याग तपस्या से अपने जीवन को ऊँचा बनाते हैं। ज्ञान रूपी अग्नि को प्रज्वलित करते हैं महान उन कन्दराओं में, जिनमें अन्धकार होता है।

आज हमारा जो यह शरीर है, यह अन्धकार रूपी गुफा है। इस गुफा में वह अग्नि प्रज्वलित करनी है। जिससे यह गुफा न रहे, परन्तु ऊँचा सुहावना गृह बन जाएं, जहाँ हमें आनन्द प्राप्त हो। इसमें ज्ञान रूपी अग्नि को प्रज्वलित करना है, और वेदों को अपनाना है। वेद रूपी प्रकाश से हमारा वास्तव में कल्याण होगा।

आज हम दूसरों को तब ही ऊँचा बना सकते हैं, जब हमारे द्वारा चरित्र होगा। हमारे द्वारा मानवता होगी। हमारे द्वारा ज्ञान रूपी अग्नि होगी। अन्यथा मेरे जैसे यहाँ नाना उच्चारण करके चले गएं हैं, परन्तु यह संसार उसी स्थान पर रहा, जहाँ रहता चला आया है।

प्रार्थना

मुनिवरोंमैं तो तुच्छ हूँ। न प्रति मैंने किस ! किस जन्म में कौन कौन सा कर्म किया है, जिन्हें आज भोग रहा हूँ। मैं नहीं कह सकता, कि मैं कितना बड़ा पापी हूँ। मैं आज अपने पापों पर पश्चाताप करने जा रहा हूँ। आज मेरा इतना दुर्भाग्य, कि मैं उस

यज्ञ वेदी पर जाने योग्य नहीं, जिस वेदी पर मुझे जाना है। मैं प्रभु से याचना किया करता हूँ, कि हे प्रभुआपने जो वेदी मुझे पूर्व अपनाने ! का अवसर दिया था, मैं उस वेदी को पुनः अपना सकूं। आज तो मैं सदाचार को अपनाना चाहता हूँ। विधातामुझे ! वह प्रेरणा दे, वह मानवता दे, वह ऋषिता दे, जिससे भगवन्ऋषि बनकर ऊँचे ! मैं अपने जीवन का कल्याण चाहता हूँ। मैं जिज्ञासु !लोकों को चले जाते हैं। प्रभु बनना चाहता हूँ। मैं अपनी यज्ञ वेदी पर जाना चाहता हूँ। मैं यज्ञों का प्रेरक हूँ, प्रभु! मैं आपसे यज्ञों की प्रेरणा पाता हूँ। हे विधातामुझे वह जिज्ञासु बना !, मुझे धर्म में विचरने वाला बना, जिससे विधातामैं धर्म की स्थापना कर सकूं। मुझे वह सदाचार ! बना, जिससे मैं संसार में ब्रह्मचारी बनने का आदेश देता चला जाऊं। हे भगवनमुझे ! वह ब्रह्मा बना, जिससे मैं इस वर्ण व्यवस्था को स्थिर कर सकूं। हे विधातामैं वह ! तुच्छ नहीं बनना चाहता। आज में ब्रह्मा के योग्य बनना चाहता हूँ।

आज मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी से संकेत मिला है। !आधुनिक संसार किस मार्ग पर जा रहा है। न वर्ण व्यवस्था है, न मानवता है। आज दूसरे जीवों का भक्षण करके, अपने उदर की पूर्ति करता चला जा रहा है। आज इस मार्ग को नहीं अपनाना है।

हे मानवयदि तू परमात्मा की सृष्टि में आया है !, तो परमात्मा के अनुकूल कार्य कर। परमात्मा तुझे जो प्रेरणा देता है, उसके आधार से चल, अन्यथा अपने जीवन को शान्त कर दे और परमात्मा की सृष्टि में न आ । ऊँचा बनने के लिए परमात्मा ने तुझे सब कुछ सामग्री दी है। आज तू दूसरे जीवों का भक्षण करने वाला क्यों बन रहा है। तू रक्षा करने वाला बन। आज वह रक्षा कर, कि सिंह तक तेरे चरणों में आ जाएं। आज वह रक्षा कर, कि जिन जीवों का तू भक्षण करता है, वह तेरी रक्षा के लिए स्वयं उद्यत हो जाएं। जिसकी तू रक्षा करेगा, वह स्वयं तेरी रक्षा करेगा। संसार में जो गो की रक्षा करता है, गो उसे दुग्ध देती है। आज जो भी जिसकी रक्षा करता है, वह स्वयं ही उसका साथी बन जाता है, और साथी बन करके हर समय उसके कल्याण की सोचता रहता है। हे मानव तुझे अहिंसावादी बनना !है।

भगवान राम को ऋषि वशिष्ठ का उपदेश

एक समय भगवानराम ने महर्षि वशिष्ठ से कहा ! महाराजसंसार में वास्तविक यज्ञ ! वेदी क्या है? उन्होंने कहा कि संसार में वास्तविक यज्ञ वेदी तो यज्ञ करना है। भौतिक यज्ञ करना है, उसके पश्चात् आत्मिक यज्ञ करना है। यज्ञ वेदी को अपनाना हमारा कर्त्तव्य है। हे रामआज तुम्हें यज्ञ वेदी को अपना कर चलना है। तुम्हें अपने ! सदाचार को अपनाना है और संसार को सदाचारी बनादेना है अहिंसा परमोधर्म की वेदी पर आ जाना है जहाँ हिंसक व्यक्ति कोई न हो। इससे तुम्हारे राष्ट्र का कल्याण होगा। तुम्हारी यज्ञ वेदी की रक्षा होगी, तुम्हारी माता की रक्षा होगी, तुम्हारी संस्कृति की रक्षा होगी।

आज मुझे जब यह वाक्य कंठ आते हैं। तो हृदय गद् गद् हो जाता है। हृदय कुछ का कुछ पुकारने लगता है। आज मुझे वेद का एक एक अक्षर पुकार रहा है, कि हे मानवतू !तू यज्ञ को अपना। सदाचारी बन करके यज्ञ वेदी पर आ। मेरी प्यारी माता ! भी सदाचारी बन करके, यज्ञ में आ। तू संसार को ऊँचा बनाने वाली है। जब तेरा सदाचार ऊँचा होगा, तो तेरे गर्भ से वह बालक उत्पन्न हो सकते हैं, जो वर्ण व्यवस्था को ऊँचा बना सकते हैं। हे मातायदि तेरी यज्ञ वेदी शान्त हो गई !, तो तू उस प्यारे पुत्र को कदापि उत्पन्न न कर सकेगी, जो आज संसार का कल्याण कर दे। दूसरों की रक्षा करने वाला, बालक तेरे गर्भ से उस काल में उत्पन्न होगा, जब तू सात्विकता को धारण करेगी। हे माताआज तू गंगोत्री बन !, जो भीष्म पितामह जैसे गर्भ से उत्पन्न हों। आज तू वास्तविक बन। जैमिनि जैसे को उत्पन्न कर। आज तू इस यज्ञ वेदी पर आ। यहाँ तेरे गर्भ से नाना भगवान कृष्ण जैसे पैदा हो। माता तू !क्यों नहीं आती है? हे मातातू उस वेदी पर आ और भगवान से प्रार्थना कर !, तू उस प्रभु की गोद में चल, जिसमें जाने से तेरा गर्भ संसार में ऊँचा बनेगा। तू संसार की माता कहलाएगी। आज तू वह माता क्यों नहीं बन रही है? आज तू आरुणि बन, माता अहिल्या बन, जो संसार का कल्याण करने वाली माता थी। आज तू माता पार्वती बन, जो गणेश जैसे पुत्र को उत्पन्न करने वाली हो, कार्तिक को उत्पन्न करने वाली हो। मातातू ! कहाँ है? कौन से स्थल में जा पहुँची है? कौन से अंधकार रूपी गुफा में जा पहुंची है

जहां तू अपनी ज्ञान रूपी अग्नि को शान्त कर बैठी है।

मुनिवरों! आज प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या को उस यज्ञ वेदी पर आ जाना है, जिस पर आ जाने से मानव का कल्याण होता है। यज्ञ वेदी से वर्ण व्यवस्था बनती है। ब्रह्मा जानता है, कि यह शूद्र है, यह हमारी रक्षा नहीं कर सकता है। सेवा कराओ । क्षत्रिय से कहो, कि तू यज्ञ कि रक्षा कर, यह तेरा कर्तव्य है, वैश्य से कहो, कि तू द्रव्य दे, जिस द्रव्य से यह राष्ट्र, यह लोक और परलोक तेरा ऊँचा बने। मानव! आज तू यज्ञ में अवश्य कुछ न कुछ दे । आज तू वह पदार्थ दे, वह हवि दे, जिसको पान करके देवता कल्याण के लिए तुझे प्रेरणा दे । अहिंसा परमोधर्म वाली वेदी पर तुझे प्रेरित करें । आज यदि तू हिंसक बन गया, तो हे मानव! तेरा मानव जीवन व्यर्थ हो गया, तू कुछ न रहा। एक पशु के तुल्य बन गया, तू मार्ग में विचरणे वाला एक सिंह बन गया है। हे मानव! आज तुझे ऊँचा व्यक्तित्व बनना है, कि सिंह तक तेरे चरणों में ओत प्रोत हो जाएँ।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जिस समय कजली वन में वेद पाठ किया करते थे, तो मैं देखा करता था, कि उस समय नाना सिंह आ करके, उस वेद वाणी को पान किया करते थे। उस समय वृक्षों पर पक्षी भी शान्त हो जाते थे, उस मेरे गुरुदेव की वाणी को पान करने के लिए हिंसकों का आत्मा भी उस वाणी को पान करके पुकारता था–हे प्राणी! तू हिंसक न बन, तू हिंसक बनेगा, तो तेरा कल्याण न होगा। तू अहिंसा, सदाचार और चरित्र को अपना कर यज्ञ वेदी पर आएगा, तो तेरा वास्तव में कल्याण होगा। तू अपने राष्ट्र को भी ऊँचा बना सकेगा, अपने धर्म की रक्षा कर सकेगा। आज तू पुनः से यज्ञ वेदी पर आ।

हे मानव! आज तुझे अपनी मानवता की रक्षा करने के लिए, अपना पुनः कल्याण करने के लिए तुझे उस आँगन में आ जाना है, जहां आकर ऋषि मुनि अपने कल्याण के लिए, प्रभु से याचना किया करते है, तू उस वेदी पर आ, प्रभु के आँगन में आ, और नम्रता से चल । प्रभु के आँगन में जाने के लिए, ज्ञानी बनने के लिए, याचक बनने के लिए, यज्ञशाला में जाने के लिए, तू आज नेत्रों से देख, कि यह क्या है, यह

वह भूमि है, जहां देखो, हमारे बड़े बड़े महर्षियों ने, याज्ञवल्क्य ने और देवताओं ने यज्ञ किया। माता गार्गी जैसी यहाँ यज्ञ वेदी की रक्षा करने वाली, तथा परंपरा को ऊँचा बनाने वाली माता कहलाती है, क्योंकि उन्होने अपने धर्म की प्रतिज्ञाओं को धारण किया, जो संकल्पवादी होता है, वह संसार में ऊँचा होता है। आज हमें संकल्पवादी बनना है।

मेरे प्यारे! महानन्द जी जब कुछ वाक्य उच्चारण करते है, तो इनका वाक्य बहुत ऊँचा होता है। आज मुझे इनके वाक्यों का समर्थन नहीं करना है, मुझे तो केवल यह उच्चारण करना है, कि आज हमें यज्ञ की रक्षा करनी है। आज शान्त अग्नि को प्रज्वलित करना है, और ईंधन देकर अग्नि की ज्योति को ऊँचा बनाना है, जिस ज्योति में हम लोक लोकांतरों तक का रमण करने वाले बन जाते है। आज मुनिवरों! ! हमें उस यज्ञ वेदी पर पहुँचना है। जिस वेदी पर जाकर मानव का वास्तविक कल्याण हो जाता है, और मानव अनुभव करता है कि तू वास्तविक वेदी पर आ पहुंचा है ।

हे मेरे प्यारे! मानव! हे मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल! आओ, हम प्रभु का गुणगान गाए । प्रभु ने हमारे जीवन को बनाया है। आज हम प्रभु का गुणगान गाते चले जाएं। हे मेरे प्यारेअपनी मूर्खताओं पर विचार करते चले जाओ। पश्चाताप करते चले !मानव ! जाओ, आज परमात्मा ने तुम्हारे कल्याण के लिए नाना सामग्रियां दी हैं, परन्तु तब भी पापाचार में लगे जा रहे हो। आज आओ, और अपने कर्त्तव्यों पर पश्चाताप कर। मानव! तू यज्ञ वेदी पर आ करके, अपने उन तुच्छ कर्मो पर पश्चाताप कर और उस प्रभु के आँगन के लिए, तू प्रेरित हो और उस प्रभु से प्रार्थना कर। जब तू उसके योग्य बन जावेगा, तो प्रभु तुझे ऐसा निर्मल और पवित्र बना देंगे कि तू इस आवागमन से दूर हो जाएगा। तुझे दुःख सागर में नहीं डूबना पड़ेगा। इस समुद्र सागर से पार हो जाओगे।

हे मानवतू महान् बन। जब निर्मल और स्वच्छ बन जाएगा !, तो तेरे द्वारा जो नाना प्रकार के अवगुण हैं, वह ज्ञानरूपी अग्नि में भस्म हो जाएंगे और उसके पश्चात् उस

महान् स्थान को चला जाएगा, जिस स्थान में जाने से तेरा कल्याण होगा।
हे प्रभुतू कल्याण करने वाला है। आज तू ह !में क्यों प्रेरित नहीं कर रहा है। हम भी तो तेरी सृष्टि में आए हैं। यह संसार भी तो आपका बनाया हुआ है। भगवन्आपने ! इन दुराचार और इन पाप कर्मो को क्यों रचाया? आज प्रभुइनको न रचाते !, तो हम संसार में पापी न बनते। प्रभु! आज हम पापी हैं। हमें अपने कंठ से लगा। आज हमें प्रेरणा देकर, उन पाप भावनाओं को समाप्त करा। प्रभुहम ज्ञान अग्नि में इन्हें भस्म ! करना चाहतेहैं। विधातातेरी !हम तेरी शरण के लिए महानता चाहते हैं। प्रभु ! सहायता चाहते हैं। हमें वह सहायता दे, जिससे हम ब्रह्मा के समीप जाएं, हम यज्ञशाला में जाएं। अग्नि प्रज्वलित करें और देवताओं को हवि दें। देवता उसे पाकर प्रेरणा देंगे, जिन प्रेरणाओं को पाकर प्रभुह !म तेरी गोद में आ जाएंगे। हे कल्याणकारी प्रभुकहाँ है !? आज हमारे कल्याण के लिए योजना बना। हम तेरी संसार रूपी यज्ञ वेदी पर आए हैं। हमें प्रेरणा दें। हमें महान बना। हम वास्तविक ब्रह्मा बनें, योगी बनें। आज विधाता! हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते, हम संसार का कल्याण चाहते हैं।
आज यह वेद हमें क्या पुकार रहा है। वेद कहता चला जा रहा है हे मानवतू मानव ! बन। दूसरों का भक्षण न कर। अहिंसावादी बन। हिंसक बनेगा, तो तेरा अनिष्ट हो जाएगा। आज यदि तू अहिंसावादी बनकर सदाचार को अपनाएगा, तो सूर्य जैसा तेरा प्रकाश होगा। संसार में जो भी त्यागी, तपस्वी रहा है और परमात्मा की आज्ञाओं का पालन किया है, वह संसार में ऊँचा कहलाया है।
आज प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को ऊँचा बनना है। ऊँचा बनने के लिए वेद रूपी प्रकाश को अपनाना है। यज्ञ वेदी पर जा करके, कल्याण करना है। आज का हमारा आदेश यज्ञ के लिए प्रेरित कर रहा था। आज मानव को सदाचारी बनने के लिए कह रहा था। प्रभु के द्वारा जाने के लिए प्रेरित कर रहा था।
मुनिवरोंआज मानव को ऊँचा बनने का सबसे अच्छा साधन क्या है !? सबसे अच्छा साधन है यज्ञ। सबसे ऊँचा साधन है, ब्रह्माओं के द्वारा जाना। ऋषि मुनियों के द्वारा

जाकर, अपने नाना कष्टों का निर्वाण करो। अपने आत्म कल्याण के लिए उनसे कहो कि हमें आत्मा का आदेश दें।

आज तू वास्तव में आत्मा का आदेश चाहता है, तो तू रसना के उस आनन्द को त्याग जिसका आदि और अन्त नहीं। आज तुझे रसना के वास्तविक आनन्द को लाना है। जिस रसना पर ओ३म् का आनन्द आ गया, तो मानो वाणी पवित्र बन गई। यह वाणी आत्मा के द्वारा जाएगी तो तेरा अन्तःकरण पवित्र बन जाएगा। आज तू इस रसना के आनन्द में दूसरे जीवों को भक्षण कर रहा हैं, इस वाणी के द्वारा ओ३म् में क्यों नहीं विचरता। आज तू इस वाणी में ओ३म् को बसा लें। जब ओ३म् तेरी वाणी में स्थान कर जाएगा तो तेरी वाणी व अन्तःकरण पवित्र हो जाएगा। मल, विक्षेप आवरण शान्त हो जाएंगे। तेरी आत्मा की प्रकार तेरे द्वारा आ करके, परमात्मा से मिलान करा देगी।

यह है मुनिवरोंआज का हमारा आदेश कह रहा था !आज का हमारा आदेश !, कि हे मानवतू यज्ञ कर और उस यज्ञ को कर !, जिस यज्ञ से तेरा कल्याण हो। जिससे तू वर्ण व्यवस्था को धारण कर सकता हो। तुझे वर्ण व्यवस्था को धारण करना है। जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार होता है, वह राष्ट्र ऊँचा होता है। वह राष्ट्र महान् कहलाता है।

देवराज इन्द्र

मुनिवरोंदेखो !,मुझे आज से बहुत पूर्व काल में देवराज इन्द्र के राष्ट्र में भ्रमण करने ! का अवसर मिला जिसको त्रिपुरी कहते हैं। उनके राष्ट्र में कोई व्यक्ति ऐसा न था, जो वेदों का ज्ञाता न हो, जो यज्ञ करने वाला न हो, जो सदाचारी न हो, जो ब्रह्मचारी न हो। कोई ऐसी माता न थी, जिसके द्वारा ओज और तेज न हो। कोई ऐसा माता पिता न था, जो वेद के अनुकूल पुत्र न उत्पन्न करता हो और वेद की आज्ञा में न चलता हो। जिस राजा के राष्ट्र में यह सब कुछ विधान होते हैं, उस राजा को मुनिवरों इन्द्र कहते हैं। !वह इन्द्रपुरी का स्वामी कहलाता है। वह देवता होते हैं

हे मानवआज तुम्हें ऊँचा बनना है। और अपने राजा को इन्द्र चुनना हैं !, वह राजा

जो देवताओं की रक्षा कर सके। आज मानव को मानव बनना है, और इन्द्र के राष्ट्र में जाना है।

यह है मुनिवरोंकल !आज का आदेश। अब बेटा ! समय मिलेगा, तो कल और सुन्दर आदेश होगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो प्रभुआज का आदेश तो बड़ा सुन्दर !, पर समय बहुत सूक्ष्म।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य...यह बेटा! तुम नित्य प्रति कहा करते हो, यह तो तुम्हारा बहुत पूर्व से अभ्यास है।

तो मुनिवरोंहमारा अब यह आदे !श समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिला, तो कल हम कुछ योग प्रणाली का निर्णय देंगे, जो कुछ आदि ऋषियों से पाई है। अनुभव तो नहीं कहना चाहिए। कल यज्ञ के ऊपर भी कुछ प्रकाश देंगे। आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय था, कि आज हमें यज्ञ द्वारा वर्ण व्यवस्था को कैसे बनाना है। देवता कैसे बनना है। परमात्मा के समीप कैसे जाना है। कई विषय थे, अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है कल समय मिलेगा, तो कल और विचित्र आदेश होगा। अब हमारा कुछ वेदों का पाठ होगा। स्थान यज्ञ पंडाल, सरोजनी नगर, नई दिल्ली समय रात्रि को बजे 8

७ 13 11 1963 पुष्प 08 जीवन में यज्ञ

जीते रहो !देखो, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पार्ययण समय समाप्त हुआ। पुनः की भांति आज भी हम कुछ वेद मन्त्रों का गान गा रहे थे। आज से पूर्वकाल में हमने बताया था, कि इस समय हमारा यजून्पू मुनि संहिता का पाठ चल रहा है। अभी कुछ सूक्त रह रहे हैं। इससे पूर्व हमने अंगिरस संहिता का पाठ किया था। आज मैं पुनः की भांति इस विवाद में नहीं जाना चाहता, कि हमारे ऋषि मुनियों ने इन चार मूल वेदों को इन संहिताओं में क्यों बद्ध किया। मैं तो केवल यह उच्चारण करने जा रहा हूँ कि यजुन्पू मुनि महाराज ने इस संहिता में वेद मन्त्रों की कैसी सुन्दर चुनौती दी है। आज हमें उस पर विचार करना है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मझे कई स्थानों में सूचना दी है कि मूल वेद चार हैं और ! सृष्टि के प्रारम्भ में चार ऋषियों द्वारा प्रगट हुए। परन्तु इन्होंने यह भी प्रश्न किया, कि जब सृष्टि क्रमबद्ध है, इसकी अवधि का प्रारम्भ है, तो सृष्टि समाप्त होने पर वेदों का ज्ञान रहता है या नहीं? मैंने इनके कुछ संक्षेप से उत्तर दिए। आज यह वाक्य पुनः से हृदय में आते चले जा रहे हैं। ज्ञान नाम हैप्रकाश का और वेद भी प्रकाश को कहते , हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन् कहते हैं या है। !

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा !हैं । जिस प्रकार बेटाचन्द्रमा !, सूर्य, ध्रुव, नक्षत्र सब ही प्रलय काल में उस प्रकृति की गोद में चले जाते हैं, उसी प्रकार वेद जो परमात्मा का ज्ञान है, परमात्मा में लय हो जाता है। वह ही ज्ञान सृष्टि प्रारम्भ होने पर ऋषियों द्वारा इस संसार में आ जाता है। आज कोई मनुष्य यह कहता है कि मैं इस ज्ञान को सीमित बना सकता हूँ और इसका एक पोथा बना सकता हूँ, परन्तु मैं तो यह कहा करता हूँ कि वेदों का ज्ञान इतना अपार है, कि मनुष्य इसका पोथा किसी काल में भी नहीं बना सकता। आज पुनः से इस ज्ञान पर विचार करना है और देखना है कि यह ज्ञान हमें प्रभु से आया है। आज मुझे यह वाक्य प्रकट नहीं करना है, कि यह ज्ञान कहाँ से और कैसे संसार में आया। आज तो मेरा हृदय यज्ञ के लिए बड़ा ही ललायित हो रहा है।

प्रभु विनय

मुनिवरोंवेदगान में जब मेरा हृदय आनन्दित हो रहा था !, तो मैं अपने परमपिता परमात्मा से उच्चारण कर रहा था, कि हे प्रभु! मेरा अंग प्रत्यंग सर्वज्ञ इन्द्रियां यज्ञमय हों। मेरे जीवन का एक एक संकल्प यज्ञमय हो। आज मैं विकल्पों में नहीं जाना चाहता, जो जीवन को नष्ट कर दें। परन्तु प्रभुमुझे अपने ! संकल्पों को यज्ञमय बनाने के लिए सहायता की आवश्यकता है। जैसे यज्ञशाला को रचाने के लिए यज्ञमान की आवश्यकता है। जैसे यज्ञशाला को रचाने के लिए यज्ञमान को ब्रह्मा की सहायता की आवश्यकता है। इसी प्रकार आज अपने जीवन को यज्ञमय बनाने के लिए किसी की

सहायता लेना चाहता हूँ। परन्तु मुझे कोई ऐसा प्रतीत नहीं देता, जिसकी मैं सहायता लूं। मुझे तो केवल प्रभु ही ऐसा प्रतीत देता है, जिसका यह संसार यज्ञ है। मैं उस परमपिता परमात्मा को अपना स्वामी बना चाहता हूँ। मैं किंचित् बुद्धि वाला, एक यज्ञमान बनाना चाहता हूँ।

प्रभुसंसार का कल्याण करता है !तू कल्याण करने वाला है !। मैं तो तब ही जानूँगा, जब मुझ जैसे पापी को भी संसार से पार करोगे। मैं उसी काल में जानूंगा, कि तेरी सत्ता इस संसार में है। मैंने सुना है कि तूने अगस्त्य मुनि जैसे का कल्याण किया है, नारद जैसे को तुमने पार किया है, मैं तो तब ही जानूंगा, जब मुझे भी इस संसार से पार करोगे। मेरा जीवन यज्ञमय होगा। मेरी प्रत्येक इन्द्रियां यज्ञमय हों। मेरे नेत्र संसार में जो भी देखे, वह यज्ञ हो। वह यज्ञ परोपकार का हो, राष्ट्र कल्याणरूपी हो, भौतिक हो या आध्यात्मिक यज्ञ हो, मेरे नेत्र कुवस्तु को न देख सकें, जो यज्ञ से पृथक हो। कल्याण करने वाले स्वामीतू आ और ! मेरे जीवन को यज्ञमय बना मै संसार में प्रभु द्रव्यपति बन जाऊँ तो वह द्रव्य भी यज्ञमय हो।

मुनिवरोंमैंने सुना है और प !्रभु की अनुपम कृपा से देखा भी है, जब महाराजा शिव और माता पार्वती एक स्थान पर विराजमान हो करके प्रभु का चिन्तन किया करते थे। कि हमारा जीवन यज्ञमय हो, हमारा जीवन हिमालय के तुल्य स्थिर हो। हमारा जीवन कैलाश के तुल्य हो। कैलाश वह पदार्थ है, कि शरद वायु आती है, हिम गिरा जाती है । और ग्रीष्म में सूर्य तपायमान करता है। परन्तु वह महान सबको सहन करता रहता है। इसी प्रकार हमारा जीवन भी नाना समस्याओं को सहन करने वाला हो। हमारा जीवन एक विचित्र और यज्ञमय हो। देखो,आज हम राजा हैं !, हमें राष्ट्र को कैलाश बनाना है। आज हम उन कर्मों को करने नहीं आए, जिससे हे देवी ! हमारी राष्ट्रीयता समाप्त हो जाएं। जिससे हमारा जो कलाश है, वह हमें अपनी गोद में धारण न कर सके।

मुनिवरों! वह कैलाश कौन है? कैलाशपति कौन है?

कैलाश राष्ट्र है। वह राष्ट्र कैलाश है, जिस राष्ट्र में सदाचार की लहरें हों। जहाँ गंगा

की पवित्र धारा हो। वह कौन सी पवित्रता है? वह है सुषुम्ना नाड़ी की जागृति। हम इंगला, पिंगला और सुषुम्ना नाम की नाड़ियों को जागृत करने वाले हों। देखो, देवी ! उसको कैलाश कहा जाता है। प्रजा कैलाश है और कैलाश का पति शिव है। हमारे शरीर में भी यह इन्द्रियां कैलाश हैं, इनका पति यह आत्मा है। यह इन्द्रियों को प्रेरित करने वाला मनीराम भी बड़ा विलक्षण है। यह मानव को कहीं का कही ले जाता है। आज हमें तो पवित्र और सदाचार बन करके चलना है।

यज्ञोपवीत

कल मेरे प्यारेमहानन्द जी ने यज्ञोपवीतम् के सम्बन्ध में एक प्रश्न किया। ! वास्तव में तो मैंने आज से पूर्वकाल में यज्ञोपवीत के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा है। आज भी कुछ धारा देता चला जाऊं। मुनिवरोंजिसके ,यज्ञशाला में जाने का वह अधिकारी है ! द्वारा यज्ञोपवीत हो। यज्ञोपवीत वह पदार्थ है जो हमें परमात्मा के मार्ग में ले जाने के लिए प्रेरित करता है। जिसके धारण करने से परमात्मा का ज्ञान जाना जा सकता है। मेरे प्यारेमहानन्द जी तो यह कहेंगे !, कि एक सूत्र के धारण करने से संसार का ज्ञान विज्ञान कैसे जाना जाएगा? मुनिवरोंयह एक पवित्र धागा है !, इसे विचारना है। इसके विज्ञान को जानना है। एक मूल धागा है परन्तु उससे नाना प्रकार के वस्त्र बन जाते हैं। इसी प्रकार यह धागा है, यज्ञोपवीतम जो परम पवित्र है। यह आर्यों का सबसे प्रथम प्रतीक है और उस परमपिता परमात्मा ने दिया है, जब हम माता के गर्भ स्थल में आते हैं, वहाँ भी परमात्मा हमें यज्ञोपवीत देता है। कैसे देता हैं?

मुनिवरोंजब हम माता के गर्भ में होते हैं !, तब एक नाड़ी उसी प्रकार होती है, जैसे यज्ञोपवीत धारण किया जाता है। जब परमात्मा ने माता के गर्भ में बालक को यह प्रतीक दिया है, तो हमें यह प्रतीक बाहर भी धारण करना चाहिए। मुनिवरोंदेखो !, ! उस नाड़ी का सम्बन्ध हमारी आत्मा से होता है, हमारे जीवन से होता है। इसी प्रकार इस यज्ञोपवीत का सम्बन्ध आत्मा से होता हुआ, उस परमपिता परमात्मा से होता है। जो हमारा कल्याण करता है। हमारे कल्याण के लिए विधान बना रहा है और संसार को ऊँचा बनाता चला जा रहा है और बनाएगा।

मुनिवरोंयज्ञोपवीतम् परमं पवित्रम्। आज हर मनुष्य को परम पवित्र बनना !, उसका कर्त्तव्य है। जब तक हम सब अपने परम पवित्र यज्ञोपवीत को धारण करके अपने विचारों को पवित्र नहीं बना सकते, तो हमारा जीवन किसी प्रकार भी यज्ञमय न होगा। आज हमें यज्ञ वेदी पर आ जाना है। यज्ञवेदी वह पदार्थ है जहाँ यज्ञोपवीत होता है। वेदी हमारे यहाँ आत्मा को भी कहते हैं, और वेदी यज्ञशाला को भी कहते है।

मुनिवरोंयह आत्मा कैसे वेदी है !? जब यज्ञोपवीत को धारण करके हम चलते हैं, अपने विचारों को परम पवित्र बनाते हैं, तो हमारे संकल्पों का, हमारी बुद्धि का, सबका विचार आत्मा के द्वारा जाते हैं और अन्तःकरण रूपी थैली में विराजमान हो जाते हैं। यह है आत्मारूपी वेदी ।

यज्ञशाला को भी वेदी कहते हैं, क्योंकि जब परमपवित्र यज्ञोपवीत को धारण कर ब्रह्मा, ऋत्विज के द्वारा जाते हैं। उस समय हमारे जो परम पवित्र विचार हैं, जो संकल्प हैं, वह सामग्री के द्वारा ओत प्रोत हो करके देवताओं तक पहुंचेंगे और देवता हमारे उन विचारों को हमें देंगे, वह हमारे सूक्ष्म से परम पवित्र विचारों को कई गुना पवित्र बना करके संसार को देंगे। संसार का उन विचारों से कल्याण होगा। तो हे मेरे प्यारेऋषिम !ण्डलतू विद्वत् मण्डल है। तू !हे मेरे विद्वत् मण्डल !हे मेरे भद्र मण्डल ! प्रकाश का मण्डल है। आज तू संसार में प्रकाशवान बन। ऐसा प्रकाशवान् बन, जैसा विद्युत प्रकाशवान है। विद्युत तेरे एक एक कण में है, तू इसको सींच और वाणी में धारण कर। उस विद्युत को तू आत्मा में धारण कर और उसका प्रकाश कर। तेरे प्रकाश में संसार का कल्याण होगा। हे विद्वत् मण्डलतू कल्याण करने वाला है। ! जिस प्रकार वैज्ञानिक जलों से, वायु से, विद्युत को सींचते हैं, इसी प्रकार तू भी विद्युत को सींचने वाला बन। प्रत्येक इन्द्रियों में जब तुझे उसका प्रकाश प्रतीत होने लगेगा, तो संसार में तेरा प्रकाश होगा। तू वास्तव में विद्युत है।

मैं यज्ञोपवीत के सम्बन्ध में उच्चारण कर रहा था, कि यज्ञोपवीत तू परम पवित्र है। परमात्मा ने यह दिशा है। परमात्मा ने क्यों दिया है? जब वेद ईश्वरीय ज्ञान कहा

जाता है, तो परमात्मा ने वेदों में यज्ञोपवीत का मन्त्र क्यों दिया, जिससे मनुष्य धारण करता है? हमारे युग के आचार्यों ने इस सम्बन्ध में कहा है कि परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में इस यज्ञोपवीत को इसलिए धारण कराया है, कि जिससे हे आत्मातू ! मुझे शान्त न कर दें, जिससे तेरा कल्याण न हो सके। जैसे मुनिवरोंउस परमपिता ! परमात्मा ने बालक के द्वारा एक क्षुधा का प्रतीक बनाया है और उस क्षुधा के कारण वह बालक माता को तीन काल में भी शान्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार परम पवित्र यज्ञोपवीत को धारण करने वाला परमात्मा को त्रिकाल में भी शान्त नहीं करता और उस प्रभु के गुणगान गाता ही रहता है। तो मुनिवरोंआज हमें उस प्रभु का गुण ! गान गाना है और यज्ञोपवीत को धारण करना है, जिससे हम ऊँचे बन जाते हैं, प्रकृति को त्यागते हैं और आत्मा को उस परमात्मा की गोद में ले जा सकते हैं इस विज्ञान से। हमारे द्वारा यह विज्ञान होना चाहिए।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझसे कहा था कि !पूर्व का ऋषि मण्डल कुछ नहीं जानता था। वह वनों में रहते थे, उन्हें व्यवहार का कोई ज्ञान न था। परन्तु मैंने यह वाक्य कई समय कहा है कि यदि बेटावह व्यवहार का ज्ञान करते !, तो वह संसार में ऋषि नहीं कहला सकते थे, उन्हें व्यवहार का ज्ञान था। परन्तु ऐसे नहीं, जैसे संसार के रहने वालों को होता है।

श‍ृङ्गी ऋषि

मुझे त्रेता काल की एक वार्त्ता कंठ आ गई। जिस समय महाराजा श‍ृङ्गी ऋषि को कजली बन से अयोध्या में पुत्रेष्टि यज्ञ के लिए लाया गया, तो उस समय वह 188 वर्ष का ब्रह्मचारी था, परन्तु उसने सबके चरणों को स्पर्श किया, चाहे माता थी, चाहे राजा था, चाहे सेवक था और उच्चारण किया था, कि यह तो बड़ा ही सुन्दर देवलोक है। जहाँ ऐसे ऐसे ऊँचे विचार वाले हों, वह परमात्मा को तो तीन काल में भी शान्त नहीं कर सकते। वह परमात्मा के गुणगान गाकर बारम्बार परम पवित्र बना करते हैं। आज हमें वह विचार बनाने हैं। उस नम्रता को लाना है संसार में, जिसको धारण करने से मनुष्य संसार से पार हो जाता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या गुरुदेवराजा को भी ऐसा होना चाहिए !, जैसा आप उच्चारण कर रहे हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाराजा को शान्ति व नम्रता धारण करनी चाहिए। एक समय की ! मुझे कौन !वार्त्ता है कि महाराजा कुबेर ने अपने राज्य पुरोहित से पूछा कि महाराज सी मानवता व शान्ति को अपनाना है। तो उस समय पुरोहित ने कहा था कि अरे, तुम्हें उस मानवता को और शान्ति को अपनाना है कि यदि तुम्हारे राष्ट्र पर कोई आक्रमण करे, तो उसे शान्ति कहकर शान्त करो। परन्तु यह देखना है कि कौन सी शान्ति होनी चाहिए। उसे भुजों की शान्ति नहीं चाहिए, उसे उसके चरणों में स्पर्श होने की शान्ति नहीं चाहिए, उसे तो वह शान्ति चाहिए ,जिससे उसका अभिमान शान्त हो जाए । वह शान्ति का शस्त्र कौन सा है जिससे अभिमान चूर चूर हो सकता है। वह है अपना कुठार, जिसको ले करके जैसा समय देखा वैसा वर्ताव करो। तुम शत्रु पर विजय पा सकते हो। हमारा वेद यह नहीं कहता, कि तुम दूसरों के आधीन होकर विराजमान हो जाओ। हमारे वेद का आदेश तो जैसा महाराजा शिव, माता पार्वती से कहा करते थे कि हे देवीयदि हमारे हिमालय पर !, हमारे कैलाश पर कोई आक्रमण कर दे, तो क्या करना चाहिए? उस समय माता पार्वती कहा करती थी, प्रभु! अपने उस महान वैज्ञानिक शस्त्रों को धारण करना है, जिन शस्त्रों से इस कैलाश की रक्षा हो सके।

हे मेरे ऋषिमण्डलमैं वार्त्ता तो जिज्ञासा की प्रकट कर रहा था !, परन्तु राष्ट्र के वाक्य उच्चारण करने लगा। आज मेरा यह वाक्य नहीं था। मैं नम्रता का आदेश उच्चारण करने जा रहा था। मैं परमात्मा के द्वारा जाने का आदेश उच्चारण करने जा रहा था। तो मुनिवरोंस !दाचार के सम्बन्ध में एक ही वाक्य कहा है, कि आज मानव को परम पवित्र यज्ञोपवीत को धारण करना है। मैं तो सभी से प्रार्थना करता हूँ, कि हे मेरे प्यारेतू अपने इस !भद्र मण्डल !हे मेरे प्यारे !हे मेरे ऋषि मण्डल !विद्वत् मण्डल ! परम पवित्र विचार को, राष्ट्र से घोषित करा, कि प्रत्येक माता, प्रत्येक पिता अपने बालक को परम पवित्र यज्ञोपवीत को धारण कराने वाला हो। उसके विचारों में

आचार्यों को प्रेरणा हो। वह आचार्य कौन से हों? वह आचार्य पवित्र हो, ब्रह्मचारी हो, उसके विचार ऐसे ऊँचे हों, कि वह उस बालक को अपने उदर में धारण करने वाला हो।

गुरु के गर्भ में बालक

मेरे प्यारे महानन्द !जी कहेंगे, कि आचार्य बालक को अपने गर्भ में कैसे धारण कर सकता है।

मुनिवरोंवह धारण कर सकता है। देखो !, जब शिष्य यज्ञोपवीत को धारण करने के पश्चात्, गुरु के द्वारा जाता है, तो गुरु उसे गायत्री का उपदेश देता है और कहता है कि गायत्री माता है, और कहता है कि जितने तेरे इन्द्रियों के विषय हैं, इन्हें तू मुझे दे दें और मेरा जो वाक्य है, मेरा जो आहार है, उसे पानकर। हे पुत्रतू आज माता ! के गर्भ से आया है, पिता के गृह से आया है, अब मैं तेरी माता भी हूँ और पिता भी हूँ । तू मुझे अपने अवगुण दे, अपनी चंचलता को दे। मैं अपने ज्ञान रूपी प्रकाश से उन्हें समाप्त करूंगा और वह उपदेश दूंगा, जैसे माता गर्भस्थल में वह ऊँचा आदेश देती है, कि तुम यहाँ सदाचारी व ऋषि बन जाते हो। आज तू अपनी सब इन्द्रियों के विषयों को मुझे दे, तू केवल एक रूप को धारण कर और वह है प्रकाश। तो मुनिवरोंजहाँ ऐसी शिक्षा दी जाती हो !, जहाँ उस प्यारे पुत्र को, ब्रह्मचारी को केवल एक वेद की शिक्षा दी जाती हो, जिसे विद्या और अपनी संस्कृति से प्रेम हो और कोई ज्ञान न हो, तो जानो वह ब्रह्मचारी आचार्य के गर्भ में है। वहाँ उसका पालन पोषण उसी प्रकार हो रहा है, जैसे माता के गर्भ में, बालक के शरीर का पालन पोषण होता है। आचार्य गर्भस्थल में जाने के पश्चात् जहाँ माता के गर्भ में शरीर बनता है, वहाँ बालक का जीवन बनता है। आज हमें ऋषि मुनियों की प्रणाली को धारण करना है। आज हमें संसार को ऊँचा बनाना है। हमें शिव का पुजारी बनना है। हमें लिंग का पुजारी बनना है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी कहेंगे !, कि अब तो आप भी पाषाण लिंग की पूजा करने लगे। परन्तु मैंने इस लिंग की व्याख्या पूर्व के व्याख्यानों में की है। आज भी मैं कुछ संक्षेप

से उस लिंग की व्याख्या करता चला जाऊँ। लिंग नाम है, ज्ञान का। आज संसार में हमें ज्ञान को धारणा करके चलना है। हमारा द्रव्य भी लिंग है। यदि हमारे द्वारा द्रव्य हो, तो वह भी यज्ञमय हो। हम द्रव्य का दुरूपयोग करने लगते हैं, तो वह ही हमारा विनाश करा देता है। यदि उस लिंग का सदुपयोग करते हैं, तो वह ही हमारा जीवन यज्ञमय बना देता है। आज हमें जीवन को ऊँचा बनाना है।

मुनिवरोंजैसे उपस्थ इन्द्रियों पर शासन करने वाला महान ब्रह्मचारी बन जाता है !, इसी प्रकार आज हमें इस परम पवित्र को धारणा करने वाला ब्रह्मचारी बनना है। उदार और पवित्र बनना है। उदारता और ब्रह्मचर्यता से वीरता व तेज आता है। ऋषियों की प्रणाली कितनी ऊँची है, जिससे हमारा कल्याण होता है। ऋषियों की प्रेरणा पा करके, हमारा जीवन पवित्र बनता है।

एक समय मैंने अपने गुरुदेव से निर्णय कराया, कि भगवन्हम अपना जीवन यज्ञमय ! बनाना चाहते हैं, परन्तु यह यज्ञ है क्या? उस समय मेरे पूज्य गुरुदेव ने कहा कि यज्ञ वह पदार्थ है जो हमें स्वर्ग में पहुंचता है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा कि वह स्वर्ग क्या होता है? तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि स्वर्ग वह होता है, जहाँ कोई कष्ट नहीं होता है। तब मैंने कहा कि यदि स्वर्ग में कोई कष्ट नहीं होता, तो मुझे वह स्वर्ग नहीं चाहिए। जिस लोक में जाने से मनुष्य का मान ही मान होता है वह मान मुझे नहीं चाहिए। मुझे तो वह संसार चाहिए जिसमें मान भी हो और अपमान भी, मान और अपमान दोनों से मानव का जीवन पवित्र बनता है। मेरे गुरुदेव ने पूछा भाईकैसे बनता है !? तो मैंने गुरुदेव से कहा कि मैंने तो अपने मन का एक वाक्य मांगा है, मुझे तो निर्णय कराओं कैसे होता है? तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने योग मुद्रा में आकर बहुत सुन्दर उपदेश दिया और कहा कि वास्तव में हम या तो परमात्मा के गर्भ में रहें और यदि स्वर्ग में जाकर रहें तो उस लोक को चाहते हैं जहाँ मान और अपमान दोनों हों। क्योंकि जब मनुष्य का मान ही मान होता रहता है, तो वह मान ही मान में इतना अभिमानी बन जाता है कि उसकी मानवता समाप्त हो जाती है। परन्तु जहाँ मान भी होता है और एक स्थान में अपमान भी होता है, तो उस समय

उसे विचार आता है, कि तुझे संसार में स्थिर रहना है। तुझे विचारवान रहना है। तेरे शत्रु भी हैं, मित्र भी हैं। आज तुझे वह बनना है, कि अपने शत्रु को भी अपना मित्र बनाना है।

तो आज हे मेरे प्यारे हमें शत्रुओं को भी अपना !ऋषि मण्डल !मित्र बनाना है, और वह मित्र बनाना है, कि जिससे हमारा कल्याण हो। जो मित्र शत्रु बन करके, मित्र बना, वह हमारा हितेशी होगा। जो मित्र हमारा मान करने वाला है, वह हो सकता है, किसी काल में हमारा मित्र न रहे, परन्तु जो शत्रु बन करके मित्र बनता है, वह सदैव मित्र बन करके रहेगा संसार में। यह आज हमारे हृदय का एक वाक्य है। तो मेरे गुरुदेव ने मुझे बहुत कुछ शिक्षाएं दी और मैं उन शिक्षाओं से इस परिणाम पर पहुंचा, कि मानव को संसार में स्थिर रहना है, परमात्मा के गुणगान गा करके। जैसे कैलाश पर्वत पर नाना आपत्तियां आती हैं परन्तु सहन करता रहता है। इसी प्रकार आज हमें परम पवित्र यज्ञोपवीत को धारण करके शान्ति और विचारवान बनना है। हम संसार में शत्रुता को नहीं चुनना है। हमें मित्रता को लेना है।

तो बेटाआज का हमारा उपदेश क्या कह रहा था। मैं प्रभु से कह रहा था !, कि हे प्रभुमैंने सुना है तुमने अगस्त्य मुनि को संसार से पार किया है। प्रभु !! मैं किंचित् बुद्धि वाला, एक महात्रुटियों वाला, तेरी शरण में आना चाहता हूँ, और चाहता हूँ कि मेरा यह जीवन यज्ञमय हो। जो मेरा द्रव्य हो, वह भी यज्ञमय हो। मेरे शरीर का एक एक कण यज्ञ में प्रेरित हो। मैं एक सूक्ष्म से बन्धन में रहने वाला हूँ प्रभुमैं तुम्हें तब ! ही जानूंगा, जब तुम मुझे इस बन्धन से दूर करोगे। प्रभु! मुझे पार करो, मैं संसार सागर से पार होना चाहता हूँ यज्ञ के द्वारा। वेद रूपी प्रकाश के द्वारा।

मैं पुनः पुनः याचना करता रहूँगा कि जिनको आज तुम अपना शत्रु बना रहे हो, वह तुम्हारे शत्रु नहीं। एक समय तुम्हारे मित्र भी बनेंगे। आज जिनको तुम आहार करते जा रहे हो, एक समय वह आएगा कि वह तुम्हें आहार करेंगे। यदि मैं ज्ञान की गोद में जाऊँगा, तो ज्ञान मुझे अपनाएगा। यदि मैं पाप करने लगूँगा तो पाप मेरे जीवन को समाप्त कर देगा और यदि मै हिंसा करने लगूंगा, तो एक समय वह आएगा कि

जिनकी आज मैं हिंसा कर रहा हूँ, वह मेरी भी बलि दे सकते हैं, एक समय संसार में। आज यदि मैं किसी प्राणी की रक्षा करूँगा, तो एक समय वह आएगा कि वह प्राणी मेरी रक्षा करेगा। तो हे मेरे प्यारेहे मेरे मानव मण्डल !ऋषि मण्डल !! हे मेरे भ्रातृ मण्डलमैं पुनः से यह निवेदन कर रहा हूँ !, वाणी से वर्णन नहीं मैं अपनी आन्तरिक आत्मा से यह वाक्य कह रहा हूँ कि यदि तुम्हें संसार में परम पवित्र बनना है तो तुम संसार में किसी की हिंसा न करो। तुम अपने जीवन को यज्ञमय बना लो। परम पवित्र को धारण कर, तुम परम पवित्र बनो।

आज तुम देखो,दूसरे जीवों का भक्षण न करो। आज यदि तुम जीवन चाहते हो !, राष्ट्र की एकता चाहते हो, सदाचार चाहते हो, तो तुम प्राणियों की रक्षा करो। बल से करो, वाणी से करो, हस्त से करो परन्तु रक्षा करो। यह जो तुम्हें शरीर दिया है, यह दूसरों की रक्षा करने के लिए दिया है। यह दूसरों का वध करने के लिए नहीं। यह जो हमारे भुज हैं, हमारे अंग अंग की रक्षा करते हैं। दूसरे प्राणियों की रक्षा करते हैं। यह हमारे द्वारा प्रतीक हैं, और शिक्षा देते हैं, कि प्रभु ने यह दूसरों की रक्षा करने के लिए दिए हैं। आज संसार में हमें अपने जीवन को ऊँचा, महान व विलक्षण परम पवित्र बनाना है। उन भुजों से, वाणी से, उपस्थ इंद्रियों से और त्वचा से दूसरों की रक्षा करनी है। हमें दूसरों को नष्ट नहीं करना है। हमें तो, हमारे द्वारा जो काम, क्रोध, मद, लोभ मोह शत्रु हैं, इनको नष्ट करना है। हम इनका वध करेंगे तो हमारा जीवन महान बन जाएगा। आज हमें अहिंसा परमो धर्मः का पालन करके ज्ञान के और वेद के प्रकाश में जाना है। यज्ञमय अपने जीवन को बनाना है। तो अब यह हमारा आदेश समाप्त होने जा रहा है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो प्रभुगुरुजी !! आज तो आपका समय बहुत ही सूक्ष्म रहा।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं बेटा समय अब समाप्त हो चुका है। !

पूज्य महानन्द जीः जैसी इच्छा भगवन्कल का क्या विशेष रहेगा !तो भगवन् !? कल तो कुछ समय दीजिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटाकल का क !ल देखा जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन्वास्तव में !, भगवन्मैं समय चाहता भी नहीं। मैं ! आपके द्वारा अपनीअपकीर्ति भी कराना नहीं चाहता। मैं तो नम्र ही बनना चाहता हूँ। आपको नम्रता का आदेश देते बहुत समय हो गया है। आपने मुझे तो नम्रता का आदेश दिया, परन्तु जब आप मुझे कटु कहते हैं, तो आप कटु ही हो।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्ययह महानन्द जी विनोद !अच्छा। धन्यवाद। तो मुनिवरों ..... की वार्त्ता प्रगट कर रहे थे, यह हर समय विनोद ही करते रहते हैं। चलो, कोई बात नहीं। आज के आदेशों का हमारा अभिप्राय क्या था? हमें प्रभु का गुणागान गाना है। हमें विचारवान बनना है, हमें महान और पवित्र बनना है। हमें वेद के प्रकाश में पहुँचना है। यह है आज का हमारा आदेश, अब समय मिलेगा, तो शेष चर्चा कल होगी। अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया। अब कुछ वेद पाठ होगा, उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। रात्रि 9.विनय नगर 00,

८ 14 11 1963 पुष्प 08 नम्रता में अमृत

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे समक्ष, पुनः की भांति कुछ वेद गान गा रहे थे। और उस समय मध्य वेला में आए हैंजिसमें सूर्य अपना ऊँचा प्रकाश दे रहा हो। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के , आरम्भ में सूर्य रूपी यज्ञवेदी को रचा। जिस प्रकार आदित्य ब्रह्मचारी वेदों का प्रकाण्ड ऐसे ह ,बुद्धिमान हो करके अपना तेजस्वी प्रकाश देता है ी सूर्य हमारे मध्य में है। आज सूर्य हमें प्रकाश दे रहा है, हमें ओजस्वी बना रहा है। यह वह यज्ञवेदी है, जिससे प्रत्येक प्राणी और वनस्पति सबका कल्याण होता है।

आज जैसे परमात्मा ने इस यज्ञवेदी को रचाया है, इसी प्रकार प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या और प्रत्येक ऋषि मण्डल को अपनी ज्ञान यज्ञशाला को प्रज्वलित करना चाहिए। जिससे मानव का जीवन ऊँचा बने। आज मैं माँ काली की याचना करने नहीं आया। माता दुर्गे की याचना करने नहीं आया। मैं तो एक प्रभु की याचना करने आया हूँ। हे प्रभुतू कल्याण करने वाला है। तू संसार को उज्ज्व !ल बनाता है। तेरी महानता

इस संसार में ओत प्रोत है। जहाँ हमारे नेत्र जाते हैं, जहाँ हमारा ज्ञान विज्ञान जाता है, वह आपके ज्ञान विज्ञान के सामने बहुत ही किंचित् है। आपका ज्ञान विज्ञान इतना अनुपम है, इतना विलक्षण है, कि जिसे कोई ऋषि या कोई महर्षि तो कुछ पा सकता है, परन्तु मानव तो हृदय से उच्चारण करता करता संसार से चल बसता है। हे परमदेव तू कल्याण कर मैं पुनः से तेरी याचना करने आया हूँ। !

आज का वेद पाठ क्या कह रहा है? आज हमने सहस्त्रों समय नमः कहा है। हमने सूर्य को नमः किया। हे सूर्य! तू प्रकाश को देने वाला है, तुझे नमः है। तू आज हमारा जीवन चला रहा है, तुझे नमः है। हे देव हमें !तू कल्याण कर रहा है। भगवन् ! तेरी महिमा का भी इससे गुणगान नहीं गाया जाता, आज हम तेरे ज्ञान व विज्ञान को विचारते ही विचरते रहते है। आपका प्रकाश हमारे विचारों को सूक्ष्म व सीमित कर देता है। हे देव! तुझे नमः है।

हे चन्द्रमातुझे भी नमः। आज हम इस यज्ञ वेदी पर देवताओं को नमः करने आए ! तू वास्तव में महा !हैं। हे चन्द्रमान हैं। हमें आनन्द और अमृत देता है। जब हेमन्त ऋतु जाती है, तो कृषि करने वाले वैश्यों की कृषि उस समय ललायित होती है, और तेरी ज्योतिः और महान शीतलता जाकर उस कृषि में एक अनुपम अमृत प्रदान करती है। कृषि करने वाला वैश्य, तुझे नमः कर रहा है। तू हमें भी अपनी शीतल किरणों से, शीतल कान्ति से नम्र और कान्तिदायक बनाता है। हमें अमृत का पान कराता हैं, हे देव आ और हमें अमृत का पान करा। आज हम अमृत !चाहते हैं। आज संसार में कोई भी व्यक्ति, कोई भी प्राणी ऐसा न होगा विधाताजिसको अमृत को चाह न ! होगी। परन्तु यह संसार किसी भी काल में यह नहीं विचारता कि अमृत मिलेगा कहाँ से। तुझे वह कर्म करना है, जिससे तुझे अमृत मिले। वह अमृत तो मैंने अभी अभी उच्चारण किया है, चन्द्रमा देता चला जा रहा है। हम इस पर अनुसन्धान करें और देखो, कि यह अमृत हमारा क्या करता है। यह हमें कितना आनन्द देता है। उस अमृत को पाने के लिए, अपनी वाणी को उसी प्रकार बनाना है, जिससे अपने हृदय अमृत को पान कर सके।

नाभि में अमृत

मुझे राजा रावण की एक वार्त्ता कंठ आ गई। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय ! ऐसा कहा कि कहते हैं कि रावण की नाभि में अमृत था। परन्तु वह अमृत का स्थान रावण के द्वारा ही नहीं, प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या व प्रत्येक ऋषि के द्वारा है। परन्तु आज हमें उसे विचारना है। यदि हम नहीं विचारते, तो वह अमृत हमारे द्वारा है ही नहीं। तो हे मेरे प्यारेआज हमें विचारना है !महानन्द !हे मेरे प्यारे !ऋषि मण्डल ! कि अमृत हमारे द्वाराहै, हम उसका किस प्रकार पान कर सकते हैं।

चन्द्रमा जब भी संसार में आता है, अमृत ही देता है। माता के गर्भ स्थल में भी अमृत देता है। कृषि को अमृत देता है। प्राणी मात्र के लिए अमृत देता है। परन्तु अमृत खींचने वाले बनो। वह तो अमृत की वर्षा कर रहे हैं, परन्तु यह तुम्हारा कर्त्तव्य है कि हे मानवतू अमृत को पान कैसे करेगा। इसके ऊपर अनुसन्धान करना है और ! अनुसन्धान के साथ अपने जीवन को विचार के चलना है, कि हमें अमृत कैसे मिलेगा।

मुझे प्रभु की अनुपम कृपा से वह अमूल्य समय देखने का अवसर मिला है, जब यहाँ अमृत के ऊपर अनुसन्धान किया जाता था और अनुसन्धान करते करते अमृत को पान करते थे। यहाँ देखो, महात्मा ध्रुव ने अमृत का पान किया। महात्मा ध्रुव ने जैसा उनके जीवन के इतिहास से प्राप्त होता है और ऋषियों से भी ऐसी सूचना मिली है, कि उन्होंने अमृत का पान करने का प्रयत्न किया और संकल्प किया। वनों में जा करके, जहाँ एक अन्धकार छाया हुआ था, उस बालक ने अमृत को पान करने का प्रयत्न किया और अमृत हो पाया। यहाँ तक पाया कि जब उनकी इच्छा होती, जब ही लोक लोकान्तरों में रमण जा किया। तो इसका नाम है अमृत। जिसको पाने से सुख ही सुख प्राप्त होता है। मानव के द्वारा मान, अपमान हो, दोनों में एक रस रहने वाला हो, मानो उसे एक अमृत प्राप्त हो गया हो। तो हे मेरे प्यारेऋषि मण !्डल! हे मेरे प्यारेआज तो मैं किंचित् बुद्धि से यह उच्चारण करने आया हूँ !महानन्द !, कि आज हमें अमृत को पान करना है और उनके ऊपर अनुसन्धान करना हैं। चन्द्रमा जो अमृत

देता है, वह क्या है? कहाँ से आता है? इसके ऊपर विचार करना है। चन्द्रमा को नमः, वह नमस्कार के योग्य है। उसको नमस्कार करनी है।

नमः का अभिप्राय

ब्रह्मणेऽस्वते नमः जो ब्रह्मा यज्ञशाला में विराजमान हो करके, अपने कर्मकाण्ड के द्वारा अपने ऋत्विज्, होताओं को चुनौती देने वाला हो, उस ब्राह्मण को नमः। क्यों? क्योंकि वह ब्रह्मा है। जैसे परमपिता परमात्मा इस संसाररूपी यज्ञशाला का स्वामी है, इसी प्रकार यज्ञशाला में विराजमान होने वाले, जितने ऋत्विज्, यज्ञमान और होता आदि हैं, उनका जीवन, उनकी शाला वह ब्रह्मा बना हुआ है। उसको हमारे वेदाचार्यों ने ब्रह्मा की चुनौती दी है। आज हमें ब्रह्मा बन करके संसार में चलना है। आज हमें वास्तविक कर्म काण्ड से परिपक्व हो करके चलना है। मुनिवरोंएक समय ऋषियों ने ! यह कहा कि जिस यज्ञशाला में ब्रह्मा कर्मकाण्ड से, अपने आचरणों से, अपने व्यवहारों से पवित्र न होगा, तो वह यज्ञ संसार में असफल रह जाएगा। तो हे मेरे प्यारेब्रह्मा !! सबसे पूर्व तुझे सदाचारी बनना है, ब्रह्मचारी बनना है। आज यज्ञशाला में विराजमान होने वाले यज्ञमानों को भी पवित्र बनाना तेरा कर्त्तव्य है। तेरे जो भाव हैं, वह उनके हृदयों में अंकित हो जाएं। तो मैं उच्चारण कर रहा था, कि उस ब्रह्मा को नमः, जिसके हृदय में संसार के कल्याण की भावना है। वाणी जिसकी अमोध हो। राष्ट्र के लिए, संसार के लिए जो लाभदायक हो उसको नमः।

यहाँ पृथ्वी को भी नमः। हे पृथ्वी! माता तू विचित्र है। तू संसार को ओज, तेज देती है। महान अन्न और वनस्पतियाँ देती है। तू आनन्द देती है। इस संसार को तू अपने गर्भ में धारण करती है। मातातू कितनी पवित्र है। तेरे लिए नमः। वेद कहता है हे ! तुम पृथ्वी को नमः करो !मनुष्यों, परन्तु नमः का अभिप्राय भुजों से नहीं। आज पृथ्वी जो तुम्हें देती है, उसे आदर के सहित ग्रहण करो। पृथ्वी नाना प्रकार के पदार्थ देती है। राष्ट्र के चलाने के लिए नाना धातुएं देती है। आज उसको प्रयोग करने के साथ साथ उसे नमः करो। मुनिवरोंयह है नमः का अभिप्राय। उस पृथ्वी का आदर करो। ! वह तब ही होता है जब पृथ्वी में जो तत्त्व हैं उन्हें ज्ञान और विज्ञान के द्वारा जाना

जाता है।

मुनिवरोंवहाँ किस ! किस को नमः कहें। आज महानन्द जी ने भी कुछ उच्चारण करना है। देवताओं को नमः। देवेभ्यो नमः। सूर्यस्वतातू हमारा कल्याण करता है। परमात्मा ! की आज्ञानुसार तू हम जो यहाँ दुर्गन्ध करते हैं, विष फैलाते हैं, हे सूर्यतू उस ! विषैली वायु को अपने में धारण करता है। आज हम तुझे नमः कर रहे हैं। नमः का अभिप्राय है, कि तू हमें भाय देकर दूर रहे और हमारे कल्याण के लिए विष को पान करता रहे। आज तेरे लिए नमः।

यज्ञमान का संकल्प

मुनिवरोंदेखो !,प्रत्येक के लिए नमः। माता तेरे लिए नमः। तू हमारी पालना करती ! है। अपने गर्भ में धारण करती है, जहाँ हमारा जीवन पवित्र बनता है और तेरे संस्कार आते हैं। कीड़े उत्पन्न करने वाली माता को नमः नहीं। यहाँ उस माता को नमः है, जो वशिष्ठ जैसे को उत्पन्न करने वाली हो। यहाँ अगस्त मुनि जैसे को उत्पन्न करने वाली माता को नमः। भगवान कृष्ण को जन्म देने वाली माता को नमः। रघु और राजा हरिश्चन्द्र को उत्पन्न करने वाली माता को नमः। उन महान आत्माओं को नमः जो अपनी धारणाओं से अपने संकल्पों से इस संसार में वीर बालक, योगी व ऋषियों को जन्म देती हैं। मातातू वास्तव में हमें विचित्र बनाती है। हम तेरे लिए नमस्कार कर ! रहे हैं। हम ही नहीं संसार तेरा पूजन करेगा।

हे यज्ञमानतुझे नमः !, तू यज्ञ रचाने वाला है। तू सपत्नी यज्ञशाला में विराजमान होता है, तुझे नमः। तू अपने कुछ संकल्पों से इस संसार के कल्याण की भावना लेकर उस सपत्नी यज्ञशाला में आया है और तू ब्रह्म को नमः करता है। पुरोहितों को महानता देने वाला है। तू ब्रह्म का चिन्तन करने वाला है। तू वेदों की आज्ञा का पालन करता है, तुझे नमः।

बेटायज्ञमान कहते हैं !, इस आत्मा को। ब्रह्म कहते हैं, उस परमात्मा को। यह जो शरीर है, यज्ञशाला रूपी वेदी है। हे आत्मातू यज्ञमान बनकर उस ब्रह्म का मनन ! कर। अपनी इन्द्रियों से शुभ कार्य कर। यज्ञशाला में आ करके ब्रह्म को तू अपना

अधिपति बना। जब तू ब्रह्मा को अधिपति बनाएगा, तो उस समय तुम से पाप न होगा संसार में। आज तुझे पाप से बचना है। यज्ञशाला को पवित्र बनाना है। किसी प्रकार का पाप न कर सकूं संसार में। मुझे क्रोध न आए, मुझे कोई वासना न आए, मुझे मोह न आए। मैं यज्ञशाला में ऐसे रहूँ, जैसे जल में कमल रहता है। जैसे मुखारबिन्दों में रसना रहती है। आज मैं रसना के तुल्य रहना चाहता हूँ। हे यज्ञमान ! आज तू नाना वासनाओं सहित यज्ञशाला में आया है, तू इस वासना रूपी पत्नी को नियन्त्रण में कर, जिससे तेरा भविष्य, तेरा जीवन, जन्म जन्मान्तरों के लिए विलक्षण बन जाए।

हे यज्ञमानयह तो तू आत्मिक यज्ञमान है। तू भौतिक यज्ञमान भी बड़ा पवित्र है। तू ! भौतिक यज्ञमान कैसा है। तूबुद्धिमानों का आदर वाला है। बुद्धिमानों के आदर से धर्म और सदाचार संसार में आएगा। यदि बुद्धिमानों का आदर न रहा, तो यह धर्म और सदाचार समाप्त हो जाएगा। राष्ट्र की एकता न रहेगी। जीवन की एकता समाप्त हो जाएगी। आज मानव का जीवन यज्ञमय हो। जीवन ही सदाचार में हो। जीवन ही परमो धर्मः में हो। जीवन ही नम्रता में हो। हे प्यारे ऋषि मण्डलयह जीवन हमारा ! कल्याण करेगा।

अब मैं महानन्द जी से उच्चारण करने जा रहा हूँ कि वह भी अपने विचारों को प्रकट करें। जैसा मुझे उनसे संकेत मिला है। वर्तमान में जो यज्ञशाला रचाई गई है उसकी कुछ रूपरेखा नम्रता पूर्वक उच्चारण करेंगे। धन्यवाद

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् द्रविणं मम अस्वति सुप्रजा मनोभिर्यज्ञमानः।

मेरे पूज्य गुरुदेवभद्र विद्वत् मण्डल। उस महान परमदेव को !भद्र मानव समाज ! अपने हृदय में धारण करता हुआ, मैं आज कुछ उच्चारण करने जा रहा हूँ। मेरे गुरुदेव ने मुझे नम्रता का पाठ पढ़ाया। मैंने यह संकल्प किया है, कि मैं सदैव नम्र रहने का संकल्प करता हूँ। यदि यह संसार अग्नि में जाए, तो जाने दो, परन्तु मैं नम्रता को धारण करने का अवश्य संकल्प लूंगा।

मैं सूक्ष्म शरीर के द्वारा कुछ भ्रमण किया करता हूँ। आधुनिक काल का समाज

मण्डल तो यह कहेगा कि यह कैसा महानन्द है, जो सूक्ष्म शरीर से भ्रमण करता है। वह तो कहेंगे कि यह सब कल्पित वाक्य है। जिन्होंने उस स्थिति को उस संकल्प को देखा ही नहीं, वह तो कल्पित ही कहेंगे। परन्तु मुझे इस विवाद पर नहीं जाना है, कि वह कल्पित कहें या न कहें। मुझे गुरुदेव ने संकल्प करा दिया है, मुझे इस वाक्य पर नहीं जाना।

कल्याण का आधार

आज मेरी आत्मा बड़ी प्रसन्न है, क्योंकि जिस इन्द्रप्रस्थ भूमि पर हमारे गुरुदेव की यह आकाशवाणी मेरे उस गुरुदेव के मृतलोकी शरीर में से जा रही है, उस इन्द्रप्रस्थ भूमि पर चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ की आज पूर्णाहूति हुई। मैं उस यज्ञशाला को देखने पहुंचा और मुझे बड़ी प्रसन्ता हुई। अब मैं अपने गुरुदेव की प्रशंसा करने लगूं और अन्य की निन्दा करने लगूं, तो यह मुझे शोभा नहीं देता। हास्यमैं अपने .....
.....गुरुदेव के उस शरीर की चंचलता वर्णन करूं तो वह शोभा नहीं देता। हास्य परन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा कि आज मुझे बड़ी प्रसन्नता है। आज जैसे विद्वत मण्डल ने ऐसे महान समारोह में, मेरी प्यारी माताओं ने और मेरे प्यारेभद्र पुरुषों ने भाग ! लिया है, मैं उनका बड़ा आभारी हूँ। संसार में ऐसे समय में, यदि ऐसे यज्ञ होते रहें, तो बड़े ही शुभ संकल्प इस संसार के। मैं यह कहने नहीं आया, कि तुम ऐसा करो। परन्तु यह अवश्य कहने आया हूँ कि हे मेरे प्यारेजहाँ तुम इस नाना !भद्र मण्डल ! प्रकार के द्रव्य को पापवृत्तियों में लगाते हो, अपने श्रृङ्गार और पोषण में लगाते हो, ऐसे ही कुछ भाग लेकर के तुम यज्ञ भी किया करो जिससे तुम्हारा कल्याण होगा। राष्ट्र का कल्याण होगा। राष्ट्र की एकता और सदाचार का प्रसार होगा।

यहाँ एक सप्ताह के समारोह में मैंने भी अपने वाक्य व्यक्त किए, मैं अपने गुरुदेव की तो प्रशंसा करने जा ही रहा हूँ, जिनके इतने उदार विचित्र संकल्प सहित वाक्य होते हैं, कि मनुष्य उनके वाक्यों को पान करके नम्र हो जाता है। मैं इनके वाक्यों को पाता हूँ, तो मैं नम्र हो जाता हूँ, इनके संकल्पों पर और उदारता पर।

आज मैं जानूंगा, जहाँ यह एक सप्ताह से समारोह हो रहा है, कितनी मेरी माताएं,

कितने मेरे भद्रपुरुष, कितने मेरे विद्वत् मण्डल, यहाँ सदाचारी बनने की आहुति देने आए हैं। जब तक सदाचारी बनने की आहुति न देंगे, यज्ञमान बनने की आहुति न देंगे, शुभ संकल्प कर्म करने की आहुति न देंगे, तब तक ऐसे समारोह से तुम्हारा लाभ न होगा। कल्याण तुम्हारा तब ही होगा, जब विद्वानों के वाक्यों को तुम पान करो, श्रवण करने से ही या अंग स्पर्श से ही तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। कल्याण तब ही होगा, जब तुम ऊँचा कर्म और संकल्प करोगे। हास्य....

मैं तो यह कहूँगा, कि ऐसे यज्ञ सदैव होते रहें। राष्ट्र कल्याण के यज्ञ हों, परोपकार के यज्ञ हों, पुत्रेष्टि यज्ञ हों, सामूहिक हों या राष्ट्र विजय के हों, परन्तु होते रहें। शुभ संकल्पों से होते रहें।

इस यज्ञशाला में जो यज्ञमान बने हैं, और अपने शुभ संकल्पों से इस शुभ कार्य को रचा है। मैं उन सबको सुन्दर आशीर्वाद देने आया हूँ। उनके हृदय में ऐसी सुन्दर प्रेरणा, परमपिता परमात्मा सदैव देता रहे। विद्वत् मण्डल भी देते रहें और विद्वान् सदाचारी बन करके, इस संसार को ऊँचा बनाने का संकल्प धारण करें।

आज का संसार मैं देखता हूँ, कि यह श्राप में विश्वास नहीं करता, क्योंकि आज का संसार तार्किक है। परन्तु तार्किक होने के नाते, यह मानना अनिवार्य होगा, कि जब मानव सदैव सत्य उच्चारण करता है, तो उसे श्राप की स्थिति मानना अनिवार्य है। जो सत्य धारण करता है, उसे ज्ञान होता है, कि उसने यह कर्म किया है और परमात्मा के न्याय से उसे दण्ड मिलेगा और वह ही योगी अमोध वाणी वाला उच्चारण कर देता है। इससे परमपिता परमात्मा का नियम समाप्त नहीं होता। जो श्राप देते हैं, उन्हें ज्ञान होता है, कि इसके कर्म का यह दण्ड मिलेगा, वह उच्चारण कर देते हैं। परमपिता परमात्मा अपने न्याय से उसे वही दण्ड दे देते हैं।

मेरे गुरुदेव को जब परमगुरू ब्रह्मा ने यह स्थिति दी, तो गुरू जी द्वारा एक संकल्प कराया कि मम अस्थते र्विश्वं भव। कि हे भगवन्मुझे कही भेजो !, कैसे ही शरीर मिल जावे, परन्तु किसी काल में भी मुझमें अभिमानी बनने की आशा न आए। आज मैं देखना चाहता हूँ कि मेरे पूज्य गुरुदेव के द्वारा अभी तक तो वह स्थिति आई नही

है। आगे की प्रभु जाने और भगवन् के कर्म जाने।

हे मेरे बुद्धिमानोंमेरे यज्ञमानों। मेरे परोपकारी भद्रमण्डल !मेरे ब्राह्मण गण !! मैं तुम्हें यह कहने आया हूँ, कि तुम अपने हृदय में शुभ संकल्प धारण करो, प्रभु की याचना कर, प्रभु की सहायता पाते रहें, बुद्धिमानों से प्रेरणा पाकर ऊँचा कर्म करें जो मानुषी संकल्प धारण करेंगे उनका जीवन पवित्र बनेगा। उनका जीवन सूर्य तक और बृहस्पति लोकों तक पहुंचेगा। जो यहाँ अपना द्रव्य अशुभ कर्म करने में शान्त करते चले जाएंगे वह जानों बारम्बार यहाँ आते रहेंगे और कष्ट भोगते रहेंगे। मैं तो केवल यह आशीर्वाद देना चाहता था, कि ऐसे शुभ अवसर जीवन में किसी किसी काल में प्राप्त होते है। ऐसे शुभ अवसरों पर अपने जीवन की आहुति देनी चाहिए, अपने विकल्पों की आहुति देनी चाहिए, शुभ कर्म करने की आहुति देनी चाहिए, दुर्गुण त्यागने की आहुति देनी चाहिए।

आज मैं देखता हूँ, कि वह इन्द्रप्रस्थ भूमि है, जहाँ महाराज युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया था, जिस यज्ञ में संसार के राजा, महाराजा आज्ञा के अनुकूल आए थे। आज तुम्हें भी वह एक समय ला देना है संसार में। आज तुम्हारा वह समय आ जाना है, जब तुम ऐसे यज्ञ इन्द्रप्रस्थ में करते ही रहोगे। राजसूय यज्ञ करोगे, तो आज्ञा के अनुकूल, राजा, महाराजा नास्तिष्क से आस्तिक बनेंगे। वह समय तुम्हें लाना हैं। आज मेरे इस समाज में से कोई युधिष्ठिर बनेगा। आज इस इन्द्रप्रस्थ में कोई अर्जुन भी अवश्य बनेगा। कोई भीम भी अवश्य बनेगा। आज इस इन्द्रप्रस्थ में भगवान कृष्ण भी सेवा करने के लिए आएंगे, परन्तु उसके लिए, सदाचार के लिए, यज्ञ समारोह करते रहो, तो अवश्य आएंगे। यह निश्चित है। परन्तु तुम्हारे ऊपर दयालु हो करके तुम्हारे राष्ट्र की रक्षा करेंगे। तुम्हारे जीवन की रक्षा करेंगे। तुम्हारी इस मातृभूमि और संस्कृति की रक्षा होगी।

मैं देखता हूँ कि यहाँ मेरी माताएं, मेरा भद्र मण्डल, अधिकतर दूसरे जीवों को भक्षणम् करके अपने प्राणों की रक्षा करते है। बहुत से प्राणी ऐसे हैं, जो परमात्मा ने हमारे लाभ के लिए उत्पन्न किए हैं। हमारे द्वारा जो दुर्गन्धि हो जाती है, उसे समेटने

वाले प्राणी है, उनकों तुम अपने गृह में चट कर जाते हो। उनको चट न करो। उनकी चटनी की तरह पान न कर जाओ। उनकी रक्षा करो। जैसे वृक्ष तुम्हारी रक्षा करते है। जल तुम्हारी रक्षा करता है। वायु तुम्हारी रक्षा करती है। अग्नि तुम्हारी रक्षा करती है। बुद्धिमान तुम्हें सब कुछ दे करके, तुम्हारे धर्म की मर्यादा को ऊँचा बनाते है। आज तुम्हें चटकिल पदार्थो का पान करना है, तो सदोगुण, ऊँचे गुणों को चट करो और जो दुर्गन्धिदायक है, उन्हें पृथक करो। आज दूसरे प्राणियों की रक्षा करनी है।

मैं शुभ संकल्पों से, तुम सबकों आशीर्वाद देने आया हूँ। मैं गुरूजी के आगे आशीर्वाद देने के योग्य तो क्या हूँ, परन्तु तब भी मैं यह धन्यवाद देने अवश्य आया हूँ, कि यदि ऐसे ऐसे शुभ संकल्प, शुभ समारोह, यज्ञ, राष्ट्र एकता तथा सदाचार के उपदेश, ऐसे ऐसे गम्भीर मेरे गुरूदेव के आदेश, इस संसार का व्यक्ति पान करता रहेगा, तो यह संसार आर्य बनकर रहेगा। आज रूढ़िवाद से आर्य नही बनेगा। यह संसार तो नम्रता से आर्य बनेगा और बन कर रहेगा। परन्तु कब? जब तुम आर्य बनोगे, जब तुम यज्ञवेदी पर पहुँचोगे, अपने सदाचार की वेदी पर पहुँचोगे, अपने आहार और व्यवहारों की वेदी पर पहुँचोगे जब तुम आर्य बनोगे तो तुम्हारी संस्कृति की रक्षा होगी।

आज प्रत्येक बुद्धिमान कहता है, कि संस्कृति समाप्त होती जा रही है। परन्तु क्यों समाप्त होती जा रही है? न तो राष्ट्र का कोई दोष है, न राजा का ही दोष है। हे प्रजा !यह जो भी दोष है, तेरा है। क्योंकि जिनकी तुझे रक्षा करनी थी, उनकी रक्षा नही करता और जिनको तुझे महानता देनी थी, उन्हें महानता नहीं देता। महानता देते हो तो किसको? महानता देते हो रोग को। आज तुम सदाचारी बनने वाले, सदाचार को महानता क्यों नहीं देते। आज संस्कृति को मान्यता स्वयं दे सकते हो। जब तुम स्वयं दोगे, तो राष्ट्र भी अवश्य सदाचारी बनेगा और आर्य बन करके, तुम्हारी संस्कृति को अपनाएगा। क्या करें, जब समाज ही ऐसा बन गया है। जब समाज में ही दूसरों की चटनी बना कर पान करने का अभ्यास हो गया है। अब कहते है संस्कृति, संस्कृति, ऋषि परम्परा, ऋषि परम्परा, यज्ञोपवीतम्, यज्ञोपवीतम्। परन्तु कहना चाहिए रसना की पूर्ति।

आज महान आत्माओं की वाणी क्या कहती है, उसे देखों और विचार करों। आर्यों की वाणी को देखो, और उन पर विचार करो। अब भी जो तुम्हारे मध्य में आर्य है, उनके विचारों का पान करो और उन पर चलो।

मैं यह आदेश देने आया था, कि ऐसे ऐसे यज्ञ होते रहे। मैं प्रभु से याचना किया करूंगा, कि ऐसे ऐसे महायज्ञ, ऐसे ऐसे भद्र कर्म करने वाले पुरुषों के हृदय में परमपिता परमात्मा बारम्बार शान्ति और बारम्बार शुभ कर्म करने के संकल्प उनमें आते रहें।

संस्कृति को ऊँचा बनाने के लिए, तुम्हें सदाचार और यज्ञों को अपनाना ही पड़ेगा। यज्ञ ही हमारा जीवन है। यज्ञ ही हमारा राष्ट्र है। यज्ञ ही हमारी रक्षा करेगा। जब तुम यह विश्वास करोगे, तो उस समय तुम्हारी रक्षा स्वतः होगी। यहाँ अब यज्ञों की प्रणाली समाप्त हो गई है। हे मेरे प्यारेमेरी प्यारी माता !भद्र संसार !ओंजब यहाँ ! यज्ञों की प्रणाली और आर्यता सूक्ष्म हो गई थी, उस समय यहाँ दूसरों का आधीन बन करके रहा। वह स्वराज्य की चेतावनी देखो, तुम्हें आर्यों ने ही दी, आज से पूर्व काल में महर्षि शंकराचार्य चेतावनी देकर चले गए। उसके पश्चात यहाँ महर्षि दयानंद चेतावनी देकर चले गए। मैं तो चेतावनी देने योग्य नही, परन्तु यह चेतावनी देने जा रहा हूँ कि आज तुम सब यथार्थ को यथार्थ मानो और मिथ्या को त्यागों। जो गम्भीर और योग का विषय हो, उसे योगी बन करके जानो और जिसका बुद्धिमानों से और तर्क से सम्बन्ध है। उसे तर्क से जानो। जो राष्ट्र का सम्बन्ध हो, उसे राष्ट्र की प्रणाली से जानो। जो यज्ञों का प्रकरण है, उसे ब्रह्मा और यज्ञशाला में विराजमान हो करके, ऋषि परम्परा से देखो,। आज तुम सत्य को सत्य मानों। यहाँ जब ऐसी प्रणाली आ जाएगी, ऐसी विचित्रता आ जाएगी, तो पुनः के सतोयुग और द्वापर जैसी स्थिति आ जाएगी और पुनः से तुम्हारा कल्याण हो जाएगा।

अब मैं अपने गुरुदेव से आज्ञा पाने आया हूँ। मैं तो केवल इतना उच्चारण करने आया हूँ, कि संस्कृति को ऊँचा बनाना है, यदि तुम्हें आर्य बनना है, विचित्र बनना है, तो अपने रूढ़िवाद को त्याग दो। वर्ण व्यवस्था से चलो, तुम्हारा जीवन सदैव आनंदमय

और समारोह में रहेगा। अब मैं गुरुदेव से आज्ञा पा रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.......महानन्द जी की वाणी पर कुछ प्रभाव हुआ, तो एक आध शब्द अब भी कटु हो गए है। चलो, उनका भी धन्यवाद। आज इन्होंने बहुत सुन्दर कहा है। अब मैं महानन्द जी का हार्दिक धन्यवाद करने जा रहा हूँ। परन्तु इसका धन्यवाद तो क्या करे। चलो, अब हमारा यह आदेश समाप्त होने जा रहा है। आज हमारे व महानन्द जी के आदेश का अभिप्राय था, कि मनुष्य को ऊँचा बनना चाहिए। आर्य और पवित्र बनना चाहिए। अब यह हमारे आदेश समाप्त हो गएं है। अब कुछ वेदों का पाठ होगा और उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। दोपहर बजे 12 विनय नगर।

९ 28 12 1963 पुष्प 08 हम आर्य बनें

देखो, मुनिवरोंअभी अभी ! हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम तुम्हारे समक्ष पुनः की भांति कुछ वेदमन्त्रों का पाठ कर रहे थे ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेदमन्त्रों का अभी अभी हमने तुम्हारे समक्ष, पाठ किया। आज के वेद पाठ में उस देव की याचना कर रहे थे जो देवों का महादेव है। जिस महादेव के लिए ऋषि मुनियों ने और देवताओं ने भी इसी महादेव की याचना की। आज हम पुनः से उस परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा सेदेवो के देव की याचना ,आज हम महादेव , करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था। आज हम अपने भाग्य को सराहना देते चले गए। जिस जीवन में परमात्मा के गान गाने का अवसर प्राप्त होता हो वह जीवन बड़ा अमूल्य है। वह जीवन बड़ा अमूल्य है और वह कितना अमूल्य है। वह इतना अमूल्य है कि उसकी महिमा का गुणगान नही गाया जा सकता।

मुनिवरोंईश्वर का गान !, उस महादेव का गान हम कौन से जीवन में गा सकते हैं? कौन सा जीवन ऐसा है, जिसमें हम महादेव की याचना कर सकें और उसके विज्ञान की चर्चाएँ कर सके वह कौन सा जीवन हैवह परमात्मा ने कौन , सा जीवन दिया है। जो देवताओं ने भी जिस जीवन की याचना की है, वह है मनुष्य। वह जीवन है मनुष्य, जिसकी याचना हमारे आचार्यों ने पुनः पुनः की है, ऋषियों और महर्षियों ने

देवता बनने के लिए महादेव से याचना की है कि हमें मनुष्य बना। और कैसा मनुष्य बना? मनुष्य बनाना है, तो हमें आर्य बना, हमें श्रेष्ठ पुरूष बना। हम यथार्थ का पालन करने वाले बनें। जैसा मैने द्वितीय वाक्यों में आर्यों की व्याख्या प्रारम्भ होती चली जा रही है। आर्यों की व्याख्या आज भी मैं करता चला जाँऊ। मुझे आर्यों का जीवन बड़ा अमूल्य प्रतीत होता है, उनका जीवन संसार में परोपकार करने के लिए होता है, उनका जीवन संसार में वास्तविकता को फैलाने के लिए होता है। वे अपने ज्ञान विज्ञान का प्रसार करके यहाँ से चले जाते हैं। मुनिवरोंनारद मुनि महाराज ने आर्यों ! की व्याख्या करते हुए कहा था कि आज मैं आर्यों की व्याख्या नहीं कर सकता क्योंकि आर्य इतने श्रेष्ठ होते हैं। सृष्टि का जब प्रारम्भ हुआ सृष्टि के प्रारम्भ में आर्य यहाँ आये। सृष्टि के प्रारम्भ से आर्य आते चले आए हैं। जो दूसरों को कष्ट न देने वाले होंउनको आर्य कहते हैं। यह आर्य परम्परा से यहाँ आए हैं और इन्हीं ने सृष्टि , का निर्माण किया है। इन्हीं का यज्ञ इतना महान है। इन्हीं के विज्ञान से यह सर्व संसार उत्पन्न हुआ। तो मुनिवरोंयह महान आर्यों की परम्परो को !, मैं आर्यों की परम्परा बहुत समय से गाता चला जा रहा हूँ।

मुनिवरों आज मुझे महादेव की याचना करने का सौभाग्य प्राप्त हो !रहा है। महादेव जो देवों के भी देव हैं। जो महान हैंजिसकी याचना देवताजन भी किया करते हैं। , त्रेता के काल में भगवान राम ने वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रश्न किया कि !मुनिवरों महादेव कौन हैं !भगवन? हम महादेव किसको माने? उस समय महाराजा वशिष्ठ मुनि ने कहा था रामयह ! जो महादेव है, यह देवों के देव हैं ,यह हम इसके महाऋणी है , देता है और यह क्या देता है यह हमें वह सामग्री देता है जो कहीं ,क्योंकि यह देव है !महादेव। राम ने कहा कि महाराज ,भी प्राप्त नहीं होती है। उस सामग्री को देता है वह कौन सी सामग्री है? जो महादेव देता है हमें। उन्होंने कहा था कि वह सामग्री वायु है, वह सामग्री अग्नि है, वह अन्तरिक्ष है, वह पृथ्वी हैजल है ,, यह सब सामग्री उस विधाता की देन है। जो मनुष्य के हृदय में ओत प्रोत हो रही है। जो मुनिवरों ! देखो, मनुष्य का जीवन सञ्चार होता हैइन्ही से। खान , पान की सामग्री आती है ,

पृथ्वी से, यह पृथ्वी उस परम महादेव की देन है। इस पृथ्वी पर हम सभी स्थापित हो करके और हम उसके विज्ञान का उस महिमा का गुणगान गाते हैं आज हम उस पृथ्वी की गोद में जा करके हम उन वनस्पतियों को पाते है उस विज्ञान को पाते है जिस विज्ञान से देखो, हमारे जीवन का विकास हो जाता है। अहा देखो, यह उस महादेव ने हमें देन दी है जहाँ एक एक वस्तु इस प्रकार की है कि मानव चकित हो जाता है मुनिवरों ।!

मुनिवरोंइस विज्ञान ,और मानव यथार्थता का जब पान करता है। विचार आता है ! कि परमात् ,मनुष्य देखता है ,का प्रसार करता हैमा उस महादेव ने यह ज्ञान दिया है। महादेव ने यह हमें सब सामग्री दी हैं। अपने जीवन में धारण करने के लिए, अपने जीवन को ऊँचा बनाने के लिए, हमें श्रेष्ठ बनाने के परमात्मा ने सामग्री दी है। आज हम देखो, इसके पश्चात वह कितना ऊँचा महादेव हैक्या एक यही सामग्री , नही दीकौन !उस महादेव ने वह सामग्री दी है मुनिवरों , सी सामग्री दी है? वेद है हमारे द्वारा। आज वह सामग्री ज्ञान है ज्ञान से अपने जीवन का प्रसारजीवन को , ऊँचा बनाते है वह सामग्री कहाँ से जानी जाती है? यह प्रकाश से जानी जाती है। प्रकाश कौन सा है? वह प्रकाश हमारे द्वारा वेद। वेद कहते हैं प्रकाश को। उस परमात्मा ने हमें यह प्रकाश दिया है और इसी प्रकाश के आधार पर हम सर्वत्र सृष्टि को जानने वाले बन जाते है। इसी प्रकाश से हम भौतिक विज्ञान को जानते हैं और इसी प्रकाश से हम देखो, आध्यात्मिक विज्ञान को जानते हैं। इसी प्रकाश को ग्रहण करके हम संसार का भौतिक और आध्यात्मिक सर्वशः ज्ञान हमें प्राप्त हो जाता है। मुनिवरोंयह कौन ! सा प्रकाश हैयह वेद रूपी माता है। कौन ,वेद रूपी प्रकाश है , सी माता हैवेद माता ?, जिस वेद माता के गर्भ में जाने के पश्चात हम महान बन जाते हैं। जिस गायत्री के गर्भ में जाने के पश्चात् हम महान बन जाते हैं, वह विचित्र बन जाते हैं। तो मुनिवरोंवह हमारे द्वारा कौन है वह हमारे द्वारा प्रकाश है। आज ! हमें प्रकाश को पाने के लिए क्या करना पड़ेगा।

आज हमें कौन सा कर्त्तव्य करने की आवश्यकता है। जो हम प्रकाश को पा सकेंगे?

मुनिवरोंआर्य बनना है। हम आर्य बनें। आर्य हम वेद के ?वह हमारे द्वारा क्या है ! आधार को लेकर बन सकते हैं, प्रकाश को ले करके। जो प्रकाश में चलने वाला हो उसको आर्य कहते हैं और जो अन्धकार में चलने वाला होता है मुनिवरोंउसको ! अनार्य कहते हैं। आज मैने इसकी व्याख्या पूर्व काल में भी की है। आज मैं पुनः से करता चला जाँऊ। मैने पुनः काल में कहा है कि आर्य हों तो यहाँ भगवान राम जैसे आर्य हों, आर्य हो तो यहाँ महाराजा काग जैसे आर्य हो, यहां आर्य बनना हो तो मुनिवरोंनारद मुनि जैसे जिन्होने लोक ! लोकान्तरों से कहा, यहाँ आर्य बनना है तो मुनिवरोंअभ्यती मुनि महाराज और भी नाना आचार्य हुए जिन्होंने आर्यों ,माता गार्गी ! देखो !की पताका को संसार में फहराया। मुनिवरों, आज से पूर्व काल में इसकी व्याख्या की भी है आज भी मैं देता चला जाँऊ आज भी इसका कुछ प्रकाश देता चला जाँऊ। मुनिवरों !देखो, आज हम उस प्रकाश के आधार पर चलें जिससे हम भौतिक और आध्यात्मिक विज्ञान सबको जान सकें।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय एक वाक् कहा था कि अन्तरिक्ष में यह वाणी है ! परन्तु अन्तरिक्ष में रमण करने वाली है आज देखो, इसमें भिन्न भिन्न प्रकार का मत हैमनुष्य ,ों का। कोई तो इस शब्द को अनादि कह रहा है, कोई कहता है कि यह शब्द अनादि नहीं हो सकता है। मानो देखो, इसमें नाना प्रकार के प्रमाण दिये। आज मेरे पूज्यपाद आज से बहुत पूर्व काल में मेरे पूज्यपाद ने मुझे एक वाक् निर्णय कराया क्या इसमें दो प्रकार के मत हो सकते है एक तो वैज्ञानिको का कुछ मत है इस सम्बन्ध में कि यह जो शब्द हैजो अन्तरिक्ष में रमण करता है कि अनादि है , कौन कहता है कि यह अनादि नहीं मानो देखो, इसमें युक्ति देता है विद्वानबुद्धिमान ,, दार्शनिक युक्ति दे रहे है यह जो शब्द है यह अनतरिक्ष में रमण करने वाला है। मेघावी बुद्धि से उत्पन्न होता है। परन्तु इसमें भिन्न भिन्न प्रकार का मत है, कोई यह कह रहा है कि अनादि नहीं, कुछ काल के लिए रमण करता है परन्तु उसके पश्चात् यह समाप्त हो जाता है। समाप्त हो जाता हैपरन्तु ,यह भी किन्ही विद्वानों का मत है , मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक निर्णय लिया उन्होंने कहा हैकुछ विद्वानों ने यह भी ,

कहा है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव से पूर्व भी यह कहा है क्या यह जो शब्द है यदि यह अनादि होता तो सृष्टि के समाप्त होने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता क्योंकि सृष्टि में अनादि जब तक शब्द रहता है जब तक सृष्टि अश्वत हैस्थिर है और जब शब्द नही , तो मानो देखो, यह सृष्टि समाप्त हो जाएगी इस प्रकार सब बुद्धिमान युक्तियाँ देते है , ,दार्शनिको ने भी ऐसा कहा है परन्तु इसका उत्तर यह है कि मानो यह जो शब्द है यह अनादि नहीं मानो देखो, अनादि तो तीन ही पदार्थ है संसार में आत्मा, परमात्मा और प्रकृति। मानो देखो, यह अनादि नहीं। यह संक्षिप्त हो जाते हैंऔर लुप्त हो जाते , हैं। अन्तरिक्ष के साथ साथ यह शान्त हो जाते है। जैसे मुनिवरोंदेखो !, जैसे ऋक और साम हैं। जैसे पृथ्वी को ऋक कहा गया है और वायु को साम की चुनौती दी है। दोनों के मिलान होने के पश्चात् इसको साम गान कहा जाता है। मानो देखो, जब दोनों पृथक् पृथक् हो जाते हैंजब दोनों पृथक , पृथक हो जाते है उसके पश्चात यह गान समाप्त हो जाता है और गान के समाप्त हो जाने के पश्चात् विज्ञान की महिमा नही रहती। क्योंकि इनका बहुत संक्षिप्त परमाणु बन करके महान देखो, वह प्रकृति में लय हो जाते हैं। इसको प्रकृति कहते हैं।

आज मुनिवरोंयह भी माना जाता है कि आज देखो !, जितनी प्रकृति है आज यह जो रची हुई है जितना यह संसार हमें दृष्टिगोचर आ रहा है यह सब कुछ प्रकृति से उत्पन्न होता है। यह संक्षिप्त रूपों से यह प्रकृति में लय हो जाता है। जैसे मुनिवरों ! देखो, पृथ्वी में प्रकृति में वृक्षों का अंकुर है, मानो देखो, जैसे जीवात्मा के द्वारा अंतःकरण एक कर्म रूपी थैली है जिसमें देखो, पाप व पुण्य दोनों कर्म विराजमान रहते हैं। इसी प्रकार मुनिवरोंमेरे पूज्यपाद गुर !ुदेव ने ऐसा कहा है कि यह शब्द भी अनादि तो नहीं माना जाता। जब अनादि इन सभी पदार्थों को नही माना जातापरन्तु , यह प्रकृति की गोद में चले जाते हैं। जैसे यह महान् आत्मा ,इनका सूक्ष्म हो करके कर्मों का चक्र समाप्त हो जाने के पश्चात् कर्म बद्ध समाप्त हो जाने के पश्चात मानो देखो, यह परमात्मा के गर्भ में स्थापित हो जाता है, परमात्मा के आँगन में रमण करता है। उसके आँगन में रमण करता रहता है उसको मोक्ष कहते हैं। इसी प्रकार

मुनिवरोंदेखो !, यह शब्द भी तभी तक अनादि हैजब तक इसको अनादि कह सकते , जब तक अन्तरिक्ष है। मानो ,हैं यह भी है कुछ वाक्य समाप्त होते रहते हैं, उनका रूपांतर होता रहता है। ऐसा भी कुछ हमारे आचार्यों ने कहा है इस सम्बन्ध में। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इस सम्बन्ध में यह कहा है कि यह शब्द अनादि माना जाता है। परन्तु देखो, अनादि न होने का भी कोई प्रमाण नही अनादि होने का भी कोई प्रमाण नहींभिन्न ,प्रमाण देते हैं , भिन्न रूपों से प्रमाण देते है। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह भी प्रमाण दिया है इसमेंयदि यह वाक् अनादि न होता तो इसकी , जो मेघावी बुद्धि से प्राप्त होता है। जब इसकी इतनी ,महानता इतनी न कही जाती महानतः है तो इसको कह सकते हैं कि यह अनादि माना जाना चाहिए।

परन्तु वास्तव में देखो, इसका रूपातंर इस प्रकार हो जाता है इसका रूप रेखा इस प्रकार निर्भ्रान्त हो जाती है जैसे देखो, मध्याह्न स्तवति विश्व भोगाजैसे मेघावी बुद्धि , है मेघावी बुद्धि देखो, अन्तःकरण सब ग्रन्थियों को पार करके यह महान देखो, इस परमात्मा में आनन्द को रमण करता है और उस वाक् की ज्योति को देता है, उस विज्ञान को खोजता है यह वाक् कहां से आ रहा है? कहाँ जा रहा है हमारे शरीर में कोई थैली ऐसी नहींहमारे शरीर में कोई स्थान ऐसा नहीं जहाँ इतने शब्दार्थ ,, इतना वेदों का ज्ञान हो या इतना प्रकाश हो परन्तु यह भी कहीं से आता है ये कहाँ से आता है? अन्तरिक्ष से आता है। परन्तु इससे सिद्ध होता है कि यह शब्द अनादि है।

जो भगवान कृष्ण नेमहानन्द जी ने आधुनिक काल !मेरे प्यारे ,महाभारत का वर्णन , की चर्चा करते हुए यह भीकहा है कि आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का यह मत्त है कि जो भगवान कृष्ण ने महाराजा अर्जुन को जो महान गीता का उपदेश दिया, आज यन्त्रों द्वारा उस वाणी को यन्त्रो द्वारा स्थिर करना चाहते हैं ग्रहण करना चाहते है। परन्तु यह कहा है। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने ऐसा कहा ! परन्तु इससे आज देखो, इस विज्ञान का जानने के लिए मनुष्य इसमें सफल भी हो सकता है और असफल भी हो सकता हैयह हमारा कोई मन्तव्य नहीं परन्तु हम तो यह उच्चारण कर रहें है ,, क्या जो भगवान कृष्ण ने गीता का जो उपदेश दिया था वह अब तक अन्तरिक्ष में रमण

कर रहा है या नहीइसका कोई उत्तर नही परन्तु ,परन्तु इसका रूप रेखा क्या माने ? यह अवश्य कह सकते है क्या जब महान देखो, मेघावी बुद्धि से सम्बन्ध होता है और मेघावी बुद्धि से इसका अनुमान करती है तो विचार आता है कि अवश्य देखो, वह अनादि हो सकता है। मानो देखो, वह अभी तक हो सकता है। कुछ वाक्यों, कीकुछ , शब्दों की रूप रेखा भिन्न हो जाती है।

परन्तु मेरे पूज्यपाद गरुदेव ने यह कहा है इस सम्बन्ध में यह कहा है कि यह जो शब्द हैयह अनादि है। परन्तु देखो ,, यह प्रकृति में बीज रूप से रहता हैजैसे वृक्षो , का इसमे देखो, जैसे वट वृक्ष है वट वृक्ष का, एक सूक्ष्म से अंकुर में इतने बड़े वट वृक्ष का विज्ञान होता हैइतना विशाल वट वृक्ष रहता है। इसी प्रकार समाप्त हो जाने , के पश्चात् सबका सूक्ष्म रूप होकर उस महान प्रकृति में रमण करता है। अंकुर रूप देखो !से रमण न करता है तो मुनिवरों, आज यदि अंकुर रूप से रमण न करता तो सब कुछ कैसे रहता? मानो यह उपादान कारण से और मानो देखो, सामान्य से जब यह उत्पन्न होता है इसी प्रकार उत्पन्न होता है पूर्व से विराजमान है। जैसे मुनिवरों ! देखो, जैसे मनुष्य की आत्मा के द्वारा ज्ञान और प्रयत्न दोनों ही स्वाभाविक हैं। दोनों स्वाभाविक हैदेखो !इसी प्रकार मुनिवरों ,परन्तु उनका अंकुर है ,, आज कह सकते है गौरव के साथ हमारे आचार्यों ने इस वाक् को कहा है कि यह वाक् यथार्थ हो सकता है।

परन्तु आज हम बेटाहम व्याख्यान देते ! देते बहुत दूर चले गए हैं। व्याख्यान तो हमारा महादेव के सम्बन्ध से चल रहा था हम उच्चारण करते करते कितनी दूर चले गए हैं। आज हम महादेव की याचना करने जा रहे थे।

हे महादेवआज देवता तेरी पूजा किया करते हैं। तू वास्तव में महादेव है तू वास्तव ! यह संसार लिंग रूपों से ,जब सृष्टि प्रारम्भ होती है !में लिंग स्वरूप है। भगवन उत्पन्न होता है। जब लिंग रूप से उत्पन्न होता हैतो यह आप के महत की कृपा है , यह आपके विज्ञान की कृपा है। क्या छह माह में लोक लोकान्तर रच जाते हैं। हे तू वास्तव में महादेव है। देवों का भी देव है। आज हम तेरी पूजा !हे महादेव !प्रभु

करने जा रहे हैं। तू वास्तव में हमारे जीवन का साथी है। हे प्रभुहे !हे महादेव ! हे महा आनन्द को प्रदान करने वाले तू वास्तव में !कल्याण करने वाले हे महा महादेव है। हमारा कल्याण करने वाला है तू हमारा कल्याण कर, आज हम अपने कल्याण की जिज्ञासा लेकर आपके समक्ष आए हैं।

हे प्रभुआपको देवों का !हे प्रभु ! देव कहा है। क्यों कहा है? कौन से देवताओं ने आपको अपना महा देव चुना है और चुनौती दी है जो महान देखो, मनुष्यो के लिए देवता है, जैसे बुद्धिमान हैबुद्धिमान देखो ,, महान् आत्माएंसंसार में ,महान आत्माएं , और उपदेश देकर यह ,मनुष्यों का कल्याण करने के लिए आती हैंाँ से समाप्त हो जाती हैं, चले जाते है। उन आचार्यों ने भी उन देवताओं ने भी उस महादेव को अपना देव चुना है। और उसको चुनौती दी है आज हमे उस महादेव की शरण में जाना है। परन्तु प्रत्येक पुरुष और प्रत्येक देव कन्याओं को उस महादेव की शरण में जाना हैं। आज मुनिवरो देखो, उस महादेव की व्याख्या करते हुए देवर्षि नारद मुनि महाराज ने कहा है कि वह जो महादेव है वह कल्याण करने वाला हैं। सृष्टि को नियन्त्रण में करने वाला हैंआज देखो ,, जो सृष्टि को नियन्त्रण में करने वाला हो और देवताओं पर अनुगृम करने वाला हैउसको महादेव कहा गया , है वह वास्तव में महादेव है। देवताओं का भी देव है। मुनिवरोंदेखो !, नारद मुनि ने यह भी कहा है कि महान जो धर्मज्ञो की स्थिति का रूपान्तर करने वाला हैवह भी महादेव है मानो जो देवताओ , देखो !को आज्ञा देने वाला है वह भी महादेव है मुनिवरों, परमात्मा को भिन्न भिन्न रूपों से पुकारा है। उसको महादेव की चुनौती वास्तव में दी है आज हम महादेव को चुनौती देते चले जाएं। आज महादेव की याचना करते चले जाएं, जो महादेव हैमहा , महा नमो स्तुति उत्तम भवता जो अहादेखो !, लोक लोकान्तरों को रचने वाला, इनमें रमण करने वाला, और सृष्टि को नियन्त्रण में करने वाला है। उसको महा कहते है महादेव कहते है।

हे परमदेवतू हमारा ,हमारा कल्याण करने वाले आ। तू कल्याण करता है !आ ! कल्याण कर। हम तेरे से याचना करने जा रहे हैं। आज तू हमारी याचना स्वीकार

कर। आज तू देव है परन्तु देव न होता आज हम तेरी याचना न करते, आज हम तेरी शरण में नही आते परन्तु देखो, हमने विज्ञान से अच्छी प्रकार देखा है। आज मुनिवरोंदेखो !, आज अपने पूज्यपाद गुरुदेव की कृपा से नास्तिक हो करके भी देखा है, परन्तु उसमें कुछ न मिला। अन्त में उस महादेव की शरण में जाना ही पड़ा। जो महादेव हैआज मुनिवरो ,देखो !, नास्तविकत्व यह कह रहा हैजिस महादेव की , परन्तु वह महादेव ,हम याचना करते चले जा रहे हैं जिसे महादेव पुकारा जा रहा है देखो !क्या पदार्थ है। वह क्या है मुनिवरों, इसको आज आत्मा से विचारा जाएगा जाना जाएगा। आत्मा ऐसा पदार्थ नहीं कि आज तुम्हारे समक्ष इसका निर्णय करा दूँ, परन्तु समक्ष देखना है तो पूर्व तू अपने को जान और अपने को देख कि मैं कौन हूँ और कैसा हूँ। मैं आज जब मैं अपने नेत्रों को नहीं देख सकता, तो उस प्रभु को कैसे देख सकता है। बिना विज्ञान के, बिना प्रकाश के, जब मेरे में इतना प्रकाश नहीं कि आज मैं अपने नेत्रों को तो देख सकूंपरन्तु , आज हम उस महादेव को देखना चाहते हैं? बेटामहादेव तो उस महा अनुपम की कृपा से देखा जाएगा जब आत्मिक बल ! बढ़ जाएगा, जब महानता बढ़ जाएगी, विज्ञान के शिखर पर पहुंचेंगे, आध्यात्मिक विज्ञान के शिखर पर पहुचेंगे।

आज देखो, आज देखो, हम भौतिक विज्ञान को खोजते चले जा रहे हैं। जैसे मेरे पूज्यपाद आज से पूर्व काल में ऋषियों ने कहा है नारायन्तक ने भी कहा हैआदि , वैज्ञानिको ने कहा कि हमने विज्ञान में तो इतना जाना है परन्तु आज विज्ञान को महानुभवों ने जाना है आध्यात्मिक ,बहुत महानो ने जाना हैविज्ञान को तो बेटा ! संसार में कोई कोई जाना करता है। कोई कोई आध्यात्म विज्ञान के शिखर पर पंहुचता हैकोई , कोई जानता हैकोई , कोई देखता है कि यह प्रकाश कैसा हैइस , उस प्रकाश के प्राप्त होने पर हम कैसे बन जाते है उस ,प्रकाश की महिमा कैसी है वेद रूपी प्रकाश को पान करके हम वास्तव में देवता बन जाते है और जो हम उस सोम का पान कर लेते हैवही प्रकाश हमारा सोम है जिस सोम का पान करके हम , मुग्ध हो जाते है और मुग्ध हो करके उस परमात्मा की गोद में जा स्थिर होते हैं

।!जो संसार को रचयिता है महादेव है अहा !मुनिवरों

मुनिवरोंआ !ज मैं आर्यों की व्याख्या करने जा रहा था। पूर्व स्थलों सेमैने कई , स्थानो में आर्यों की व्याख्या की, आज भी करता जाँऊ। मुनिवरोंदेखो !, आर्य हमारे सतोयुग, में त्रेता काल में द्वापर काल में आर्यों का बड़ा प्रकोप था और (अधिकता) आर्य अपने जीवन को कितनी महत्तादेते थे। महान त्रेता काल में जब महाराजा राम, लक्ष्मण और सीता तीनों विराजमान थे मुनिवरोंतीनो में विराजमान हो जाने के ! कारण वहाँ एक वार्त्ता चल रही थी। लक्ष्मण यथार्थ आर्य था। जिस लक्ष्मण ने द !उनके जीवन की कितनी महत्वता मिलती है। क्या जो मुनिवरों !मुनिवरोंेखो, आर्य बन करकेचरणों को स्पर्श करने ,आर्य वह कहलाया जाता है जो माता के , वाला हो। और चरणों को छूता हो परन्तु देखो, उसकी दृष्टि कितनी स्थल पर न जाती हो परन्तु देखो, वह कैसा यथार्थ आर्य था? भगवान राम ने एक समय लक्ष्मण से कहा लक्ष्मण से कहा हे लक्ष्मणआज त !ुम परमात्मा को जानने का प्रयत्न करो। मानो, लक्ष्मण ने कहा मैं अवश्य कर रहा हूँ भगवनआप देखो !, मेरा जो कर्त्तव्य है, मेरा जो महादेव हैवह मेरी सेवा है ,, वह मेरा परोपकार है। जब मैं परोपकार के शिखर पर पहुंच जाँऊगा तो महादेव की कृपा अवश्य हो जाएगी। मुनिवरोंआ !ज बेटाआज हमें विचारना चाहिए कि हम किस विज्ञान के इच्छुक हैं !, हम किस मर्यादा को ले करके संसार में आए हैंऔर कौन , सी मर्यादा को ले करके हमें चलना है। हमें उस मर्यादा को लेकर चलना है जिस मर्यादा को हमारे आचार्य और हमारे ऋषि मुनि सब आदेश दे करके चले गएं हैं।

मैं यज्ञोपवीत की व्याख्या करने जा रहा था मुनिवरोंयज्ञोपवीत की व्याख्या ही पूर्ण ! देखो !रूप से न हो सकी। मुनिवरों, यज्ञोपवीतम्, यज्ञोपवीतम्, जो परम पवित्र है। जिस यज्ञोपवीत के लिए हम उस परम देव की याचना करते है। हे परम पवित्रयह ! यज्ञोपवीत हमारा परमपवित्र है यह कैसा पवित्र हैक्या इसमें जो विज्ञान विराजमान , है जो विज्ञान है देखो, जैसे माता गायत्री में सर्व विज्ञान विराजमान है इसी प्रकार मुनिवरोंदेखो !, जैसे आत्मा को जानने के पश्चात सब कुछ हमें प्राप्त हो जाता है इसी

प्रकार यह यज्ञोपवीतम् इतना परम पवित्र हैपरम पवित्र है। यह परम पवित्रता को ,
परन्तु इसके पात्र बनने की आवश्यकता है परम ,कैसे देने वाला है ,देने वाला है
पवित्रता को देने वाला है परन्तु उसको धारण करने के लिए उसका पात्र बनने की
जिस परम पवित्रता की व्याख् ,आवश्यकता है। यज्ञोपवीतम् परम पवित्र हैया हमारे
आचार्य गाते चले आए हैंजो आर्यों का भूषण है। आर्यों का भूषण परम पवित्र है ,
जैसे सूर्य परम पवित्र है !मुनिवरों, वह प्रकाश को देने वाला है इसी प्रकार महादेव
परम प्रकाश देता है इसी प्रकार यह यज्ञोपवीत भी हमें परम प्रकाश देता है और यह
परम प्रकाश का ज्ञान कराता है कैसे कराता है? मुनिवरोंएक एक अस्वतों में एक !
मातृऋण ,एक ऋण है हमारे द्वारा, पितरऋण और तृतीय ऋण देवऋण है आज हम
देवताओं का ऋण उससे कैसे उऋण हो सकते है। इन महा असुतम ऋणो से हम
कैसे उऋण हो सकते है मुनिवरोंयह परम पवित्र तो हमने धारण कर लिया !, आज
यज्ञोपवीत को हमने धारण कर लिया आर्यों का भूषण तो हमने ले लिया परन्तु आर्यों
के हमारे कर्म है नहीं। आज देखो, हमारे द्वारा केवल धागे रूपों से यह हमारे कण्ठ
में सुशोभित हो रहा हैहम भी कह सकते है कि आर्य हैं परन्तु जब तक हम आर्यों ,
जब तक हम आर्य इस विज्ञा ,केन को नही जानते हम पूर्व पात्र बने नही परन्तु आज
हम पात्र बनें नही ?आज भूषण का अधिकारी कौन है ,हमने भूषण को ले लिया ,
कुछ ,जिसने अपने जीवन को न बना करके ,जिसने अपने जीवन को कुछ बनाया है
आज !महान संसार !आज हे मेरे प्यारे ,बनाया है परन्तु वह इसका अधिकारी है
परम पवित्र को जानने का प्रयत्न करता हैतो ,इसका अधिकारी बनना चाहता है ,
यथार्थ आर्य बन करके तू संसार में इस प्रकार विराजमान हो जा जैसे महान सूर्य
अपने प्रकाश को देने वाला है। सूर्य प्रकाश का अधिकारी है। इसी प्रकार आज तू भी
अपने प्रकाश का अधिकारी बन। और महान द ेखो, उस परम पवित्र को धारण करने
वाला बन, जिस परम पवित्रता से तेरा वास्तविक कल्याण होगा और कल्याण होकर
तेरी महानता संसार में महान उज्ज्वल कहलाई जाएगी।

यह है मुनिवरोंआज का हमारा आदेश मैं आज से पूर्व यह कह चुका हूँ कि हम !

आर्य उसको नहीं कहते जो दूसरों की निन्दा करने वाला हो, आर्य उसको नहीं कहते जो त्रुटियाँ ही त्रुटियाँ देखने वाला हो। आर्य उसे कहते हैं जो यथार्थता का भूषण अपने में धारण करने वाला हो। यह था मुनिवरोंआज का हमारा आदेश !, भगवान राम ने देखो, इस परम पवित्र की व्याख्या करते हुए अपने विधाता लक्ष्मण से कहा था हे लक्ष्मणयह जो अपने कण्ठ में धारण कर रहे हैं !, आज तुम्हें ज्ञान है कि आज हमने अपने ऐश्वर्य को क्यों त्यागा है? आज कोई मनुष्य यह कहता है कि माता कैकेयी के आदेश का पालन किया है, कोई कुछ कह रहा है। परन्तु देखो, भगवान राम ने यह कहा है, हे सीतेआज हम !ने इस राष्ट्र को क्यों त्यागा हैआज हमने ? उस ऐश्वर्य को हम भोग सकते थे। माता केकैयी कोई हमारे ?ऐश्वर्य को क्यो त्यागा है लिए ऐसी नहीं थी कि जिस राष्ट्र को हम नहीं भोग सकते थे परन्तु हमने आज इसीलिए त्यागा है कि हमें इस परम पवित्र की रक्षा करनी है संसार में। परमपवित्रं ! आज यह यज्ञोपवीतम् है यह महान है और भी देखो !यज्ञोपवीतम्, पवित्रता को प्राप्त कराने वाला है आज हमें इसकी रक्षा करनी है आज देखो, ऋणों से अवऋण होना है। आज हमारे ऋषियों ने कहा है कि आज मनुष्यों का और यथार्थ आर्यों का कर्त्तव्य है संसार में कि अपने ऐश्वर्य को त्याग करके अपनी मर्यादा की रक्षा करनी चाहिए। अपने महान परम पवित्र की रक्षा करनी चाहिए यह हमारे लिए भी उतना ही परम पवित्र हैआज हमें इसकी रक्षा करनी चाहिए। ,यह हमारा कल्याण करने वाला है , आज हमने राष्ट्र की भूमि को त्यागा, ऐश्वर्य को त्यागा है, आज हमने देखो, पर्वतों में अपनी शैय्या बनाई हैइसका क्या ?क्यों बनाई है ,आज पर्वतों की शैय्या बनाई है , कारण है? क्या देखो, हमें इस महान यज्ञोपवीत की रक्षा करनी है। कैसे करनी है ? आज हम देखो, यवन हमारी रक्षा में देखो, महानता को समाप्त करने जा रहे है यहाँ राजा रावण जैसे दैत्य बन चुके हैंजो मर्यादा से दूर चले जा रहे हैं। वह वेदों के , आज देखो !पंडित होते हुए भी दैत्य, तुम्हें उनको जा करके निर्णय देना है। आज हमें उनको शिक्षा देनी है। आज हमें इस परम पवित्र की रक्षा करनी है।

मुनिवरो देखो, सीता ने कहा कि महाराज यह !परम पवित्र तो है परन्तु इसमें क्या

विज्ञान है इसकी हमें रक्षा करना अनिवार्य है? राम ने कहा कि देवीयह हमारे आर्यों ! का भूषण है। यह वह भूषण है जिस भूषण के लिए देवता देखो, चन्द्र और सूर्य मण्डलों से यहाँ आत्माएं आ करके इस परम पवित्र को धारण करती है। और इसकी रक्षा करती है। इसकी रक्षा करने के लिए वे आत्माएं यहाँ आती है। देवीआज हमें ! भी इसकी रक्षा करनी है। आज हमें भी यह देखना है कि हम कैसे इसकी रक्षा कर यह हम विज्ञान से कर सकते हैं। अपने महान त्याग और तपस्या !सकते हैं। मुनिवरों से कर सकते हैं। जब हमारे द्वारा त्‍याग तपस्या नहीं कर्त्तव्य नहीं तो हम इसकी रक्षा किसी प्रकार नहीं कर सकते। आज राजाओं का कर्तव्य हैजो अपने परम , पवित्र की रक्षा करता है वह परम पवित्र बन जाता है। जो परम पवित्र की रक्षा नहीं करता वह परम पवित्र किसी काल में नहीं बन सकेगा।

आज राजाओं का राष्ट्र भी देखो, इन्हीं परम पवित्रताओं पर आधारित है। आज राष्ट्र यदि परम पवित्र की रक्षा नहीं करेगा तो मानो देखो, उसका राष्ट्र कदापि परम पवित्र नहीं बन सकेगा। आज हम यदि हिंसक बन जाएं तो हमारा राष्ट्र हमसे पूर्व हिंसक बन जाएगा। आज हम दुराचारी बन जाते हैं तो हमारा राष्ट्र भी दुराचारी बन जाएगा। देवीआज हम ऐश्वर्य में व्याप्त हो जाएंगे तो हमारा राष्ट्र भी ऐश्वर्यवान बन जाएगा ! और कोई भी पुरूषार्थ नहीं कर सकेगा। आज सबसे पूर्व हमें अपने त्याग और तपस्या से अपने जीवन को ऊँचा बनाना है और उस परम पवित्र की रक्षा करनी है जिसकी हमारे आचार्यों ने चुनौती दी है। आज हमें उस चुनौती आधार पर चलना है। एक एक ऋण में आज हमारी मातृ ऋण है। माता क्या ऋण था हमारे द्वारा आज यह यज्ञोपवीत है इसमें मातृ ऋण था मेरी प्यारी माता कैकेयी ने कहा कि पुत्र तू वन को चला जा। परन्तु देखो, मैने माता के उस आदेश को पान करते हुए मैने परमात्मा की याचना की हे प्रभुतू जो करता है !, जो आप करते हैयथार्थ है। परन्तु जो भी , करते है वह सब कुछ सुन्दर है। परन्तु मेरे भगवान मेरे महादेव वह जो कुछ कार्य वह सब कुछ यथार्थ करते है मे ,मनुष्य के लिए सब कुछ अच्छा करते है ,करता हैरे लिए उस प्रभुने यथार्थ किया है मेरी माता ने कुछ अवऋण होने का एक आदेश तो !

देखो !दिया। जिससे मैं मातृ से उऋृण होने जा रहा हूँ। मुनिवरों, भगवान राम ने कहा था कि हे सीतेमैं उस माता के आदेश को पान करता हुआ मातृ ऋण से पार ! होने जा रहा हूँ मातृ ऋृण से उऋृण होनेजा रहा हूँ। माता का यही ऋण था क्या ऋण था माता ने यह आदेश दिया था कि हे पुत्रतू आज देखो !, वन में चल और चल करके देखो, तू अपनी मर्यादा को ऊँचा बना, और महान देखो, यहां देवताओं की रक्षा करने वाला बन। अपने परम पवित्र की रक्षा कर। यह मेरी माता का आदेश था जिसको जान करके राष्ट्र को त्याग कर वन जा पहुँचा।

आज मैं वन में हूँ परन्तु पर्वतो की शैय्या पर हूँ। आज देखो, यह माता का ऋण है। माता के ऋण से उऋृण होने जा रहा हूँ जो माता ने मुझे आदेश दिया हैजो माता , का आदर नहीं करता, माता की आज्ञा में नहीं चलता वह पुत्र नहीं कहलाता, वह कुपुत्र कहलाता है। आज मैंने अपनी माता के गर्भ से जन्म लिया है, मैं माता का ऋणी हूँ। मेरी माता ने आदेश दिया है उस माता के आदेश के अनुकूल मैंने पर्वतों को शैय्या बनाई है।

भगवान राम ने जब यह कहा तो मुनिवरोंदेखो !, उन्होंने यह भी कहा कि द्वितीय ऋण हमारे द्वारा ऋषि ऋण हैजो मेरे पूज्यपाद गुरु देव ने मुझे आज्ञा दी थी कि , मेरा राष्ट्र राम राज्य कैसे बन सकता है। मेरे पूज्यपाद गुरुओं ने यह कहा था ऋषियों ने मुझे आदेश दिया है और यह कहा कि तुम्हारा राष्ट्र तब तक राम राज्य नहीं बनेगा मानो जब तक तुम अपनी पतिका नही ,जब तक त्याग और तपस्या न होगी फहराओगे अपनी संस्कृति की पताका न लहराओगे। जब तक तुम अपने राष्ट्र को मेरे पूज्यपाद !हे महान मेरी पत्नी !राम राज्य नही बना सकते। मैं आज हे पूज्य गुरुदेव ने जो मुझे आज्ञा दी है उस आज्ञा का पालन करने के लिए आज मैं आया और उस ,हूँ ऋण से उऋृण होने जा रहा हूँ। जो मेरे ऋषि ने कहा है ऋषि ने कहा हैकि आज देखो ,, तू देवताओं का ऋण हैआज तू ऋषियो का ऋणी है ऋषियों की , आज्ञा है क्या अपनी पतिका को लहरा यथार्थ अपनी पतिका को लहरा और जब यथार्थता की पतिका को लहरायेगा तो तेरा राष्ट्र वास्तव में रामराज्य बन जाएगा।

उस समय भगवान राम ने कहा हे सीतेआज मैने पूज्यपाद गुरुदेव का आदेश ! पालन किया आज तुझे परमात्मा ने प्रेरणा दी मेरी माता मेरे लिए कारण बन गई मेरी माता कारण बन गई परन्तु मेरा तो गुरुदेव का आदेश था। मैं उनके आदेशों पर चलने वाला था। आज मैं उनका ऋणी हूँमैं उनके आदेशों के अनुकूल अवश्य , अपने राष्ट्र को राम राज्य बनाऊंगा, और महान देखो, मैं अपनी संस्कृति का प्रसार अवश्य करता चला जाँऊगा सीते ।!

इसके पश्चात् मुनिवरोंभगवान् राम ने कहा ! देवीमेरे द्वारा एक महान देव ऋण है। ! आज मैं देव ऋण से उऋण होने कैसे जाँऊगा जब मैं यहाँ भयंकर वन में हूँ। हम तीनों मिल जुल करके आज हम मार्ग की सामग्री को एकत्रित करके नित्य प्रति यजन् किया करते हैं। आज देवताओं से उऋण होने का प्रयत्न करने जा रहे हैं और प्रभुतुम मेरे महान देव !से उन देवताओं की याचना किया करते हैं। हे देवताओं !ता , मैं तुम्हारी पूजा कर रहा हूँ और यज्ञों द्वारा तुम्हारी पूजा कर रहा ,तुम मेरे देवता हो हूँ। मेरी पूजा स्वीकार करो। यह भगवान राम, सीता और लक्ष्मण तीनों मिलकर नित्य प्रति उस मार्ग में यजन किया करते थे। जहाँ सामग्री न थी मानो देखो, वहां किसी यज्ञों की भी जगह न थी वह मानो इस प्रकार का था। परन्तु देखो, वह यहाँ नित्य प्रति यज्ञन करते थे भगवान राम ने देखो, यज्ञन करने में देखो, पूर्ण विज्ञान को जाना भगवान राम ने यज्ञन किया पृथ्वी के विज्ञान को जाना कि इस पृथ्वी में, अमुक पृथ्वी पर क्या स्थापित हो सकता है। क्या उत्पन्न हो सकता है उस विज्ञान को जाना बेटायज्ञ ,भगवान राम ने यज्ञ द्वारा देवताओं का पूजा करते करते !आज मुनिवरों ! अब तक वैज्ञानिक खोज नहीं पाए !करते करते उस विज्ञान को जाना जिसको बेटा कौन से विज्ञान को खोजा है ,उस विज्ञान को ,हैं? क्या पृथ्वी को देख लिया करते थे कि वह पृथ्वी किस प्रकार की है? केवल दृष्टिमात्र से ही पृथ्वी को देख लिया करते थे कि अमुक पृथ्वी में इतना अन्न उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार को हो सकता है इसमें इस प्रकार की सोमलताएं व वृक्ष उत्पन्न हो सकते हैं। यह भगवान राम का इस प्रकार का विज्ञान था। मुनिवरों वह दृष्टिमात्र से ही विज्ञान को खोज लिया करते थे। !

आज मुनविरोदेखो !, इससे पूर्व काल में महानन्द जी ने भी कहा था आज का विज्ञान इस विज्ञान पर पहुंच चुका है। परन्तु यह अवश्य कह सकते हैं कि महानन्द जी पहुंच चुके होंगे परन्तु आज हमें इससे कोई मन्तव्य नहीं आज तो हमें यह प्रकाश देना है। आज हमें तो यह मन्तव्य प्रगट करना है जो हमारा आदेश चल रहा था। ,
हम उच्चारण करते चले जा रहे थे क्यादेखो !मुनिवरों ,, हम उच्चारण कर रहे थे कि देव ऋण के सम्बन्ध में राम ने कहा देखो, मैं देवताओं के ऋण से उऋण होने जा रहा हूँ। मुनिवरोंदेखो !, भगवान राम देवताओं की पूजा करते थे जब भगवान राम ने राम राज्य की स्थापना की उस समय यज्ञ कर देवताओं का पूजन किया और देवताओं से कहा देवताओं कि देवताओंआओ मेरे राष्ट्र में विराजमान हो जाओ मेरे राष्ट्र को देव ! राष्ट्र बना दो, राम राज्य बना दो। परन्तु देखो, मैं अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता हूँ। उस समय मुनिवरोंदेखो !, देवताओं की पूजा कीमैंने देखो ,, इससे पूर्व काल में कहा है मनुष्य को जो कुछ बनना है आज देखो, उस प्रकार की पूजा करे तो वही बन जाएगा। आज तुम्हें यदि दैत्य बनना है तो दैत्यों के सम्पर्क में रह करके दैत्यों की पूजा करो। एक समय वह आएगा जब तुम दैत्य बन सकते हो और देवताओं की पूजा करने से तुम देवता बन सकते हो। यह है मुनिवरों आज का हमारा आदेश। !
आज हम वाक् उच्चारण करते करते बेटाबहुत दूर चले गए। भगवान राम का आदेश ! प्रगट करने लगे। उच्चारण क्या कि हम आदेश प्रगट कर रहे थे महादेव की व्याख्या कल्याण करने वाले महादेव सबकी बुद्धियों में प्रकाश देने !कर रहे थे। हे महादेव आज तू हमारा कल्याण कर। आज हम पु !वाले महादेवनः से तेरी याचना कर रहे है। मुनिवरोंदेखो !, जिस मनुष्य को आज मनुष्य महादेव की याचना करता है तो देवता बन जाता है। मुनिवरोंयह है हमारा आज का आदेश जो प्रगट हो रहा था। !
आज हमें अधिक आदेश नहीं प्रगट करना है आज हमारा वाक् तो इतना ही चलना !था। समय मिलेगा तो बेटा किसी द्वितीय तृतीय काल में और भी प्रकाश दे सकेंगे। अहा देखो, प्रकाश देते चले जाएंगे आज हम केवल वेद माता की याचना कर रहे थे। आज वेद रूपी प्रकाश की याचना कर रहे थे परन्तु परम पिता परमात्मा से याचना

कर रहे थे। प्रभुजो आज ,आपने हमें बड़ा ऊँचा सौभाग्य दिया है ! वेदमन्त्रों का पाठ आज संहिताओ का पाठ आज हमें महादेव की याचना करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा था। मुनिवरोंयह सब कुछ भाग्य से प्राप्त होता है। यह मनुष्यों के ऊँचे संस्कारों से ! प्राप्त होता है। आज हम प्रभु की याचना करते चले जाएं जिस प्रभु न हमें जन्म दिया है, जिस प्रभु ने हमें उत्पन्न किया है इस संसार में आज हम उस वेद माता की याचना करते चले जाएं जो वेद माता हमें प्रकाश के देने वाली है। हमें प्रकाश के मार्ग पर पंहुचाने वाली है। आज हम पुनः से उसकी याचना करते चले जाएं। यह है मुनिवरोंआज की हमारी वार्त्ता। कल स !मय मिलेगा तो बेटाइससे आगे वाक् ! उच्चारण किया जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवन अभी तो आपका समय भी समाप्त नहीं हुआ है। !

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं महानन्द जीआज हमें केवल !समय समाप्त हो चुका है। बेटा ! इतना ही वाक्य उच्चारण करना था। आज हम उच्चारण करते करते दूरी भी ले गयें , आज हम आर्यों की व्याख्या कर रहे थे कि आर्य किसको कहते हैं। आर्य भगवान् राम जैसे, आर्य नारद जैसे आर्य जो श्रेष्ठ विचार करने वाले हों। आर्य उनको कहते हैं जो यथार्थता की तुलना करने वाले हों। आर्य वह होते हैंजो बुद्धि से और गम्भीरता , पूर्वक वाक्यको विचारने वाले होते हैं। उनको आर्य कहते है। बेटाआज जैसा तुम्हें ! यह वाक् हमारा समाप्त हो !निर्णय कराया था उनको आर्य नहीं कहते आज बेटा चुका है। कल समय मिलेगा तो शेष वार्त्ता कल प्रगट होगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवनआज हमें आपका वाक्य सुन् !गुरुदेव !दर तो लगा नहीं।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा कल देखा जाएगा। कल और सुन्दर हो जाएगा। !

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् ।!

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंआज हमारा यह वाक्य गम्भीर था। महानन्द जी के ! आँगन में इसीलिए नहीं आया क्योंकि आज का वाक् हमारा गम्भीर था, विचारणीय था, और मनन करने योग्य था। इसीलिए इसमें गूढ़ता थी। समय मिलेगा तो शेष

वाक्य कल ओर प्रगट किए जाएंगे आज समय समाप्त हो चुका है। अब कुछ वेदमन्त्रों का पाठ होगा उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः भगवनआपने कल यह कहा था कि हम यथार्थ !ता का उत्तर और अच्छी तरह स्पष्ट करेंगे वह नहीं किया।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा कल देखा जाएगा। !

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् ।!धन्यवाद !जैसी आज्ञा !

१० 03 04 1964 पुष्प 08 परमात्मा कर्त्ता या अकर्त्ता

जीते रहोदेखो !, मुनिवरोंअभी ! अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का पाठ चल रहा था। इन वेद मन्त्रों में उस परम परमात्मा ने नाना विशेषताएं प्रदान की हैं। इस वेदवाणी में ओज और अमूल्य तेज है, जिस तेज से मनुष्य ज्ञान और विज्ञान के मार्ग में पहुंच जाता है।

आज के वेद पाठ में एक वाक्य ऐसा महत्वपूर्ण, जो मनुष्य के जीवन को विस्तार वाला बना देता है। मुनिवरोंहम नित्य प्रति उस परमपिता परमात्मा जो सृष्टि को ! चला रहा है। जब प्रलय काल आता है, तो वह भी उसकी महिमा से प्रलय स्थिति में आ जाता है। मेरे प्यारे ऋषि मण्डल आज हमें उस परमात्मा के विज्ञान !को विचारना चाहिए।

तो हे मेरे प्यारेसबसे प्रथम हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा विशेष !ऋषि मण्डल ! वैज्ञानिक माना जाता है। जिसे हम सर्वव्यापक कहा करते हैं, जिसकी प्रेरणा से यह आत्मा, इस महान शरीर में रमण कर रहा है। इस आत्मा का सम्बन्ध, उस परमपिता परमात्मा से है और इस प्रकृति का सम्बन्ध उस परमपिता परमात्मा से है, जिससे प्रकृति में एक अमूल्य गति आ जाती है। इसी प्रकार आत्मा चैतन्य होता हुआ, इसका सम्बन्ध महाचैतन्य से है और महाचैतन्य से सम्बन्ध करते हुए इस शरीर में कार्य कर रहा है।

सूर्य का प्रतिबिम्ब

हे प्यारे ऋषि मण्डल प्रतिबिम्ब तो बड़ा सुन्दर है। !उसमें नाना प्रकार के आवरण आने

के नाते मुनिवरों वह विचारधाराएं !और विपाश्वता असीमित हो जाती है। आत्मा से शुद्ध पवित्र विचार चलते हैं, परन्तु जब इस मन और बुद्धि से मिलान होता है, तो जिस प्रकार की हमारी बुद्धि होती है, उस प्रकार का मन होता है। उस प्रकार से आत्मिक प्रेरणा, चैतन्य आत्मा से नेत्रों के द्वार को प्रकाश चला, आगे बुद्धि आई और बुद्धि से मन का मिलान हुआ और मन का हमारे विचारों से मिलान हुआ, उस प्रकाश से हुआ और उसी प्रकार का प्रतिबिम्ब बन करके, संसार में कार्य करने लगे, जिसको हम विचार कहते हैं जैसे सूर्य का प्रकाश चला। उसकी रश्मियां वायु मण्डल को छेदन करती हुई, इस संसार पर आ विराजती हैं और उसका सम्बन्ध देखो, ! पृथ्वी में जो नाना छिद्र है उन छिद्रों में इसकी रश्मियां जाती हुई पृथ्वी के उस निचले स्थान में जा पहुंचती है, जहाँ जल है और जिस पर वह पृथ्वी स्थिर रहती है। यह रश्मियां, वहाँ पहुंचकर उस जल में एक महानता उत्पन्न करती है। तो हे मेरे प्यारेयह वैज्ञानिक रूपों से विचारना चाहिए !ऋषि मण्डल !, कि यह पृथ्वी का प्रतिबिम्ब होता है, जैसा पृथ्वी में गुण होता है, उसी गुण में वह किरणों वहाँ ही कार्य करती हैं। जहाँ जैसा तत्त्व होता है, वहाँ उसका वैसा ही प्रकाश और वैसा ही कार्य बन जाता है। तो बेटाहम उसे क्या कहते हैं !? यह सूर्य का प्रतिबिम्ब है।

आत्मिक विज्ञान

मुनिवरोंजैसे सूर्य का प्रकाश चलता है !, इसी प्रकार से आत्मा की रश्मियां चलती हैं। इस प्रकृति से बने शरीर को यह आत्मा स्थिर कर रहा है और आत्मा का सम्बन्ध उस चैतन्य से होता है। आत्मा से रश्मि चलती है, जैसे इसके द्वारा मल विक्षेप आवरण और नाना प्रकार की वार्त्ताएं होती है, मन, बुद्धि जैसे विचार होते हैं, उसके अनुकूल यह रश्मियां पहुंचती हुई, मुखारविन्द पर आकर उसका विस्तार होता है। विस्तार बन करके, वह एक शब्दों का कार्य करता है। जैसे हमारी इन्द्रियों में नाना प्रकार का अभिमान है, नेत्र दूषित है तो हम किसी पुरूष को कुदृष्टि से विचार करते हैं। इसी प्रकार किसी मनुष्य को हम अशुद्ध वाक्य उच्चारण करते हैं, किसी को भुजों से दण्ड देते हैं। अब यह आत्मा से जब रश्मियां चली हैं, मल विक्षेप आवरण से

मिलान होता हुआ, मुखारविन्द पर आकर इसका विस्तार हो गया और इन्द्रियों में वह सत्ता प्रदान होकर वह कार्य प्रारम्भ हो जाता है, जिसका नाम है आत्मिक विज्ञान। जैसी हमारे मन और बुद्धि में विचारों की श्रृंखला होती है, उस चैतन्य से सम्बन्ध होते हुए, वह प्रतिबिम्ब आया और इन्द्रियां उस कार्य को प्रारम्भ कर देती हैं। तो मेरे आदि ऋषि मण्डल आज हमें इन वाक्यों को विचारना है। इस वैदिक साहित्य को विचारना है। परम्परा के उस ऊँचे शिखर को न जानकर, आज हमारे वह विनाश मार्ग की गति होती चली जा रही है। इस बुद्धि में जैसे श्रृंखला वैसे ही मन में विचार और जैसे मन में विचार वैसा ही इन्द्रियों का कर्म हो जाता है।

मुनिवरों महानन्द जी ने एक !एक समय मेरे प्यारे !प्रश्न किया था, कि जब इस आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से है, आत्मा का सम्बन्ध इन्द्रियों से है और इन्द्रियों का सम्बन्ध संसार से है, तो यह विचार में नहीं आता, कि दूषित विचारों से विनाश होता हैऔर इन्द्रियां वही कार्य प्रारम्भ करती हैं ,, तो आत्मा इन्हें अपनी रश्मियां न दे।

मुनिवरोंइस आत्मा का प्रकृति से भी सम्बन्ध है। प्रकृति से बनी यह इन्द्रियां हैं। ! जहाँ चैतन्य से मिलान हुआ, प्रकृति अपना कार्य करने लगी। अब प्रश्न रहा कि जब उनका सम्बन्ध प्रकृति से है और प्रकृति को हमारे यहाँ पूर्ण माना है, तो यह इन्द्रियों से अपूर्ण प्रकृति क्यों कराती है? इसका उत्तर यह है कि जो वस्तु प्रकृति और चैतन्य के मिलान से बनती है वह सदैव अधूरी रहती है और अधूरी रह कर वह कार्य करती है। यदि कोई जिज्ञासु इस प्रकृति पर शासन करने वाला होता है, तो आत्मिक विज्ञान से प्रकृति पर शासन किया जाता है और प्रकृति से ऊँचा जाने का प्रयत्न करता है, यह आत्मा। मुनिवरोंप्रकृति से शासन करते हुए यह इन्द्रियां शान्त हो ! जाती हैं। उस समय इन्द्रियों का मन से मिलान हो करके और मन का बुद्धि से मिलान हो जाता है और बुद्धि से मिलान हो करके, वह जो मल विक्षेप आवरण का अन्धकार है, वह समाप्त हो जाता है। ऋतम्भरा बुद्धि प्राप्त होकर यह सब कुछ संज्ञा, उस आत्मा में रमण कर जाती है और आत्मा का सम्बन्ध उस परमपिता से हो जाता है। इसी को बेटाहमारे यहाँ विस्तार वाला विज्ञान कहते हैं। इसका नाम है आत्मिक !

विज्ञान, जिसे हमें विचारना है कि जब योगीजन प्रकृति पर शासन कर लेते हैं जिसमें शून्यता और जड़ता है तो वह जानता है कि मैं कौन सी गति पर चला गया हूँ।

ऋतम्भरा बुद्धि

मैने एक समय अपने पूज्यपाद गुरूदेव से प्रश्न किया कि भगवन्जिस समय यह ! आत्मा उस प्रभु का अनुभव करता है, उस समय वह वाणी भी उसमें कार्य करती है या नहीं या उसके जागृत होने के पश्चात् वाणी में कुछ ओज आ जाता है या आत्मिक शक्ति का जागरण हो जाता है? तो मेरे पूज्यपाद गुरूदेव ने कुछ सूक्ष्म सा हमें अनुभव भी कराया कि जब ऋतम्भरा से उस परमात्मा में मिलान हो जाता है उस समय यह आत्मा बहुत विस्तार वाला बन जाता है। जब परमात्मा के आँगन से वह अपने आँगन में जाता है तो वह इन्द्रियां जो शून्य हो चुकी थी वह अपना कार्य करने लगती है। वाक्यों में शुद्धता आ जाती है नेत्रों की ज्योति में शुद्धता आ जाती है घ्राण सुगन्धि वाली हो जाती है हस्त भी सुन्दर हो जाते हैं और योगी में किसी प्रकार की कोई भ्रांति नहीं रहती। उस समय आत्मा के प्रकाश से इन्द्रियों में ओत प्रोत होकर के उस योगी ने प्रकृति पर शासन कर लिया है। प्रकृति पर शासन करते हुए मुनिवरोंउसकी यह गति हो जाती है कि श्वास भी अपने अधीन हो जाता है जिसे ! हम प्ाराण कहते हैं।

मुनिवरोंऋषियों ने कहा है कि जब योगी के प्राणों को अपने अधीन कर लेता है ! उस समय वह योगी आत्मा जल में और वायु में रमण कर सकती है, जिस प्रकार यन्त्रों से बना पुष्प विमान अन्तरिक्ष में रमण करता है। प्राणों पर आत्मा सवार हो जाती है और मन की गति पीछे चली जाती है। उस समय यह आत्मा अन्तरिक्ष में रमण करती है और मन की गति पीछे चली जाती है। उस समय यह आत्मा अन्तरिक्ष में रमण करती है और देखा करती है कि यह अन्तरिक्ष क्या है? पृथ्वी क्या है? नाना दिशाएं क्या है?

तो मुनिवरोंआज हमारी यह आत्मिक जीवन की चर्च !ाएं चल रही थी। आज का हमारा यह अमूल्य आदेश चल रहा था। हमें विचारना चाहिए, देखना चाहिए और उन

अमूल्यताओं पर पहुंचना चाहिए, जहाँ हमारे जीवन का बहुत बड़ा विस्तार होता है। मुनिवरोंमैं यह नहीं कह रहा हूँ !, कि हमें आत्मिक विचारों में ही इस प्रकार लालायित हो जाना चाहिए। जब प्रत्येक मनुष्य इस आत्मिक विज्ञान को जानने लगता है, तो यह प्रकृति का विज्ञान है, जिसे भौतिक विज्ञान कहते हैं, उसके निकट आ जाता है और कहता है कि मैं भी आपके द्वारा आ गया हूँ। जब आपने मेरे पिता को ग्रहण कर लिया है, तो पुत्र कहाँ जाएगा। यह भौतिक विज्ञान पुत्र के तुल्य है और आध्यात्मिक विज्ञान पिता के तुल्य है। जैसा मैने अभी अभी कहा है कि जब योगीजन ऊँचे शिखर पर विचरते हैं और परमात्मा के निकट विचरते हैं, तो उस समय यह भौतिक विज्ञान उसके निकट आ जाता है। सूक्ष्म रूप बन करके कहता है, कि प्रभुमैं भी आपके न !िकट आ गया हूँ, मेरा भी उत्थान करो। आज हमें पुनः से उस ऊँचे शिखर के लिए विचारना चाहिए, जिस ऊँचे शिखर पर जाकर वास्तव में इतने विस्तार वाला बनता है।

सम्पन्न गुण

मुनिवरोंप्रश्न उत्पन्न होता है !, कि जब उस परमात्मा में चैतन्य और सम्पन्न गुण है। सम्पन्न गुण क्या पदार्थ है? सम्पन्न गुण वह पदार्थ है, जिसके द्वारा वास्तव में हमारा विकास होता है। वह कौन सम्पन्न गुण वाला है? वह परमात्मा है। क्यों वह सम्पन्न गुण है? मुनिवरोंजब सृष्टि का प्रारम्भ होता है !, तो इस प्रकृति में कम्पनता आती है और कम्पनता आने से यह अन्तरिक्ष और नाना लोक लोकान्तर रच गए। मेरे ऋषि मण्डल ने एक समय दार्शनिक रूपों में कुछ ऐसा कहा है कि भौतिक वैज्ञानिकों का यह सिद्धान्त है, कि जब यह सृष्टि समाप्त हो जाती है, प्रलय रूप हो जाती है, तो उस समय इस पृथ्वी के सूक्ष्म रूप होकर परमाणुओं में अन्तरिक्ष में रमण करती है परन्तु आपने अन्तरिक्ष को रचा हुआ है।

अन्तरिक्ष

मुनिवरोंइस सम्बन्ध में हमारे दार्शनिक ऋषियों के दो पक्ष है। एक पक्ष ने कहा है ! कि यह अन्तरिक्ष अनादि है, रचा हुआ नहीं है। दूसरे पक्ष ने का है, कि यह रचा हुआ

है, और इसलिए रचा हुआ है क्योंकि इसमें सूक्ष्म परमाणु रमण करते हैं, वायु के सूक्ष्म परमाणु रमण करते हैं, पञ्च तन्मात्राएं इसमें रमण करती हैं, पञ्च तन्मात्राओं से इसका सूक्ष्म सम्बन्ध होने से इसको रचा हुआ कहते है अब विचार यह आता है की जब हम अन्तरिक्ष को रचा हुआ मानें, तो द्वितीय पक्ष ने कहा है कि प्रलय के पश्चात् यह प्रकृति कहाँ चली जाती है? तो जब ऋषियों ने ऐसा कहा, तो द्वितीय पक्ष ने उत्तरदाई बनते हुए कहा कि जब यह प्रलय काल होता है, तो उस समय इन लोक लोकान्तरों की सब ही की प्रलय हो जाती है।

मुनिवरों1 हमारे विचार में सृष्टि की रचना को !, 98, 26, 49, 064 वर्ष चल रहा है। ऐसे ऐसे तारामण्डल है जिनका इतना समय से प्रकाश चलता हुआ अब तक पृथ्वी तक नहीं आ पहुँचा है। यह प्रभु की कितनी अलौकिक महिमा है, किस विज्ञान से प्रभु ने संसार को रचा, अब एक ऋषि पक्ष कहता है, कि नही, प्रभु ने इस संसार को नही रचाया, वह तो अकर्त्ता माना जाता है और एक पक्ष कहता है कि नहीं, प्रभु कर्त्ता है, वह सृष्टि को रचता है।

रचयिता प्रभु

मुनिवरोंअब यह विचार आता है !, कि प्रभु कैसे रचता है। जब प्रभु को सम्पन्न गुण कहते हैं। जो जिस पदार्थ को रचता है और जिसको रचता है वह कैसे बचता है? उसे देखो, किसी व्यक्ति ने किसी आकार को उत्पन्न किया, अपनी बुद्धि से किया तो उसके बुद्धि भी होनी चाहिए, मन का संकल्प भी होना चाहिए परन्तु प्रभु में यह विशेषता है, कि न प्रभु के द्वारा बुद्धि है और न प्रभु के द्वारा मन है परन्तु वह इतना अलौकिक है कि वह सब कुछ करता है। तो हे मेरे प्यारेआज हमें !ऋषि मण्डल ! उस परमात्मा के विज्ञान को जानना चाहिए, जो सृष्टि को रचता है और इसकी प्रलय भी करता है। एक पक्ष ने प्रश्न किया कि जब परमात्मा को अकर्त्ता मानें, तो जब प्रलय का काल आता है तो इस पृथ्वी की चैतन्यता कहाँ चली जाती है और कैसे इसका रूपान्तर हो जाता है?

मेरे आदि ऋषि मण्डल ने, आदि दार्शनिकों ने कहा है और कुछ योगियों का ऐसा

मत माना गया है कि जब यह प्रलय काल आता है, तो प्रकृति का रूपान्तर होकर इसकी जो सत्ता है, वह चैतन्य सत्ता परमात्मा में रमण करती है और इस प्रकृति में बहुत सूक्ष्म कम्पन रह जाती है। उस सूक्ष्म कम्पन का सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है। मिलान होकर के इस प्रकृति का रूपान्तर हो जाता है। आज यह हमारा कोई नवीन वाक्य नहीं है। यह मेरे पूज्य गुरूदेव भी मुझे निर्णय कराया करते थे।

प्रकृति से निर्माण

आज मुझे विज्ञान का प्रसार करना था, परन्तु देखो, आज हमारा आत्मिक विज्ञान का प्रसार होता चला जा रहा है। कल भी मैंने इसके सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा। आज भी हम दार्शनिक रूपों को लेकर चल रहे हैं। हम उच्चारण कर रहे थे कि एक पक्ष कहता है कि इस सम्बन्ध में कि परमात्मा अकर्त्ता माना गया है। हम भी अकर्त्ता माना करते है। कैसे माना करते है?

मुनिवरोंइसलिए अकर्त्ता मानते हैं क्योंकि प्रकृति और परमात्मा के मध्य में कोई ! स्थिति कहलाती है, जिसको हम पञ्च तन्त्रात्मा भी कहते हैं। जिन तन्मात्राओं का सम्बन्ध मनुष्य के अन्तःकरण से होता है, उन तन्मात्राओं का सम्बन्ध प्रकृति से भी होता है और परमात्मा से भी होता है। और उसी का नाम देखो,अन्तःकरण माना ! गया है, जिसमें हमारे अन्य जन्म जन्मान्तरों के संस्कार विराजमान रहते हैं।

मुनिवरोंदेखो !,पञ्च तन्मात्राओं का प्रकृति से !, अन्तःकरण से, आत्मा और परमात्मा से मिलान होता है। इस मध्यम तत्त्व को जिसको हम अव्यक्त कहते हैं, जिसको हमारे वेदाचार्यों ने मनोमय विज्ञान और बुद्धिमय विज्ञान को माना है बुद्धि में तन्मात्राओं का आत्मा, परमात्मा और प्रकृति से मिलान होता है, तो उसे बुद्धिमय विज्ञान कहते हैं जैसे मनोमय विज्ञान होता है ऐसे बुद्धिमय विज्ञान होता है और बुद्धि का सम्बन्ध उस अपने मनोमय स्वरूप में पहुंच जाता है, जिसको विज्ञान कहते हैं। वह बुद्धि विस्तारवादी बन करके उसका सम्बन्ध आत्मा से होता है, आत्मा का सम्बन्ध, उस परमपिता परमात्मा से होता है, जिससे मुनिवरोंयह आत्मा सहायता पान करता ! है। यह आत्मा और परमात्मा दोनों के मध्य में पञ्चमात्राओं का मिलान होता है जैसे

गुरू और शिष्य का मिलान होता है।गुरु और शिष्य का मिलान किससे होता है? गुरुऔर शिष्य का मिलान ज्ञान से होता है इसी प्रकार आत्मा और परमात्मा दोनों के मध्यम में कोई वस्तु है, जिसको तन्मात्रा विधारणी अंततः कहते हैं। उन पञ्च तन्मात्राओं के सम्बन्ध से आत्मा को कर्मों का फल प्राप्त होता है, तो मुनिवरोंयह ! विज्ञान बहुत विस्तार वाला है। आज इसको विचारना है।

बेटाहम उच्चारण करते करते बहुत दूर चले ग !ए। हमारा वाक्य चल रहा था, कि हम इस अन्तरिक्ष को, हम रचा हुआ माने या नहीं, जिसमें कोई वस्तु नहीं, कोई पञ्च तन्मात्रा नहीं, जो एक अववृत, परन्तु मैंने इसका सम्बन्ध कहा है, कि जो जो हम अन्तरिक्ष को रचा हुआ माना करते हैं, वह ऐसा माना करते हैं जैसे देखो, तन्मात्राओं का सम्बन्ध आत्मा परमात्मा के मध्यम में होता है, ऐसा ही अन्तरिक्ष का जो सम्बन्ध है, वह तन्मात्राओं से होता है। इसमें इतने सूक्ष्म परमाणु होते हैं, इतनी इसकी सूक्ष्म रचना होती है, कि आज कोई मनुष्य यह कहे, कि इसको भौतिक विज्ञान में जान लूं, परन्तु यह आत्मिक विज्ञान का विषय है, सूक्ष्म परमाणुओं को जानने के लिए।

दो प्रकार की तन्मात्राएँ

मुनिवरोंमुझे ऋषि महानन्द जी ने एक समय ऐसा भी कहा है !, कि आज सूक्ष्म परमाणुओं को जानने के लिए बुद्धि ही क्यों? मनुष्य विज्ञान से भी अणु और परमाणुओं को एकत्रित कर लेता है। नाना प्रकार के यन्त्रों का अविष्कार करता है। परन्तु मुझे इनके प्रश्नों का उत्तरदाई बनते हुए, ऋषियों के विचारों को प्रगट करने का सौभाग्य मिल रहा है। ऋषियों का विचार है, कि यह जो अणु, महाअणु और त्रिसेणु यह सब इस पृथ्वी में, वायु से, सूर्य से, चन्द्र से और अग्नि से सम्बन्धित है। इनको वैज्ञानिक बहुत ही शीघ्रता से आकर्षित कर सकता है। परन्तु यह जो तन्मात्रा है, यह दो प्रकार की होती है एक तन्मात्रा ऐसी होती है जिनका सम्बन्ध इस भौतिकता से होता है और एक तन्मात्रा ऐसी होती है जिसका सम्बन्ध आत्मा और परमात्मा से होता है, कर्मों की गति से सम्बन्ध होता है जो तन्मात्राएं सूर्य से, वायु से सम्बन्धित है, यह देखो, पृथ्वी से सम्बन्धित है और पृथ्वी से सम्बन्धित होती हुई, इनसे अणु और

महाअणु को एकत्रित करके यन्त्रों का आविष्कार किया जा सकता है। परन्तु जहाँ इन महान आत्मिक विज्ञान वाली तन्मात्राओं को देखा जाता है, इन पर अनुसन्धान किया जाता है, तो मुनिवरोंउन तन्मात्राओं से इस अन्तरिक्ष की रचना माना करते हैं !, जिसमें मन भी रचित्त होता है, बुद्धि भी रचित्त होती है। मुनिवरोंउन सबका सम्बन्ध ! होते हुए, हमारे यहाँ अन्तरिक्ष को रचित्त माना जाता है। यह हमारे महर्षियों का कथन है। कोई हमारा नवीन कथन नहीं। हमारे ऋषियों ने बहुत परिश्रम से इन वाक्यों को जाना है। वास्तव में यह साधारण व्यक्तियों का जानने का विषय नहीं है। यह उन व्यक्तियों के जानने का वाक्य है, जिन्होंने अपने जीवन पर अनुसन्धान किया है और एक एक वाक्य पर कई कई वर्षों तक अनुसन्धान करते करते इस निश्चय पर पहुंचे हैं।

मुनिवरोंवाक्य क्या चल रहा था !? हम उच्चारण करते चले जा रहे थे, कि ऋषियों का एक पक्ष कहता है कि परमात्मा अकर्त्ता है और एक पक्ष कहता है कि परमात्मा कर्त्ता है। दोनों के विचारों में सूक्ष्म सा अन्तर है। परन्तु जब दोनों अपने विचारों की संज्ञा बना लेते हैं, तो उस समय दोनों एक ही मूल्यता पर, एक ही निर्णय पर पहुंच जाते हैं। दोनों में कोई भिन्नता नहीं। परमात्मा कर्त्ता है। परमात्मा के बुद्धि नहीं, मन नहीं, घ्राण नहीं, चक्षु नहीं, हस्त नहीं, उदर नहीं, परन्तु सब कुछ प्रभु ने रच दिया। प्रभु ने मनुष्य के कैसे चक्षु बनाए, जिससे सब कुछ जाना जाता है। प्रकृति के द्वारा सुगन्धि को उत्पन्न किया और स्वयं असुगन्धि वाला है, परन्तु प्रभु ने मनुष्य के लिए सुगन्धि वाला यन्त्र घ्राण को बनाया। वह प्रभु कितना वैज्ञानिक है, यह प्रभु कितना कार्य करने वाला है और कर रहा है और दार्शनिक उसको अकर्त्ता कहते हैं। प्रभु ने सब कुछ किया परन्तु तब भी उसको अकर्त्ता कहते है।

अरे, मेरे ऋषि मण्डलतुम अकर्त्ता कैसे कहते हो !? क्यों कहते हो? जब कार्य करने वालों ने कर्त्ता माना है, तो तुम प्रभु को अकर्त्ता क्यों कहते हो?

मुनिवरोंप्रभु को अकर्त्ता इसलिए कहा जाता है !, कि प्रभु ने सब कुछ किया, परन्तु इससे भिन्न है। इसके द्वारा सब का सम्बन्ध है, प्रकृति से इसका सम्बन्ध है, आत्मा से

इसका सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध से ही सब कुछ कार्य हो रहा है। परन्तु वह जो शुद्ध चैतन्य है, वह बेटाआज अनुसन्धान !ऋषि मण्डल !अकर्त्ता माना जाता है। मेरे प्यारे ! करो और विचारो कि यह क्या वस्तु है। इस आत्मिक विज्ञान को विचारो और देखो, कि इस आत्मा का सम्बन्ध, उस परमपिता परमात्मा के शुद्ध चैतन्य से है, जो ज्ञान का भण्डार है। जिसके द्वारा ज्ञान ही ज्ञान है, जिसके द्वारा अन्धकार का चिन्ह भी नहीं और जब यह आत्मा मुनिवरोंउस अंधकार को शान्त करके !, आत्मिक विज्ञान वाला, जिज्ञासु बन करके ऊपर के स्थल में जाता है, परमात्मा के ऊँचे स्थल में पहुंच जाता है तो वहाँ पहुंचकर इस आत्मा का विकास होता है और विकास होकर के इसका सम्बन्ध, उस शुद्ध चैतन्य से होता है। इसलिए आत्मा को मुनिवरोंमुक्ति ! प्रदायक कहते हैं। आत्मा को उस समय मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

मुनिवरोंमहानन्द जी का प्रश्न था !, कि जब इस आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है, प्रकाश को पान करता है, तो क्या वाणी उस स्थिति को उच्चारण करती है। तो मेरे आदि ऋषिमण्डलहमारे ऊँचे स्थल के ऋषियों ने कुछ इस सम्बन्ध में ऐसा ! कहा है, कि जो आत्मिक प्रकाश होता है, जब आत्मा का परमात्मा से मिलान होता है, तो उस आत्मा का वाणी से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। इसमें भी बेटादो पक्ष हैं। ! एक पक्ष कहता है, कि जब इस शरीर में ऋतम्भरा बुद्धि प्राप्त हुई, ऋतम्भरा बुद्धि का सम्बन्ध उस परमात्मा से हुआ और आत्मा का विकास हो गया। जिस सम्बन्ध में देखो, वह जो इंन्द्रियां हैं, इंद्रियों का सम्बन्ध मन से है और मन से संबंधित है, मन बुद्धि से संबंधित है, बुद्धि आत्मा से संबंधित है और आत्मा परमात्मा से संबंधित है।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेवपरमात्मा किससे संबंधित है !?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यवह तुमसे संबंधित है। और क्या कहें !बेटा .....?

मुनिवरोंमेरे प्यार !महानन्द जी आज विनोद की चर्चा प्रकट करने लगे। विनोद के ! प्रश्नों का विनोद में ही उत्तर दिया गया।

तो मुनिवरोंदेखो !, कैसा सुंदर सबंध इन्द्रियों का सम्बन्ध मन से है, मन का सम्बन्ध बुद्धि से है और बुद्धि का विकास होता है। जब आत्मा का सम्बन्ध बुद्धि से हुआ, बुद्धि

का मन से हुआ और मन द्वारा इन्द्रियां कार्य करने लगीं। मन प्रतिबिम्ब है। मन के द्वारा शुद्ध प्रतिबिम्ब आया और इन्द्रियों ने जैसा का तैसा उच्चारण कर दिया। जब वैसा ही उच्चारण कर दिया तो देखो, इन्द्रियों से सम्बन्ध हो गया। तो जो पक्ष वह कहता है कि जिस आत्मा का परमात्मा से मिलान हो जाता है, उसका इन्द्रियों से कोई सम्बन्ध नहीं होता, वह प्रमाण यह देता है कि जब वह परमात्मा में आनंदित हो जाता है, और जो आनंद इसे प्राप्त होता है, वह बुद्धिमय कोष में प्राप्त होता है और जब आत्मीय कोष प्राप्त हो जाता है, तो बुद्धिमय कोष से उसका सम्बन्ध त्याग दिया जाता है। बुद्धि का मन से, मन का इन्द्रियों से सम्बन्ध त्याग दिया जाता है। इस आत्मा का परमात्मा से मिलान होकर, इन्द्रियों से इसका कोई सम्बन्ध नहीं रहता है। यह प्रमाण मिलता है। परन्तु इसमें नाना प्रश्न उत्पन्न होते हैं, कहाँ तक उत्तर दें। बेटाआज ! कौन से भंयकर वन में चले गए? यह वह विस्तार वाला जीवन है, जिसमें बेटा ! जीवन भर प्रश्नों का उत्तर देना ही देना।

तो मुनिवरों सुनो। जब इसका सम्बन्ध इस प्रकार हो !जाता है, तो अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है, कि इसमे वास्तविकता क्या है? देखो, वास्तविकता दोनों में है, परन्तु कुछ सूक्ष्म सा विचारने का अंतर है, हमारे विचारों में तो कुछ इस प्रकार का आया है, जो अंत में दार्शनिकों ने और ऋषियों ने निर्णय किया है, कि जितना विस्तार आत्मा का परमात्मा से मिलान होने से हुआ है और जितना बुद्धि का विस्तार हुआ, उतना मन का विस्तार हुआ और जितना मन का विस्तार हुआ उतना इन्द्रियों का विस्तार हो गया। जब इन्द्रियों का विस्तार हो गया, तो सब इन्द्रियां शुद्ध और पवित्र बन गई और बहुकार्य करेंगी वह सुंदर ही करती चली जाएगी। जहाँ वह आत्मिक विज्ञान वाला, तत्त्व विज्ञान वाला ज्ञाता है मुनिवरोंउससे सुगंधि आती है। वह सत्य ! ही सत्य प्रतीत देता है। उसका उतना विस्तार हो जाता है।

तो मुनिवरोंमैं आज क्या उच्चारण कर रहा था !? बेटानाना प्रकार के प्रश्नों के उत्तर। ! देखो, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति तीनो पदार्थों को हमारे यहाँ अनादि कहा जाता है। पदार्थ क्या वस्तु है? पदार्थ वह अमूल्य वस्तु है। जिसका प्रादुर्भाव है जिसका एक

दूसरे से सम्बन्ध है, अब इसका विस्तार, यदि कल समय मिलेगा, तो कल प्रकट कर सकेगें।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरूजीअभी आपका समय रह रहा है। आज आपका वाक्य ! इतना विस्तार वाल ा है, कि हमारा हृदय गद् गद् हो रहा है, और प्रातः मना रहा है, आज इन्होंने क्या प्रकरण लिया है।

पूज्यपाद गुरुदेवः देखो, मुनिवरोंमहानन्द जी के सदैव वही बच्चों वाले !मेरे प्यारे ! वाक्य रहते है, चलो, कोई वाक् नहीं। उच्चारण करते चले जा रहे थे, ज्ञान और विज्ञान का वाक्य। यह आत्मिक विज्ञान कितने विस्तार वाला हैं। आज हमें इसे विचारना चाहिए और देखना चाहिए, कि हम भौतिक और आध्यात्म्कि विज्ञान में कितनी उन्नति कर सकते हैं और कितने विस्तार वाले बन सकते हैं। भौतिक विज्ञान के सामने, आध्यात्मिक विज्ञान को, एक दूसरे से सम्बन्ध होने वाले विज्ञान को जानें, तो हम पूर्ण विज्ञान को प्राप्त हो जाएंगे। तो बेटाआज का हमारा आदेश !, अब समाप्त होने जा रहा हैं। समय मिलेगा तो शेष चर्चा कल होगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो प्रभु । गुरु जीवाक्य तो आपका सूक्ष्म रहा !, परन्तु रहा सुंदर।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअरे ....., महामूर्खयह अभ्यास तुम्हें बहुत है। बारंबार ! अभ्यास करते चले जाते हो।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरुदेवआपने हमारे प्रश्न का उत्तर अभी तक नहीं दिया। ! जैसा आपने अभी अभी कहा है, कि इन्द्रियों का सम्बन्ध मन से है, मन का सम्बन्ध बुद्धि से है बुद्धि, का सबंध आत्मा से है आत्मा का सबंध परमात्मा से, परन्तु यह उत्तर रह गया कि परमात्मा का सम्बन्ध किससे होता है?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यपरमात्मा का सम्बन्ध प्रत्येक पदार्थ से रहता है। !बेटा ..... परमात्मा का सम्बन्ध हमसे भी है। प्रत्येक मानव से रहता है और यह जो प्रकृति हमें दृष्टिगोचर आ रही है, इन सबसे उस प्रभु का सम्बन्ध रहता है। जैसे इंद्रियां एक दूसरे से संबंधित है, ऐसे ही परमात्मा हम सबसे संबंधित है। बेटावह इतना चैतन्य है !, कि

उसके तुल्य कोई नहीं, तो उसका सम्बन्ध किसी से नहीं। उसका सम्बन्ध है तो हम जैंसों से है, प्रकृति से, आत्मा से है, परन्तु प्रभु किसी के आश्रय नहीं। प्रभु किसी के बंधन में नहीं। बेटावह ! कर्त्ता और अकर्त्ता दोनों है। कर्त्ता और अकर्त्ता के प्रमाण, हम कल भी दे सकेंगे, अब यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिलेगा तो बेटा शेष वार्त्ता कल होगी। !पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन् । वेद पाठ। !

११ 30 09 1964 पुष्प 07 आत्मा द्वारा प्रकृति पर शासन

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। आज हम ! तुम्हारे समक्ष, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गान गा रहे थे। आज हम उस अमूल्य संहिता का पाठ कर रहे थे, जिसमें परमात्मा के ज्ञान विज्ञान की महिमा का प्रतिपादन किया गया है। उस अमूल्य ज्ञान को हमें अपने अन्तःकरण में धारण कर लेना चाहिए। जब हमारा अन्तःकरण उस अमूल्य ज्ञान से परिपक्व हो जाता है और अन्तःकरण में एक ज्योति जागृत हो जाती है, हृदय पवित्र हो जाता है और वह मानव संसार का ज्ञानी और वैज्ञानिक बन जाता है। आज हमें इस अमूल्य वेद ज्ञान के लिए परमपिता परमात्मा की याचना करनी आवश्यक है जिसने इस संसार संसार को रचाया, हमारे अन्तःकरण में उन महान यन्त्रों को रचाया, जिनसे हमारे जन्म जन्मान्तरों के संस्कार विराजमान हो जाते हैं।

प्रार्थना

हे परमात्मन्तू कितना ऊँचा महान वैज्ञानिक है !, जिसका कोई प्रमाण नहीं। प्रभु ! आपने अन्तःकरण ही नहीं, संसार में नाना लोक लोकान्तरों को रचाया है, चन्द्र, सूर्य जैसे लोकों को रचाया है, जिनमें एक अमूल्य प्रकाश है, एक अमूल्यत्व है और उसमें तेरी दी हुई सविता रूपी सत्ता है। हे परमात्मन्तेरी सविता सत्ता को पान करता ! हुआ, यह अमूल्य सूर्य प्रातःकाल से विचरण करता है और संसार को प्रकाश देता है, किसी काल में नम्र प्रकाश देता है, किसी काल में तेजस्वी प्रकाश देता है और किसी काल में माधुर्य प्रकाश देता है, उस महान अमूल्य प्रकाश को पान करके प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या और संसार का जितना भी प्राणीमात्र है, उस महान अमूल्य

सूर्य से अपने जीवन के लिए कुछ अमूल्यताएं अपने में धारण करता है और प्रत्येक प्राणी जिस जिस मार्ग में भी है, उस मार्ग का वह प्रदर्शन करने वाला बन जाता है, जैसे देखो, 'प्राणज्ञति विश्वम् भवनेति पन्था' जैसे सर्पम् भवनेति जैसे सर्पयोनि है, वह प्राणी है, परन्तु सूर्य सविता से प्रकाश पाता है, नम्र भी पाता है, तेजस्वी भी पान करता है और भी श्रेष्ठताओं को पान करता है, परन्तु उसके मुखारविन्दों में उन सब ही अच्छाइयों का विष बन जाता है।

तुच्छ कर्म से कीड़ा

हे प्रभुतू कितना ऊँचा शिल्पकार है !, तेरी शिल्पकारी को जानकर आज मानव चकित हो जाता है, आपने जो यह सृष्टि चक्र रचाया है, यह हमारे दृष्टिगोचर है। हे भगवन्जब यह प्रलयकाल आता है !, न प्रति यह जो वस्तुएं रचाई हुई हैं, यह कहाँ चली जाती है। हे प्रभुतेरी महिमा कितनी अलौकिक है !, विचित्र है। एक समय जब भगवान राम ने महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रश्न किया, कि यह प्रभु की महिमा कितनी है, कैसी है, तो उस समय महर्षि वशिष्ठ ने कहा था कि प्रभु की महिमा को वही आत्मा जान सकता है, जो प्रभु की गोद में विराजमान हो जाएं, अन्यथा साधारण व्यक्ति का प्रभु की महिमा जानना असम्भव है। एक और महत्वदायक प्रश्न किया, जब कर्मो की व्याख्या आई, कि प्रभुमैं यह जानना चाहता हूँ कि आप नित्य ! प्रति कर्मो के विषय में और अन्तःकरण में जो भी संस्कार विराजमान हो जाते हैं, उनकी चर्चाएं किया करते हैं परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ, कि यह कीड़ा जो यहाँ क्रीड़ा कर रहा है, इसने कौन से कर्म किए हैं, जो इस का अन्तःकरण इतना तुच्छ बन चुका है?

महर्षि वशिष्ठ जी मग्न होकर बोले हे रामयह जो कीड़ा क्रीड़ा कर रहा है !, हमारे आश्रम में यह, जब से सृष्टि प्रारम्भ हुई है, तीन समय इन्द्र बन लिया है, और कर्मो से इतना तुच्छ बन गया है, कि आज यह कीड़ा है। यह ऋषि वाक्य कितना महत्वदायक है, आज हमें विचार लेना चाहिए।

तो मेरे भोले आचार्य जनोआज हमारे इन वा !क्यों के उच्चारण करने का अभिप्राय था,

कि प्रभु ने हमारे शरीर में नाना यन्त्रों को रचाया है, उन यन्त्रों को जानना हमारा कर्त्तव्य है और विचार लेना चाहिए, कि वह कौन सा यन्त्र है, जिस यन्त्र के द्वारा हमारे जन्म जन्मान्तरों के संस्कार, उस अन्तःकरण में अंकित होते हैं। वह भी संस्कार हैं, जो इन्द्र बन जाते हैं और उसी अन्तःकरण में वह संस्कार भी विराजमान हो जाते हैं कि हम कीड़े बन सकते हैं। तो हे भोले आचार्य जनोआज हमें इन प्रत्येक वाक्यों ! को विचार कर लेना चाहिए, यदि संसार में अपने जीवन को बनाना है।

ज्ञान से चित्तवृति निरोध

बेटामैं नित्य प्रति ज्ञान विज्ञान की चर्चा !एं किया करता हूँ, आज भी ज्ञान विज्ञान की चर्चाएं करने आ पहुँचा। बेटाहमें इस प्रकृति पर शासन करना है और यह तब ही ! हो सकता है, जब हम अपने मन की सब वृत्तियों पर शासन कर लें, यदि वृत्तियों पर शासन नहीं कर सकते, अपने जीवन को विवेकी नहीं बना सकते, तो निश्चित है कि हम प्रकृति पर शासन नहीं कर सकते। बेटामैंने किसी काल में योग की चर्चा करते ! हुए कहा था, योगश्चति विश्वम् भवते कामाः महर्षि पतंजलि का एक वाक्य है, चित्त वृत्ति निरोध योगा। प्रत्येक मनुष्य कह सकता है, कि चित्त की वृत्तियों का निरोध कर लो, मन स्वयं वश में होता चला जाएगा। परन्तु उच्चारण करने मात्र से हमारा कार्य नहीं बन सकता, केवल वाणी मात्र से चित्त को वृत्तियों का निरोध नहीं कर सकते, चित्त की वृत्तियों का निरोध ज्ञान के द्वारा कर सकते हैं, जब तक हमारे द्वारा ज्ञान न होगा और ज्ञान के साथ साथ विवेक न होगा, तब तक हमारी चित्त की वृत्तियों का निरोध होना असम्भव है।

बेटाहमारे यहाँ चार प्रकार के आश्रम माने जाते हैं !, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास, सबसे प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम, जिसमें जब ब्रह्मचारी गुरु के आश्रम में जाता है, तो जो भी गुरु वमन करता है, शिष्य उसे पान करता है। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक ऋषि मण्डल उच्चारण कर सकता है, कि जो भी आहार करो, उसका वमन करो। उसे वमन कहते है यह यथार्थ है। परन्तु वमन उसका होता है, जो वस्तु निगली जाती है, जो वस्तु उदर में चली जाती है, वह वमन करते हैं। परन्तु

यहाँ प्रकरण यह नहीं, यहाँ प्रकरण यह है, कि जिस विद्या को गुरुजन निगल लेते हैं, उस विद्या का शिष्यों के लिए वमन कर देते हैं और शिष्य मण्डल उसको पान करते हैं जिस ज्ञान के द्वारा गुरु ने अपने चित्त की वृत्तियों का निरोध किया उस ज्ञान की शिक्षा अपने ब्रह्मचारियों को प्राप्त कराता है, तो ब्रह्मचारी उन वृत्तियों का निरोध करने का प्रयत्न करते हैं और निरोध करते हुए ब्रह्मचारी बनते हैं, बलिष्ट बनते हैं, राष्ट्र के संरक्षक बनते हैं और उन्हीं से राष्ट्र ऊँचा बनता है।

वाणी पर शासन

तो मेरे भोले आचार्यजनोंआज हमें चित्त की वृत्तियों का निरोध करना है !, तो ज्ञान के द्वारा, हमें एक एक वृत्ति पर शासन करना है, सबसे प्रथम जैसा कल उच्चारण कर रहा था, वाणी पर शासन कर लेना है। जब हमारी वाणी पर शासन हो जाता है तो हम किसी को कोई अप्रिय व कठोर वाक्य उच्चारण नहीं करते, वाणी में सत्यता होती है और ओज होता है, ओज होकर के उस वाणी में विवेक होता है, जो भी वाक्य उच्चारण होता है वह विवेक सहित होता है। मुनिवरोंवाणी पर शासन करने वाला ! ब्रह्मा कहलाता है, वाणी पर शासन करने वाला संसार में वशिष्ठ कहलाता है, वाणी पर शासन करने वाला जमदग्नि कहलाता है।

वाणी पर शासन होगा आहार से, जब हमारा आहार पवित्र होगा तो हमारा व्यवहार पवित्र होगा और जब व्यवहार पवित्र होगा तो वाणी भी पवित्र होगी।

आहार की पवित्रता

हमारा आहार रसदायक होना चाहिए, रसना को प्रिय होना चाहिए परन्तु रसना को तो न प्रति क्या क्या प्रिय होता है, परन्तु वह आहार पवित्र कहलाता है, जिससे किसी भी इन्द्रिय को किसी प्रकार कष्ट न हो मानो देखो, आज हम जिस आहार को कर रहे हैं, उससे रसना महान दुःखित है, तो उस आहार को न करो और जिस आहार के करने से तुम्हें शंका और लज्जा भी होती है जैसे नाना प्रकार की दुर्गन्ध वस्तुएं हैं उन्हें पानकर ऊँचे समाज में जाओ, तो वही तुम्हें शंका व लज्जा होती है और समाज में तुम्हारी अपकीर्ति होती है। वह आहार भी तुम न करो, जिससे तुम्हारे हृदय में,

तुम्हारी आत्म शक्ति न्यून बन जाएं और हीनता को प्राप्त हो जाओ, चित्त की वृत्तियों का निरोध स्वयं होता चला जाएगा।

आज हमें संसार में चित्त की वृत्तियों का ही तो निरोध करना है, और क्या करना है, जो भी मनुष्य यहाँ आता है, नाना प्रकार की और योनियां हैं परन्तु देखो, अमृत वायु में रमण कर रहे हैं, अमृतत्व के द्वारा अनुसन्धान करने वाला योगी, उसके द्वारा आ जाएं, तो उसका अमृत बना देता है और वहीं वायु पुष्पों में रमण करती है, तो और सुगन्धिदायक बन जाती है और यदि वह ही वायु सर्प के द्वारा चली जाएं, तो अमृत वाली विष बन जाती है। यहाँ होता क्या है? यहाँ एक ही सुन्दर वस्तु को कहीं विष बनाया जाता है, कहीं अमृत बनाया जाता है और कहीं ओर भी सुन्दर बनाया जाता है।

तो मेरे भोले आचार्यजनोआज मैं क्या उच्चारण कर रहा था। वाक्य तो यह चल रहा ! था कि वाणी पर शासन होना चाहिए, परन्तु वाणी पर वहीं शासन कर सकता है जो विद्या से ओत प्रोत होता है। वाणी में विवेक होना चाहिए।

मेरे प्यारेमहानन्द जी एक लोक कथा वर्णन किया करते हैं !, जिसकी व्याख्या मैं पुनः काल में भी कर चुका हूँ। आज भी स्मरण आती चली जा रही है। यह कहा करते हैं कि ब्रह्मा एक समय अपने आनन्द से विराजमान थे, उनकी वृत्ति चंचल हो गई और अपनी पुत्री सरस्वती से सम्भोग करने की इच्छा हुई। अब आगे सरस्वती है और इसके पश्चात् ब्रह्मा मानो देखो, ब्रह्मा और सरस्वती दोनों का इस प्रकार चक्र चलता रहा। अन्त में ब्रह्मा ने अपनी पुत्री सरस्वती से सम्भोग कर ही लिया। आज यदि हम इस वाक्य को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेते हैं, तो इसमें नाना प्रकार के दोष उत्पन्न होते और यदि इसको बुद्धिमता से और विवेक की दृष्टि से पान करते हैं, तो इसकी मोटी रूपरेख यह है, सुनो।

मुनिवरोंदेखो !,जो ज्ञानी होता है !, वेदपाठी होता है, ब्रह्म को जानने वाला होता है, उसे ब्रह्मा कहते है और यह जो वाणी है, इसको सरस्वती कहते हैं। आत्मा को ब्रह्मा कहा जाता है, जब इस आत्मा में ज्ञान होता है, ज्ञान से विवेक होता है और विवेक

वाणी से सम्बन्धित होता है, उस समय मुनिवरोंदेखो !,महान वाणी रूपी जो ! सरस्‌्वती है, इसको अपने अधिकार में कर लेता है और इससे सम्भोग करके अपने जीवन को सफल बना लेता है, और अपने मानवत्व को धन्य ही जानता है, कि आज मेरा बड़ा सौभाग्य है, कि मैं अपनी सफलता को प्राप्त हो चुका हूँ।

मुनिवरों सरस्वती नाम वाणी का है और सरस्वती नाम विद्या का !है जो विद्या को पान करने वाले हैं, वह ब्रह्मा कहलाते हैं संसार में, बेटापुत्री नाम है जो अपने ! आधीन रहने वाली हो, जैसे माता की पुत्री माता पिता के अधीन रह करके, उनकी आज्ञा का पालन करती है, इसी प्रकार जो वाणी उस महान विवेक रूपी ब्रह्मा की आज्ञा पालन करती है, वह उसकी पुत्री कहलाती है।

भगवान कृष्ण के अनुसंधान

आज मुनिवरोंहमारा वाक्य क्या कह रहा था !, उच्चारण करते करते बहुत दूर चले गये, हमारा वाक्य चल रहा था, कि हमें प्रकृति पर शासन करना है। हम इस प्रकृति पर किस प्रकाश शासन कर सकते हैं? मुनिवरोंइस सम्बन्ध म !ें मुझे भगवान कृष्ण का जीवन स्मरण आने लगा, उनका जीवन कितना पवित्र था, मैं तो परमपिता परमात्मा से कहा करता हूँ, जब मुझे प्यारे महानन्द जी इस आधुनिक काल के राष्ट्र की चर्चाएं किया करते हैं, कि हे परमात्मन्‌संसार का यदि तुझे उत्थान करना है !, प्राणी मात्र का उत्थान करना है, तो भगवान कृष्ण जैसे को जन्म दे, जिससे यह संसार पुनः से वैज्ञानिक, ज्ञानी और ब्रह्मज्ञानी बन करके अपने मानवत्व को जानने वाला बन जाएं, राष्ट्र की भावनाएं प्रत्येक मानव के हृदय में हो। जब प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या के हृदय में धर्म और राष्ट्र की चर्चाएं होंगी, तो धर्म और राष्ट्र दोनों ऊँचे बनेंगे।

मैं उस परमपिता परमात्मा से याचना किया करता हूँ, कि भगवान कृष्ण को जन्म दे, आज भगवान राम, भगवान कृष्ण को आवश्यकता है और वशिष्ठ जैसे गुरुओं की आवश्यकता है, जिससे संसार में नाना प्रकार की दुष्टता समाप्त हो जाएं और यहाँ सदाचार की तरंगे उत्पन्न हो जाएं।

मुनिवरोंभगवान कृष्णा तो अपने आसन पर विराजमान होते थे !, हर समय मग्न रहते थे और वेद मन्त्रों के गोपनीय विषयों को विचारते रहते थे, उसके ऊपर अनुसन्धान किया करते थे और अनुसन्धान करते करते प्रकृति पर शासन कर लेते थे। मुनिवरों ! भगवान कृष्णा प्रातःकाल में जब अन्तरिक्ष में तारा मण्डलों का प्रकाश रहता था। उस समय अपने स्थान को त्याग देते थे, और गायत्राणी छन्दों का पाठ किया करते थे, माता गायत्री का पाठ किया करते थे, उसके पश्चात् यज्ञ करते थे और यज्ञ के ऊपर अनुसन्धान किया करते थे, कि जिस सुगन्धिदायक औषधी की यज्ञशाला में अग्नि में आहुति दी है, वह सूक्ष्म रूप बन करके कहाँ चली गई, उसका परिणाम क्या होगा? अन्त में उस विज्ञान को जानते हुए कि यह जो सुगन्धिदायक औषधी मैंने अग्नि में प्रविष्ट की है, सूक्ष्म रूप बन करके अन्तरिक्ष में रमण करने लगी, अन्तरिक्ष में वह सुगन्धि कहाँ जाती है? मुनिवरोंभगवान कृष्णा का यह अनुसन्धान किया हुआ है !, कि वह सुगन्धि आदित्य तक जाती है और आदित्य तक पहुँचाते हुए, उससे मानव की जो भी इच्छाएं होती हैं, जो जो कल्पनाएं होती हैं, वह प्रत्येक आहुति के द्वारा अन्तरिक्ष में जाती हैं और पुनः वह सुगन्धि संसार में आ जाती है, भगवान कृष्णा ने अनुसन्धान करते करते, यह जाना कि जो भी मैं प्रतिक्रिया करता हूँ, इसका क्या अभिप्राय हैं? मैंने देखो, जलम् पवित्रम् भवनेति मैंने जल को स्थापित किया, मानो यहाँ सब ही देवता विराजमान है, वायु भी है, अग्नि भी है, जल भी है, और पृथ्वी भी है, अब मैं इनमें से कौन कौन सी वस्तुओं को जान सकता हूँ।

मुनिवरों सबसे प्रथम भगवान कृष्णा ने पृथ्वी से एक !'रूर्शिणि' नाम की धातु को जाना और एक रूधेनु नाम की धातु का जाना। वायु से संकेतु नाम की धातु को जाना, जल से त्रुटित जटा नाम की धातु को जाना। इसी प्रकार ओर भी धातुओं को जानते हुए, उन्होंने शुभोष्मणी नाम का यन्त्र बनाया, जो इस प्रकार का था, कि जिससे अन्तरिक्ष में रमण करने वाले परमाणुओं को एकत्रित किया, जिससे एक सुरकेतु नामक यन्त्र बनाया और उससे महा अणुओं, त्रिसेणु, महा त्रिसरेणु एकत्रित करने लगे और उनसे नाना यन्त्रों का आविष्कार किया।

बेटातुम्हें स्मरण होगा !, कि भगवान कृष्ण ने एक यन्त्र जाना था, कि जिसके द्वारा महाभारत युद्ध की जितनी भूमि थी, उसको श्रृंगकेतु नाम की रेखा से युद्ध क्षेत्र की सीमा बद्धकर दिया था। जब संग्राम हुआ नाना प्रकार के अणुओं का प्रयोग किया गया, परन्तु उस रेखा में यह विशेषता थी, कि जितना भी वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रभाव होता था, जिनसे राज्य के राज्यों का विध्वंस हो सकता था, वह उस रेखा से बाहर नहीं जाता था। मुनिवरोंदेखो !, महाराजा लक्ष्मण ने भी इस यन्त्र को जाना। जब माता सीता ने लक्ष्मण को रक्षा करने की चुनौती दी थी, उस समय वह पञ्चवटी में उस श्रृंग नाम की रेखा को नियुक्त कर गए थे। आज मुनिवरोंउन यन्त्रों को जानने ! की आवश्यता है, हमें पुनः से उन वैज्ञानिकों की आवश्यकता है।

हे मेरे भोले आचार्यजनोआज मैं यह क्या उच्चारण करने लगा !, हमारा विषय था, कि हमें प्रकृति पर शासन करना चाहिए, परन्तु हम किस प्रकार शासन कर सकते हैं? मुनिवरोंउन यन्त्रों को जानते हुए !, यह सब यन्त्र प्रकृति से जाने जाते हैं, इस प्रकृति में नाना प्रकार की धातु हैं, उनको जानना हमारा कर्त्तव्य है, उन्हीं के लिए परिश्रम करना है, अपने जीवन का मन्थन करना है और मन्थन करते करते अन्त में परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाना है। यदि मानव अपने जीवन को शिरोमणि और उज्ज्वल बनाना चाहता है, तो सबसे प्रथम हमें यह जानना होगा कि विज्ञान क्या है? विवेक क्या पदार्थ है? प्रकृति पर शासन उसी काल में कर सकते हैं, जब नाना प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार किया जाता है, जिसका नाम है भौतिक विज्ञान।

मुनिवरोंएक आध्यात्मिक विज्ञान होता है। आध्यात्मिक विज्ञान वह होता है !, जब हम आध्यात्मिकता से प्रकृति पर शासन करने लग जाते है और किस प्रकार करते हैं, मुनिवरोंदेखो !, जब हम इस आत्मा को जो हमारे शरीर में विराजमान है और देखो, पांच कर्म इन्द्रियां हैं, पांच ज्ञान इन्द्रियां है, पांच प्राण है, मन और बुद्धि हैं, इन सबको एक संगठन में मिलान करना है। संगठित होकर यह सब आत्मा के द्वारा जाते हैं और यह ही प्रकृति का स्वरूप है, जब आत्मा अपने ज्ञान से इन सबके विषयों को भस्म कर देता है, तो यह आत्म निर्मल और स्वच्छ बन जाता है, प्रकृति पर शासन

करने लगता है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या गुरुदेवजब यह प्रकृति पर शासन करता है !, तो यह पांच कर्म इन्द्रियां और पांच ज्ञान इन्द्रियां आत्मा के साथ कैसे मिलान करती हैं?

पूज्यपाद गुरुदेवः सुनो बेटाअभी ! अभी उच्चारण करते चले जा रहे थे, कि हम आत्मा से किस प्रकार मिलान करते हैं। उसका मिलान करने का एक ही साधन है, हमारे द्वारा ज्ञान का, हम प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जानते रहें, हमारी रसना क्या कार्य करती है, त्वचा क्या कार्य करती है मानो देखो, जब हम प्रत्येक इन्द्रिय के विषय को जान लेते है, और प्रत्येक इन्द्रिय को जान करके जितनी यह कर्म इन्द्रियां हैं, इनका जो सूक्ष्मत्व है, वह ज्ञान इन्द्रियों के द्वारा जाता है और ज्ञान इन्द्रियों का जो सूक्ष्मत्व है, वह मन के द्वारा जाता है और मन पर हमें शासन करना है। मन का जो विषय है, वह बुद्धि के द्वारा रमण करता है, बुद्धि का जो कुछ निर्णय है, वह आत्मा के द्वारा जाता है, यदि वह निर्णय आत्मा के अनुकूल है, तो आत्मा उसे ग्रहण कर लेता है और यदि प्रतिकूल है, तो मुनिवरोंदेखो !, यह बुद्धि के द्वारा स्वयं आ जाता है, और स्वयं आ करके जब वह निर्णय आत्मा के अनुकूल नहीं, तो उस निर्णय से शंका और लज्जा उत्पन्न हो जाती है। जब शंका और लज्जा उत्पन्न हो जाती है, तो मानवत्व का विनाश होने लगता है, जब मानवत्व समाप्त होने लगता है, तो यह निश्चित है, कि जो मानवत्व की भूमिका है, वह नष्ट भ्रष्ट होने लगती है।

तो हे मेरे भोले आचार्यजनोंआज हम क्या उच्चारण करते चले जा रहे थे !, आज हमारा एक अमूल्य आदेश चल रहा था, आज हम उच्चारण करते चले जा रहे थे, कि आज हमें प्रकृति पर शासन करना है परन्तु हम प्रकृति पर शासन उसी काल में करते हैं, जब हम अपनी आत्मा को जान लेते है और जब यह आत्मा इस अन्तःकरण रूपी यन्त्र में विराजमान होने लगता है और प्राण संचालक बन जाते हैं, उस समय मुनिवरोंयह आत्मा अन्तरिक !ष और लोक लोकान्तरों में रमण करने वाला बन जाता है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी आधुनिक काल की चर्चा !एं करते हुए कहा करते हैं, कि

आधुनिक काल का वैज्ञानिक चन्द्रलोक की और भी नाना प्रकार की यात्रा करने के लिए यन्त्रों का आविष्कार करने जा रहा है परन्तु मैं महानन्द जी के वाक्यों का समर्थन करते हुए कहा करता हूँ, कि भाई! यह तो भौतिक यन्त्र हैं, परन्तु मानव के द्वारा यह आत्मा ऐसा अमूल्य यन्त्र है, जिनको जान करके वह सूर्य मण्डल चन्द्र मण्डल तो पश्चात् रह जाता है, आरुणि मण्डल, वृहस्पति मण्डल, अचंग मण्डल और नाना लोकों तक रमण करता है।

मुनिवरोंदेखो !,शनैः शनैः अपने आत्मा को जानते हुए !, अपने मानवत्व को जानते हुए, अपने मानसिक विज्ञान को जानते हुए, आत्मा के प्रत्येक तत्त्व को जानते हुए, एक समय हम परमात्मा की गोद में रमण करने लगते हैं।

यह है मुनिवरोंहमारा आज का आदेश !, आज मुझे अधिक चर्चा नहीं करनी इस सम्बन्ध में, हमारी चर्चा चल रही थी, कि आज हमें संसार में पूर्णत्व बनना है, अपने अन्तःकरण को जानना है, जिस अन्तःकरण में मुनिवरोंजन्म जन्मान्तरों के संस्कार ! आज तुम्हें स्मरण होग !विराजमान रहते हैं। बेटा ा, जिन वेद संहिताओं का आज पाठ करते चले जा रहे थे। पिप्लाद संहिता, आरुणि संहिता, यजन्षु मुनि संहिता, वायुमुनि संहिता आदि नाना प्रकार की संहिताओं का आज से लाखों वर्ष पूर्व पाठ किया परन्तु आज भी करता चला जा रहा था इसका क्या कारण है? इसका कारण यह है कि हमारे अन्तःकरण में जो निधि है, जन्म जन्मान्तरों का जो लाखों वर्षो का अंकित किया हुआ ज्ञान है, बेटावह कर्मो के वश आज भी उसका प्रसार होता चला ! यह हो सकता है कि उस रूप में न होकर के !जा रहा था। मुनिवरों, कर्मो के वश बेटा किसी !और रूपों में इसका परिवर्तन हो जाता हो, परन्तु देखो, मेरे प्यारे ! महानन्द जी ने एक वाक्य कहा था कि आप देवनागरी में क्यों उच्चारण करते हैं क्योंकि प्राचीन ऋषि मुनियों के काल में हमारे और तुम्हारे काल में यह देवनागरी न थी, ऐसा यह मुझसे कहा करते हैं परन्तु मुझे कल इस वाक्य का समर्थन करना है, आज मुझे इस वाक्य की चर्चा नहीं करनी, कल तर्क सहित इस वाक्य का निर्णय किया जाएगा। आज तो समय आज्ञा नहीं दे रहा है।

मुनिवरोंआज हमारा एक अमूल्य आदेश चल रहा था !, हमें आत्मिक ज्ञान में रमण करना चाहिए, आज हमें परमात्मा की आज्ञा का पालन करने वाला ब्राह्मण बनना है। ब्राह्मण कौन बनता है? ब्राह्मण वह कहलाते हैं, जो ब्रह्म को जानने वाले हों, ब्रह्म के स्वरूप को जानते हैं, ब्रह्म की भूमिका को जानते हैं, वह ब्राह्मण कहलाते हैं। हमारे यहाँ उन ब्राह्मणों को पुरोहित कहते हैं, हे ब्राह्मणवेदों ने मुझे पुरोहित कहा है !, तू यजन कराने वाला पुरोहित है। यजन कौन कराता है? मुनिवरोंजो ब्रह्म विद्या का ! ज्ञान देता है, ब्रह्म विद्या से मानव के हृदय को पवित्र बनाता है और अन्तःकरण को उस विद्या से ओत प्रोत करा देता है। मानवत्व के अंधकार को नष्ट कर देता है, ब्रह्मा रूपी प्रकाश उसके हृदय में ओत प्रोत कर देता है, वह संसार में पुरोहित कहलाता है। आज हम पुरोहित किसे कहते हैं? पुरोहित कहते हैं, जो अपनी सदाचारता को लेकर इस संसार में आता है और अपने सदाचार से और मानवत्व से सम्पर्क में आने वाले जो द्विज कहलाते हैं, वह पवित्र बन जाते हैं। उस पुरोहित के शरीर को हमारे वेदाचार्यो ने अग्ने कहा है, क्योंकि ज्ञान रूपी अग्नि उसके मुखारविन्दों में है, ज्ञान रूपी अग्नि में वह तप गएं हैं, अंधकार उनसे दूर चला गया है, उसको मुनिवरोंपुरोहित ! कहते हैं।

हे पुरोहित यज्ञ कर। !तू आ !तू आ और हमारा कल्याण कर। हे पुरोहित !हे पुरोहिततू पवित्र कहलाता है !, आत्मिक वैज्ञानिक कहलाता है, संसार तेरे से पवित्र बनता है, वेदों ने तुझे वामन कहा है, तू वामन स्वरूपों का प्रमाण दे करके मानव की आत्मा की पुष्टि करता है, मानव का अंधकार समाप्त करता है।

हे सूर्यतू नाना प्रकार की भ !ग रूपी किरणों से संसार को प्रकाशित करता है और वामन कहलाता है, ब्राह्मण कहलाता है। इसी प्रकार पुरोहित भी नाना प्रमाण दे दे करके, मानव के अंधकार को समाप्त करता है, उसे हमारे यहाँ वामन कहते है, परमात्मा का नाम भी वामन है। जब यह सृष्टि रची जाती है, उस समय बेटा ! परमात्म ा वामन रूपों को धारण करके, इस संसार रूपी चक्र को रचता है, महान बनता है, इससे बेटा यह मानवत्व पवित्र बनता है। !

आज मैं प्रभु से कहा करता हूँ कि हे प्रभुसंसार में पुरोहितों की आवश्यकता है !, ब्राह्मणों की आवश्यकता है, महानिर्बुद्धि और कायरों की आवश्यकता नहीं। परशुराम जैसे ब्राह्मणों की आवश्यकता है, उनका जीवन कितना पवित्र था, ब्राह्मण कहलाते थे परन्तु वास्तव में उनका जीवन संघर्षमय हो गया, कहीं सहस्त्रबाहु को नष्ट किया, कहीं क्षत्रियों को नष्ट किया, परन्तु उनके हृदय में यह वार्त्ता भी थी, कि वह मानव को प्रकाश में ले जाते थे। मुनिवरोंपरशुराम को भी नहीं !, यहाँ वशिष्ठ जैसे पुरोहित हों, जो देखो,परम्परा से उस प्रणाली को पवित्र बनाते चले आते हों !, राजाओं में उन भावनाओं को प्रविष्ट कराने वाले हों, जिन भावनाओं से राष्ट्र पवित्र बनता है, जिन भावनाओं से राष्ट्र में सदाचारता आती है जिन भावनाओं से राष्ट्र यजन करता है और जिन भावनाओं से राष्ट्र अपनी शत्रुता को नष्ट करता है, हे प्रभुआज तू वशिष्ठ जैसों ! का अवतरण कर और यहाँ राजा हो तो शिव हो, विष्णु हो, राम हो, दशरथ हो और ब्राह्मण हो तो वशिष्ठ और विश्वामित्र जैसे हों।

हे मेरे भोले आचार्य जनोआज हमें यह आदेश विशाल नहीं करना !, केवल आज का विषय था, कि हमें अपने मानवत्व को और विज्ञान को विचार लेना चाहिए, आज मैं यह नहीं कहता, कि केवल आध्यात्मिक विज्ञान ही होना चाहिए, भौतिक विज्ञान नहीं होना चाहिए। मैं तो यह कहा करता हूँ कि भाई! दोनों प्रकार का विज्ञान हो, भौतिक विज्ञान से राष्ट्र का निर्माण होता है और आध्यात्मिक विज्ञान से चरित्र का निर्माण होता है, जब दोनों विज्ञान होते है, तो राष्ट्र पवित्र बनता है, मानवत्व पवित्र बनता है और जब हम केवल एक भौतिक विज्ञान को लेकर चलते हैं, तो आज यह हमारा विज्ञान अधूरा है, हमारा विज्ञान निष्फल है। जब उस प्रकृति का भी विवेक हो और आत्मिक विवेक भी हो, तो दोनों विवेकों से बेटासंसार चरित्रवान बनता है। यहाँ ! चरित्र की भूमिका बनाई जाती है, राष्ट्र निर्माण की भूमिका बनाई जाती है। कल बेटासमय मिलेगा !, तो राष्ट्र का चित्र मैं कल निर्मित कर सकता हूँ, आज का यह विषय समाप्त होने वाला है।

मुनिवरोंकल वेद का पाठ भी राष्ट्र के ऊपर है !, राष्ट्र की भूमिका बनाई जाएगी और

महानन्द जी के प्रश्नों का निर्णय भी किया जाएगा कि प्राचीन काल में कौन कौन वाणी थीं? क्या यह संस्कृत थी? और संस्कृत हम किसे कहते हैं? कल यह हमारा विषय होगा, अब यह हमारा आदेश समाप्त होने जा रहा है। आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हमें आध्यात्मिक और भौतिक वैज्ञानिक बनना चाहिए। प्रकृति से ऊपर हमें अपना स्थान बना लेना चाहिए। हम पुरोहित बनें, ब्राह्मण बनें, ज्ञानी और वैज्ञानिक बनेंगे, तो यह संसार पवित्र होगा और नहीं बनेंगे, तो हमारा मानवत्व समाप्त होता चला जाएगा और संसार में मानवत्व की कोई महानता न रहेगी। अब यह आदेश समाप्त हो गया है। कल बेटासमय मिलेगा !, तो शेष चर्चाएं प्रकट करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्आदेश तो आपका बड़ा सुन्दर है !गुरु जी !, परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यअब समय समाप्त हो गया है !बेटा ......, चलो, कल और समय मिल जावेगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् !

पूज्यपाद गुरुदेवः अब मुनिवरों यह आदेश समाप्त हो गया है। कल !हमारा आदेश, इससे भी आगे पवित्र होगा, अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी। रात्रि को दुर्गा भवन जम्मू में

१२ 23 04 1965 पुष्प 08 आधार स्रोत परमेश्वर प्रदत्त ज्ञान वेद ही है

जीते रहोदेखो !, मुनिवरों आज हम पुनः की भांति कुछ वेदमन्त्रों !का गान गाते चले जा रहे थे। जितना भी हमारा वैदिक ज्ञान है, उसमें मानवता के प्रसार का विशेष रूप से वर्णन है। आज हम जिस भी वेद मुद्रा को लें और सूक्ष्म विचार करें, तो उसमें सबसे पूर्व मानवत्व का जीवन प्राप्त होता है, क्योंकि वेद एक प्रकाश है। आज प्रकाश के जिस भी आँगन को लेते हैं, सूर्य हमारा प्रकाशक है। प्रातःकाल में सहस्त्रों किरणें हमारे शरीर को जीवन प्रदान करनी चली जाती हैं। आज यदि हम सूर्य की एक एक किरण पर अपना अनुसन्धान, अपनी मानवता को ले जाएं, तो बेटाहमें यही प्राप्त ! होता है कि उन किरणों में, उस प्रकाश में मानव का जीवन ओत प्रोत है।

मेरे पवित्र आचार्यजनोंमैने आज से पूर्व कई स्थलों में वर्णन भी कराया !, कि परमात्मा की रचना कितनी अनुपम और महान है। वेद एक एक अंकुर में हमें सबसे पुनः एक ही वस्तु प्राप्त होती है और वह है परमात्मा का विज्ञान, जो मनुष्यता के निकट है। जब मानव उस परमपिता के विज्ञान पर विचार विनिमय करता है, तो उसे मानवता का सुन्दर विचार प्रकट होता है, जिन विचारों को लेकर के बेटाहम अपने ! जीवन पर अनुसन्धान करते हैं और अपने मानवत्व को ऊँचे शिखर पर ले जाते हैं।
मुनिवरोंकल महानन्द जी का प्रश्न था !, कि हमारे यहाँ चार ऋषियों द्वारा वेद का प्रतिपादन माना जाता है, क्या यह वेद ध्वनि चंद्र मण्डल, सूर्य मण्डल और सहस्त्रों करोड़ों लोक लोकान्तर हैं, उनमें भी ओत प्रोत है अथवा नहीं? वास्तव में मुझे इन वाक्यों से अभिप्राय नहीं, कि उनमें वेद का प्रकाश होता है या नहीं, यदि होता है, तो किस रूप में उसका प्रसारण किया जाता है।
मेरे आचार्यजनोंमैं तो ऋषियों के विचार ही प्रकट कर सकता हूँ !, जिन ऋषि मुनियों के माननीय विचार सार्वभौम माने जाते हैं। उनके विचारों में पक्षपात नहीं होता, यौगिकता होती है और जिन विचारों में यौगिकता होती है, वह वाक्य सर्वप्रथम माने जाते हैं। मुनिवरोंमनु महाराज ने राष्ट्र का निर्माण करते हुए यौगिकता से एक वाक्य ! कहा, कि राजा के राष्ट्र में अपराधी को दण्ड देना चाहिए। यह एक सार्वभौम वाक्य है। किसी भी राष्ट्र में जाओ, अपराधी को दण्ड अवश्य प्राप्त हो जाता है। उनके वाक्यों में सार्वभौमता क्यों होती है? क्योंकि यह योगरूपी अग्नि के तपे हुए होते हैं जो वाक्य तपे हुए होते हैं वे सुन्दर होते हैं।

महर्षि रेवक मुनि

मुनिवरोंजब कोई ऋषि भयंकर वन में तपस्वी बन जाता है !, तो तपस्वी बनने के पश्चात् उसके वाक्य तपते तपते स्वर्ण बन चुके होते हैं। आगे जब भी वह अपने उदार हृदय वाले वाक्य संसार को देगा, तो संसार उनसे स्वर्णमयी बनता चला जाता है क्योंकि उसका स्वयं का जीवन चन्दन और स्वर्ण बन चुका है। इसी प्रकार महर्षि रेवक मुनि का जीवन कितना सार्वभौम था। उनकी माता का नाम रेदभानु था। एक

समय माता रेदभानु अपने पुत्र को शिक्षा दे रही थी, हे पुत्र रेवकतुम बड़े पवित्र हो। ! तुम वास्तव में ऐसे सुन्दर नक्षत्र में जन्म हो, , कि जिससे मेरा हृदय तुमसे प्रसन्न रहता है। जो बालक गृह को त्याग करके द्वितीय स्थानों में जा करके अप्रिय कार्य करता है, वह माता के गृह को क्या, माता के अन्तःकरण को दूषित करता है और जब उसका हृदय दुःखित होता है, तो वह बालक उस माता के दुःखित अंकुर को स्वतः ही भोगा करता है। इसलिए हे पुत्रवत्मेरी तो अनुप !म एक ही शिक्षा रहती है, कि संसार में तुम्हें अपने जीवन में मेरे गर्भाशय को ऊँचा बनाना है। मुनिवरोंमहर्षि ! रेवक की ऋषि माता कितनी पवित्र और भोली थी, अपने पुत्र को अनुपम शिक्षा देने वाली शिक्षक, हम पुनः से उनके साहित्य और जो उनका मधुर वाक्य है, उसे उच्चारण करते चले जा रहे हैं।

मुनिवरोंजब प्रातः काल में रेवक ऋषि अपने स्थान स !े पृथक होता, तो माता के चरणों को छुआ करता। माता सुन्दर आशीर्वाद दिया करती। माता पिता और ऋषिजनों की सेवा में संलग्न रहने की उसके हृदय में महान सुन्दर क्रान्ति थी। एक समय रात्रि काल में अपनी माता से कहा कि माता! अन्तरिक्ष में जो तारा मण्डल है यह क्या है? उस समय माता ने कहा कि हे पुत्रवत्तुम्हारे पिता तो यह कहा करते ! हैं, कि यह जितने भी तारा मण्डल हैं यह सब लोक और उपग्रह माने जाते हैं। उस समय रेवक ऋषि ने कहा कि माता मेरे अन्तःकरण में !तो वह विद्या होनी चाहिए, जिससे मैं इन तारा मण्डलों की जानकार बनूं। माता ने कहा कि पुत्रयह वैसे ही ! नहीं जाना जाता, इसमें बड़े परिश्रम की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि मातावह ! कौन सा परिश्रम है, जो मुझसे दूर चला जाएगा। उस समय कहा कि पुत्रमहर्षि ! लोमश के कथानुसार तुम्हें अपने विचारों को, अपनी मानसिकता को अपने आंतरिक विचारों पर एक अनुशासन करके चलना होगा। उसके पश्चात् तुम इन्हें जान सकोगे। माता के यह सुन्दर विचार पान करके पुत्र का हृदय गद् गद् हो गया और कहा कि माता! मैं योग को जानने के लिए हर समय प्रयत्नशील रहता हूँ।

तो हे मेरे आदि आचार्यजनोंकल मैं रेवक ऋषि की चर्चा प्रकट कर रहा थ !ा। रेवक

मुनि के विचार, यौगिक प्रवृत्तियां, हर समय लोक लोकान्तरों में विचरण किया करती थी। कल रेवक ऋषि के विचार जब महर्षि भृगु जी के आसन पर यह विचार धाराएं चल रही थीं, कि इन लोकों में वेद का प्रकाश है या नहीं, तो उन्होंने वर्णन करते हुए कहा, कि सूर्यमण्डल में अग्नि शरीर वाले प्राणी रहते हैं और वहाँ वेदरूपी प्रकाश भी है।

मेरे ऋषि मण्डललोक लोकान्तरों में जहाँ भी जो तत्त्व प्रधान होता है !, वहाँ उसी तत्त्व प्रधान शरीर होते हैं और जहाँ शरीर होते हैं, वहाँ ज्ञान और प्रयत्न भी होता है। जहाँ ज्ञान होता है, वहाँ वेद होता है और जहाँ प्रयत्न होता है, वहाँ कर्त्तव्य की एक महान क्रान्ति होती है। अभी अभी महानन्द जो प्रश्न करेंगे कि सबसे प्रथम हम वायु शरीर को दृष्टिपात करना चाहते हैं परन्तु मैं तो इसका उत्तर दिया करता हूँ कि भाई! हमारे चक्षु तो पार्थिवता से बने हुए हैं, वायु प्रधानता को किस प्रकार दृष्टिपात कर सकते हैं। जब वायु हमारे शरीर को छूती है, तो छूती हुई हमें प्रतीत होती है परन्तु दृष्टिपात नहीं होती। यदि हमारे सूक्ष्म से सूक्ष्म चक्षु बन जाएं, यौगिक चक्षु बन जाएं, तो वास्तव में हम इसका अनुभव भी कर सकते हैं, कि यह वायु किस प्रकार की है? कैसे इसमें शरीर बन सकता है? कैसे इसमें प्रधानता है? यह सब ही कुछ विचारने की आवश्यकता है।

आकाश गंगा

चलो, बेटाआज मैं तुम्हें आकाश गंगा पर ले जा रहा हूँ !, जिसका महर्षि ध्रुव ने वर्णन किया है। एक समय आचार्य ध्रुव के विधाता उत्तम ने एक प्रश्न किया, कि भगवनइस आकाश गंगा का स्वरूप किस प्रकार का है !? उस समय उन्होंने कहा कि यह जो आकाश गंगा है, इसमें करोड़ 2 अरब 19 लाख मण्डल 20 सौ 2 माने जाते हैं।उन्होंने कुछ ऐसा भी संकेत किया, कि ऐसी ऐसी आकाश गंगाएं, इस परमपिता परमात्मा की सृष्टि में अनन्त मानी गई हैं। मानव इन पर भौतिकता से अनुसन्धान करता है।

मेरे आदि आचार्यजनोंकी अनुपम कृपा से राजा रावण के पुत्र अक्षय !मुझे तो प्रभु !

कुमार के दर्शन करने का सौभाग्य मिला, जो भौतिक विज्ञान से लोकों की गणना किया करते थे, कि यह हमारा पृथ्वी मण्डल है, इसके बराबर इसके अग्रगण्य में, अगरेति भागों में जंगल है, दक्षिण भागों में बुद्ध है, पूर्व भाग में चन्द्रमा है और दक्षिण भाग में शुक्र का वर्णन किया है। इसी प्रकार ऊपर के अनुपात में सूर्य मण्डल के जितने सौर मण्डल हैं, उन मण्डलों की परिगणना की जाती है।

मेरे आदि आचार्यजनोंमैंने तुम्हें किसी काल में सौर मण्डलों का वर्णन कराया था। ! तुम्हें सौर में ले चले। एक सौर मण्डल का अधिपति सूर्य माना जाता !चलो !आओ लाख के लगभग लोक और मण्डल माने जाते हैं। 85 है और एक सौर मण्डल में इसी प्रकार इससे ऊपर का सौर मण्डल बृहस्पति, उसके ऊपर ध्रुव मण्डल माना जाता है, बेटाहमें ऐसा प्रतीत होता है !, कि हम भयंकर वन में आ चुके हैं। यह तो प्रभु का भयंकर वन है परन्तु इसे कैसे जाना जाएगा। आज मानव बुद्धि से प्रभु की सृष्टि की तुलना करना चाहता है। बुद्धि के आँगन में नहीं आती, कुछ आती है, परन्तु सब नहीं। अंत में बुद्धि थकित है।

जब राजा रावण अपने पुत्र अक्षय कुमार की विज्ञानशाला में पहुंचे, तो अक्षय कुमार को यह ज्ञान न था, कि तुम्हारे पिता तुम्हारे द्वारा विराजमान हैं। बहुत समय के पश्चात् रावण ने जब कुछ संकेत किया, तो उस समय ज्ञात हुआ, कि मेरे पिता हैं। उन्होंने पिता को नमस्कार करके कहा, कि भगवन् मुझे यह !भान ही नहीं था, कि आप भी मेरे द्वार पर है। उस समय राजा रावण ने कहा कि पुत्रतुमने कुछ पाया !? उन्होंने कहा कि प्रभुमैं एक ऐसे ब्र !ह्मारड में पहुंच चुका हूँ, ऐसे भयंकर वन में पहुंच चुका हूँ, जहाँ मुझे कोई मार्ग प्राप्त नहीं दे रहा है, मैं उसी विचार विनिमय में, अपने जीवन का मन्थन कर रहा हूँ और जो मैंने जाना है उसका मन्थन कर रहा हूँ और कुछ समय के पश्चात् मन्थन किया हुआ, आपके सम्मुख प्रस्तुत करूंगा।

मेरे आर्य आचार्य जनोंयह बालक अक्षय कुमार !, जब माता मन्दोदरी के गर्भ में था, उस समय माता मन्दोदरी आकाश गंगा और इन लोक लोकान्तरों का चिन्तन किया करती थी। आज हम यथार्थता पर पहुंचना चाहते हैं, तो प्रभु का जो ब्रह्माण्ड है, प्रभु

की जो एक विहंग गति है, वह इतनी विलक्षण है कि मानव उसमें थकित हो जाता है। प्रभु के विज्ञान की जानकारी की प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या में उत्सुकता रहती है। आज मेरी प्यारी माता से यह प्रश्न करो, कि तू प्रभु के विज्ञान को भी जानना चाहती है? तो वह कहेगी, कि अवश्य, मैं प्रभु के विज्ञान को भी और अपने विज्ञान को भी जानना चाहती हूँ। किसी ब्रह्मचारी से प्रश्न किया जाएं, मानव से किया जाएं, तो यह ही उनके हृदयों में उत्कृष्ट इच्छा रहती है, परन्तु यह कैसे जाना जाएगा। आज जब तक विचार विनिमय नहीं करेंगे, तब तक हम ऊँचे स्तर पर नहीं पहुंच सकेंगे। महर्षि भृगु के आसन पर माता गार्गी भी थी। उन्होंने अपने विचारों को देना प्रारम्भ किया, कि हे ऋषिजनोंतुम्हारे विचारों का पान करते !हे महर्षि रेवक ! हुए, मेरा हृदय बड़ा प्रसन्न हुआ, परन्तु प्रभु की जो सृष्टि है वह अनन्त है। आज हम प्रभु की सृष्टि को जानना चाहते हैं, इस प्रकार नहीं जानी जाएगी, आज हम यहाँ से उड़ान उड़े, चन्द्रमा में चले जाएं, मंगल में चले जाएं, सूर्य में चले जाएं, आगे चलकर बृहस्पति में चले जाएं आरुणि मण्डल, सप्तऋषि मण्डल, त्राण मण्डल, गृहते मण्डल, अश्वानि मण्डल, दिनचित्त मण्डल, देवकान ऋषि मण्डल, अमरेती मण्डल माधुर्य मण्डल, धवेतु मण्डल, हिरण्य मण्डल और नाना मण्डलों की उड़ान भर सकते हैं, परन्तु आगे उड़ान उड़ता हुआ, मानव चकित हो जाता है। आज इस दार्शनिक समाज में केवल एक प्रश्न है, कि आज हम इस भौतिकवाद में इस परम विज्ञान को किस प्रकार जान सकेंगे। लोक लोकान्तरों का विज्ञान तो एक बड़ा गहन है।

मेरे ऋषि मण्डलमाता ! गार्गी ने उस समय उत्तर दिया, कि यदि तुम इसको जानना चाहते हो, तो इन लोकों से जो ऊपरला स्थान है, वह किसका है? आज वायु वेग में जा रहा है और वायु का स्तर बहुत विलक्षण और सूक्ष्म माना जाता है, परन्तु वायु से भी सूक्ष्म मानव के शरीर में प्रभु ने एक शक्ति उत्पन्न की है उसका नाम मन है। इससे प्रभु के विज्ञान को शीघ्रता से प्राप्त कर सकते हैं।

बेटाचलो आज हम तुम्हें इस मानव शरीर का भ्रमण करा दें। क्या भ्रमण किया !? देखो, मूलाधार में नाभिचक्र में, स्वाधिष्ट चक्र में, हृदय चक्र में, कंठ चक्र में, घ्राण

चक्र में देखो, त्रिवाक् चक्र में और उसके पश्चात् ब्रह्मरन्ध्र में जब यह आत्मा चला जाता है, तो हमारे यहाँ इस ब्रह्मरन्ध में जो हमारी शिखा के निचले स्थान में एक चक्र है, उसे ब्रह्मरन्ध कहते हैं। उसमें इतनी सूत्म सूत्म वाहक नाड़ियाँ हैं, जिनका सम्बन्ध एक एक लोक से तारतम्य लगा हुआ करता है। सुमन्त नाम की एक वाहक नाड़ी होती है, जिसका सूर्यमण्डल से सम्बन्ध होता है। जब मन का, आत्मा का, प्राणों की शक्ति सब देखो, ब्रह्मरन्ध में चली जाती है, तो वाहक नाड़ियों के मुख, एक कमल की पंखड़ियों की तरह खुल जाते हैं। जब पखड़ियों की तरह स्पष्ट हो जाते हैं तो उन नाड़ियों में तारतम्य लोक लोकान्तरों से होता है, मन के सहित होता है, और अन्त में देखो, हम मानव शरीर को त्याग करके, वह जो चैतन्य पिता प्रभु है, उसकी गोद में जाने से अहा, जिस प्रभु ने इस सबको रचाया है, यह आत्मा पुत्र उसकी जानकारी करने वाला बन जाता है।

मेरे आदि आचार्यजनोंकौन बन जाता है !? यह आत्मा बन जाता है, जो इस शरीर में भौतिकवाद में लगा हुआ था, लोक लोकान्तरों की गणना में था। जब अपने शरीर को जाना, मानवत्व को जाना और प्रभु आनन्द में पहुंचे, तो यह सब जितना प्रकृति का आडम्बर है, यह जो प्रकृति का एक विशाल वन प्रतीत हो रहा था, यह वन हमारे निचले स्थल में आ जाता है और हम इससे ऊँचे चले जाते हैं। आज हम तुम्हें वह वैज्ञानिक चर्चा प्रकट करते हैं, जो भौतिक विज्ञान से बहुत ही सम्बन्धित है और आध्यत्मिकता के भी निकट है।

मेरे आदि आचार्य जनोंहम उस परमपिता परमात्मा के आँगन में चले जाएं !, तो सब ही का अधिराज है और जो हमें अपने आँगन में धारण करने वाला है।

पूज्य महानन्द जीः ‘गुरूदेवकल मैंने आपसे एक प्रश्न किया था और वह यह जो ! वेद की चार पोथी है, क्या यही पोथी प्रत्येक लोक लोकान्तर में है, या मृतमण्डल में यह पोथी होती है? वर्तमान काल में ऐसा मानते हैं, कि अंगिरा, अग्नि, वायु, आदित्य, इन चार ऋषियों से वेद का निर्माण हुआ क्या ओर लोकों में भी इन्हीं ऋषियों ने वेद का निर्माण किया?

वेद की विद्यमानता

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यवह ही मूर्खो वाला प्रश्न। !तुम्हारा तो बेटा !महानन्द जी ..... महर्षि रेवक मुनि के विचारों में एक वाक्य !इसका संक्षेप उत्तर दिए देते हैं। बेटा आया, तुमने उसको सुना भी होगा, कि जहाँ लोक होता है, जहाँ कोई तत्त्व प्रधान होता है, वहाँ उसकी प्रधानता को भोगने के लिए मनुष्य का शरीर होता है। मनुष्य शरीर को तत्त्व प्रधानता वाला शरीर मान लो, और जहां आत्मा और मनुष्य होते हैं, वहाँ ज्ञान होता है, प्रयत्न होता है, और राग, द्वेष और इच्छा यह सब कुछ होता है, क्योंकि वहाँ तत्त्व प्रधान है। जहाँ राग, द्वेष, इच्छा, ज्ञान और प्रयत्न होता है, वहाँ बेटावेद भी अवश्य होता है। वेद नाम प्रकाश का है। वह प्रकाश उन लोकों में ! अवश्य हुआ करता है।

बेटारहा तुम्हारा यह प्रश्न कि क्या उन्हीं चार ऋषियों ने वेद का निर्माण किया। ! इसका शीघ्रता से उत्तर यह है, कि वास्तव में हम वेद ब्रह्मा की देन माना करते हैं और वह जो परमपिता परमात्मा आदि ब्रह्मा हैं, सब लोक लोकान्तरों का स्वामी है। सब लोकान्तरों का स्वामी होने के नाते, बेटावहाँ जो तत्त्व प्रधानता वाले अवरेत ! होते हैं, अवरण शरीर होते हैं, उसी तत्त्व प्रधानता वाले ऋषियों से, वहीं वेदों का प्रकाश, उसका प्रसारण भी, उसी रूप में परिणत किया जाता है। जैसे हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में बेटाचार ऋषि हुए। इनमें मैंने दो प्रकार के मत वर्णन किए। एक ! मान्यता वाले वेदों का काव्य कहते हैं और यदि ब्रह्मा से चारों वेदों की रचना कहते हैं। दूसरा पक्ष कहता है, कि चार ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा हुए, उनसे वेदों की रचना हुई। हम दोनों मान्यताओं को विलक्षणता में माना करते हैं। आज हम यह मान लेते हैं कि वेद केवल ऋषियों का काव्य है, काव्य जो भी बनता है, उसके द्वारा एक ध्वनि होती है, उसी स्वर में वह अपनी ध्वनि देता चला जाता है। मुनिवरों ! मैंने यह प्रश्न अपने पूज्य गुरूदेव से किया, तो उन्होंने शीघ्रता से एक ही उत्तर दिया, कि चारों ऋषियों के द्वारा चारों वेद उत्पन्न हुए, उन्होंने प्रभु की अनुपमता के द्वारा इनकी रचना की। आदि ब्रह्मा इसका मुख्य कारण माना जाता है। इसी प्रकार बेटा !

ब्रह्मा सब लोक लोकान्तरों में मुख्य माना जाता है। हमारे यहाँ ब्रह्मा उसे कहते हैं, जो वेदों का प्रकाण्ड होता है और ब्रह्मा नाम परमात्मा का हैं, जो सब लोक लोकान्तरों का अधिपति माना जाता है, इसी प्रकार वेदों की रचना का मूल कारण तो आदि ब्रह्मा है क्योंकि उसी की इच्छाएं आदि ब्रह्मा की इच्छाएं तो नहीं होती, परन्तु यह एक लौकिकता में उच्चारण किया जा सकता है या आदि ब्रह्मा को अपने पुत्रों पर दया स्वीकार कर लो या देन स्वीकार कर लो।

सूर्यमण्डल में प्राणी

आगे रही यह बात कि सूर्य मण्डल में जब अग्नि शरीर वाले प्राणी रहते हैं, तो क्या वहाँ भी अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ऋषि आदि पहुंचे। महानन्द जी का यह प्रश्न बड़ा गम्भीर है। इसका उत्तर मेरे आदि गुरू ब्रह्मा ने दिया, कि जहाँ अग्नि होती है, वहाँ वेद का प्रकाश होता है और जहाँ वेद का प्रकाश होता है, वहाँ अग्नि होती है, अग्नि और वेद दोनों का तारतम्य बहुत निकट होता है, क्योंकि अग्नि तो भौतिकता में परणित हो जाती है, एक शून्य वस्तु है, परन्तु वेद एक ऐसा अनुपम प्रकाश है, जो शून्य अग्नि को प्रकाश में लाने का कार्य करता है। जैसा बेटामानव शरीर में ! आत्मा के साथ ज्ञान और प्रयत्न स्वाभाविक गुण माने जाते हैं, परन्तु जड़ता के कारण, प्रकृति के आवेशों के कारण, उनमें मल विक्षेप के आवरणों से आत्मा का ज्ञान दबा हुआ है। जब वेद रूपी प्रकाश की अनुपम किरणों मानव के अंतःकरण को छूती है, तो किरणों के आते ही, उसका अंतःकरण प्रकाशमान हो जाता है। वह वैदिक प्रकाश मनुष्यों के अंतःकरण को प्रकाशमान बनाता चला जाता है। मानव हृदय को ऊँचा बनाने वाला, वेद का एक अनुपम प्रकाश कहलाता है।

परन्तु देखो, अग्ने शरीर में अंगिरा आदित्य ऋषि पहुंच गये। यह प्रश्न बड़ा विलक्षण है। इसका उत्तर देते हुए, मेरे पूज्य गुरूदेव ने कहा ब्रह्मणो कामवृत्तन्ये देवस्ति अग्ने हव्या रचना वस्तुतो ब्रह्मणो ने अग्ने अश्चति। मेरे आदि आचार्य जनोवहाँ अग्ने शरीर से ! ऋषियों का जन्म होता है और वह उसी रूप से, उसी प्रधानता में वेदों की रचना करते हैं।

पूज्य महानन्द जीः भगवनमैंने आपसे एक प्रश्न किया था !, कि जैसे हम पृथ्वी मण्डल पर वेद का प्रकाश है, अब तो वास्तव में वेद के प्रकाश को सार्वभौम माना जाता है। परन्तु इस लोक में रूढ़िवाद है जैसा मैने आपसे वर्णन किया था, यहाँ कोई मुहम्मद को मानने वाला है, कोई ईसा को मानने वाला, कोई दयानन्द को मानने वाला, कोई महात्मा शंकर को, तो क्या इसी प्रकार की रूढ़िवाद सूर्य मण्डल आदि लोगों में भी होगी?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यसर्वांग गच्छ ब्रह्मणः वर्निनदधि वारगोति अग्नेः मेरे ऋषि ..... मैं पुनः से एक वाक्य कहा करता हूँ !मण्डल, कि बेटातुम इसे रूढ़िवाद स्वीकार ! कर लो, परन्तु जो भी ऊँचा मानव आता है वह कोई न कोई वेद के अंग को ले कर ही चलता है। कोई संन्यासी उच्चारण करता है, कि भाई राष्ट्र में ऊँची विद्या होनी चाहिए, तो बेटावेद का एक पवित्र अंग बन जाता है। कोई मानव यह कहता है !, कि किसी दूसरे मनुष्य को अपने आधीन बनाना। यह कोई वेद का सन्देश नहीं, जब बेटाइस प्रकार के विचार कोई भी मानव देता है !, तो वह वेद के एक न एक अंग को लेकर चलता है।

बेटाएक समय तुमने मुझे मुहम्मद और ईसा की चर्चा प्रकट कराई और तुमने ! वर्णन किया कि ईसा आयुर्वेद केसिद्धान्त को लेकर चला, आयुर्वेद से चिकित्सा करता हुआ, ब्रह्मचर्य का पालन करता, उनमें कोई सूक्ष्मता हो सकती है, परन्तु वह वेद के कोई न कोई अंग को लेकर चला। आगे संसार अपनी बुद्धि के अनुकूल रूढ़िवाद में चला जाए, तो बेटावेद का कोई दोष नहीं और न यथार्थ पुरूष क !ा कोई दोष। आगे मुहम्मद के विषय में तुमने एक चर्चा का निर्णय की, कि जहाँ उनकी जन्मभूमि थी, वहाँ अप्रिय वस्तु को पान करना, प्रत्येक गृह में व्रजो के देवालय, द्रव्य के बदले अधिक द्रव्य लेना आदि, उन सबका एक आदेश देने वाला, यह जो व्यक्ति हुआ, वह कोई न कोई वेद के अंग को लेकर चला। यह हो सकता है, कि राष्ट्रवाद में उनकी प्रवृत्ति अधिक रही, परन्तु आगे उनके मानने वाले रूढ़िवाद में चले जाओ, उसमें वेद का कोई दोष नहीं।

इसी प्रकार बेटामहात्मा महावीर की चर्चा प्रकट की !, अहिंसा परमोधर्मः का नाद लेकर चले, तो यह वेद में आती है। अब रही यह बात, कि आगे चलकर उनके मानने वाले रूढ़िवाद में चले गएं, तो बेटावेद का कोई दोष नहीं और न वेद के ! किसी अंग का कोई दोष है। इसी प्रकार आगे तुमने वर्णन कराया कि महात्मा बुद्ध भी अहिंसा परमोधर्मः को लेकर चले, उनके जीवन में, उनकी लेखनी में कोई सूक्ष्मता हो सकती है, परन्तु उनका जो संकेत था, वह वेद का था और वेद के संकेत को लेकर चले।

इसके पश्चात् जैसा तुमने वर्णन कराया, महात्मा दयानन्द त्रैतवाद को लेकर चले। उन्हें महर्षि कह दो, महापुरूषों को चुनौती दे दो, कुछ कह दो, परन्तु वह वेदांत को लेकर राजाओं को अपनाया और अपनाकर आगे चले। उन्होंने वेद के सर्वशः अंग को अपनाया। आगे चलकर वे उसकी मान्यता को इतने गम्भीर विषय पर न जा करके, रूढ़िवाद में चले गएं। इसमें वेद का कोई दोष नहीं। इसी प्रकार महात्मा दयानन्द की तुमने चर्चा प्रकट की, कि वेद का संदेश लेकर त्रैतवाद को ले करके चले, वेद के प्रत्येक अंग को ले करके चले। आगे चलकर उनकी मान्यता वाले रूढ़िवादिता में आ जाएं, तो इसमें दयानन्द जी का या वेद का कोई दोष नहीं। इसी प्रकार तुमने महात्मा नानक की चर्चा की। महात्मा नानक एक वाक्य को लेकर चले, कि राष्ट्रवाद का कल्याण होना चाहिए। मानवता ऊँची होनी चाहिए, किसी मानव का व किसी जीव का हनन नहीं होना चाहिए। , उसी संकेत को ले करके चले। यदि आज उनकी मान्यता वाले रूढ़िवाद में चले जाएं, तो बेटाइसमें महात्मा नानक का कोई दोष ! नहीं, वह वेद के किसी अंग को लेकर चले। यह दोष तो मानने वालों का है। देखो, वेद सार्वभौम है, जितने भी महापुरूष होते हैं, वेद के किसी अंग को अपनाया करते हैं, जैसा कि तुमने तुझे वर्णन कराया।

इसी प्रकार बेटा पार्थिवता में जड़ता !मैं उस वाक्य को कथन करने जा रहा हूँ। बेटा ! की प्रधानता अधिक होती है और जहाँ अग्नि प्रधान होती है, वहाँ चैतन्यता की प्रधानता अधिक होती है। तो देखो, जो सार्वभौम धर्म है, उसकी जो मर्यादा है, कर्त्तव्य

है। वह सब वैदिकता में मानी जाती है। हो सकता है बेटा किसी स्थान में !व्यक्तिगत विचारों में किसी प्रकार की भिन्नता हो, परन्तु रूढ़िवाद वहाँ होता है, जहाँ बेटा ! अज्ञानता छा जाती है और जहाँ अज्ञानता नहीं होती, वहाँ उनका रूढ़िवाद नष्ट होता रहता है, ज्ञान के प्रकाश को लेकर चलता है। रूढ़िवाद वहाँ भी आता है, जहाँ स्वार्थ होता है, द्रव्य का स्वार्थ हो, मान्यता का स्वार्थ हो। इसमें वेद का या महापुरूषों का दोष नहीं।

बेटा !मैं उच्चारण करने जा रहा था कि जहाँ अग्नि प्रधान होती है वहाँ रूढ़िवाद नहीं होता, क्योंकि वहाँ सूक्ष्मता अधिक होती है और वह सूक्ष्मता बेटातुम्हें वेद में मिलेगी ! और कहीं नहीं मिलेगी और वेद की जो सूक्ष्मता है, सार्वभौम है। इसलिए बेटा ! रूढ़िवाद नहीं कहलाता है।

मेरे आदि आचार्य जनोंमैं आज क्या आदेश प्रकट करने जा रहा था !? माता गार्गी के वाक्यों को प्रकट कर रहा था, कि उन्होंने कहा कि महर्षि रेवक के विचार तो बहुत सुन्दर, परन्तु परमात्मा की सृष्टि का कोई अंत नहीं, हम इसे क्या जान सकेंगे? अंत में गार्गी ने एक यौगिक मर्यादा वर्णन की। ब्रह्मरन्ध्र की व्याख्या करते हुए कहा कि ब्रह्मरन्ध्र में लगभग देखो, करोड़ नाड़ियों की सूक्ष्म सूक्ष्म व्याहृतियां मानी जाती 60 हैं, वाहक नाड़ियों की सम्बन्धता मानी जाती है। जिनका सम्बन्ध एक दूसरे से तारतम्य और सूर्य की एक सहस्त्र किरणों से प्रत्येक वाहक नाड़ियों का सम्बन्ध होता है। ध्रुव मण्डल से सुरग्यान्त नाम की रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं, उनका त्रिगात नाम की जो वाहक नाड़ी होती है उसका ध्रुव से सम्बन्ध होता हैं, त्रिःअंचति सुरयत् नाम की जो वाहक नाड़ी होती है, उसका सम्बन्ध बृहस्पति से होता है। इसी प्रकार हम अपने सौर मण्डल को जानने वाले बन सकते है । जब हम परमात्मा की गोद में चले जाएं

बेटा मैंने भौतिकवाद की चर्चा कई !काल में वर्णन की है। सर्वप्रथम स्थान आत्मिक विज्ञान और यौगिकता है। उसमें एक मान्यता वाला जीवन बना करके उस परमपिता परमात्मा की गोद में विश्राम कर सकते हैं। भौतिकता का मैं द्वितीय स्थान मानता हूँ। उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि प्रभु की सृष्टि अनन्त है, जहाँ प्रभु ओत प्रोत

है। जहाँ भी हम दृष्टिपात करते हैं, वहीं प्रभु ओत प्रोत होता है। आगे हम प्रभु की गोद में चले जाएंगे, जहाँ प्रभु जाएगा, वहीं हम जाएंगे। जहाँ प्रभु लोक लोकान्तरों में होगा, हम भी होंगे, प्रभु की जानकारी तो हमें भी जानकारी अवश्य होगी। यह इसलिए होगी, क्योंकि हमने उस व्यापकता को जान लिया है। जो प्रकृति से ऊँची व्यापकता है, प्रभु की चैतन्यता है, प्रकृति में कम्पन्नता होकर के नाना लोक लोकान्तरों की रचना हो जाती है। नाना अन्तरिक्ष गंगा आदि की रचना हो जाती है, परन्तु यह उस प्रकृति के तन्तुओं से बनती है। जल, अग्नि, वायु भी बेटाइन प्रकृति ! के तन्तुओं से बना करते हैं। वह ऐसा अनुपम है, जो इस प्रकृति में कम्पन्नता देता है और इसका स्वामी है। स्वामी होने के नाते, वह सार्वभौम और प्रकृति का पति माना जाता है। बेटावह जो अनुपम देव आत्मा है !, जो प्रभु के निकट जाना चाहता है, जब वह मुनिवरोंप्रकृति को त्याग करके !, प्रभु के निकट जाता है और प्रभु की गोद में जाते ही बेटाएक अनुपमता प्रतीत हो !ती है और वह अनुपमता मानव को ऊँचा बना देती है, लोक लोकान्तरों को नीचे पहुँचा देती है और हम ऊँचे चले जाते हैं।

यह है आज का आदेश, जो अब समाप्त होने जा रहा है। आज के आदेशों का अभिप्राय क्या है? हम अपने मानवत्व को क्या, हम अपने सूक्ष्म वाहक वृत्तियों को जानने वाले बने, लोक लोकान्तरों में ले जाते चले जाएं। कल मैं कुछ संक्षेप से वर्णन करूंगा, कि जैसे हमारे पृथ्वीमण्डल पर सृष्टि आदि में वेदों की रचना अंगिरा आदित्य आदि ऋषियों से हुई, मैं वर्णन करूंगा कि जहाँ वायु वाले तत्व हैं, वहाँ कौन ऋषि वायु प्रधानता को ले करके आता है। यह भी मैं कल वर्णन करूंगा। सूक्ष्म विषय वेद का आ रहा है, कि कौन कौन सा कार्य करके आत्मा शरीर को त्याग करके, कौन कौन से लोकों में विचरण किया करता है और कौन से कर्म से, इस पृथ्वी पर रह जाते हैं। कल समय मिलेगा, तो मैं और सुन्दर आदेश प्रकट करूंगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवनअभी उच्चारण कर दो और भी सुन्दर होता !, क्योंकि अब विषय चल रहा था।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटामैं कल ही उच्चारण करूंगा !, अब समय नहीं है।

पूज्य महानन्द जीः भगवनहो सकता है !, कि इस समय आपके कंठ न हो, वह विषय । पूज्यपाद गुरुदेवः हास्ययह भी हो सकता है !हां बेटा ...., यह कोई विषय नहीं, यह हो सकता है। कल ही हमारा उस विषय पर अधिकार होगा।

तो मुनिवरोंआज का हमारा आदेश अब समाप्त होने जा रहा है !, कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज के आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हम जानकारी करते हताश न हो जाएं। राष्ट्रवाद में रहो या भौतिकवाद में या आध्यात्मिक में रहो, परन्तु हताश न हो जाओ। उसकी जानकारी करते हो। शनैः शनैः करते रहो, अंत में यौगिकता पर चले जाओ, उन पर अधिकारी बन जाओगे। हताश न बनो और प्रभु का चिन्तन करने में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या को संलग्न होना चाहिए क्योंकि प्रभु ने हमारे शरीर की रचना की है। कितना सुन्दर शरीर है जिसमें ब्रह्मरन्ध्र जैसे यन्त्र को बनाया, जिसमें नस नाड़ियाँ ज्ञान वाहक नाड़ियां रहती हैं। भौतिक विज्ञानवेत्ता बनो, तो उसमें भी हताश न हो, जानकारी करते रहो, शनैः शनैः करते रहो, एक समय तुम ऊँचे शिखर पर चले जाओगे। यदि सार्वभौम बनना है, सर्वप्रकृति को जानना है, प्रकृति के गर्भ से दूर होकर तुम परमात्मा के गर्भ की रचना करो। प्रभु के गर्भ में जाकर तुम प्रकृति को अच्छी प्रकार जान सकोगे। यह है आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय, मानवता उसी काल में ऊँची बनती है जब हम अपने जीवन में दृढ़ रहते हैं, मानवत्व पर विलक्षणता से रहते हैं, अपने जीवन पर अपना अधिकार होता है, मन पर अधिकार होता है। व्याहृतियों पर अधिकार होता है। बेटाआगे ! चलकर के हम विलक्षण बनाकरते हैं। मेरी पवित्र माताओं को, मेरे भद्र पुरूषों को, मेरे भद्र ऋषि मण्डल को सब ही को संसार में ऊँचा बनना है। आज का यह आदेश अब समाप्त हो गया है। शेष चर्चाऐं कल प्रकट करेंगे। अब वेद पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी।

१३ 07 07 1965 पुष्प 07 मनु महाराज द्वारा सर्वप्रथम राष्ट्र निर्माण

जीते रहो, देखो,अभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। पुनः की !मुनिवरों ! भांति आज हम कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। आज हमने प्रारम्भ के

मन्त्रों में परमपिता परमात्मा को संसार का संचालन करने वाला कहा, परमात्मा राष्ट्र पिता हैवह सबको क्रियाशील बना रहा है। संसार पर अनुपम दया करने वा .ला है। और दया करता चला जा रहा है। परन्तु अभागा मनुष्य परमात्मा की दयालुता को, परमात्मा की देन को नष्ट करे देता है।

मुनिवरोंपरमात्मा ने कैसा अमूल्य यह शरीर प्रदान किया !, किस स्थान में मानव शरीर का निर्माण किया? मुनिवरों वह !अंधकार स्थान है, जिसमें प्रकाश प्राप्त नहीं होता, जिसमें क्रिया भी सूक्ष्म है। वह स्थान माता का गर्भ स्थल है। माता के गर्भस्थल में, हम जैसे पुत्रों की रचना होती है। मेरी प्यारी माता को यह ज्ञान किसी भी काल में नही हो पाता, कि आज तेरे पुत्र या पुत्री की रचना कौन कर रहा है। देखो, कैसा सुन्दर यह शरीर है जिसमें बेटापांच कर्म ! इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियां, मन, बुद्धि, अन्तःकरण सब ही कुछ उस परमपिता परमात्मा ने रचा, बेटाकहाँ रचा !? माता के गर्भ स्थल में। जिस माता को हमारे यहाँ कामनाओं के अनुकूल पुत्र और पुत्री उत्पन्न करने वाली कामधेनु कहा करते हैं।

हे कामधेनुतू वास्तव में कि !तनी पवित्र है। माता के गर्भ स्थल में परमात्मा हमारे शरीर का निर्माण करता है और उन सब तत्तुओं को एक दूसरे से सम्बन्धित करता है। मानव के शरीर में बेटा72 लगभग !, 72, 10, नाड़ियों का समूह कहा जाता 202 है। कितना विचित्र है, यह मानव शरीर। मेरे आदि आचार्य जनोंइसलिए परम पिता ! परमात्मा की रचियता कहा जाता है, सृष्टि का संचालक कहा जाता है।

हे राष्ट्र पिता राजन्तू हमारा कल्याण करने वाला है। यदि हम प !रम पिता परमात्मा की रचना पर विचार विनिमय करते हुए आज अपने जीवन को नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं, अपने जीवन को उस स्थान पर ले जाते हैं जहाँ इसे प्रकाश का एक अंकुर भी प्राप्त नही होता, तो मुनिवरोंपरमात्मा की रचाई हुई .परमात्मा की क्या दयालुता रही ! अमूल्य सृष्टि को आश्रित हो करके, मनुष्य कर्म किया करता है। जैसा आज के वेद पाठ में परमात्मा को दुर्गेवेती शब्दार्थों से प्रतिपादन किया जा रहा है। हे दुर्गेवेतीतू ! वास्तव में हमारे दुर्गुणों को शान्त करने वाला है। तू आ और हमारा कल्याण कर,

हमारे जीवन में एक अनुपम अमृत प्रदान कर जिससे हमारा जीवन इस संसार सागर से पार होता चला जाएं। बेटामैं नित्य प्रति मानवत्व के सम्बन्ध में ही वाक्य प्रकट ! किया करताहूँ। आज का हमारा वेद पाठ राष्ट्र सम्बन्ध में बड़ा सुन्दर विवरण देता चला जा रहा था। वह राजा कितना महान होता है, जो अपनी प्रजा को सुख में, आनन्द में प्राप्त कराता है। जो राजा अपनी प्रजा को अनुपम बनाने की हृदय में उत्कट इच्छा रखता है वह राजा राष्ट्र का श्रेष्ठ संचालक कहलाता है।

महाराजा मनु

मुनिवरोंआज मुझे उन राजाओं की वार्त्ता कण्ठ आ रही हैं !, जब महाराजा मनु ने सबसे पूर्व इस राष्ट्र का निर्माण किया। महाराजा मनु आज नहीं बहुत पूर्व काल में हुए। यह कितने दयालु थे। मुनिवरोंदेखो !, महाराजा मनु एक !कमंडलु लेकर नित्य प्रति स्नानम् ध्यानन् करने जाया करते थे। एक समय समुद्र तट पर नित्य कर्म करने के पश्चात् जब समुद्र से कमंडलु में जल लेने लगे, तो उनके कमंडलु में एक सुन्दर सी मछली आ गई और मनु महाराज से कहा कि महाराजमेरी रक्षा करों !, मैं रक्षा चाहती हूँ मनु महाराज मछली को अपने .कमंडलु में ले आए। कुछ समय वह कमंडलु में ही रही, उसके पश्चात् उन्होने सूक्ष्म सा गढढा बनाया, उसमें जल अर्पित किया और फिर उसमें मछली को अर्पित कर दिया। मछली वहाँ प्रबल होने लगी। जब उग्रता का प्राप्त हो गई, तो एक समय मछली ने कहा कि प्रभु! मैं समुद्र को जा रही हूँ, अपने स्वराष्ट्र मे जा रही हूँ, जहाँ हमारी जातियां रहती है। भगवान मनु से एक वाक्य और कहा कि एक समय जल प्लावन आएगा। उस समय तुम नौका बनवाना और मैं तुम्हें हिमालय कन्द्राओं में प्राप्त होंगी। मेरे मुख पर एक सूक्ष्म सा सींग होगा, उस सींग से उस नौका को अर्पित कर देना, प्रभु! तुम्हारी रक्षा अवश्य कर पाएगे। मछली अपने समुद्र में चली गई। महाराज मनु तपस्या आदि करते रहे। कुछ समय पश्चात् जलप्लावन आ गया। जलप्लावन के आते ही संसार में अग्नित होने लगी। महाराज मनु ने मछली के कथानुसार एक सुन्दर नौका बनवाई और उस नौका पर अपने कुछ ऋषि समाज सहित विराजमान हो गए। जलप्लावन इतना प्रबल था कि

वह नौका हिमालय की कन्द्राओं के निकट पहुंची। वहाँ उन्होंने देखा कि मछली वहाँ विराजमान है। नौका को उस मछली से स्थिर किया। सुना जाता है, कि महाराजा मनु और उनके सम्बन्धि, जो उस नौका पर विराजमान थे, उनके प्राणों की रक्षा हो गई, जलप्लावन समाप्त हो गया, शुष्कता आ गई, तो महाराज मुन अपने अग्रिम स्थान पर आ पहुँचे।

धर्म के लिए राष्ट्र

मुनिवरोंहमारा इन वाक्यों से क्या अभिप्राय है !? आज देखों हम महाराजा मनु की दयालुता के सम्बन्ध में वर्णन करते चले जा रहे थे, उन्होने उस मछली की किस प्रकार रक्षा की, जो मानव जिसकी रक्षा करता है, वह प्राणी उसकी रक्षा करता है। मैंने एक समय अहिंसा परमो धर्म का वर्णन करते हुए कहा था कि यदि हम ही किसी की रक्षा न करेंगे तो हमारी भी संसार में कोई रक्षा न करेगा। यह तो अन्तःकरण और प्रवृत्ति के साथ साथ मानव का जीवन सञ्चार होता है। जब मनु महाराज को वास्तव में प्रतीत हो गया कि अब धर्म पर भिन्न भिन्न स्थानों पर आक्रमण होने जा रहा है, दैत्यों का प्रभाव अधिक होता जा रहा है, देवता शून्यता को प्राप्त होते चले जा रहे हैं, उन्होंने उसी काल में आदि ऋषियों को एकत्रित किया। जिसमें महर्षि विभाण्डक, महर्षि पारा आदि सब ही ऋषि विराजमान थे। महाराज मनु ने उन से कहा कि आज मैं वेदों का स्वाध्याय कर रहा था, तो वहाँ राष्ट्र का बड़ा सुन्दर वर्णन आ रहा था, कि राष्ट्र नाम का भी कोई नियम है। ऋषियों को निर्णयात्मक करते हुए, महर्षि तत्त्ववेत्ता ने कहा कि हे भगवन्मुझे तो ऐसा प्रतीत ! होता हैं कि वेदों में राष्ट्र का विधान है और उस समय में है जब मनुष्य अपने कर्त्तव्यों से विहीन हो जाता है, धर्म से पतित हो जाता है। धर्म की रक्षा करने के लिए, राष्ट्र का निर्माण किया जाता है। आदि ब्रह्मा का भी यही कथन है। आज वास्तव में राष्ट्र का निर्माण करना चाहिए। उस समय मनु जी ने कहा कि मुझे कुछ सहायता प्राप्त होगी, तो मैं अवश्य राष्ट्र का निर्माण करूंगा, मेरी उत्कट इच्छा है। दैत्यों को नष्ट करने के लिए, दुराचारियों का दुराचार नष्ट करने के लिए, राष्ट्र का सुगठित हो जाना

बहुत ही अनिवार्य हैऋषि मुनियों ने कह ा कि आप राष्ट्र का अवश्य निर्माण कीजिए। हम आपकी सेवा अवश्य कर पाएंगे जो हम से बन सकेगी।

अयोध्या नगरी

मुनिवरोंभगवान मनु ने ऋषियों की सहायता प्राप्त कर !, सबसे पूर्व वर्ण व्यवस्था स्थापित की। शिक्षालयों में शिक्षा पाने के लिए ब्रह्मचारी जाता तो आचार्य निदान किया करता कि जो भी ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिणी है, यह किस वर्ण का है। जैसे कोई पुत्र बुद्धिमान है, ब्राह्मणत्व पर उनकी बुद्धिमता चलती है, तो आचार्यजन उसे ब्राह्मण की उपाधि प्रदान करता। जिसकी बुद्धि बनज आदि में तीव्र, उसे वैश्य और जो दूसरों की रक्षा करने वाला, अस्त्र शस्त्र और धनुर्वेद में रूचि वाला, तो उसकी क्षत्रिय की उपाधि प्रदान की जाती और जो इन तीनों प्रकार की विद्या प्राप्त न कर सके, उसे हमारे यहाँ शुद्र की उपाधि प्रदान की जाती है। बेटामहाराज मनु न अब ! यह सोचा कि मेरे राष्ट्र के अब नियम तो बन गए। ऋषि मुनियों ने राष्ट्र के नियम बना दिए परन्तु अब नियम यह बनाना है कि राष्ट्र के लिए राजा की आवश्यकता है और राजा के लिए किसी नगरी की आवश्यकता है। मुनिवरोंहमें संसार का इतिहास प्राप्त होता ! है, तो स्मरण आता है कि भगवान मनु ने सबसे पूर्व अयोध्या नगरी का निर्माण किया। उसी प्रकार निर्माण किया, जैसे परम पिता परमात्मा ने मानव शरीर का निर्माण किया है। उस अयोध्या नगरी में मुनिवरोंनौ द्वार थे जैसे मानव शरीर में नौ ! द्वार माने जाते है। उस नगरी में राजा उसी प्रकार शासन चला रहा है जैसे मानव शरीर का निर्माण परमात्मा ने राष्ट्रीयकरण से आधारित किया है। यह जो हमारा शरीर है, यह नौ द्वारो वाली अयोध्या है। इसमें नौ द्वार कौन से हैं? दो घ्राण, दो श्रोत्र, दो चक्षु, एक मुख, दो उपस्थ इन्द्रियां, ये सब मिलाकर नौ द्वार कहलाते है। यह नौ द्वार वाली अयोध्यापुरी कहलाती है। इसमें दशरथ राज्य करता है जो दसों इन्द्रियों पर शासन करता है। दशरथ इस नगरी का अधिपति माना जाता है और रमेती रमण गच्छति प्रमहणः वह जो राम है, वह इस अयोध्या नगरी के कण कण में व्यापक हो रहा है। व्यापक होने के नाते एक एक परमाणु में राम रमेती परमात्मा

रमण कर रहा है और अयोध्या नगरी को पवित्र बनाता चला आ रहा है।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेवमैं आपसे एक वाक्य जानना चाहता हूँ !, कि आप इस शरीर में नौ द्वार माना करते हैं, परन्तु जिस समय हम माता के गर्भ स्थल में रहते हैं, उस समय जो भी रस माता की लोरियों में बनता है, परिपक्व होता है, वह स्वांग नाम की नाड़ी के द्वारा बालक की नाभि से सम्बन्धित होता हुआ, बालक के प्राप्त होता है। क्या आप नाभि को दसवां द्वार नहीं माना करते?

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीतुम्हार !ा वाक्य तो बड़ा विचित्र है। हम इस पर विचार विनिमय करेंगे। संयम वृती अधिनायक करणों नाभि चक्रा मेरे आदि ऋषियों ने इस नाभि को चक्र माना है। मैने भी पूर्व में अपने पूज्यपाद गुरूदेव से प्रश्न किया था, कि मानव के शरीर में जो नौ द्वार हैं इसमें नाभि का भी एक द्वार होना चाहिए। उस समय मेरे पूज्य गुरूदेव ने कहा कि बेटाहमारे यहाँ नौ द्वारों को लेते हुए !, नाभि को द्वार इसलिए नही माना है, कि नाभि एक प्रकार का चक्र कहलाती है, यह मानव शरीर का केन्द्र है और मुनिवरोंजैसे राष्ट्र में जहां राजा होता है !, न्याय करता है, वह राष्ट्र का केन्द्र कहलाता है। इसी प्रकार मानव के शरीर में नाभि एक प्रकार का चक्र है।

महानन्द जीरही यह वार्त्ता !, जैसी तुम्हारी प्रेरणा प्राप्त हो रही है, कि पूर्व जन्मों के संस्कार इस नाभि चक्र को स्पष्ट करने से प्राप्त होते है, तो देखो, यह जो पूर्व जन्मों के संस्कार होते है उन सबका सम्बन्ध वायु से, हमारे अन्तःकरण से और स्मृतियों से होता है। इनका नाड़ियों से कोई सम्बन्ध नहीं। नाभि को हमारे यहाँ नाड़ियों का केन्द्र माना है। जहां नाड़ियों का केन्द्र होता है, शरीर का भी केन्द्र होता है। जहाँ72 करोड़ों नाड़ियों का समूह होता है, वही उसकी कुछ हजारों में शाखाएं, इस नाभि से ही चला करती है। देखो, वह बालक की नाभि में ही अब्रेति द्वार नहीं, वह तो नाड़ियों से सम्बन्ध होता है। बेटाइसको द्वार अवश्य मान लेते !, यदि माता की नाड़ी का सम्बन्ध बालक की नाभि के द्वारा न होता, क्योंकि इसका सम्बन्ध नाड़ियों से है और नाड़ियों का समूह नाड़ियों से ही माना जाएगा। बेटामैंने यह वाक्य इसलिए कहा !, कि यह

द्वार नहीं माना जा सकता। आदि आदि ऋषियों ने इस पर बड़ा अनुसन्धान किया। बेटातुम भी योग के आधार पर इस पर अनुसन्धान करो !, जिससे प्रतीत होगा, कि यह नाड़ियों का समूह है।

मुनिवरोंअब प्रश्न होता है कि जहाँ चक्षु हैं !, वहा भी नाड़ियों समूह है। इसी प्रकार घ्राण, उपस्थ इन्द्रियां आदि है। परन्तु बेटातुम एक वाक्य और जानों !, कि जब माता के गर्भ स्थल में पिता के सम्बन्ध से बिन्दु जाता है, तो उसका जो तारतम्य है, नाना नाड़ियों द्वारा माता की लोरियों से सम्बन्धित होता है, जिन नाड़ियों को बेटाहम ! स्वांग नाम की नाड़ी कहते है, स्वंचति और पचम् नाम की नाड़ी भी कहते है। बिन्दु के द्वारा सबसे पूर्व नाभि का आकार बनता है उसके पश्चात् नाडियों का सम्बन्ध हो जाता है जिनसे माता की लोरियों से प्राण सञ्चार होता रहता है। जो अन्न और रस माता की लोरियों में परिपक्व होता हैं उनके कण नाड़ियों द्वारा वहाँ जाते हैं। माता के बालक का शरीर बनता है। जब शरीर बनता है, तो नाड़ियों का समूह बनता है, चक्षु भी बनते है, घ्राण भी बनती है, उपस्थ इन्द्रियां भी बनती है। परन्तु सब बनने के पश्चात् उनका जो ऊपरी भाग है, उसका कोई सम्बन्ध नाड़ी से नही होता, परन्तु नाभि का ऊपरी भाग नाड़ी से सम्बन्धित होता है। इसलिए हम नाभि को द्वार नहीं कहते। परन्तु जैसे घ्राण है, चक्षु है, श्रोत्र हैं, मुखारविन्द है इनमें ऊपर भाग में नाड़ी का कोई सम्बन्ध नही है, यह तो प्रत्यक्ष है नौ द्वार माने जाते हैं। !इसलिए बेटा .

दशम द्वार उस काल में माना जाता है, जब मानव मेघावी, प्रज्ञावी बुद्धि को प्राप्त हो जाता है। उस काल में उसे परमात्मा के दर्शन होने के नाते दशम द्वार कहलाता है। बेटाआज मैं आध् !यात्मिक चर्चा करने नहीं आया। मैं तो आज केवल वह मनु जी का वाक्य, जो वेद पाठ कहता चला जा रहा था, वर्णन कर रहा था कि मैंने अयोध्यापुरी का आध्यात्मिक रूप भी वर्णन किया कि देखो, दस इन्द्रियों पर शासन करने वाला यह मन है, मन को शासन में करने वाली बुद्धि है और बुद्धि को शासन में करने वाली आन्तरिक भावनाएं है, आन्तरिक भावनाओं में वह आत्मा विराजमान है, जिसमें उस चेतन स्वरूप का प्रतिबिम्ब भी, उसी के साथ चला आ रहा है। उस

परमपिता परमात्मा को हम राम रमेती शब्दों से उच्चारण कर रहे थे। आज हमें प्रत्येक शब्द व्याकरण की दृष्टि से विचार विनिमय कर लेना चाहिए। हम रमेती ब्रह्माणाःकचतम भाव तेनी का च अश्वेणी दुर्वाणी रमेती ब्राह्मण देखो, जो ब्रह्मणों को शरीर में रमण करता है, शून्य प्रकृति को कम्पायमान बनाता है उस परमात्मा को रमेती नामों से उच्चारण किया जाता है।

यज्ञोपवीत

मेरे आदि आचार्य जनोआओ !, हम उसी वाक्य पर आते चले जाएं, जहाँ मनु जी की चर्चा प्रकट कराते चले जा रहे थे। महाराज मनु ने इस मानव शरीर की कल्पना की और कल्पना करके अयोध्या नगरी का भौतिकवाद के आधार से निर्माण किया। जब ब्रह्मचारी का यज्ञोपवीत संस्कार किया जाता है, उस समय ब्राह्मण यज्ञोपवीत देते समय अपने ब्रह्मचारी से कहा करता है कि हे ब्रह्मचारीइस महान यज्ञोपवीत की ! एक ब्रह्म ग्रन्थी मानी जाती है और इसमें तीन धागे माने जाते है। एक एक धागे में तीन तीन धागों की व्याहृतियां होती है। आचार्य उस ब्रह्मचारी से कहता है। कि हे ब्रह्मचारीतू मेरे द्वार पर आया है !, मैं तुझे यज्ञोपवीत धारण करा रहा हूँ जो परम पवित्र है, जिसमें संसार का ज्ञान और विज्ञान ओत प्रोत है।

मुनिवरोंदेखो !,उसमें तीन धागे है !, परम पिता परमात्मा ने जब इस संसार के निर्माण किया तो देखो, तीन पदार्थो से आत्मा, परमात्मा और प्रकृति इन तीनों के सूचक वह तीन धागे कहलाते है। तीन ही प्रकार के गुण होते है रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण। तीन प्रकार के प्राणी होते हैं, रज, तम और सत् इसी प्रकार तीन प्रकार की विद्याएं होती है, ज्ञान, कर्म और उपासना। वेदों में त्रयी विद्या आती है। इसी प्रकार वेदाचार्यो ने कहा कि यज्ञोपवीत में तीन धागे होते है और एक एक धागे में तीन की उपलब्धि होती है। वह कौन सा सूचक होता है, हमारे शरीर का जो निर्माण किया गया है, वह नौ द्वारों वाला कहा जाता है और वह जो यज्ञोपवीत में नौ धागे हैं, वह एक एक द्वार का सूचक कहलाता है। तीन तीन धागे, एक एक धागे में कर दिए जाते है, इसलिए वह नौ द्वार गृहणी कहे जाते हैं। उन नौ द्वारों की तीन

व्याहृतियां बनाई जाती है। देखो, दो चक्षु और एक श्रोत्र की एक व्याहृति होती है, दो घ्राण और एक श्रोत्र की एक व्याहृति होती है, मुख उपस्थ और ग्रीवा इसकी एक व्याहृति होती है। अब इन तीनों से विभाजन कर दिया तो नौ हो गए।

अब इन नौ द्वारों पर योगी शासन करता है। ब्रह्मचारी शासन करता है, तो इनकी तीन व्याहृतियां बन जाती है। और भी सूक्ष्मता में जाता है, तो मानव के नौ द्वारों की एक ग्रन्थि लग जाती है, जिसको बेटा ब्रह्म !ग्रंथि कहते है। ब्रह्म ग्रन्थि होकर के देखो, प्रकृति, आत्मा और परमात्मा, तीनों का सुगठित होकर के बेटायह आत्मा ! परमात्मा में आनन्द अनुभव करने लगता है। आज हमें विचार विनिमय कर लेना चाहिए। अब आचार्य अपनें ब्रह्मचारी को कहा जाता है, कि हे ब्रह्मचारीआज मैं तुम्हें ! यह यज्ञोपवीत परम पवित्रम् प्राप्त करा रहा हूँ, तू इस यज्ञोपवीत को धारण कर और धारण करके, तू अपने मानवत्व को जान, इस अयोध्यपुरी को जान, यह तेरा मानव शरीर एक प्रकार कि अयोध्यापुरी है।

बेटामैं वाक्य उच्चारण करता करता बहुत दूर चला गया। आज ! मैं उच्चारण कर रहा था कि भगवान मनु ने सबसे पूर्व राष्ट्र का गठन किया, नौ द्वार वाली अयोध्यापुरी का निर्माण किया, और स्वयं उसमें राजा बने। राजा बन करके राष्ट्र नियम चलाने लगे। राष्ट्र क्यो बनाया गया? राष्ट्र के जो निर्माण होता है, राष्ट्र के जो नियम होते है, वे केवल धर्म रक्षा करने के लिए होते हैं और जिस राजा के राष्ट्र में धर्म की रक्षा नहीं की जाती, वह राष्ट्र आज नहीं तो कल अवश्य नष्ट हो जाएगा। बेटाजब उसके धर्म ! की रक्षा नही होती तो वह राष्ट्रक्यों रहेगा और न उसको राष्ट्र कहना चाहिए। वह तो बेटाएक स्वा !र्थ का क्षेत्र कहना चाहिए। केवल अपनी माया में विचरण करने वाला क्षेत्र उच्चारण करना चाहिए।

मेरे आदि आचार्य जनो। भगवान मनु से पूर्व यह संसार करोड़ो वर्षो तक इसी प्रकार बिना राष्ट्र के चलता रहा क्योंकि ऋषि परम्परा से संसार का निर्माण हुआ, इसमें सब अपने अपनें कर्त्तव्य का पालन करने वाले थे। जहाँ कर्त्तव्य का पालन किया जाता है। वहाँ त्याग और तपस्या होती है और वहाँ राष्ट्र की कोई आवश्यकता नहीं। राष्ट्र की

आवश्यकता कहाँ होती है? जहां मानव अपने कर्त्तव्यों से दूर चला जाता है। कर्त्तव्य विहीनता होने के नाते राष्ट्र का निर्माण किया जाता है। धर्म की रक्षा की जाती है। धर्म की रक्षा के लिए राष्ट्र का निर्माण होता है। जब यहाँ संसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक मेरी प्यारी माता और सब अपने अपने कर्त्तव्यों का पालन और धर्म, अर्थ, काम ओर मोक्ष के लिए करोड़ों वर्षो तक प्रयत्न करते रहे, तब किसी राष्ट्र की आवश्यकता न थी, न कोई शत्रु था। मानवत्व की यहाँ एक पवित्र वेदी थी।

मुनिवरोंवेद ने कहा है कि जो राजा बन करके धर्म की रक्षा वाले नियम नही ! बनाता, वह नष्ट हो जाता है। वेद की मर्यादा क्या कहती है? ऋषि मर्यादा क्या कहती है? हमें आज उस वेदी वाला बनना है। अरे, मनु महाराज ने मछली की कैसी सुन्दर रक्षा की। मैं इसका आध्यात्मिक रूप भी कल प्रकट करूंगा। आज तो मैं राष्ट्र प्रकरण प्रकट करता चला जा रहा था तुम्हारे जीवन का और इस पवित्र भूमि का। राष्ट्र क्यों बना? क्या आवश्यकता हुई?

वर्ण व्यवस्था

मुनिवरोंदेखो !, ब्राह्मण जन और बुद्धिमान राष्ट्र के चार भाग बनाते है प्रजा के। एक उनमें से ब्राह्मण भाग हो जाता है, द्वितीय उनमें से क्षत्रिय भाग हो जाता है, तृतीय उनमें से वैश्य भाग हो जाता है। चतुर्थ उनमें से शूद्र भाग हो जाता है। इन्हीं चारों भागों से संसार के राष्ट्र का निर्माण होता है। कोई मानव यह कहता है कि राष्ट्र तो केवल राष्ट्रकीय होता है इसमें धर्म नही होता। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि धर्म पूर्व आता है। रात्रि पूर्व आती है या प्रकाश? यदि रात्रि न होती, तो प्रकाश न आता। परमात्मा ने सबसे पूर्व प्रकाश को रचा उसके पश्चात् रात्रि को रचा। परमात्मा न सबसे पूर्व प्रकाश को रचा उसके पश्चात् रात्रि को रचा। परमात्मा ने सबसे पूर्व जब सृष्टि का निर्माण किया तो परमात्मा ने सूर्य का निर्माण किया उसके पश्चात् अहिल्या नाम की रात्रि को रचाया। जब अहिल्या नाम की रात्री को रचाया, तो उसके पश्चात् गौतम रूपी चन्द्रमा को रचा और इसी प्रकार आगे रचता चला गया। कहने का तात्पर्य है कि प्रकाश पूर्व है ओर अन्धकार पश्चात् है। देखों राष्ट्र एक प्रकार की रात्री है और वह

कौन सी रात्री है? कर्त्तव्य की आवृत्ति लाने के लिए मानों उसमें एक ब्रह्म ज्योति जाग्रत हो रही है, उस ज्योति की रक्षा करने के लिए इस राष्ट्र का निर्माण किया गया। क्योंकि उससे पूर्व धर्म था, धर्म में सूक्ष्मता हुई तो राष्ट्र की आवश्यकता हुई, कठोरता की आवश्यकता हुई। देखो, जब गुरू और शिष्य का सम्वाद होता है, और शिष्य जब नही जान पाता, तो गुरू डंडे से शिष्य का निर्माण करता है। इसी प्रकार जब राष्ट्र में, प्रजा में धर्म का पालन व अपने अपने कर्त्तव्य का पालन नही किया जाता, तो राजा अपने डंडे से उसको कर्त्तव्य का पालन कराया करता है। इसलिए राष्ट्र धर्म की रक्षा के लिए उत्पन्न हुआ और यदि कोई मानव यह कहे कि इसमें धर्म नही होना चाहिए, तो वह राष्ट्र नही कहलाया जाता, वह केवल स्वार्थ को क्षेत्र कहलाता है। जहां राजा के साथ धर्म नहीं होता, वहाँ कर्त्तव्य में सूक्ष्मता होती है। जहाँ कर्त्तव्य मे सूक्ष्मता होती है वहाँ स्वार्थ होता है और जहाँ स्वार्थ होता है वहाँ विनाशिता होती है। जहां विनाशिता होती है, वहाँ अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, संसार विलासिता को प्राप्त हो जाता है।

यह है बेटाआज का हमारा आदेश। आज मैं अधिक चर्चा प्रकट नही करूंगा। आज ! के हमारे आदेशों का अभिप्राय था कि मनु जी महाराज नेसबसे पूर्व अयोध्या नगरी और राष्ट्र का निमार्ण किया, धर्म की रक्षा के लिए। धर्म की रक्षा के लिए राजाधिराज सबको चुनौती दी जाती है। आज मैं अधिक चर्चा नही करूंगा। आज के हमारें आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हमें अपने मानवत्व को कितना ऊँचा बनाना हैं। हमें परमात्मा के निकट पहुँचना है। उनके लिए हमें क्या क्या प्रयत्न करने हैं? मेरी पवित्र माता को विचारना है कि मुझे अपने गर्भ स्थल से पुत्र को जन्म देना है। हे मेरी पवित्र माता तू इस संसार में कीड़े न !उत्पन्न कर। वेद ने एक मन्त्र कहा है माता ग्रहणी वन्चतम् प्रह्यणाः वेतु न गर्भश्चति विश्वम् भवनेति न करोति विश्वम् भवनेति न लाभम् न क्रियाम् अग्नेति दश्वति न करोति न करोति कि हे मातातू उस पुत्र को ! जन्म न दे जिससे संसार में कोई लाभ न हो। दैत्य प्रकृति वाले से संसार का कोई लाभ नहीं।उससे किसी प्राणी को कोई लाभ नही होता। इसलिए मेरी प्यारी माता !

वेद कहता है रमणोअशति गर्भाशयम् ऊचति प्रह्यणो वातो न रेती ऋषि वर्णोति ऋषि प्रह्यणाः वातन्योति राजन्योति गृहणो वतुना प्रह्यणो एकम् प्रहेवि कच्छति विश्वम् मानाः कि हे मातातू ऋषि बालक को जन्म दे !, तू राष्ट्र राजा को जन्म दे, तू महान् यहाँ ऐसे बालक को जन्म दे जो तेरे गर्भाशय को ऊँचा बनाता चाल जाएं। तू यहा राम जैसों को जन्म दे, बालक नचिकेता, बालक अत्रि, बेदव्यास और महर्षि पतंजलि जैसों को जन्म दे। यहाँ कीड़ो को जन्म देने से कोई लाभ नही, यदि तुझे अपने गर्भाशय को ऊँचा बनाना है, तो यहाँ महर्षि कणाद जैसे बालक को जन्म दे, महर्षि अंगिरा को जन्म दे जो वेदों को पुनः उत्थान करने वाला हो। बेटावेद तो स !ब ही कुछ कहता है हम वेद को अपने जीवन में धारण करते है चले जाएं यही हमारा कर्त्तव्य है।

हे मेरी पवित्र मातातू वह माता है !, जो राम, कृष्ण और दधीचि जैसों का जन्म देती है। मैं यह निवेदन किया करता हूँ कि कीड़े उत्पन्न न कर। महाराजा दधीचि ने अपनी अस्थियों को भी संसार के, राष्ट्र के कल्याण के लिए, इन्द्र को अर्पित किया। ऐसे बालक को जन्म दोगी, तो तुम्हारा गर्भाशय ऊँचा बनेगा।

यह है बेटाआज का हमारा आदेश। हमारे ! आदेशों का अभिप्राय क्या है? आज हम कुछ राष्ट्र के ऊपर चर्चा करते चले जा रहे थे। उसमें से शाखाएं उत्पन्न हो गई। कल समय मिलेगा, तो इन शाखाओं पर कुछ और भी प्रकाश दिया जाएगा। आज का आदेश समाप्त होने जा रहा है। अब शेष वाक्य कल होगें।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवान्वह जो नाभि चक्र का मैने प्रश्न !गुरू जी ! किया, वह कल अधूरा रह गया है। '

पूज्यपाद गुरुदेवः चलो बेटा कल उस पर !और विचार विनिमय किया जाएगा। मैंने इसका उत्तर तो अच्छी प्रकार दे दिया है, परन्तु यदि तुम्हारी सन्तुष्टि नही हुई है, तो कल इसका अच्छी प्रकार उत्तर दिया जा सकता है।

पूज्य महानन्द जीः 'तो भगवान्आज आपका आदेश तो वास्तव में बहुत सुन्दर था !, परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म देने लगे।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यतुम्हें नित्य प्रति उच्चारण करने का !यह तो बेटा............ अभ्यास हो गया है।

पूज्य महानन्द जीः 'अच्छा भगवान !

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाकल चलो !, तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देगे, और भी अधिक समय दे दिया जाएगा। '

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् कृपा कीजिए। !

तो मुनिवरोंआज का हमारा आदेश अब समाप्त होने जा रहा है। आज के हमारे ! आदेशों का अभिप्राय केवल राष्ट्र के ऊपर था। अब उसमें से आध्यात्मि शाखाएं और भौतिक शाखाएं उत्पन्न हुई, उनका भी मैंने कुछ निराकरण किया। महानन्द जी के प्रश्नों का भी सूक्ष्म रूप से उत्तर दिया। आज का हमारा यह आदेश समाप्त हो गया हैं। कल समय मिलेगा तो शेष चर्चा कल प्रकट की जाएगी। रानी तालाब आर्य समाज फिरोजपुर शहर

१४ 27 04 1966 पुष्प 07 यौगिक दर्शन

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पुनः की भांति, कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने जिन वेद मन्त्रों का पाठ किया। हमने आज से पूर्व कई स्थलों में वर्णन करते हुए कहा था, कि हम नित्य प्रति उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान विज्ञान की चर्चा किया करते हैं।

मुनिवरोंआज मैं कोई विशेष चर्चा करने तो नहीं आया !, केवल अपने कुछ विचार प्रगट करने आ पहुँचा हूँ। अपनी उस परम्परागत वाली जो पद्धति है, जिसे हम वैदिक पद्धति कहा करते हैं, उसके सम्बन्ध में कुछ प्रकट करना चाहता था। जिस पद्धति में मानवता का, यौगिकता का और राष्ट्रवाद का प्रदर्शन होता है। जो वेद मार्ग पर चलने वाले है वह परम्परागत वाली पद्धति को जानते हैं। मानव की जीवन चर्या के सम्बन्ध में जो पवित्र पद्धति है वह हमें जीवन का एक प्रदर्शन कराती हैं। जब हम यह जानते हैं कि प्रभु की सृष्टि में नाना प्रकार के लोक लोकान्तर हैं और सूर्य से भी अधिक महान प्रबल लोक हैं। आज हमें यह जानना होगा कि एक योगी इन लोक

लोकान्तरों में किस प्रकार भ्रमण करता है। जब एक भौतिक विज्ञानवेत्ता इन परमाणुओं को एकत्रित करके चन्द्र मण्डल, बुद्ध, वृहस्पति आदि लोकों में भ्रमण करता है, तो योगी किस प्रकार करता है?

विष्णु लोक

भौतिक विज्ञानवेत्ता तो केवल परमाणुओं को एकत्रित करता है, उनका योग करता है, यन्त्र बन जाते हैं और उनमें वह स्थिर हो जाता है। परमाणुओं की भी मात्रा होती है, यदि जल की मात्रा अधिक, अग्नि की मात्रा उससे कुछ सूक्ष्म हो और वायु की मात्रा उससे सूक्ष्म हो, तो मुनिवरोंअग्नि !, जल, वायु और पार्थिव परमाणु भी उसमें मिलान किए हुए हों तो उन परमाणुओं से एक यन्त्र बन जाता है और जल परमाणु प्रधान होने से उस यन्त्र में विराजमान होकर हम जल में भ्रमण करते हैं। यदि वायु अधिक हो, अग्नि और जल सूक्ष्म हो, पृथ्वी भी सूक्ष्म हो तो जो इन परमाणुओं से यन्त्र बनते हैं उन यन्त्रों से हम चन्द्रमण्डल इत्यादि लोकान्तरों में भ्रमण करने लगते हैं। आज हम यह विचार विनिमय करने चलें कि भौतिक विज्ञानवेत्ता इन परमाणुओं को एकत्रित करता हुआ लोकों में चला जाता है परन्तु यहाँ एक योगी किस प्रकार जाता है।

मुनिवरोंजब हम यौगिक प्रदर्शन करते हैं !, तो हमारे इस मानव शरीर में जो पार्थिव तत्त्वों से बना हुआ है, इसमें कुछ सूक्ष्म अग्नि के परमाणु हैं, कुछ जल के परमाणु हैं, कुछ वायु के हैं, कुछ अन्तरिक्ष के हैं, इन्हीं से देखो, हमारा यह शरीर बना हुआ है। पार्थिव तत्त्वों की प्रधानता होने के कारण, हम पार्थिव प्राणी कहलाते हैं। सूर्यमण्डल में पहुँचते हैं, तो वहाँ अग्नि प्रधान होती है। यहाँ आग्नेय शरीर कहलाते हैं। जैसे हमारी इस पृथ्वी मण्डल पर पार्थिव तत्त्व प्रधान होता है और जो तत्त्व प्रधान होता है उसी तत्त्व से बने हुए वे शरीर होते हैं। उनमें काम भी होता है, क्रोध भी होता है, परन्तु आग्नेय शरीर में सूक्ष्म मात्रा में होता है। पार्थिव तत्त्व वेत्ता जो होते हैं, उनमें काम वासना अधिक होती है। जितने हम अग्नि के समीप चले जाएगी। उतनी ही हमारी ऊर्ध्वगति होकर तमोगुणी भाव कुछ सूक्ष्म हो जाता है। सूर्य मण्डल को हमारे यहाँ विष्णु लोक कहा जाता है।

चक्र गति

मुनिवरोंयौगिक पद !्धति हमें क्या आदेश देती जा रही है कि हम अपने को जाने, परन्तु कैसे जाना जाएगा? जब हम समाधिस्थ होकर मूलबन्ध लगा लेते हैं, जिसे हम स्वाधिष्ठान चक्र भी कहा करते हैं। उस मूलाधार में जब वह प्राणों की स्थिति आत्मा के सहित विराजमान होती है, तो उस समय मानव की जो व्याहृतियां हैं, वह इस पार्थिवता से कुछ ऊपर चली जाती हैं। आगे चलने पर नाभि द्वारा पर आ जाने के पश्चात् कुछ और ऊर्ध्वगति बनती है। ऊर्ध्वगति बन के ब्रह्मचर्य की जो तीव्रगति है, जो हमें ब्रह्म में विचरण कराती है, उसकी गति हृदयचक्र में हो जाती है। पांचों प्राणों के सहित जो पवित्र आत्मा है वह इंगला पिंगला और सुषुम्णा इन तीन नाड़ियों में इसकी और ऊर्ध्वगति बन जाती है। ब्रह्मचर्य की जो पवित्र गति होती है, वह प्राणों के साथ सञ्चार करती है। सञ्चार करती हुई यह आत्मा आगे चलती हुई, कंठ चक्र में जाती है, जहाँ इसकी ओर भी ऊर्ध्वगति होती है और सुषुम्णा नाड़ी के द्वारा एक विशेष सम्बन्ध होता है। आगे कंठ चक्र को त्याग करके, घ्राण चक्र में जाती है, जिसे हमारे यहाँ रुद्र नाम का चक्र भी कहा जाता है, त्रिगण नाम का चक्र भी कहा जाता है। इसमें योगी की एक विचित्र ऊर्ध्वगति बन जाती है। घ्राण चक्र को त्यागने के पश्चात् त्रिवेणी स्थान में, जहाँ इंगला पिंगला और सुषम्णा तीनों नाड़ियों का मिलान होता है, आत्मा पांचों प्राणां को लेकर इस गृह में विराजमान हो जाती है। आगे चल करके इन नाड़ियों का प्रबन्ध केवल ब्रह्मरन्ध्र में एक चक्र है, जिसकी बहुत तीव्र गति होती है। जब प्राणों का इस पर सञ्चार होता है, तो आत्मा धिराज बन करके ब्रह्मरंध्र के एक आसन पर विराजमान हो जाता है।

शरीरस्थ नाड़ियों का सम्बन्ध विभिन्न लोकों से

हमारे शरीर में जैसा ऋषि मुनियों ने कहा है, बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख, दस हजार, दो सौ दो नाड़ियां है। इन नाड़ियों को देखो, अद्भुत गति बन जाती है और इनका सम्बन्ध ब्रह्मरंध्र से होता है। ब्रह्मरंध्र में जो सूक्ष्म सूक्ष्म वाहक नाड़ियां होती है उनका तारतम्य कुछ अग्नि से, कुछ जल से, कुछ वायु से, कुछ अन्तरिक्ष से तथा

कुछ पृथ्वी से होता है। इन सूक्ष्म वाहक नाड़ियों की एक मनोहर तीव्र अद्भुत गति बन जाती है। देखो,किसी नाड़ी का सम्बन्ध ध्रुव मण्डल से !, किसी का सूर्य से, किसी का बृहस्पति से, किसी का ऊचंग लोक से, किसी का मचंग से, किसी का भूः भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यं, सप्त ऋषि मण्डलों से है।

मुनिवरों !इंगला से लगभग देखो, दस सहस्त्र नाड़ियों का निकास होता है पिंगला से इससे दुगना निकास होता है। इंगला, पिंगला और सुषुम्णा से देखो, लगभग लाखों और करोड़ों संख्या में नाड़ियों का निकास होता है परन्तु सूक्ष्म वाहक नाड़ियों का सम्बन्ध ब्रह्मरंध्र से रहता है। नाना प्रकार की धातुओं से होता हैः भूत, भविष्य और वर्त्तमान से भी होता है इसलिए हमारे ऋषि मुनियों ने कहा है कि योगी त्रिकालदर्शी होते हैं, जो तीनों काल की वार्त्ताओं को जानते हैं परन्तु वह जानते उसी काल में हैं, जब वह ब्रह्मरन्ध्र की उर्ध्वगति को जानता हैं। जब यह आत्मा ब्रह्मरन्ध्र की उर्ध्वगति को जानता है। जब यह आत्मा ब्रह्मरन्ध में चला जाता है तो सहस्त्रों सूर्यो का प्रकाश भी न होने के तुल्य माना जाता है। जहाँ सूर्य के बड़े बड़े ऊँचे लोकों से इन नाड़ियों का सम्बन्ध हो जाता है वहाँ सूर्य के प्रकाश की महत्ता समाप्त हो जाती है।

त्रिकालदर्शी योगी

मेरे प्यारेआज मेरी इच्छा तो नहीं थी !आदि ऋषि मण्डल !, कि यह सूक्ष्म रहस्य प्रकट किया जाएं परन्तु वेद का पाठ और परिस्थिति मुझे बाध्य करती चली जा रही है कि योग के विषय में कुछ न कुछ प्रकाश दीजिए। मैंने अपने पूज्य गुरुदेव से बहुत पूर्व काल में प्रश्न किया कि क्या योगी जन किसी भी काल में हो, उस काल की वार्त्ताओं को जान सकता है। उस समय उन्होंने कहा है कि वास्तव में यौगिक आत्मा इतना निर्मल होती है, उसकी इंगला पिंगला और सुषुम्णा नाड़ियां इतनी सूक्ष्म होती हैं, इतनी महान् पवित्र होती हैं कि आत्मा के सहित जब उनमें प्राणों का सञ्चार होता है और इंगला पिंगला नाम की नाड़ियों से इस वर्तमान समय में भौतिकवाद को लिया जाता है तो भौतिकवाद उसके अन्तःकरण में समाहित हो सकता है। जिस भाषा को लेता है, वह भाषा भी उसके समीप आ जाती है, परन्तु यह कार्य योगियों

का है, साधारण आत्माओं का नहीं। आज हमें यौगिकता में सन्देह नहीं होना चाहिए। सदैव योगी बनने की हमारी प्रबल इच्छा होनी चाहिए। योगी बनेंगे तो हमें यह प्रतीत होगा, कि वास्तव में जब हम परमात्मा के प्रति इन नाना प्रकार के बाहरी आडम्बरों को अपने में शान्त करते चले जाएंगे और आत्मा का ब्रह्मरन्ध्र से जो मिलान है यह देखो, वर्तमान, भविष्य और भूतकाल इत्यादि सबसे होता है। इसलिए ऋषि मुनियों ने कहा है कि ब्रह्मरन्ध्र में आत्मा के विराजमान होने के पश्चात् योगी तीनों कालों की वार्त्ताओं को जानने वाला बन जाता है।

मेरे प्यारे !महानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया, कि योगी त्रिकालदर्शी नहीं होता। यदि हो जाएं, तो परमात्मा का जो नियम है, वह भंग हो सकता है, क्योंकि भविष्य की वार्त्ता केवल परमात्मा ही जानता है। योगी नहीं जानता। आत्मा का ज्ञान परमात्मा से सूक्ष्म होता है, इसलिए भविष्य को नहीं जानता। मेरे यदि ऋषि मण्डलमैं यह ! कहा करता हूँ कि यदि आत्मा भूत, भविष्य और वर्तमान काल को नहीं जानता, तो वह योगी नहीं कहलाता। रहा यह प्रश्न कि योगी की आत्मा को परमात्मा से कुछ सूक्ष्म ज्ञान होता है, परन्तु देखो, सूक्ष्म ज्ञान केवल इतना ही होता है, कि परमात्मा केवल भौतिक सृष्टि को रचाता है परन्तु योगी एक अवृन्त सृष्टि को रचा सकता है। संसार में जो सृष्टि हमें प्रतीत हो रही है इसको योगी तो रचा नहीं सकता परन्तु भूत, भविष्य की वार्त्ता जानता है। क्यों जानता है? इसलिए जानता है, क्योंकि योगी परमात्मा के गर्भ में विश्राम करता है। जैसे माता के गर्भ में रहने वाला बालक, माता के गर्भ की स्थिति को जानता है कि माता अब क्या आहार कर रही और क्या नहीं। इस प्रकार जो मुख्य आत्माएं होती हैं, ब्रह्मरन्ध्र में जाने वाली पवित्र आत्माएं होती हैं, वह जानती हैं कि अब परमात्मा के गर्भ में क्या है और परमात्मा का जो संस्करण है वह कहाँ जा रहा है। उसके अनुकल उस आत्मा में वही वाक् आरम्भ होने लगते हैं क्योंकि वह आनन्द में है, यौगिकता में माना जाता है। परमात्मा के निकट जाने के पश्चात् उस मातेश्वरी के, उस महान् प्रभु के गर्भ में जाने के पश्चात् उसके आनन्द को उसके गर्भ को जानता है।

मुनिवरोंरहा यह वाक्य कि परमात्मा का विधान समाप्त हो जाता है। अरे !, परमात्मा का विधान कहाँ समाप्त होता है। परमात्मा तो सदैव रहता है, उसका विधान उसके सहित रहता है। वेद ज्ञान परमात्मा ने आत्मा के लिए निर्धारित किया है। वेद को बिना विचारे मानव कुछ भी उच्चारण नहीं कर सकता है, परन्तु वेद में तीनों काल की वार्त्ता विराजमान होती है। यदि वेदों में तीनों काल की वार्त्ता विराजमान नहीं, तो वेदों को प्रकाश नहीं कहना चाहिए। क्योंकि जहाँ प्रकाश होता है, वहाँ आगे का, पश्चात् का और वर्तमान का तीनों प्रकाश उसके समीप होते हैं। वेद को इसी लिए हमारे यहाँ प्रकाशवान माना जाता है। अब हम यौगिकता में पहुँचते हैं, तो हमें यही प्रतीत होता है। आगे रही यह वार्त्ता कि हम योगी को त्रिकालदर्शी स्वीकार नहीं करते। परन्तु कोई न करे, न करने से आज वह ऐसा नहीं हो सकता, कि त्रिकालदर्शी न रहेगा। वह तो स्वतः रहता चला जाएगा, मानव उसको स्वीकार करे या न करे। यह तो उसकी बुद्धि का विषय है। जहाँ तक उसकी बुद्धि का विकास हो गया है, वहीं तक की वार्त्ता प्रकट करता है। आगे उसकी बुद्धि में सीमितता आती चली जाती है। आगे की वार्त्ताओं पर विचार विनिमय नहीं करता।

गुरुदेव का जीवन

आओ, मेरे प्यारेमैं केवल एक आदेश प्रकट करने चला हूँ !ऋषि मण्डल !, कि जब योगी को ऐसा कहा जाता है, कि वह केवल वर्तमान की वार्त्ताओं को जानता है, परन्तु आज वह जिस काल की भाषा को लेना चाहता है, उस काल की भाषा भी, वह अपने में धारण कर सकता है। जैसा मुनिवरोंतुम्हें ज्ञान होगा !, जैसा बेटा ! आज हम देखो !महानन्द जी, वर्तमान में एक वाणी का प्रसारण कर रहे हैं, जहाँ वेद मन्त्रों का पाठ आता है, वह पूर्व कि भांति इतना स्पष्ट और इतनी महानता से उच्चारण नहीं होता, परन्तु उसके साथ साथ हम केवल देवनागरी का काव्य लेते हैं, वास्तव में यह काव्य भी शुद्ध रूप से नहीं माना जाता, क्योंकि हमारे कुछ कर्मो के वशीभूत जब ऐसी वार्त्ता आती हैं, तो ऐसा ही सम्बन्ध इसके समीप आना आरम्भ होने लगता है, परन्तु विचारना केवल यह है कि आज उन यौगिक वार्त्ताओं को विचार करें, जिससे

हमारे जीवन का माध्यम यौगिकता से रहता है। मानव का जीवन यज्ञ तक सीमित नहीं है, राष्ट्र तक उसकी कोई सीमितता नहीं है। वेद के अक्षरों को जानने से उसके जीवन की कोई सीमितता नहीं है। उसकी सीमितता तो परमात्मा के गर्भ तक है। परमात्मा के गर्भ में जाने के पश्चात् उसकी सीमा का राज्य समाप्त हो जाता है। हमारे जीवन की जो एक सीमितता है, वह भौतिकवाद में है। प्रकृति के आँगन में है। जहाँ प्रकृति से ऊँचे पहुँचे मानव का जीवन असीमित बन जाता है। आत्मा का ज्ञान, मानव को परमात्मा के आँगन के द्वार तक पहुँचाने वाला बन जाता है। इसलिए हमें योगी बनना चाहिए। जीवन का तारतम्य यौगिकता से होना चाहिए जिससे हम इस संसार सागर से पार हो सकें।

इससे पूर्व के वाक्यों में मैं महर्षि अगस्त मुनि महाराज की चर्चा प्रकट कर रहा था। इस संसार में जितने महापुरुष हुए हैं, मैं उन सभी की चर्चा प्रकट किया करता हूँ। महर्षि लोमश, अंगिरा, वायु आदित्य आदि ऋषियों की चर्चा किया करता हूँ क्योंकि इनका जीवन संसार में अग्रणी माना जाता है। मैं परमपिता परमात्मा से निवेदन किया करता हूँ कि हे परमात्मन्हमारे जीवन को अग्रे बनाइ !ए, जिससे हमारा जीवन ऊर्ध्वगति वाला हो, नीचली गति वाला न हो। ध्रुव आदि लोकों को जानने वाला हो। नाना लोकान्तरों को जानने वाले बनें।

परमात्मा की सृष्टि में नाना प्रकार के मण्डल कहे जाते हैं। वास्तव में सर्वस्व ब्रह्माण्ड में तीन प्रकार के सौर मण्डलों की गणना आती है। एक ध्रुव मण्डल है, एक वृहस्पति और एक हमारा सूर्य है। सूर्य मण्डल के अन्तर्गत लाखों की संख्या में लोकान्तर विचरण करते हैं और ध्रूव मण्डल के अन्तर्गत करोड़ों लोकों का समूह उससे सम्बन्धित रहता है। परमात्मा की सृष्टि की रचना बड़ी विचित्र है जिसको जानने के लिए मानव को बहुत ही कुछ परिश्रम करने की आवश्यकता है। यौगिकता की आवश्यकता है। परमपिता परमात्मा की याचना की आवश्यकता है। क्योंकि परमात्मा के द्वार पर नम्र बन करके उसके चरणों में वन्दना करते हैं। वह परमपिता परमात्मा संसार का रक्षक है, वेदों का रचयिता है, मानव के जीवन को रचाने वाला है। वह

मानव को एक महान् पवित्र देन दिया करते है और उसी देन के आधार पर मानव के जीवन की ऊर्ध्वगति बनती चली जाती है और अग्रे तुल्य बन करके, नाना लोक लोकान्तरों को जानने वाले योगी बन जाते हैं। इसलिए हमारे यहाँ आध्यात्मिकवाद को सर्वोपरि माना हैं एक भौतिक विज्ञानवेत्ता की केवल सूर्य मण्डल तक सीमा होती है और आध्यात्मिक वाद की सीमा मुनिवरों परमात्मा तक होती है। !

जहाँ इन लोकों में विज्ञान आता है, लोकों में प्राणियों की उत्पत्ति क्यों होती है? किस कारण से होती है? यह सभी कुछ प्रश्न योगी के द्वारा रहते हैं और योगी इनको जानता हुआ, ऊर्ध्वगति के द्वारा परमात्मा के गर्भ में जाने के पश्चात् सब कुछ जान जाता है। यह संसार जो भी दृष्टिपात हो रहा है परमात्मा का गर्भस्थल है। इसको विज्ञानशाला कहो, गर्भस्थल कहो, एक ही वाक्य है। इस विज्ञानशाला में जो नाना प्रकार के मण्डल हैं इनको विज्ञान के सहित जानना है, क्योंकि इसी विज्ञान भवन में हम सब ही प्राणीमात्र आए हैं इसमें विश्राम करके चले जा रहे हैं। इस भवन की स्थिति को जानना है? यह किस प्रकार का है? इस भवन में प्रभु किस प्रकार विराजमान है? इसमें कैसे कैसे परमाणु है? कैसे कैसे लोक हैंइन सभी पर विचार ! विनिमय करना, योगी का और भौतिकवादी दोनों का कर्त्तव्य रहता है।

मुनिवरोंआगे चल करके इस विज्ञान भवन को यज्ञशाला भी कहते हैं क्योंकि जो भी ! प्राणी आता है, यज्ञशाला में विराजमान होकर नाना भौतिक पृथ्वी के पार्थिव तत्त्वों को लेकर यज्ञशाला में आहुति देता है। विचारों में परमात्मा की वाणी का प्रसारण करता हुआ वेदमन्त्र के द्वारा प्रत्येक आहुति देता है यह और भी सुन्दर है, परन्तु परमात्मा की यज्ञशाला को जानना, प्रत्येक मानव का, देवकन्या का, महापुरुष का कर्त्तव्य होता है। हमें आज उस महान् विज्ञान को जानना है।

कल्प वृक्ष

देखो,विवेकी पुरुषों ने तो यहाँ तक कह दिया है कि यह सब कुछ विज्ञानशालाएं ! नाना प्रकार के मण्डल वायु प्रधानता वाले, अग्नि प्रधानता वाले, पार्थिव तत्त्व प्रधान है जब आगे विचार विनिमय होने लगा तो ऋषियों ने कहा कि भाई! यह क्या है? यह

कुछ नहीं। केवल एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। यहाँ जो मानव परमात्मा का आस्तिक बन करके ऊर्ध्वगति बना करके संकल्प करता है अपने मन में उदारता से विचारता है कि यह परमपिता परमात्मा का वह स्थान है जहाँ मानव को वहीं वस्तु प्राप्त हो जाती है जिसकी वह कल्पना करता है। इसलिए यह एक कल्पना वृक्ष है। योगी की कल्पना करोगे, तो योगी बनते चले जाओगे, ऋषि की कल्पना करोगे, ऋषि बनते चले जाओगे। गृहस्थी की कल्पना करोगे, तो गृहस्थी बन जाओगे। विष्णु की कल्पना करोगे, तो विष्णु बन जाओगे। मुक्ति की कल्पना करोगे, तो तुम्हें मोक्ष पाप्त हो जावेगा। दुराचारी बनना चाहते हो, तो दुराचारी भी बन जाओगे। यहाँ जो भी कल्पना, आस्था सहित करोगे, वहीं तुम्हारी पूर्ण होगी। यह सब संसार, जो प्रभु ने रचा है ऋषि मुनियों ने इसका विचार करके कहा, कि यह एक प्रकार का कल्पवृक्ष है।

कल्पवृक्ष का कथानक

मुनिवरोंइस सम !्बन्ध में मैं एक वार्त्ता प्रकट किया करता हूँ, जो पूर्व भी प्रकट कर चुका हूँ, आज भी स्मरण आती चली जा रही है। एक समय देव ऋषि नारद मुनि इस मृत मण्डल में विचर रहे थे। उन्होंने देखा, कि मनुष्य बड़ा दुःखित है क्योंकि उसकी पत्नी नित्यप्रति दण्ड दिया करती थी। उन दिन भी उसकी पत्नी ने उसे दण्ड दिया था और वह प्रभु से याचना कर रहा था, कि हे प्रभुमुझे यहाँ से ले जाइ !ए, मैं अब अपना जीवन नहीं चाहता। अगले जन्म में मुझे कुछ भी प्राप्त हो जाएं। जब अपनी हृदय की वेदना प्रकट कर रहा था, उस समय नारद मुनि जी वहाँ पहुँचे और उसमें कहा कि आओ, मैं स्वर्ग में ले चलूं। वह मनुष्य बड़ा प्रसन्न हुआ और नारद मुनि के साथ चल दिया। चलते चलते, स्वर्ग के द्वार पर पहुंचे। वहाँ एक कल्प वृक्ष था। नारद ने उस मनुष्य से कहा कि तुम इस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो जाओ और मैं भगवान विष्णु से आज्ञा ने आऊं, कि तुम स्वर्ग में जाने योग्य हो या नहीं। वह मनुष्य उस वृक्ष के नीचे विराजमान हो गया और नारद जी विष्णु के द्वारा जा पहुँचे।

कल्पवृक्ष के नीचे मन्द सुगन्ध शीतल वायु चल रही थी, उस मनुष्य के मन में

कल्पना जागृत हुई कि यहाँ तेरे लिए एक सुन्दर सा आसन होना चाहिए था। कल्पवृक्ष था, कल्पना की, कि एक सुन्दर आसन लग गया। आसन पर विराजमान होकर मन में और चंचलता जागृत हुई और कल्पना करने लगा कि अरे, यहाँ तो तेरे लिए विश्राम करने वाला भी एक आसन होना चाहिए था। अब विश्राम करने वाला आसन भी लग गया। अब ऐश्वर्य में अधिक आया, तो कल्पना जागृत हुई कि यहाँ तो नाना प्रकार की अप्सराएं, सेवा करने के लिए होनी चाहिए थी। बेटाकल्पना करते ! ही वहाँ नाना प्रकार की अप्सराएं भी आ पहुँची। आनन्द पूर्वक सेवा होने लगी, तो मनुष्य के मन में विचार आया कि अरे, अब यहाँ तेरी मृत लोक वाली पत्नी होती तो तेरे ऊपर डंडा भी होता। अब तो बेटावह मृत लोक वाली पत्नी भी आ पहुँची। आगे ! आगे, मनुष्य है पत्नी उसके पश्चात् डंडे सहित है। इतने में देव ऋषि नारद मुनि स्वर्ग से वहाँ आ पहुँचे। और जब उन्होंने वह दृष्टिगत किया, तो दीर्घ वाणी से कहा कि अरे, धूर्तकहाँ चले जा रहे ! हो? अरे, कल्पना को त्याग, उस मनुष्य ने कल्पना को त्यागा, तो न तो पत्नी है और न अप्सराएं हैं, न आसन है। नारद मुनि ने कहा कि अरे, महा मूर्खकल्प वृक्ष के नीचे भी आकर तूने भोग विलासों की कल्पना की। ! अरे, यदि यहाँ तू स्वर्ग की कल्पना करता, तो तुझे स्वर्ग प्राप्त हो जाता। आज तुमने यह क्या कल्पना की? केवल भोग विलास वाली कल्पना पत्नी की कल्पना की।

मुनिवरोंऋषि मुनियों ने इसलिए कहा है !, कि यह भी कुछ प्रभु ने रचा है, यह एक प्रकार का कल्प वृक्ष है। हम सब प्राणी उस परमात्मा के कल्प वृक्ष के नीचे विराजमान हैं। स्वर्ग की कामना है, तो स्वर्ग की कल्पना करते रहो। देवता बनने की इच्छा है, तो देवता बनने की कल्पना करते रहो, तुम अवश्य बनते चले जाओगे। इस संसार रूपी कल्पवृक्ष के नीचे आकर, हमें भोग विलासों की कल्पना नहीं करनी है, देवता बनने की कल्पना करनी है, मोक्ष की कल्पना करनी है। प्रभु के समीप जाने की कल्पना करनी है। तो यह है बेटा आज का हमारा आदेश। !

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवान !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंआज के हमारे आदेशों का अभिप्राय क्या था !? प्रथम के

वाक्यों में यौगिक प्रक्रियाओं का वर्णन किया कि योगी संसार में क्या क्या करता है। योगी की ऊर्ध्वगति किस प्रकार होती है। परमात्मा का रचा हुआ, जो यह संसार है, यह एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। इसमें मानव को शुद्ध और पवित्र कल्पना करनी चाहिए, जिससे वह संसार ऊँचा बनता चला जाएं। अब समय मिलेगा, तो शेष वार्तायें कल उच्चारण कर सकूंगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन्आज का आदेश तो हमें बहुत प्रिय !गुरुदेव ! लगा, परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म।

पूज्यपाद गुरुदेवः यह तो बेटातुम्हें नित्य प्रति इन वाक्यों के उच्चारण करने का ! अभ्यास हो चुका है। कल समय मिलेगा, तो कल ओर अधिक समय लिया जा सकेगा। कल महानन्द जी के कुछ प्रश्नों के उत्तर भी दिए जा सकेंगे। आज का यह आदेश समाप्त होगा। कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। रात्रि के 8 बजे यज्ञ भवन, जवाहर नगर, दिल्ली में दिया हुआ प्रवचन

१५ 12 07 1966 पुष्प 07 राष्ट्र निर्माण का मूल कारण त्याग और तपस्या

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे, जिससे हमें यह प्रतीत हो रहा था, कि परमपिता परमात्मा कितना ऋत है। जिस ऋत के ऊपर हमारे ऋषि मुनियों की पोथी पर पोथी है। उन पोथियों पर जब मानव विचार करता है तो उसे प्रतीत होता है, कि वास्तव में परमात्मा के ऋत को जानना ही हमारा ऋत्विज् बन जाता है। ऋत क्या पदार्थ है?

ऋत

ऋत परमात्मा की इस प्रकृति की देन है। संसार में दो प्रकार के वाक्य उच्चारण किए जाते हैं, एक ऋत होता है, द्वितीय ब्रह्म होता है। जब हम राष्ट्र का निर्माण, धर्म को लेकर के करते हैं, तो उस समय राष्ट्र के साथ साथ ऋत होता है और जब उसमें विज्ञान को सम्मिलित कर लेते हैं, तो वह राष्ट्र, ब्रह्म और ऋत दोनों बन जाता है। इस प्रकृति की प्रक्रिया, हमारे शरीर की प्रक्रिया, यह सब ऋत कहलाती है। इसलिए हमारे यदि ऋषि मुनियों ने कहा है कि हे ब्रह्मचारी तुम ऋत को जानो। !हे मानव !

आज के वेद पाठ में राजा को कहा है, हे राजन्तू ऋत्विज् बन। जैसे यज्ञशाला में ! ऋत्विज बन करके अपनी सुन्दर आहुति देता है, इसी प्रकार तू भी अपनी मानवता की सुन्दर आहुति दे, जिससे तेरा यह ऋत ऊँचा बनें। आज तू ऋत्विज् कहलाने का अधिकारी हो। मैंने पूर्व कई काल में कहा भी है, कि ऋत को जान लेना ही मानव की सर्वसम्पति को जान लेना है, प्रकृति के कण कण को जान लेना है। आज हम प्रकृति को जानें। जब हम प्रकृति पर शासन वादी बन जाते हैं तो इस प्रकृति में जितना ऋत है, जितना इसमें ग्रहण किया है और विभाजन करने वाली शक्ति है वह उस महान आत्मा के समीप आ जाती है। इसी प्रकार राजा को विचार विनिमय करना है, कि तेरे राष्ट्र में जो प्रक्रिया है, वह सुन्दर है या नहीं। जिस वस्तु का विभाजन होता है, उसका भी सुन्दर रूप से सञ्चार हो रहा है, या नहीं। वह ज्ञान पूर्वक है, या नहीं। यह सब कुछ राजा का कर्त्तव्य होता है। आज राजा वैसे ही नहीं बनता।

चक्रवर्ती राजा

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय वर्णन कराया !, कि चक्रवर्ती राजा कौन होता है? मैंने कल के आदेश में भी प्रकट किया, आज भी करता जाऊं, कि चक्रवर्ती राजा वहीं बनता है, जो ऋत्विज् होता है। जो अपने राष्ट्र में दो वस्तुओं पर विचार विनिमय करता है एक विभाजन होना, द्वितीय क्रिया होना, जैसे द्रव्य का विभाजन होता है। वह अच्छी प्रकार हुआ, अन्यथा नहीं। जहाँ के लिए तूने इस द्रव्य का विभाजन किया। उस स्थान पर पहुँचा, अन्यथा नहीं। यह सब राज्य के यहाँ एक नियमावली में होता है। उस नियमावली के अनुकूल अपने राष्ट्र को सुन्दर बनाता है। जैसा भगवान मनु ने विधान के विषय में कहा है कि हमारे यहाँ सबसे पूर्व राजा के राष्ट्र में विधान होता है कि अपराधियों को दण्ड दो। अब अपराधियों को दण्ड दण्डे से दो अथवा ज्ञान से दो। सत्संग से दो। परन्तु किसी भी प्रकार से दो, उसे सुन्दर बनाओ। यह राजा ने राष्ट्र में सब प्रक्रिया कहलाती हैं।

माता कौशल्या का संकल्प

मेरे प्यारेराजा स्वयं एक सूक्ष्म से आसन पर ह !ऋषि मण्डल !ी अपना जीवन निर्वाह करता हो और उसके द्वारा यह भाव आता हो, कि यह द्रव्य मेरा नहीं, यह द्रव्य को समाज का है, प्रजा का है तो वह राष्ट्र कैसे ऊँचा नहीं बनेगा? मैंने पूर्व काल में वर्णन कराया कि भगवान राम जब माता कौशल्या के गर्भ में थे तो उस समय माता कौशल्या राष्ट्र का कोई अन्न और जलपान नही करती थी, न राष्ट्र का वस्त्र ही धारण करती थी एक समय गुणक ऋषि महाराज ने प्रश्न किया कि हे देवी ! तुम राष्ट्र के वस्त्रों को, राष्ट्र के अन्न को क्यों पान नही कर रही हो। उस समय माता ने कहा था कि हे ऋषिवर !'प्रभा गणाम् ब्रह्मणे पुत्राणी व स्वयं च शुद्धम् पवित्राणी गृहगामी गर्भाशय यच्छताः' हे ऋषिमैं अपने गर्भ से ऊँचा बालक चाहती हूँ !, श्रेष्ठ पुत्र चाहती हूँ। मेरे हृदय की वेदना है, कि मेरे गर्भ स्थल से उत्पन्न होने वाले बालक के शरीर में, उसके रज और अग्रहणों में किसी भी प्रकार के अन्न का ऐसा अंकुर न चला जाएं, जिससे मेरा बालक राजसी बन जाएं और राजसी बन करके, राज्य के ऐश्वर्य में आ करके, प्रजा का कल्याण न हो सके। राजा दशरथ भी कहा करते थे, कि हे देवी !? तुम राज स्थान में रहती हो, सुन्दर यह राष्ट्र गृह है, परन्तु तुम इसका अन्न क्यों पान नहीं करती हो। उस समय कहा करती कि राजन्मेरा अधिकार नहीं ! है। जब तक प्रभु ने हमारे यह दो भुज बनाएं हैं, सुन्दर स्वच्छता से शरीर बनाया है। यदि इससे हम सुन्दरता को पान नहीं करते, अपने हृदय को पवित्र नहीं बनाते, शुद्ध अन्न से और शुद्ध पवित्र विचारों से ऊँचे बालक को जन्म न दे सके तो धिक्कार है, हमारे जीवन को। माता कौशल्या कला कौशल करती और उससे जो अन्न आता, उससे अपना जीवन निर्वाह करती। यह उन माताओं की वेदना होती है, जो समाज का कल्याण चाहने वाली होती हैं, जिनके हृदय में राष्ट्रवाद की पवित्र भावनाएं होती हैं। उसके द्वारा त्याग और तपस्या का मूल विचार आता है।

त्याग और तपस्या

त्याग और तपस्या किसे कहते हैं? विचारों की दृढ़ता को त्याग और तपस्या कहते हैं। नाना प्रकार के प्रलोभन आते हैं, नाना प्रकार के संकट आते हैं। उनको सहन करना,

उनके ऊपर विचार विनिमय करना, सब कुछ त्याग और तपस्या में आ जाता है। राजा के राष्ट्र में त्याग और तपस्या का होना बहुत अनिवार्य है। जहाँ द्रव्य को नीचे त्याग दिया जाता है, चरित्र को आगे ले लिया जाता है, वह राष्ट्र, वह समाज और वह मानव संसार में महान पवित्र कहलाता है।

आओ मेरे ऋषि मण्डलमैं तुम्ह !ें वहाँ ले चलूं, जहाँ चक्रवर्ती राजा बनते हैं। हमारे यहाँ नियम होना चाहिए, कि अपराधियों को दण्ड हो, शिक्षालयों में उपनिषदों, दर्शनों की शिक्षा हो। क्योंकि उपनिषदों में व्यापक विद्याएं हैं। जिस पवित्र विद्या को पान करते हुए बालक के हृदय में, माताओं के हृदय में, एक पवित्र वाद छा जाता है, उस पवित्रवाद से शिक्षालयों में और समाज में उच्चता होती है। आज हम उन विद्याओं पर विचार करके अपने ब्रह्मचारियों को उस पवित्र शिक्षा को प्राप्त कराएं, जिससे हमारा राष्ट्र, हमारा समाज हर प्रकार से ऊँचा बनता चला जाएं। शिक्षालयों में यदि उपनिषदों और दर्शनों की विद्या नहीं आवेगी, तो यह राष्ट्र सात जन्म में भी ऊँचा नहीं बन सकेगा। जहाँ चरित्रवाद और व्यापकता के उदार वाक्य ब्रह्मचारी में ओत प्रोत किए जाते हैं, उपनिषदों के अनुकूल गुरुओं का आदर करने वाले हों, वह राष्ट्र क्यों न ऊँचा बनेगा? आज तुम्हारी उपनिषदों की शिक्षा और वेद के साहित्य को कौन स्वीकार नहीं करेगा? अवश्य करेगा। परन्तु तुम अपने राष्ट्र में उस पवित्र संस्कृति को लाओ, जो तुम्हारा आदर्श है और जिस आदर्श को लेकर तुम आगे चल सकते हो।

एक संस्कृति

मुनिवरोंदेखो !, गौरव की दृष्टि से क्यों नहीं शिक्षा पद्धति को लाया जाता? जहाँ महर्षि पाणिनि जी का गौरव है, वहाँ महाराजा शिव का भी गौरव है। जहाँ महाराज शिव का गौरव है, वहाँ भगवान कृष्ण का भी गौरव है, वहाँ भगवान् राम का भी गौरव है। इस गौरव की पद्धति को इसलिए नहीं लाया जाता, क्योंकि मानव के विचार एक ऐसी क्षीणता पर आ चुके हैं, कि वह व्यापक दृष्टि से अपने विचारों को दृष्टिपात ही नहीं करता। जब यह परम्परा की शिक्षा पद्धति स्मरण आती है, जहाँ भगवान् राम और वशिष्ठ मुनि का सम्वाद आता है। जहाँ अर्जुन और कृष्ण का सम्वाद

आता है। अन्य भिन्न भिन्न आचार्यों के विचार आते हैं, तो उन पर दृष्टिपात करके, उनके मर्म को जानें तो प्रतीत होगा, कि वास्तव में हमारे राष्ट्र में वह पवित्र शिक्षा होनी चाहिए, जिससे आज माता पिताओं का और गुरुजनों का आदर करने वाले ब्रह्मचारी हों। मुनिवरों ऊँची संस्कृति से संसार का कल्याण हो सकेगा। !
मेरे प्यारेमुझे महानन्द जी ने वर्णन कराया कि आज के राष्ट्र में !आदि ऋषि मण्डल ! भिन्न भिन्न प्रकार की वेश भूषाएं हैं। परन्तु मैं कहा करता हूँ कि वास्तव में यह वाक्य तुम्हारा सुन्दर है, परन्तु वैदिक ब्राह्मणों को निर्धारित करते हुए प्रत्येक भाषा का गठन होना चाहिए। यह भाषा का निकास कहाँ से हुआ है? यह भाषा कहाँ से आ पहुँची? तो उस समय तुम्हें प्रतीत होगा, कि यह ऋषि भाषा है, अपभ्रंश हो जाती है। उसमें किसी प्रकार की अशुद्धियां आ जाती है, शिक्षा पद्धति न होने के कारण। बुद्धिमानों को चाहिए, कि भाषा में से उन अशुद्धियों को दूर करके, शुद्धियों को ला करके, एक संस्कृति का गठन होना चाहिए। जिस संस्कृति का गठन होते हुए, आज राष्ट्र को ऊँचा बनाया जा सकेगा। राजा के राष्ट्र में यह सबसे पूर्व नियम होना चाहिए।
इसके पश्चात् राजा विचार विनिमय करें, कि मेरे राष्ट्र में ब्रह्मचारी की शिक्षा किस प्रकार की है? जहाँ ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी एक स्थान में शिक्षा पायेंगे, वहाँ भ्रष्टाचार की मात्रा अवश्य आती चली जाएगी। और राष्ट्र में आस्था किसी भी काल में न आ सकेगी। जहाँ भगवान् मनु अपने आदेशों में उच्चारण कर रहे है, युवा कन्या और पिता को भी एक स्थान में एकान्त में वार्त्ता प्रगट नहीं करनी चाहिए। वहाँ शिक्षालयों में भी इसी प्रकार होना चाहिए। ब्रह्मचारिणियों को शिक्षा देने वाली पवित्र ब्रह्मचारिणी हों और ब्रह्मचारियों को शिक्षा देने वाले आचार्यजन हों।
मुनिवरोंदेखो !, गृहस्थ आश्रम को छोड़कर वानप्रस्थ लिया जाता है। वानप्रस्थ हमारे ऋषि मुनियों ने इसलिए नियुक्त किया है, कि जो माताएं वानप्रस्थी होती हैं, वे ही कन्याओं को ब्रह्मचारिणी बनाएं। अपने जीवन के अनुभव उस ब्रह्मचारिणी को प्रकट कराए और जो पुरुष वानप्रस्थी होते, वह ब्रह्मचारियों को अपनी शिक्षा की पद्धति से निर्धारित करते थे। महाराजा राम के समय में महाराजा दिलीप के समय में यह था।

शिक्षालय तो नहीं थे, परन्तु आश्रम थे। उन्हीं आश्रमों मैं ब्रह्मचारी समाज, ब्रह्मचारिणी समाज और शिक्षापद सब ऊँचा बनता था।
बेटामैं कोई अधिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया !, मैं तो जो वेद के विचार हैं, उन्हें तुम्हें प्रकट करने आया हूँ। ऊँचे आश्रम तो सूक्ष्म भी होते हैं, प्रबल भी होते हैं। परन्तु देखो, उन शिक्षालयों में ऊँचे वानप्रस्थियों द्वारा शिक्षा होनी चाहिए, जिससे ब्रह्मचारणियों को बनाया जाएं। आगे जो हमारा आने वाला समाज है, ऊँचा बनता चला जाएं। वेद, साहित्य, उपनिषद, आरण्यक, शतपथ और ब्राह्मण ग्रन्थों की शिक्षा होनी चाहिए, जिससे समाज में उच्चता आती चली जाए।
मेरे प्यारेमहानन्द जी ने कहा है कि आधुनिक काल में तो नाना प्रकार के सम्प्रदाय ! हैं और सम्प्रदायों को साथ साथ लेकर राष्ट्र को लिया जाता है। राजा को चाहिए, कि राष्ट्र में जितने सम्प्रदाय हैं उनके बुद्धिमानों का समाज एकत्रित करे और उस समाज के जो मौलिक विचार होते हैं, वैदिक विचार होते हैं, उन्हें प्रकट करो और कहो, कि यह हमारे लिए हितकर विद्या है, यह अनहितकर है। हितकर विद्या को हमारे यहाँ होना चाहिए। सम्प्रदायों में तुम्हारा विश्वास है, मेरा नहीं। मेरा तो एक प्रकाश पर विश्वास है, और यदि वह कोई प्रकाश है, तो वह वेद है, वेद नाम ही प्रकाश का है।
हे सम्प्रदायवादी प्राणीयोतुम अपने राष्ट्र में !, अपने समाज में आज केवल सूक्ष्मता से यह न विचारो कि हम सम्प्रदाय के क्षेत्र में जाएं। उस क्षेत्र में जाने से कोई लाभ न होगा। लाभ है, तो प्रकाश में जाने से। राष्ट्र में धर्म और नीति जब दोनों साथ साथ चलती हैं, तो राष्ट्र ऊँचा होता है।
मुनिवरोंजैसा मुझे वर्णन कराया !, ऐसे संकट में तो साहसी शासक की आवश्यकता है, जिसके द्वारा साहस हो, दृढ़ता हो, दण्ड देने की मात्रा हो और नम्रता, जैसे मैंने कल के आदेश में प्रकट किया। राजा के राष्ट्र में जब यह नियमावली होती है, तो वह समाज, वह राष्ट्र क्यों न ऊँचा बनेगा। ज्ञान और प्रयत्न से राष्ट्र का निर्माण होता है। ज्ञान से तो राष्ट्र के नियम बनाएं जाते हैं और क्रिया से उसका विभाजन किया जाता है। उन्हीं विभाजनों से राष्ट्र का निर्माण, राष्ट्र की सम्पत्ति निर्धारित होती हुई राष्ट्र आगे

ही चला जाता है।

आज मैं कोई अधिक वार्त्ता प्रकट करने नहीं आया। हमारे आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हे मानवहम अपने उदार विचारों को अपने हृदय की वेदनाओं को परमात्मा ! तक पहुँचा सकें। हमारे द्वारा ऐसी दृढ़ता और संकल्प होना चाहिए जिससे हम परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो सकें। हे देवतू वास्तव में संसार का कल्याण करने ! वाला है, तू, संसार को प्रकाश में ले जाने वाला हैं, तू, राष्ट्र को प्रकाश में ले चल। प्रभुजब यह राष्ट्र आपका बनाया हुआ है !, तो इसे प्रकाश में रमण कराते चलो, जिससे इस राष्ट्र में, इस समाज में सब आपका धन्यवाद करते हुए, अपने जीवन के उच्च प्रदर्शन करने लगें, जीवन के जो महान् सुन्दर अंकुर हैं, वह पुनः से वृक्ष बनकर पनपने लगें। राष्ट्र सदाचारता में आता जाएगा। यहाँ दुराचारी प्राणियों की आवश्यकता नहीं, परमात्मा की सृष्टि में तो सदाचारी, सत्यवादी और विवेकी पुरुषों की आवश्यकता है।

एक कन्या हमारे समीप आती है, उसका विवेक से अध्ययन करो। ब्रह्मचारी समीप आता है, विवेक से अध्ययन करो। जब विवेक से अध्ययन करोगे, तो व्यापकता आती चली जाएगी। राष्ट्र में उच्चता आती चली जाएगी। जब हमारे द्वारा उपनिषदों की सुन्दर शिक्षा होगी, ब्रह्मचारिणी अपने विचारों में इतनी दृढ़ होगी, कि अपने राष्ट्र को त्याग करके दूसरे राष्ट्र में जाएं, तो अपने विचारों को ही दे, उनके अशुद्ध विचारों को वह न ले सके। परन्तु अपने विचारों से उन्हें प्रभावित कर सके, उस समय यह राष्ट्र सर्वोत्तम कहलाएगा। संसार का पुनः से कल्याण के लिए, हे देवतू यहाँ सदाचारी पुरुषों को !, माताओं को राष्ट्रवादियों को जन्म दे, जिससे हे विधातायह राष्ट्र ऊँचा बने और राम ! राज्य बनता चला जाएं।

हे ब्रह्मचारिणीतू गृह में पत्नी के द्वारा रहती हुई भी ब्रह्माचार !िणी बन। सुन्दर सन्तान को जन्म दे। तू एक उत्तम राम, वशिष्ठ, गौतम, पतंजलि, जैमिनि, कणाद जैसे बालक को जन्म दे। भिन्न भिन्न कीड़ों को जन्म न दे। जिससे हे माताराष्ट्र में पुनः ! से सुन्दर गुरु उत्पन्न हो जाएं। यह है, बेटाशेष वाक्य मैं !आज का हमारा आदेश !

कल प्रकट करूंगा। अब वेद पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जी धन्य हो भगवन

रात्री के पार्क सरोजनी नगर में दिया हुआ प्रवचन .जी.बजे डी 8

१६ 19 07 1966 पुष्प 07 यज्ञ का स्वरूप

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे ! थे। ये भी तुम्हें प्रतीतहो गया होगा, आज जिन वेद मन्त्रों का पुनः से गान गाते चले जा रहे थे, जिनमें परमपिता परमात्मा की अमूल्य निधि का वर्णन करते चले जा रहे थे। जितना यह ब्रह्माण्ड परमात्मा ने रचाया है, यह एक प्रकार का यज्ञ क्षेत्र है। जिस सुन्दर यज्ञ वेदी पर विराजमान होते हुए, प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या अपने कर्म को विलक्षण बनाता चला जा रहा है।

प्रार्थना

आओ !आज तू उस यज्ञ कर्म को महान बना। हे विधाता !हे देव !मेरे पवित्र भगवन् ! जिस सुन्दर यज्ञ में आपकी महान अनुपम कृपा के द्वारा ही हमारा जीवन पनपता है, जिस दया के द्वारा हमारे जीवन का संचालन होता है। आज हम अपने जीवन का सञ्चार चाहते हैं। हे पवित्र बनाने वाले देवहमारे नमस्कार को स्वीकार करो। जिससे ! उज्ज्वल यज्ञ कर्मों में हमारे जीवन की जो संलग्नता है !विधाता, वह ऊँची और विलक्षण बनती चली जाएं, हे परमात्मनतू हम !हे सखा !हे देव !ारे जीवन का सञ्चार करने वाला है। हे प्रभुजब यज्ञ में अपने जीवन को ले जाते हैं !, यज्ञमय जीवन बना लेते हैं, तो हमारे जीवन की जो पवित्र प्रवृत्तियां हैं उनकी वास्तव में सुगन्धि के साथ साथ ऊँची तरंगें अन्तरिक्ष में रमण करती है। जैसे वाक् से उच्चारण होते ही उसका विस्तार रूप बन जाता है, इसी प्रकार यज्ञशाला में एक ब्रह्मा, उद्गाता मनोहर वेद मन्त्रों का पठन पाठन करता है, वही सुगन्धि सहित शब्दार्थ देवताओं का पवित्र बना देते है। आओ, मेरे भद्र आचार्य जनोआज हम सुन्दर यज्ञ !ऋषि मण्डल ! कर्म करने में संलग्न होते चले जाएं।

यज्ञ

मुनिवरों जब हम !यज्ञ के उद्देश्यों को उसकी परम्परा को विचारते हैं, तो हमें प्रतीत होता है कि यज्ञ कितने महान् कष्टों से प्रारम्भ होता है। वेद ने कहा है, कि एक मानव परमात्मा का चिन्तन करता है, वह भी सुन्दर यज्ञ कर रहा है। एक मानव परोपकार में संलग्न है, वह भी सुन्दर यज्ञ कर रहा है। हमारे यहाँ कोई अतिथि आता है, उसका यथाशक्ति आदर करना, भोजन आदि कराना यह भी यज्ञ कहलाता है। जहाँ हम राष्ट्र के हित के लिए कार्य करते हैं, प्रजा को सुखी बनाने का प्रयत्न करते हैं, वह भी एक प्रकार का यज्ञ कहलाता है। जहाँ जहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के यज्ञों की प्रक्रियाएं चलती हैं, वहीं सुन्दरता छा जाती है। जितने हम सुन्दर कार्य करते हैं, वह यज्ञ कहलाते हैं। एक सुन्दर यज्ञ वह भी होता है, जिसमें ब्रह्मा, अध्वर्यु, उद्गाता, होता और यज्ञमान का चुनाव होता है और चुनाव करके सुन्दर यज्ञ कर्म करते हैं, तो उसकी प्रक्रियाएं सुन्दर होती हैं। वह मानव की आयु और सुखी बनाने वाला होता है। वहाँ सुख और शान्ति के नवीन अंकुर उत्पन्न होते हैं। वहाँ बेटादेवताओं का पूजन ! भी आता है। पति पत्नी एक स्थान में विराजमान होते हैं, और यज्ञमान बनते है, तपस्या के साथ अपने जीवन को व्यतीत करते हैं। जैसे अग्नि में परमाणु तपते है और तप कर सूक्ष्म बन जाते हैं और सूक्ष्म बन करके महान शक्तिशाली बन जाते हैं। इसी प्रकार हे यज्ञमानतू अपने जीवन को तपस्वी बना। जितनी तेरी मानवीयता सूक्ष्म ! होती चली जाएगी, उतना ही तू शक्तिशाली बनता हुआ, ब्राह्मणों का पूजन करता हुआ, आचार्यों का आदर करता हुआ, तू विशाल बन सकता है।

परन्तु मैं तो प्रत्येक शुभ कार्य को यज्ञ कहा करता हूँ। एक मेरी पवित्र माता नियमानुकूल अपने गर्भ से लेकर के जीवन अग्रणों तक अपने प्यारे पुत्र का चुनाव करती है, अपने प्यारे पुत्र की रचना करती है, वह भी सुन्दर यज्ञ कर्म कहलाता है। इसी प्रकार एक राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा, प्रजा को सुखी बनाने का प्रयत्न करता है, वह एक सुन्दर यज्ञ कर्म करता है। परन्तु वह कौन सा यज्ञ है, जहाँ इस लोक में और परलोक दोनों में सुख प्राप्त होता है? यह यज्ञ जिसमें ब्रह्मा का चुनाव होता है, यज्ञमान का चुनाव होकर के यज्ञमान की पत्नी कहती है, हे यज्ञपते! हे यज्ञ को रचाने

वाले यज्ञमान! मैं तेरे समीप हूँ। आज तू ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ, त्याग तपस्या के द्वारा, पृथ्वी में आसन लगाता हुआ, यज्ञ कर्म को पवित्र बना। तेरी प्रवृत्तियों से ही हे देवयह यज्ञ कर्म हमारा श्रेष्ठ बन सकता है। जब इस प्रकार की ! प्रार्थना और विनय की जाती है, तो उस समय यज्ञ कर्म कर्म सफल होते हैं। अन्यथा सफल नहीं हो पाते।

ऋत

मेरे भद्र आचार्यजनोयज्ञ वह होता है !, जिसमें किसी भी प्रकार की कामना उत्पन्न नहीं होती। जब किसी भी प्रकार की कामना उत्पन्न नहीं होती, तो वह निष्काम कर्म कहलाता है। यज्ञ में ऋत्विज कौन होता है? जो ऋत को जानते हैं। वह ऋत क्या है? ऋतम् ब्रह्म ऋतम् या ब्रह्मगी वाला घृते निराधन्नम् ब्रह्मणो वाचा देव ऋतव प्रभा गति नश्वताः। मुनिवरोंआचार्यों ने कहा है !, कि ऋत वह कहलाती है जो प्रकृति में सूक्ष्म तन्तु होते है, जैसे मेघ मण्डलों में विद्युत अपना प्रकाश देती है। उस विद्युत से भी सूक्ष्म परमाणु होते है। सूक्ष्मत्व का नाम ऋत कहलाता है और यज्ञशाला में वहीं ऋत्विज् बनने का अधिकारी होता है, जिसके विचार विस्तृत हों, जो अन्न से पवित्र हो, मानो शारीरिक और मानसिक विचारों में उसकी धारणा हो, ब्रह्मचर्य को पालन करता हुआ वह श्रेष्ठतम हो।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय मुझे वर्णन करते हुए कहा !, कि आधुनिक काल के जितने शुभ कर्म होते हैं, वह सफल नहीं होते। उनका कोई प्रभाव नहीं होता। मैंने कहा कि भाई! क्यों नहीं होता? महानन्द जी ने कहा कि प्रभु! यह मुझे प्रतीत नहीं। मैंने कहा कि भाई! मुझे तो एक ही वस्तु प्रतीत होती है और वह यह है, कि जो कार्य करते हैं, उसमें आस्था और दृढ़ता नहीं होती। यदि आस्था और दृढ़ता हो, तो उसका सुन्दर कर्मकाण्ड नहीं होता, यदि कर्मकाण्ड सुन्दर हो, तो वेदपाठ शुद्ध नहीं होता, यदि वेदपाठ भी सुन्दर हो तो यज्ञ कराने वाले ब्रह्मचारी ऋत को जानने वाले नहीं होते। इसलिए बेटायज्ञ कर्मो का प्रभाव अधिक नहीं होता। प्रकृति के कणों में ! वह वस्तु ओत प्रोत होती है, जो कणों से भी सूक्ष्म होती है। यज्ञ की सुगन्धि, प्रभा

और वेद मन्त्रों के साथ साथ जो स्वाहा है, वह ध्वनि यदि ऋत को जानने वाले, वाणी के ऊपर संयम करने वाले, पुरुष के द्वारा की जाती है, तो वह अग्नि में अव्रणों के तत्त्वों में इतनी सूक्ष्म बन जाती है कि वह प्रकृति के कण कण में व्याप्त होकर के, उसका कई गुना प्रभाव होता है। एक गुना नहीं, दो गुना नहीं सहस्रों गुना प्रभाव होता है। इसलिए मेरे पवित्र आचार्य जनोहमें विचार विनिमय करना है !, मन से, कर्म से, वचन से हम सुन्दरत्व में विचरण करें और उसी के अनुकूल हम यज्ञ कर्म करने के लिए संलग्न हों।

राजा दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ

मुनिवरोंमुझे स्मरण आता है !, जब राजा दशरथ के यहाँ पवित्र यज्ञ कर्म हुआ। उस समय तीनों पत्नियां और राजा दशरथ लगभग एक वर्ष तक अखण्ड ब्रह्मचारी रहे। ब्रह्मचर्य का व्रत लेते हुए, पृथ्वी में उनका आसन रहा। जब यज्ञ का समय हुआ, तो ब्रह्मा की आवश्यकता हुई, महर्षि वशिष्ठ से कहा कि प्रभु! यज्ञ का समय हो गया है, यज्ञ आरम्भ कराइएं। तो ऋषि बोले मैं तो यज्ञ कर्म कराने का अधिकारी नहीं हूँ, जिस विषय को मैं जानता नहीं, उस विषय को लेकर के मैं यज्ञ कर्म करूंगा, तो यह मेरे में सामर्थ्य नहीं। राजा ने कहा तो क्या होना चाहिए प्रभु !? उन्होंने कहा श्रृंगी ब्रह्मणे वात नः धर्मश्चतिः ब्रह्मचर्याः वासी नरोति बृहणामि अप्यातत् कदितम जति बन गृति अस्ते। ऋषि ने कहा हे राजन्उस यज्ञ को कराने का अधिकारी तो महर !ऋषि श्रृङ्गीकहलाते हैं उन्हें किन्ही भी गुणों से कजली वन से लाइए। जहाँ उनके पिता की उन्हें संयमी बनाने की धारणा रहती है। आप ऐसे महापुरुष को ओत प्रोत करा कर सुन्दर यज्ञ कराइए। उस समय मुनिवरोंराजा दशरथ उर्वशी आदियों के द्वारा भयंकर ! वनों से, उस ऋषि आत्मा को लाए। कहा जाता है, वह उस समय वर्ष के 101 कितना अति प्रभाव होता है। इसलिए ऋषि !अखण्ड ब्रह्मचारी थे। उन यज्ञों का बेटा मुनियों ने कहा है, कि यज्ञ कर्म करने में कितनी पवित्रता, कितनी सूक्ष्मता और कितनी मानवता होनी चाहिए।

मेरे भद्र पुरुषोमैं अभी ! अभी उच्चारण कर रहा था। कि हम सुन्दर यज्ञ कर्म करने में

तत्पर हों, जिससे हमारा जीवन सर्वश्रेष्ठ और विस्तारवादी हो। जितनी हमारे जीवन में सूक्ष्मता होगी, उतनी ही आयु दीर्घ होगी। भद्र पुरुष जनोग्रणित भम्भवा मानाः श्री ! जह !गणाम् ब्रह्मणो वाचनोति ब्रह्म लोक सर्वाः। मुनिवरोंाँ लोक में परलोक में हमारी प्रतिष्ठान हो, वह कर्म सर्व श्रेष्ठ कहलाते हैं। उन श्रेष्ठ कर्मो में हमारी प्रवृत्ति होनी चाहिए। जब हमारी प्रवृत्ति सुन्दर कर्मो में संलग्न हो जाती है, तो हमारा जीवन तेजस्वी बन जाता है।

सर्वोत्तम राष्ट्र

मेरे आदि आचार्य जनोमै !ंने बहुत पूर्वकाल में आदि ब्रह्मा के सम्बन्ध में प्रकट करते हुए कहा था, कि सबसे पूर्व ब्रह्मा ने संसार के लिए महान् यज्ञ कर्म किया। उनकी प्रदीप्त की हुई, अग्नि अब तक यज्ञशाला में प्रदीप्त होती चली जा रही है। उसमें महान पुरुष आए और आकर के अपने महान कर्णों को त्याग करके चले गएं परन्तु ऋषि परम्परा और जो आदि ब्रह्मा की वेदी थी, उसमें कोई सूक्ष्मता नहीं आई।

मुनिवरोंजिस समय वशिष्ठ मुनि महाराज से यह प्रश्न किया गया !, कि हमारे यहाँ राष्ट्र और यज्ञ में क्या भिन्नता है, तो उस समय ऋषि वशिष्ठ ने कहा कि राष्ट्र में और यज्ञ में कोई भिन्नता नहीं है। जब राजा के राष्ट्र में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या प्रत्येक ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी यज्ञ कर्म करने वाले होते हैं, राष्ट्र गृह में रहने वाले पति और पत्नी सुन्दर यज्ञ करने में तत्पर रहते हैं, शिक्षालयों में सुन्दर यज्ञ की वेद ध्वनि का प्रातःकाल में प्रसारण होता है और उसके पश्चात् और विषयों का अध्ययन किया जाता है, वह राष्ट्र सर्वोत्तम कहा जाता है। जिस राजा के राष्ट्र में इस प्रकार के विधान और नियम होते हैं वह राजा संसार में चक्रवर्ती राजा होता है।

महाराजा हरिश्चन्द्र

मुनिवरोंयहाँ वर्णन आता है महापुरुषों का और महान राजाओं का जैसे महाराजा ! हरिश्चन्द्र जो स्वप्न में भी कोई वाक्य मिथ्या उच्चारण नहीं करते थे। अपने राष्ट्र में यज्ञ कर्म करते थे और मन में धारणा रहती थी कि मैं राष्ट्र को इन्द्रपुरी तक पहुँचाना चाहता हूँ। यज्ञ कर्म करते करते जब मुनिवरों99वां यज्ञ प्रारम्भ हो रहा था उनका !,

तो दुरुणा ऋषि महाराजा उस यज्ञ के ब्रह्मा चुने गए, ब्रह्मा चुने जाने के पश्चात् रात्रि के समय महाराज हरिश्चन्द्र विश्रामशाला में विश्राम कर रहे थे। उसी समय उन्हें स्वप्न हुआ प्रभा गच्छतम् संगमम् ब्रहे गति कन्याः रन्द्रनम् ऋषि विश्वम् ब्रह्म वाचनोति। कि एक सुन्दर कन्या है और एक महान पुरुष संन्यासी है और संन्यासी ने कहा कि महाराजमुझे दान दो। हरिश्चन्द्र ने कहा !, जो इच्छा हो। संन्यासी ने कहा कि मुझे राष्ट्र अर्पित कर दीजिएउन्होंने कहा –बहुत सुंदर जब राष्ट्र को हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में त्याग दिया, तो कन्या ने कहा कि प्रभुमुझे भी दान दो और मुझे ढाई लाख स्वर्ण ! प्रदान कीजिए।

मुनिवरोंराजा हरिश्चन्द्र ने वह भी अर्पित कर दिया। अर्पित कराते हुए प्रातःकाल ! हुआ। जागृत हुआ तो विचार आया, कि तुमने तो यह राष्ट्र सब कुछ दान कर दिया था, परन्तु दान लेने कोई नहीं आया। इतने में मुनिवरोंविश्वामित्र एक सुन्दर कन्या ! को लेकर महाराजा हरिश्चन्द्र के द्वार पर आ पहुँचे, और उन्होंने कहा कि महाराजा ! मैंने दान की इच्छा प्रकट की थी, आपने नहीं दिया। राजा ने कहा, प्रभु! मैंने तो स्वप्न में ही अर्पित कर दिया था, लीजिए राष्ट्र को। राष्ट्र देने के पश्चात् जो कन्या संन्यासी के पिछले विभाग में थी, उसने कहा कि प्रभुमैंने दान मांगना था !, कि मुझे ढाई लाख स्वर्ण दीजिए। उन्होंने कहा कि चलो, देवी। जब राष्ट्र में से ढाई लाख स्वर्ण देने का प्रश्न आया, तो ऋषि ने कहा कि महाराजयह राष्ट्र तो आपने मुझे दान में दे ! दिया है, अब इसमें से दान देने का आपका अधिकार नहीं रहा।

तो मुनिवरों राष्ट्र को त्याग करके पत्नी और पुत्र को एक !ब्राह्मण के यहाँ गिरवी रख, ढाई लाख स्वर्ण, उस कन्या को अर्पित किया और शूद्र के गृह में उन्होंने कुछ कार्य किया। यह दान की पवित्र महिमा है। जो इतने त्याग और तपस्या में परणित होने वाला हो, आज उसकी संसार में कितनी आवश्यकता है।

बेटामैं उच्चारण कर रहा था !, कि हम अपने जीवन को यज्ञमय बनाएं, हमारा जीवन परमात्मा ने रचा है, वह दान द्वारा, त्याग और तपस्या द्वारा, यज्ञ कर्म करने के लिए रचा है। अन्यथा इसके रचने का कोई उद्देश्य नहीं। क्योंकि जितने शुभ कर्म मानव

शरीर से किए जाते हैं, वे और शरीरों से नहीं किए जाते। जब नहीं किए जाते, तो जो भी धर्म करता हैं, वह सब यज्ञ कर्म कहलाता है। परन्तु जहाँ जितने परोपकार के यज्ञ, राष्ट्रीय यज्ञ, सर्वस्व यज्ञ होते हैं, इन सब यज्ञों में निष्काम यज्ञ श्रेष्ठ होता है। जिसमें कोई कामना न हो, धारणा न हो, वह यज्ञ देवताओं के निमित्त किया जाता है। वह अपना एक उद्देश्य और कर्त्तव्य होता है। कर्त्तव्य को लेकर के जो कार्य किया जाता है, तो बेटा वह यज्ञ कर्म सर्वश्रेष्ठ कहलाता है। !

आओ मेरे भद्र आचार्य जनोहम इस मनोहर परमपिता का गुणगान गाते हुए !, उसका धन्यवाद करते हुए, अपने आदेशों को वहाँ ले जाएं, जहाँ ले जाना चाहते थे। यज्ञम् ब्रह्मणा यज्ञः वाणिः अब्रणाम् वातनेति धर्मवेतु कामाः जहाँ यज्ञ में इस प्रकार की प्रवृत्तियां होती है, वहाँ शुभ कर्मो में मानवीयता त्याग और तपस्या में संलग्नता होती है।

बेटाआज का आदेश अब समाप्त होने जा रहा है। शेष वार्त्ताएं कल प्रकट कर ! सकूंगा। आज के आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हमारे यहाँ ऋत्विज होने चाहिए। यज्ञमान होने चाहिए। ब्रह्मा होने चाहिए। होता होने चाहिए। परन्तु वे अपने जीवन को ब्रह्मचर्य में तपाने वाले हों, शुद्ध और पवित्र कर्मो में उनकी संलग्नता हो और सूक्ष्म सूक्ष्म विवेचना वाले हों। जब वह सुन्दर यज्ञ कर्म करते हैं, तो उसमें एक पवित्र धारणा होती है, जिससे मानव के हृदय पवित्र बनाएं जाते हैं। हम महाराजा हरिश्चन्द्र की भांति स्वप्न में भी कोई मिथ्या वाक्य न उच्चारण करें। मिथ्या वाक्य से एक महान हानि होती है। मन, वचन और कर्म द्वारा हम सुन्दर सुन्दर यज्ञ कर्म करते चले जाएं, जिससे हमारा जीवन पवित्र बने। आयु दीर्घ हो। यह है बेटाआज का हमारा आदेश। ! अब शेष वाक्य कल ही उच्चारण कर सकूंगा। कल समय मिलेगा, तो मैं ब्रह्मा का प्रकरण जो कुछ अधूरा रह गया है, सृष्टि के आदि ब्रह्मा ने संसार के लिए क्या क्या परोपकार किए, उसके सम्बन्ध में कुछ प्रकाश दिया जा सकेगा। अब वेद पाठ होगा, उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त होती चली जाएगी। रात्री को पंजाबी बाग

१७ 29 07 1966 पुष्प 09 यौगिक क्रान्ति

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों को गाते चले जा रहे थे। तम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज पुनः से जिन वेद मन्त्रों का पाठ किया। वेदों का ज्ञान ऐसा भंयकर वन है, जिसमें रमण करने के पश्चात् मानव को कोई मार्ग ही प्राप्त नहीं होता। वेद में योग के क्षेत्र में जाओ तो वहाँ भी वन ही प्रतीत देता है। गृह के क्षेत्र में जाओ, तो वहाँ भी वन है। वानप्रस्थ, सन्यास और राष्ट्र के क्षेत्र में पहुँच जाएं तो वहाँ भी ऐसा ही प्रतीत होता है। वेद का इतना सुदंर और अनुपम ज्ञान है। ज्ञान के साथ साथ विज्ञान की व्याहृतियां ओत प्रोत हैं। मानव को यह नहीं विचारना चाहिए, कि वेद में ज्ञान ही ज्ञान है। वेद में संपूर्ण विज्ञान भी है। वह विज्ञान ही नहीं जिससे नाना यन्त्र निकाले जाते है परन्तु इसमें ऐसा विज्ञान भी ओत प्रोत है, जो भयंकर अग्नि को शान्त करने वाला है।

बुद्धिमानों का कर्त्तव्य

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने कल के आदेशों में प्रकट किया था !, कि संसार में एक भयंकर अग्नि प्रज्वलित होने वाली है। वास्तव में इन्होंने क्रान्ति के सम्बन्ध में कहा, हमारे विचारों में जहाँ क्रान्ति आती है वहाँ शान्ति भी होती है। मानव के मस्तिष्क में दो प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न होती है। एक यौगिक क्रान्ति होती है और दूसरी स्वार्थ के वशीभूत होती है और मानव मानव को नष्ट करने के लिए उद्यत हो जाता है। मैं तो महानन्द जी से एक वाक्य कहा करता हूँ, कि बेटाअनिवार्य नहीं !, कि संसार में मानव मानव को नष्ट करने वाली क्रान्ति लाई जाएं। यहाँ बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है, कि यौगिक क्रान्ति को लाया जाएं जिससे मानव के हृदय से स्वार्थ की क्रान्ति स्वयं नष्ट हो जाती है। जहाँ स्वार्थ की क्रान्ति मानव के हृदय से भस्म हुई वहाँ वह एक महान बना, योग के आँगन को चला। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या अपने अपने कर्त्तव्य में संलग्न हो जाता है। बिना ज्ञान के कुछ द्रव्य में ललाहित हो जाते हैं, कुछ त्वचा के आनन्द में ललाहित हो जाते हैं। इन सबका नाम स्वार्थ माना जाता है। इसे किसी एक रूप में स्वीकार कर लो। जहाँ एक दूसरे को नष्ट करने का प्रश्न आता है वहाँ ऐसी क्रान्ति आया करती है। जहाँ स्नेह नहीं होता, स्वार्थी प्राणी अधिक हो जाते हैं

वहाँ ऐसी क्रान्ति आया करती है। स्वार्थ उस काल में भस्म होता है जब मानव यौगिक आनन्द में चला जाता है, ज्ञान उसके द्वारा होता है और ज्ञान के साथ साथ विज्ञान की मात्रा भी उसके समीप होती है। उस समय प्रतीत होता है कि वास्तव में अब तू योग के मार्ग पर चला है।

योग

योग का अभिप्राय क्या है? एक दूसरी वस्तु से मिलान का नाम योग है, जैसे परमपिता परमात्मा ने यौगिकता से संसार को रचाया है। इस संसार में क्या है? प्राण और मन दोनों का मिलान किया और मिलान करके प्रकृति इनके माध्यम में आ गई। प्रकृति के तत्त्वों में क्रान्ति आ करके इनका एक स्थूल रूप बन गया और मन और प्राण दोनों का विभाजन हो गया। विभाजन होते ही प्रकृति में नाना प्रकार के खनिज पदार्थ हैं, वनस्पति, अन्न, फल इत्यादि और भी नाना जैसे मनुष्य जाति का और नाना प्राणियों का जन्म होता है। फल में नाना जातियां हैं परन्तु यह सब मन और प्राण के माध्यम से। इनके माध्यम में प्रकृति है। कहीं कहीं तो मन को भी प्रकृति का स्वरूप माना है। परमपिता परमात्मा ने अपने संकल्प द्वारा मन और प्राण को शून्य प्रकृति से मिलान कराया। जहाँ एकाग्र हुई वहीं कम्पन्नता हुई। इन परमाणुओं से महान गति होने लगी। जब इनमें प्रबल गति हुई तो इसी में से जल, वायु, अग्नि का विकास हो गया और यह सब कुछ उत्पन्न हो करके यह स्थूल रूप में परणित हो गए। इसी पिण्ड में से सूर्य बन गया, चन्द्रमा बन गया, नाना आकाश गंगा रच गई, जिसमें नाना प्रकार के गृह होते हैं, इसी में से ध्रुव बन गया। यह सब परमात्मा का योग कहलाता है।

नाड़ियों से ब्रह्मांड बोध

मुनिवरोंजैसे परमात्मा यौगिक होता है इसी प्रकार एक मानव भी योगी होता है। ! मानव शरीर में आत्मा आता है। ज्ञान और प्रयत्न से नवीन रचना रचता है। परन्तु ज्ञान और प्रयत्न क्या है? अब ज्ञान का माध्यम तो मन है और प्रयत्न का प्राण। अब मन क्या कहता है? प्राणों का विभाजन कर देता है। मन को विभाजित करता है एक मन

को दस रूपों में परणित कर दिया। ऐसे ही मन एक एक वस्तु को, एक एक रस को, नाना प्रकार के विभागों में विभाजित कर देता है। अब योगी किसे कहते हैं? पूर्ण योगी उसे कहते हैं, जब उसकी आत्मा ज्ञान और प्रयत्न दोनों को एकाग्र करके इनके ऊपर सवार हुआ होता है और परमात्मा से मिलान कर लेता है। उसे क्या कहते हैं? उसे कहते हैं मुक्ति। मुक्ति कहते हैं जहाँ ज्ञान और प्रयत्न एक स्थान में मिल जाते हैं। जब तक ज्ञान और प्रयत्न दोनों कार्य करते रहते हैं, दोनों का संघर्ष होता रहता है। मन जिसके विभाजन हो चुके है यह विभाजन क्रिया को नहीं त्यागता, एकाग्र नहीं होता। तब तक मुक्ति नहीं होती। यह मन कैसे एकाग्र होगा? एकाग्र होगा शनैः शनैः और विवेक से। जिस समय भी मन के द्वारा विवेक हो जाएगा, मन एक नवीन रचना रचेगा। बुद्धि के अंकुर भी इसी से उत्पन्न होते हैं। जब विवेक होगा तो यह मन प्रकृति के एक एक कण को जानता हुआ, अपनी रचना रच करके एकाग्र होता है। जैसे मूलाधार चक्र है, नाभि चक्र है, हृदय चक्र है, कठ चक्र है, ब्रह्मरन्द्र है। इन चक्रों की प्रक्रियाओं को जानता हुआ, मानो इसमें विभाजन करने वाला मन है। प्राणों के द्वारा मन, क्रिया, ज्ञान और प्रयत्न दोनों एक स्थान में एकाग्र होकर ब्रह्मरन्द्र में जाते हैं तो बेटासंसार का !, प्रकृति का, जितना ज्ञान है वह सब इसके समीप आ जाता है। जहाँ प्रकृति का ज्ञान और विज्ञान समीप आया, तो उसे प्रतीत होता है, कि आज तू कहाँ आ गया। ब्रह्मरन्ध्र में जो सूक्ष्म सूक्ष्म वाहक नाड़ियां हैं उनमें से किसी का सम्बन्ध आकाश गंगा से है, तो किसी का ध्रुवलोक से, तो किसी का सूक्ष्म शरीर वाली आत्माओं से, किसी का चन्द्र मण्डल से, तो किसी का मंगल से। यह जो बहत्तर करोड़ सूक्ष्म वाहक नाड़ियां होती हैं इनमें नाना अग्रहण हाते हैं इनकी अव्याहृत गति होती और अव्याहृत गति होने के नाते, बेटाजब यह आत्मा ब्रह्मरन्ध्र ! में अव्रेत करता है उस समय मन इसके सहित रहता है। मन और प्राणों की एक धारा होकरचलती है। जब ज्ञान और प्रयत्न की एक धारा होकर चलती है तो यह नाना लोक लोकान्तरों का ज्ञान, आत्माओं का ज्ञान, उन्हें आह्वान करना, उन्हें समीप लाना, यह सब उस धारा में परणित हो जाता है।

गुरुदेव की प्रवचन प्रक्रिया

वेद कहता है समगतम् प्रभा वासन्न तप्प प्राजे वाचाः आत्मा गृहणामि प्रजा वाचनं देवम दधिमा सर्वज्ञति ब्रह्मणा प्रधे अव्याह गतम् माधो रश्वते यज्ञतम् मग रश्वते ऋद्या नरम् भगवा वाचनम् सर्वज्ञ प्रभा वातो लोकश्वतम् प्रकतियम् प्रभे मनः वेद कहता है कि आत्मा की जब यह सुन्दर गति हो जाती है, कि यह ब्रह्मरन्ध्र में उन वाहक नाड़ियों को जानने वाला बनता है उस समय आत्मा की अव्याहृत गति हो जाती है। ब्रह्मरन्ध्र से भी निचले विभाग में रीढ़ के जो मनके होते है, मनकों की ग्रन्थियां खुलती चली जाती है जिसको हम अभाक चक्र कहते हैं जब इसके आँगन में जाते हैं और रीढ़ की जो अन्तिम ग्रन्थि होती है, वह स्पष्ट हो जाती है, तो उस समय मुनिवरोंइस ! यौगिक आत्मा में यह शक्ति हो जाती है, कि अपने शरीर को त्याग करके, लोक लोकान्तरों में भ्रमण करके पुनः उस शरीर में आ सकता है। वह भ्रमण भी करता है और उसी के शरीर में मुनिवरोंदेखो !,आत्माओं का केन्द्र भ !ी हो जाता है। वह अपना ज्ञान और प्रयत्न के साथ संकल्प करता है और उसी से उस सूक्ष्म शरीर वाली आत्मा के समीप पहुंच जाता है, क्योंकि संकल्प शक्ति वाली आत्मा के समीप पहुंच जाता है, क्योंकि संकल्प शक्ति उसके सहित है। वह अब एक धारणा बनाता है, कि वह जो सूक्ष्म शरीर वाली आत्मा है, उनसे मेरा सम्बन्ध होना चाहिए। प्राण के आश्रित होकर ज्ञान और प्रयत्न के सहित वह उनसे सम्बन्ध करता है।

मुनिवरोंप्राणों की क्रिया और मन के द्वारा मानव का शरीर जीवित रहता है परन्तु ! आत्मा इसमें विराजमान है। प्रश्न आता है कि आत्मा के निकलजाने से शरीर शून्य हो जाता है, जिसे मृत्यु कहते हैं। यदि यह आत्मा चली जाएं, सूक्ष्म शरीरों के निकट चली जाएं, तो इस शरीर का क्या बनेगा? इसके उत्तर में हमारे ऋषि मुनियों ने ऐसा कहा है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी कहा है, कि वह जो पवित्र आत्मा है, जिसका अन्तरिक्ष में यौगिक आत्माओं से सम्बन्ध होता है वह प्राण संकल्प द्वारा इतना अव्याहृत गति वाला होता है संकल्प मन का होता है जिसको विश्वेभान मन कहते हैं। अब इस मन की एक गति नहीं विश्वेभान मन होता है जो सबमें रमण करने वाला

है। मन की विश्वेभान गति हो जाने के पश्चात् मन और प्राण जिसको ज्ञान और प्रयत्न कहते हैं यह दोनों इतने व्यापक हैं कि यह शरीर में भी कार्य करते हैं। आत्मा इतनी प्रबल होती है कि आत्मा इन प्राणों पर सवार होकर आवागमन करता है और आवागमन करके बेटाउसी के द्वारा एक यौगिक आत्माओं के सत्संग का अपना ! माध्यम बना लेता है। हम यौगिक क्षेत्र में जाएं तो उसको जानेंगे। बेटामैं जितना ! जानता हूँ मैने तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दे दिया। अब यह तुम्हारे आँगन की वार्त्ता कि तुम स्वीकार करो या न करो। जो ज्ञान और प्रयत्न दोनों की शक्ति है वह संसार में सबसे प्रबल मानी जाती है कि संकल्प परमात्मा का होता है।

अब जितनी प्रकृति तुम्हें यह प्रतीत हो रही है, लोक लोकान्तर है, किसी में अग्नि प्रधान है तो किसी में जल प्रधान है, तो किसी में वायु प्रधान है तो किसी में पार्थिवता प्रधान है। इसी प्रकार जिन लोकों में यह प्रकृति जो भी कुछ क्रिया कर रही है, सबमें ज्ञान और प्रयत्न रमण कर रहा है। परमात्मा ने जब मानव को शरीर दिया, आत्मा ने जब शरीर को ग्रहण किया, तो परमात्मा ने दो शक्तियां ज्ञान और प्रयत्न दी। अब ज्ञान और प्रयत्न दोनों शरीर में आ गए। आत्मा तो निश्चित विराजमान है, वह तो अपनी रश्मियां दे रहा है मानो ज्ञान और प्रयत्न। अब ज्ञान का जो माध्यम मन है, जिसने सबका विभाजन करना प्रारम्भ कर दिया। जब प्राण का विभाजन हो गया, तो इनको कार्य देने का प्रश्न आया। जब कर्त्तव्य देने का प्रश्न आया, तो उन्होंने कामनाओं को उत्पन्न किया। ज्ञान और प्रयत्न के द्वारा जब कामनाओं का जन्म हुआ और कामनाओं का जन्म होकर, उनको अब भोगा जाता है, क्योंकि जो कामना बनी है, वह भोगी जाएगी। अति कामनाओं का उत्पन्न होना तृष्णा कहा जाता है। जब तृष्णा की उत्पत्ति हुई तो मानव का जो शरीर है उसमें अधिक से अधिक आवश्यकताएं चली गई। मुनिवरोंदेखो !,अब उन आवश्यकताओं की !, कामनाओं की पूर्ति नहीं होती, तो उसी से क्रोध उत्पन्न होता है। उसी से अभिमान आता है। देखो,यह ज्ञान ! और प्रयत्न का एक बड़ा परिवार बन गया।

मुनिवरोंअब इस परिवार को संयम में करना है !, ज्ञान और विवेक के द्वारा। इसके

लिए परमपिता परमात्मा ने इसको विचारने के लिए वेद दिया है। वेद रूपी प्रकाश इसी को विचारने के लिए दिया है। अब तो आत्मा, जो मानव केवल इसी दिशा में स्थिर कर लेता है, कि ज्ञान और प्रयत्न दोनों तेरे शरीर में है, इसमें तुझे ऐसे रहना है, जैसे जल में कमल रहता है। वह उसी काल में रह सकता है, जब दसों प्राणों का ज्ञान हो और मन का जो विभाजन करता है, उसका ज्ञान हो, उसका विभाजन न होने दो। जब विभाजन नहीं होने दोगे और दसों प्राणों को एकाग्र करने का प्रयत्न करोगे तो शनैः शनै तुम जड़भरत की भांति रहोगे, जैसी जड़भरत की गाथा मैंने प्रकट की थी। उसे कर्म नहीं व्यापते, जैसे भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि हे अर्जुनमैं समय ! समय पर जन्म लेता हूँ, परन्तु यह जो संसार के कर्म हैं यह मुझे नहीं व्यापते। जैसा महानन्द जी ने कल महात्मा दयानन्द की वार्त्ता प्रकट की, तो प्रतीत होता है कि वह पूर्व जन्म की ऐसी विभूति थी, जो संसार में आकर के, संसार के कर्म, उस महान विभूति को नहीं व्यापे। क्यों नहीं व्यापते? इसलिए नहीं व्यापते, क्योंकि उनका जो मन है, वह संस्कारों से इतना नियन्त्रण में है, कि वह ऐसी कामनाओं को उत्पन्न नहीं करते, जिससे मानव के शरीर का मानसिक जो विकास है, उसका हनन होता चला जाएं।

माता पर ऋण

तो बेटाआज मेरा यह विषय नहीं था !, जो उच्चारण कराने लगे। मैं केवल यह आदेश देने आ गया कि हमारे यहाँ कर्मों की गति बड़ी विलक्षण है। अपने अपने संस्कारों से मानव बड़ा लज्जित होता रहता है क्योंकि उसके संस्कार ही इस प्रकार के हैं। इसलिए कहा है ब्रहमचर्य आश्रम में ऐसे ब्रहमचारी और ब्रहमचारिणी बनो। तुम्हारे द्वारा जो अमृत रूपी निधि है, इसे अपने से दूर न जाने दो। ब्रहमचर्य की रक्षा करो। ब्रह्मचर्य के पश्चात् गृहस्थ आश्रम आता है। गृहस्थ आश्रम में इच्छा के अनुकूल एक महान संतान को जन्म दो, जैसा आज के वेदपाठ में भी आता चला जा रहा था। हे माताओंतुम्हारे ऊपर संसार का एक बहुत बड़ा ऋण है। आज उस ऋण से उऋण ! हो जाओ। कौन माता उऋणी होती है? वह माता संसार में उऋणी होती है, जो राम

जैसे बालक को जन्म दे, दयानन्द जैसी आत्मा को जन्म दे, शंकराचार्य जैसी आत्मा को जन्म दे, महर्षि कपिल और महर्षि व्यास जैसी आत्माओं को जन्म दे। त्वचा को सजाने से संसार में ऋण से उऋण नहीं हुआ जाता, परन्तु ऋण तो उस काल में जाता है, जब गर्भाशय पुष्पों से सजा होता है, जिसके पवित्र गर्भाशय से भगवान श्रीकृष्ण जैसों का जन्म हो, जो त्याग मूर्ति हो, जिनके द्वारा त्याग और तपस्या की कोई सीमा न हो, जो माता शाकल्य मुनि जैसी योगी आत्मा को जन्म देने वाली हो, वह माता अपने ऋण से उऋण हो सकती है अन्यथा यहाँ तो ऋण का ऋण ही रहता है। संसार में देखो, ऋणी मनुष्य किसी भी काल में नहीं पनपता।

वास्तविक ऋण

आज कोई मानव कहे, कि मैंने किसी से द्रव्य ले लिया, मैं उसी का ऋणी हूँ परन्तु यह कोई ऋण नहीं होता। ऋण वह होता है, कि जिस कार्य के लिए हम आए हैं, उस कर्त्तव्य को न करें, तो वह सबसे बड़ा ऋण कहलाता है। जैसे एक राजा होता है, प्रजा ने उसे राजा बना दिया, पंरतु यदि वह प्रजा के हित में कार्य नहीं करता, उनके मानसिक विचारों के अनुकूल कार्य नहीं करता, तो वह राज्य का एक बहुत बड़ा ऋणी कहलाता है। उसे वह ऋण देना पड़ेगा। यहाँ नहीं देगा, तो अगले जन्म में देगा। पंरतु देगा अवश्य। जहाँ तक किसी के द्रव्य को लेते है तो वह भी ऋण है। मैं यह नहीं कहता, कि वह ऋण नहीं होता, परन्तु सबसे बड़ा जो सूत्म ऋण है, वह है देवताओं का ऋण। देवताओं के समीप आएं और उनके अनुकूल कार्य न करे, जैसा मैंने कल कहा था, तो हम उनके ऋणी रहते हैं। आज हम ऋण से उऋण होते चले जाएं। जो माताएं त्यागी और तपस्वी होती हैं, और जो राम, कृष्ण, कपिल पतंजलि, वेदव्यास, महर्षि जैमिनि, सुखदेव, राजा जनक, महाराजा रेवक, महाराजा हरिश्चंद्र आदि जैसी आत्माओं को जन्म देती हैं, वह माताएं देवताओं के रूप में उऋण हो जाती है।

गृहस्थ आश्रम

मेरे आदि ऋषि मण्डलमैं आज वेद के आदे !श लेता चला जा रहा था। अभी अभी

वाक्य चल रहा था कि ब्रह्मचर्य के पश्चात् गृहस्थ आश्रम आता है। गृहस्थ आश्रम का कौन अधिकारी होता है? संसार में श‍ृङ्गार रस को ही गृहस्थ नहीं कहा जाता। संसार में वह गृहस्थी कहा जाता है, जो यजन करने वाला हो। यज्ञ कैसा हो? परोपकार करने वाला हो, देवताओं का यज्ञ करने वाला हो, मानो परमात्मा का चिन्तन करने वाला भी हो। पति और पत्नी विराजमान हों, तो आत्मा परमात्मा के सम्बन्ध में प्रश्न होने चाहिए, जहाँ पुत्र पुत्री उत्पन्न करने का प्रश्न आता है, वहाँ विचार शक्ति उनके समीप होनी चाहिए, कि हमें किस नक्षत्र में कैसे बालक को जन्म देना चाहिए। यह सब विद्याएं उनके द्वारा होनी चाहिए।

ब्रह्मचर्य में गुरु के द्वारा विद्या ग्रहण की जाती है, उस विद्या में क्या विषय होते है, जो उन्हें प्रकाशित किए जाते हैं? विज्ञान का विषय होता है, मानो पृथ्वी के गर्भ का विज्ञान उनके समीप होता है, अन्तरिक्ष का विज्ञान होता है, मन का विज्ञान होता है, प्राण का विज्ञान होता है, आत्मा का विज्ञान होता है और ज्ञान क्या होता है? इनको सबसे पूर्व जान लेना चाहिए। ज्ञान और विवेक उसके समीप होने चाहिए। यह सब कुछ ब्रह्मचर्य में ग्रहण किया जाता है। उसके पश्चात् गृहस्थ आश्रम में विद्या का अनुभव किया जाता है और जब अनुभव में आती है, तो उनके अनुकूल कर्म किया करते है। गृहस्थ के पश्चात् वानप्रस्थ आता है।

हमारे महानन्द जी कहा करते है और भी नाना प्रश्न हमारे समक्ष आए, कि पूर्वकाल में विद्यालय नहीं थे। मैं यह कहा करता हूँ कि पूर्व काल में विद्यालय तो थे, परन्तु इस रूप में नहीं, जैसा मुझे कल महानन्द जी ने प्रकट किया। ऐसे विद्यालय थे, कि वानप्रस्थी बन जाने के पश्चात् पति और पत्नी अपने ब्रह्मचर्य से लेकर गृहस्थ आश्रम तक के अनुभवों से ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणियों को शिक्षा के रूप में परणित करके संन्यास को धारण करते थे।

संन्यास आश्रम संन्यास आश्रम में कोई कर्म नहीं होता, क्योंकि इस प्रकार उसकी जितनी तृष्णाएं होती है, जितनी हृदय में कामनाएं होती हैं, वह सब संपूर्ण हो जाती हैं। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ की शिक्षा, उसका अनुभव ब्रह्मचारी और

ब्रह्मचारिणियों को विद्या देकर अवऋण हो गए, समाज को सब ऋणों से मुक्त हो गए, तो उसके पश्चात् संन्यास में परमात्मा के आँगन में जाने के लिए भगवा वस्त्र को धारण कर लिया।

मेरे प्यारे! महानन्द जी कहा करते है, कि संन्यास में भंगवा वस्त्रों को क्यों धारण किया जाता है? मैं यह पूर्व उत्तर भी दे चुका हूँ कि जैसे जब अग्नि यज्ञशाला में तेजस्वी रहती है, तो उसे कोई छू नहीं सकता। उसे कीट पतंग नहीं छूते, मानव नहीं छूते। ऐसे ही संन्यास में भगवा वस्त्रों को धारण किया जाता है, क्योंकि वह अग्नि स्वरूप बन गया है। अब उसे न तो काम, न क्रोध, न मोह, न कोई विषय किसी काल में उसे छू सकता है। भगवा वस्त्रों को धारण करने का अभिप्राय यह है।

संन्यास आश्रम में कामनाओं का उत्पन्न होना ही पाप माना जाता है। संन्यास आश्रम में कामना नहीं होनी चाहिए। मद नहीं होना चाहिए। वह तो केवल योगाभ्यास और आत्मा में विचारों की आहुति देता रहे विचार आया और आत्मा में रमण कर दिया। वह संन्यासी आश्रम संसार के कल्याण के लिए क्या, जहाँ भी उसका पग जाता है, वह भूमि पवित्र हो जाती है।

यह है बेटाआज का हमारा आदेश। आज मैं कोई अधिक चर्चा नहीं करूंगा। आज ! तो मैं केवल महांनद जी के कल के आदेशों के सम्बन्ध में कुछ प्रकाश देता चला जा रहा था। कल जैसे महानन्द जी ने अपने ओजस्वी वाक्यों में कहा कि दयानंद की वार्त्ताओं को पूर्ण करने वाले आर्यजन होते है। मैं यह भी कहा करता हूँ कि आर्य श्रेष्ठ पुरुष होते है और श्रेष्ठ पुरुष का कार्य होता है, कि वह प्रकाश देते चले जाएं। जहाँ प्रकाश होता है, वहाँ अंधकार नहीं होता और जहाँ अंधकार नहीं होता, मानव में विवेक होता है, यथार्थता होती है। उस यथार्थता को लेकर भ्रमण करता है, वह संसार को सुगन्धि देता है। मेरे भद्र पुरुषोंआज वह मानव कितना सौभाग्यशाली होता है !, जो निस्वार्थ कार्य करने वाला हो, सुगन्धि को ओत प्रोत कराने वाला हो। प्रकृति के कण कण में उस सत्यवादी की एक एक वार्त्ता की सुगन्धि ओत प्रोत हो जाए। विज्ञान के सहित वह वायुमण्डल पवित्र होकर के बेटासमय ! समय पर सब कार्य पूर्ण होते

रहें। वही मानव सौभाग्यशाली होता है।

वह राजा भी सौभाग्यशाली होता है जो ब्रह्मचर्य में विद्या को ग्रहण करके गृहस्थ आश्रम में आकर के यज्ञ करता है, शुद्ध विचार देता है। प्रजा तो राजा के अनुकूल कार्य करती है। राजा दुराचारी होता हे उसकी प्रजा भी दुराचारिणी होती है यदि राजा सदा सदाचारी होता है, तो प्रजा भी सदा सदाचारी होती है।

बेटावेद तो हमें एक एक बात ऐसी देता है पंरतु हम उसे विचारते नहीं !, परमात्मा का पूजन नहीं करते। वेद की वार्त्ता जब आँगन में आती है, जब उसको धन्यवाद देते हैं और यह विचार लेते हैं कि यह जो भी अंग है, विचार हैं यह सब परमात्मा की देन है और इन विचारों को परमात्मा को अर्पित कर दो। जब अपनेपन को परमात्मा को अर्पण कर दोगे, परमात्मा तुम्हारा सहायक बनकर के तुम्हारे हृदय में ऊँची से ऊँची प्रेरणा देगा, जिससे तुम महान और विचित्र बन जाओगे। जहाँ मानव यह विचार करता है, कि जो कार्य करता हूँ मैं करता हूँ तो जहाँ मैं का प्रश्न आया वही परमात्मा की विभूतियां, जो उसके समीप होती है, वह दूर चली जाती है और केवल अभिमान रह जाता है।

स्वयं पर दया

मेरे महान व्यक्तियोंजैसा मैं पूर्व कह चुका हूँ !, मानव को अपने ऊपर दया करनी चाहिए। क्रोध करो तो उससे पूर्व विचार लो, कि मैं जो क्रोध करने जा रहा हूँ इससे कितनी बड़ी हानि होगी। मैं कामी पुरुष बनने जा रहा हूँ तो इसमें मेरी कितनी बड़ी हानि होगी। मानव को अपने ऊपर यह दया करनी होगी। मानव को अपने ऊपर यह दया करनी होगी। यदि दया नहीं करोगे, तो महानन्द जी के कथानुसार क्रान्ति अवश्य आ ही जाती है। मैं तो यह कहा करता हूँ, कि परमात्मा के पुजारी मत बनो, परन्तु अपने पुजारी बन जाओ। यह विचारो कि जो कार्य मैं करता हूँ, वह मेरे शरीर, मेरे विचारों के अनुकूल भी है या नहीं। मुझे इसका लाभ भी प्राप्त होगा या नहीं और इसका उद्देश्य क्या है। तो यह अपने ऊपर दया होती है।

हमें क्रोध आता है, तो क्रोध से पूर्व विचार लो, कि इससे कितनी बड़ी हानि होगी।

वेद में ऐसा कहा है कि जिस समय मानव को क्रोध आता है और उस क्रोध में बारह श्वास जाते हैं तो बारह श्वासों में जितनी शक्ति होती है वह समाप्त हो जाती है। उन श्वासों के द्वारा क्रोध मिश्रित करती हुई जो तरंगे चलती हैं, यदि उस प्राण शक्ति को शोषण कर मानव की त्वचा में ओत प्रोत करा दें, तो प्राणी हनन हो जाते हैं। 12
इसलिए अपने ऊपर दया करो और विचार विनियम करो, कि क्रोध में तुम्हारी कितनी शक्ति, कितनी मानसिकता समाप्त होती है। एक मानव काम में तल्लीन हो जाता है। एक ब्रह्मचारी और एक ब्रह्मचारिणी कामी बन जाते हैं, परन्तु कुछ समय पश्चात् शरीर रूग्ण हो जाते हैं और नाना औषधियों में तल्लीन हो जाते हैं। क्योंकि उन्होंने उस समय नहीं विचारा जिस समय कामनाओं के क्षेत्र में थे। यदि कामना के क्षेत्र में विचार लेते, तो जीवनभर उनका शरीर रूग्ण नहीं हो सकता था। इसलिए मेरे भद्र पुरुषोंहमें पूर्व विचारना यह होगा !, कि हम स्वयं अपने पुजारी बने, परमात्मा के पुजारी बने। हम संध्या करते हैं, संध्या में सबसे पूर्व अपने को ऊँचा बनाने के मन्त्र आते हैं। वाक् को ऊँचा बनाएं प्राणों को ऊँचा बनाएं बनायें शरीर को बलिष्ठ बनाएं। तभी हम लोकों को जान सकेंगे और उनमें रमण करने वाले बनेंगे। उसके पश्चात् हम ऋत को जान सकेंगे। आगे परमात्मा की महिमा के मन्त्र आते हैं। इसलिए संध्या में सबसे पूर्व अपनी ही पूजा का प्रश्न आता है। जब हम स्वयं ही ऊँचे पुजारी बन जाएंगे तो परमात्मा के ऋण को जान लोगे, तो ब्रह्म के मण्डल में चले जाओगे और ब्रह्म के मण्डल में जाने के पश्चात् तुम्हें कोई कष्ट न रह सकेगा। परमात्मा के पुजारी तुम स्वतः ही बन जाओगे। जितने भी ऋषि मुनि हुए हैं, उन्होंने अपने को जाना, उसके पश्चात् परमात्मा की कृति को जाना। और आगे वह वहाँ के मण्डल में चले गये, मुक्ति को प्राप्त हो गए।
बेटाआज जो वेद हमें आज्ञा दे रहा था !, उसके अनुकूल अपने सूक्ष्म विचार तुम्हारे समक्ष प्रकट किए, आज के आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हम जिस भी क्षेत्र में जाएं, हमें विवेक होना चाहिए। उसे त्याग वृत्ति से भोगें। इस संसार क्षेत्र में जो भी रचना है, यह परमात्मा की है। इसमें विभाजन क्रिया परमात्मा का एक संकलन है।

उसी संकलन को जानने के लिए अपने शरीर को ऊँचा बनाना होगा। कृतिवादी बनाना होगा। बेटायह यौगिक वाक् तुम्हारे आँगन में आ गया होगा !, जो हमने अभी अभी प्रकट किया था। प्राण, ज्ञान और प्रयत्न की जो गति है, वह अव्यहृत गति है, और आत्मा उनके ऊपर सवार होता है। वह संकल्प के द्वारा जो चाहता है, वह रचना रचता है। जो हमारे अधूरे संकल्प हैं वह पूर्ण नहीं होते।

अधूरे संकल्प क्या होते हैं? एक मानव कहता है कि मैं यह करूंगा, परन्तु इतना सामर्थ्य नहीं, वह मिथ्यावादी में जाकर संकल्पहीन बन जाता है। जो मानव संकल्पहीन हो गया, उसका जीवन ही अधूरा रह जाता है। संकल्प ही मानवत्व का प्रतीक है। मानव ने संकल्प किया कि मैं कदापि भी क्रोध नहीं करूंगा, तो यदि उसने अपने संकल्प को भंग कर दिया, तो जानो कि उसकी मानसिकता नष्ट होती चली गई। जिस समय परमात्मा अपने संकल्प को समेट लेता है, उस समय संसार की प्रलय हो जाएगी। परमात्मा के संकलन मात्रा से सूर्य समय पर उदय होता है और समय पर अस्त हो जाता है। रात्रि समय पर आती है और समय पर समाप्त हो जाती है। कैसा सुन्दर विधानयह परमात्मा का विधान !, एक संकल्प मात्र है। इसी प्रकार मनुष्यों के मन में संकल्प आते हैं। एक समय मनुष्य संकल्प करता करता यौगिकता में आत्मा को जानने के पश्चात् संकल्प करता है मुझे सूक्ष्म शरीर द्वारा दूसरी आत्माओं से सत्संग करना है तो आत्माओं से सत्संग करता है। शरीर केन्द्र बन जाता है मानो सूर्य में विचरण कर जाता है, ध्रुव में चला जाता है, आकाश गंगाओं में विचरण कर लेता है। यह सब कुछ जो क्रियाएं हैं यह योग के द्वारा है। यह योगि की अव्याहृत गति है। इसको जानने के लिए हमें अनुभव की आवश्यकता है। इसके ऊपर अनुसन्धान करना होगा और मन को एकाग्र करके इसको विचारना होगा क्योंकि यह मन का क्षेत्र ऐसा है, प्रकृति को दबा लेता है। संकल्प के द्वारा जो चाहता है, प्रकृति से करा लेता है। परन्तु यह ऋषि और योगियों की चर्चाएं हैं।

अब शेष चर्चाएं बेटामैं कल ही प्रकट कर सकूंगा। आज का आदेश अब समाप्त हो ! गया। यह नहीं कि हम यह विचार लें, कि प्रत्येक वस्तु में मानव की त्याग और

तपस्या कार्य करती है। एक मानव है वह आत्मा के विषय को देता है, जिसे वह अच्छी प्रकार नहीं जानता और उस विषय को अनुकूलता में नहीं लाता, परन्तु उस प्रसंग को लेकर के पुस्तक बना देता है, तो उस पुस्तक का इतना प्रभाव नहीं होता जितना एक शक्तिशाली प्राणी इन्हीं शब्दों को ज्यों का त्यों पुस्तकों में, भोजपत्रों में निर्णीत कर देता है। उसकी मानसिक यथार्थता, सत्यता, त्याग और तपस्या उन शब्दों में जो उसने पुस्तक के रूप में अंकित कर दिए हैं, उसमें भी उनका चरित्र और त्याग ओत प्रोत होता है। अब सब वाक्यों पर वैज्ञानिक रूप से हमें अध्ययन करना होगा और उसके पश्चात् आगे चलकर हमारा जीवन विकासवादी बनेगा, राष्ट्रवादी बनेगा।

बेटामैंने कल क्रान्ति के सम्बन्ध में कहा कि महान क्रान्ति लाओ। इस महान क्रान्ति ! के लाने से तुमस्वर्ग में चले जाओगे, यदि रक्त की क्रान्ति लाओगे, तो नरक आ जाएगा। इसलिए यहाँ नार्किक न बनो, स्वर्ग में जाओ। मेरी पवित्र माताओं को ऋण से उऋण होना चाहिए। कीड़ों को नित्य प्रति जन्म न दो। कपिल और व्यास जैसों को जन्म देकर ऋण से उऋण होती चली जाओ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते थे, कि नाना शिष्यों की आवश्यकता नहीं। यहाँ केवल दयानन्द की आवश्यकता है, एक शंकराचार्य की आवश्यकता है, एक कपिल और एक व्यास जैसे ब्रह्मचारी की आवश्यकता है, जो एक ही अपने राष्ट्र को, संसार को कम्पायमान कर देता है। इसी प्रकार मेरे भद्र पुरुषों! आज मानववाद होना चाहिए यहाँ नाना गुरुओं की आवश्यकता नहीं, यहाँ गुरु वशिष्ठ हों और राम जैसे ब्रह्मचारी हों, तो राष्ट्र में महान क्रान्ति क्यों नहीं आएगी। मेरी प्यारी माताएं ऐसे गुरु और ब्रह्मचारियों को जन्म देंगी, तो माता का जीवन सौभाग्यशाली बन जाएगा, राष्ट्र सौभाग्यशाली बन जाएगा।

अब बेटाहमारा आद !ेश समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवनआज का आपका आदेश रहा तो कुछ !गुरुदेव ! सुन्दर, परन्तु कुछ सूक्ष्मता रह ही जाती है।

पूज्यपाद गुरुदेवः चलो बेटायह सूक्ष्मता तो तुम्हारी जाती ही नहीं। च !लो, आगे प्रसंग

आएगा तो समय आता रहेगा। समय समय पर वार्त्ता प्रकट करते रहेंगे। अब वेद का पाठ होगा।

१८ 07 10 1966 पुष्प 08 महर्षि याज्ञवल्क्य और माता गार्गी सम्वाद

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पुनः की भांति कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज पुनः से जिन वेद मन्त्रों का हमने पाठ किया। हमने आज से पूर्व कई स्थलों में वर्णन भी किया, कि इस समय हमारे उन वेद मन्त्रों का पठन पाठन प्रारम्भ हो रहा है, जिन पवित्र वेद मन्त्रों मे उस परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड की रचना का वर्णन किया जाता है। प्रत्येक वेदमन्त्र में उस परम पिता परमात्मा की प्रतिभा विराजमान होती है और ऐसा प्रतीत होता है, कि हम उस परमपिता परमात्मा का गुणगान गाते ही चलें जाएं, जिससें हमारी मानवीयता ऊँचे शिखर पर चली जाएं।

माता दुर्गा

तो मेरे भद्र पुरूषोंआज के हमारे प्रारम्भ के वेद मन्त्रों में परमपिता परमात्मा के ! गुणों का वर्णन करते हुए वेद मन्त्रों में दुर्गेवति शब्दाथों का प्रतिपादनआता चला जा रहा था और वेद उच्चारण कर रहा था दुर्गस्तं दुर्गणा दुर्गश्चते दुर्गणामम भवस्तते जो प्रभु आनंद को प्रदान करने वाला है, सुख की वृष्टि करने वाला है, उस परमपिता परमात्मा को दुर्गेवति नामों से उच्चारण किया जा रहा था। हे मातेश्वरी दुर्गेआ और ! तू हमारे दुर्गुणों को दूर कर। दुर्गे कौन है? जो मानव के दुर्गुणों को दूर करती है। मानव के दुर्गुणों को कौन नष्ट करता है? जो दुर्गे है। जो दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है। तो मेरे भद्र पुरूषोंयहाँ वेद ने उस परमपिता परमात्मा को दुर्गेवति नामों से ! वर्णन किया। जहाँ हम भिन्न भिन्न प्रकार से उस प्रभु के गौणिक नामों का वर्णन करते हैं, वहाँ एक नाम मातेश्वरी दुर्गम ब्रह्मा जो दुर्गुणों को नष्ट करने वाली हो, परन्तु वह कौन है? वह ज्ञानमय आनंदमय ज्योति है, जिसको स्मरण करते हुए मानव प्रयत्नशील रहता है, उसके दुर्गुण इस हृदय से दूर हो जाते हैं और वह एक स्वच्छ और निर्मल बन करके, उस माता के समीप आ जाता है, जो माता हमारे दुर्गुणों को

नष्ट करने वाली है।

तो हे मेरे भद्रपुरूषोंजहाँ परमपिता परमात्मा को पिता के नामों से उच्चारण किया ! जाता है, वहाँ गौणिक नामों से दुर्गेवति शब्दार्थ भी आते हैं। भिन्न भिन्न प्रकार की रचनाएं, उस महिमावादी की आती है। जहाँ हम प्रकृति की उपासना और उसके आँगन में जाते है, वहाँ हमें ओर ही कुछ चमत्कार प्रतीत होते हैं। जैसा हमारे परंपरा के वैज्ञानिक ऋषि मुनियों को कथन है कि यह जो प्रकृति है यह मानव को नीचे ले जाने वाली है। आज हम इसकी उपासना न करते हुए केवल परमपिता परमात्मा की उपासना करते चलें जाएं जो चैतन्य स्वरूप है, जो शून्य की प्रकृति को कम्पायमान बना रहा है, उस चैतन्य महान् प्रभु देव की हम आराधना करते चले जाएं, जिसकी अपासना करने से हमारा जीवन आनंद में रमण करने लगता है। तो मेरे भद्र पुरूषों ! आओ हम उस मातेश्वरी की उपासना करते चले जाएं, जो हमारे दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है। प्रयत्नशील मानव ही अपने में ज्ञानमयी ज्योति को जागृत कर सकता है। संसार में जब मानव को ज्ञान हो जाता है, उसके पश्चात् वह मानवता की एक पवित्र वेदी पर विराजमान हो जाता है।

मेरे भद्रपुरूषों मुझे यहाँ एक वार्त्ता स्मरण हो !आई है, जिसे उच्चारण करना बहुत ही सुदंर है कि ज्ञान बिना संसार में मानव का कोई मूल्य नहीं रहता। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्याओं में ज्ञान होना बहुत अनिवार्य है। प्रिय, अप्रिय को जानने का हमें विवेक हो, उसके प्रति ज्ञान हो, आत्मा के प्रति हमारा अटूट विश्वास हो। जहाँ हमारे सम्मुख आत्मा का चमत्कार मानव के शरीर में प्रकाशित हो रहा है, यहाँ हम अपने मानव तत्त्व को, आत्मिक तत्त्व को क्यों नहीं जानने को प्रयत्न करते है।

हे मेरे भद्र पुरूषोंमानव को सबसे पूर्व अपनी आत्मा को !ऋषि मण्डल !मेरे प्यारे ! जानने का प्रयत्न करना चाहिए, जो आत्मा हमारे शरीर में प्रकाश स्वरूप है, जिस आत्मा के चले जाने से हमारा शरीर शून्य हो जाता है, निष्क्रिय बन जाता है, मानव जीवन का कोई मूल्य नहीं रहता। मूल्य उसी काल तक है, जब तक हमारे इस शरीर में एक आत्मा है। जब तक इस ब्रह्माण्ड में परमात्मा जो एक विश्व आत्मा है,

और कण कण में व्यापक हो रहा है, यह जब तक इस प्रकृति में ओत प्रोत रहा है तब तक हमें यह संसार प्रतीत होता है। नाना प्रकार के लोक लोकांतर, चन्द्रमा इत्यादि जलाशय से भरा हुआ समुद्र हमें प्रतीत होता परन्तु जब विश्व आत्मा ब्रह्मण्ड से चला जाता है, तो बेटायह प्रकृति शून्य हो जाती है !, अन्धकार छा जाता है। तो फिर मेरे भद्र पुरूषोंवेद में कहा है !, नाद के सहित कहता है, कि हे मानवज्ञान के ! आँगन में आ जाओ। मानव कोज्ञान होना बहुत अनिवार्य है।

राजा जनक की ब्रह्म-ज्ञान सभा

मुनिवरोंमुझे स्मरण आ गया। महाराजा जनक ने एक समय ज्ञान के लिए ! एक महान सभा का आयोजन किया। राजा ने अपने मन ही मन यह विचारा, कि मुझे सभा एकत्रित करनी है और उस सभा में मुझे ब्रह्मज्ञान हो जाना बहुत अनिवार्य है क्योंकि ब्रह्मज्ञान के बिना मेरा जीवन शून्य है। यह जानते हुए उन्होंने नाना ब्राह्मणों को निमंत्रण दिया। मेरे भद्रपुरूषोंआदि आचार्यों का कथन है !, जब नाना ब्राह्मण जन एकत्रित हो गए, उस समय वहाँ याज्ञवल्क्य मुनि महाराज भी आ पधारे। राजा जनक ने एक सहस्त्र गऊओं के सीगों से स्वर्ण मंडते हुए एकत्रित करा लिया था और यह कहा था, कि जो मेरे प्रश्नों का उत्तर देकर मुझे ब्रह्मज्ञान दे, वे जन ही इस गऊओं को ले जाएं।

मुनिवरोंदेखो !,महर्षि याज्ञवल्क्य जब राजा जनक की सभा में आ पहुंचे !, तो उन्होंने अपने शिष्य मण्डल से कहा कि इन गऊओं को ले जाओ। गऊओं को ले जाने से पूर्व, जो सभा परिपक्व थी, उसका सभापतितव महर्षि याज्ञवल्क्य ने किया। जब सभापति बन गए, तो उसी समय एक नग्न देवी भरी सभा में चली आई। मुनिवरों ! देखो,मनुष्य को नाना प्रकार की प्रवृत्तियां होती है। नाना प्रकार क !ी प्रवुत्ति में समाज परिवर्तित हो गया। नग्नदेवी माता गार्गी महर्षि याज्ञवल्क्य के द्वार शनैः शनैः जा पहुंची। राजा जनक ने कहा कौन हैं देवी? मेरी सभा में नग्न चली आ रही है, तुझे लज्जा नहीं आती? उस समय माता गार्गी ने कहा राजन्आप तो ब्रह्मज्ञान को ! पान करना चाहते हैं, आज तुम्हें ब्रह्मज्ञान उस परिस्थिति में हो सकेगा? जब तुम

एक देवी को नग्न दृष्टिपात नहीं कर सके।

तो मेरे भद्रपुरूषोंविवेकी पुरूष वह होता है !, जिसका एक सौम्य जीवन होता है। देखो,माता गार्गी ने राजा जनक ! को वह वार्त्ता प्रकट की और वह शान्त हो गया। फिर शून्यता में विराजमान हो याज्ञवल्क्य से कहा कि मुझे अपने आधे वस्त्रों को अर्पण कीजिए। महर्षि याज्ञवल्क्य ने अपना आधा वस्त्र दिया और माता गार्गी ने उस आधे वस्त्र को अपने शरीर पर ढाँप लिया। उसी समय याज्ञवल्क्य ने अपने शिष्य मण्डल से कहा था, कि इन गऊओं को अपने आसन पर ले जाओ। शिष्य मण्डल आज्ञा पाते ही, गऊओं को अपने आसन पर ले गए। अब ब्राह्मणों में यह एक बड़ी चर्चा हुई, क्या यह याज्ञवल्क्य ही सबसे महान हैं। ब्राह्मणों ने कहा कि हे राजन् ! आप हमारे प्रश्नों का उत्तर दिलाईए, अन्यथा यह गऊएं नहीं जानी चाहिए। उसी समय याज्ञवल्क्य ने कहा कि आप प्रश्न कीजिए, और मैं उसका उत्तर दूंगा। मुनिवरोंदेखो !, ! वहाँ प्रश्न उत्तर चलने लगे। किसी ने प्रश्न किया कि यह प्रकृति क्या है? याज्ञवल्क्य ने कहा कि यह प्रकृति शून्य है, यह निष्क्रिय है। ब्राह्मणों ने कहा कि इसमें क्रिया क्या है? उन्होंने कहा कि क्रिया प्राण है प्राण का मूल क्या है उन्होंने कहा प्राण का मूल परमपिता परमात्मा है। अब प्रश्न यह हुआ, कि प्राणों में जो विभाजन करने की सत्ता है, वह क्या है? तो उन्होंने कहा कि प्रकृति की जो पञ्चतन्मात्राएँ है उन पञ्चतन्मात्राओं का मन्थन किया हुआ, जो एक मन है वह मन इन महान प्राणों का विभाजन करता चला जा रहा है।

आत्मा द्वारा शरीर धारण का उद्देश्य

मुनिवरोंदेखो !, ब्राह्मणों ने कहा कि आत्मा क्या पदार्थ है? उन्होंने कहा कि आत्मा एक चैतन्य पदार्थ है, वे परमपिता परमात्मा के आँगन में जाने के पश्चात् वह महान बन जाता है। उन्होंने कहा कि यह आत्मा शरीर में क्यों रहता है? इसका क्या प्रयोजन है? इसका उत्तर देते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा था, कि शरीर में आत्मा के आने का उद्देश्य है, कि यह संसार में कर्म करने के लिए प्रयत्नशील रहें, क्योंकि आत्मा में ज्ञान और प्रयत्न की धाराएं होती हैं। जहाँ ज्ञान और प्रयत्न होते हैं वहाँ इच्छाएं होती

हैं। जहाँ इच्छाएं होती हैं वहाँ मन इत्यादि पारिवारिक होता है, और जब आत्मा शरीर में आता है, तो इच्छाएं प्रबल होती हैं, इच्छाओं के अनुकूल देखो, प्राणी कर्म करता चला जाता है। आत्मा का शरीर मे आने का उद्देश्य केवल यह है कि हम कर्मशील बनें और कर्म के उपासक बनें, क्योंकि कर्म हमारे यहाँ मुख्य प्रधान माना जाता है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने ऋषि मुनियों से कहा कि हम कर्म क्यों करें? याज्ञवल्क्य ने कहा कि कर्म इसलिए किया जाना चाहिए, क्योंकि उससे मूल संस्कार बनते हैं। यह शरीर होगा, तो मूल संस्कार बनेंगे यदि कर्म करोगे, तब भी संस्कार बनेंगें, कर्म नहीं करोगे, तब भी संस्कार बनेंगे। इसलिए याज्ञवल्क्य ने कहा ऊँचे कर्म करो। ऊँचे कर्मो से सुदंर सुदंर तुम्हारे चित्त में अंकुर विराजमान हो जाएंगें, जिससे तुम्हारा जीवन एक महान प्रफुल्लित और विचारशील बन सकता है। अन्तःकरण में ऊंचे संस्कार विराजमान होकर के इस संसार सागर से पार हो जाओगे।

जब याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यह उत्तर दिया, उस समय माता गार्गी आसन से पृथक हुई और जब सब ब्राह्मण थक गए, तो माता गार्गी ने कहा कि याज्ञवल्क्य ! जो प्रश्न !आप मेरे प्रश्नों का भी उत्तर दीजिए। उस समय याज्ञवल्क्य ने कहा कि देवी आप करोगी, मैं उसका उत्तर देने का प्रयत्न करूंगा। तो माता गार्गी ने कहा कि में यह जानना चाहती हूँ, कि तारामण्डल में जो प्रकाश की एक परम ज्योति है, यह क्या है? उस समय याज्ञवल्क्य ने कहा कि हे देवीयह जो तारामण्डलों में महान ! प्रकाश है, वे परमपिता परमात्मा का महत है। सृष्टि के आरम्भ में जब अंधकार होता है, तो उस समय परमपिता परमात्मा से एक महत् चलता है और वह महत् चलकर प्रकृति के परमाणुओं से उसका मिलान होता है। प्रकृति के परमाणुओं में कम्पन्नता आ जाती है। जब प्रकृति के परमाणुओं में कम्पन्नता आ गई, तो उसी कम्पन्नता आने के पश्चात् अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले, जो सूक्ष्म परमाणु थे, उनमें कम्पन्नता आई और उनमें कम्पन्नता आने के पश्चात उसी से वायु के परमाणुओं में कंपन्नता आई और वायु के पश्चात् अग्नि के परमाणुओं में कम्पन्नता आई, और अग्नि के परमाणुओं में कम्पन्नता के पश्चात् जल के परमाणुओं में कम्पन्नता आई और जल के परमाणुओं में

कम्पन्नता आने के पश्चात्, पृथ्वी के परमाणुओं में कम्पन्नता आकर के यह पृथ्वी का एक महान् पिण्ड बन गया। जब प्रकृति का पिण्ड बन गया। अब परमपिता परमात्मा का जो महत् था, वह और भी प्रभावित हुआ और वह जो पिण्ड था, उसके नाना प्रकार के कण होकर के और पिण्ड में जो कृति थी और उस पिण्ड का जो मन के सहित जो विभाजन हुआ, उससे देखो, कोई तो सूर्य मण्डल बन गया, कोई चन्द्र मण्डल बन गया, इसी प्रकार यह परमात्मा के ब्रह्माण्ड में अरबों और खरबों से भी कई खरब मण्डल बन गए। वह महान परमपिता परमात्मा का ही महत् था, उसी महत् से जो प्राण शक्ति है, वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को क्रियाशील बना रही है। महत् प्रभु की रचना है। जहाँ प्रभु की सृष्टि में नाना प्रकार के मण्डल हैं, मेरे वैज्ञानिकों का जो यहाँ तक कथन है, महाराजा अर्जुन के पुत्र बबरिक का तो यहाँ तक कथन है कि परमात्मा की सृष्टि में अन्तरिक्ष में एक आकाश गंगा कहलाती है और एक आकाश गंगा में खरबों खरबों मण्डल माने जाते हैं। जहाँ नाना सूर्य रहते हैं, जिस परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड में नाना बृहस्पति रहते हैं, जहाँ नाना ध्रुव रहते हैं, आज वह जो ब्रह्माण्ड है, मुनिवरोंवे परमपिता परमात्मा की रचनात्मक ! उसकी कला कौशल, उसकी महिमा, हमें प्रकाशित करती चली जा रही है। इस सृष्टि में आज हमें ज्ञान होना चाहिए। हम ज्ञान के उपासक बनें।

तो मेरे भद्रपुरूषों !उस समय याज्ञवल्क्य ने माता गार्गी से कहा कि हे देवी! यह जो उन तारामण्डलों में जो प्रकाश है यह प्रकाश केवल प्राण का है, इस प्राण के सम्बन्ध से एक विद्युत उत्पन्न होती है, वह विद्युत का ही चमत्कार है। उस समय माता गार्गी ने कहा कि हे राजन्आप जो राजा के गुरू बनते जा रहे हैं !, मैं एक और वाक्य जानना चाहती हूँ, कि हमारा जो एक बुद्धि का केन्द्र है, यह जो मन का केन्द्र है, तन्मात्राओं का केन्द्र है, यह क्या है? उन्होंने कहा कि हे देवीयह जो हमारी बुद्धि ! का केन्द्र है, यह जो विचार विनिमय का केन्द्र है, उसी को बुद्धि का केन्द्र कहा जाता है और यह जो मन है, यह जो बुद्धि के कण होते हैं, या तन्तु वे होते हैं, उनको बिखेरने का कार्य करता है, या किसी वस्तु को बाहरीय रूपों में लाता है और बुद्धि

के केन्द्र को पहुँचा देता है। बुद्धि उसे निर्णायात्मक करती है, जो तन्मात्राएं हैं वह प्रकृति की पञ्च तन्मात्राएं हैं, जो हमारे मन के पिछले भाग में मन और बुद्धि दोनों के मध्य में पञ्चतन्मात्राएं हैं। इन तन्मात्राओं से मन को और बुद्धि को दोनों को सहायता प्राप्त होती है।

उसके पश्चात् माता गार्गी ने कहा कि प्रभु मैं यह !ओर जानना चाहती हूँ, कि यह जो हमारी बुद्धि है क्या इस बुद्धि से हमें कार्य, हर समय करना चाहिए? उन्होंने कहा कि वास्तव में हमें बुद्धि से ब्रह्म का चिन्तन करना चाहिए। बुद्धि से यथार्थ वाक्यों को विचारना चाहिए और जब बुद्धि सामूहिक हो जाती है, साम्य हो जाती है तब निद्रा की अवस्था में मन बुद्धि और आत्मा के सहित हम परमपिता परमात्मा से मिलान करते हैं। तो मुनिवरोंजब याज्ञवल्क्य ने ऐसा कहा !, उन्होंने कहा कि हमारे शरीर में ओज क्या है? ऋषि ने कहा कि हमारे शरीर में ओज ब्रह्मचर्य है। उन्होंने कहा कि क्या यह ब्रह्मचर्य पृथ्वी का ग्राह है? उन्होंने कहा कि यह पृथ्वी का ग्राह नहीं है, यह इस प्रकृति का ओज है और जहाँ यह ब्रह्मचर्य प्रकृति का ओज है। पृथ्वी का हमारे यहाँ वसुन्धरा कहा जाता है, क्योंकि यह संसार को बसाने वाली है। वेद ने इसे वसुन्धरा कहा है।

मेरे भद्रपुरूषोंयाज्ञवल्क्य मुनि महाराज से माता गार्गी ने कहा कि हम परमपिता ! परमात्मा को क्या स्वीकार करें? उन्होंने कहा कि जो पाप पुण्य से रहित हो, वही हमारा परमपिता परमात्मा है। उन्होंने कहा कि पाप ब्रह्मणे कामशते हमारी जहाँ तक दृष्टि जाती है, वहाँ तक हमें पाप ही पाप प्रतीत होता है। याज्ञवल्क्य ने कहा कि देवीऐसा नहीं है !, मानो यह तो पापं क्रियतेश्चेत् अज्ञानमम ब्रह्माणि यह जो भी कुछ प्रतीत होता है, यह वास्तव में ज्ञान नहीं। हमें विद्या न होने के कारण, संसार अंधकार में प्रतीत होता है, माता गार्गी प्रश्न करती ही रही। अन्त में याज्ञवल्क्य मौन हो गए और कोई उत्तर नहीं बन सका। जब उत्तर नहीं बन सका, तो माता गार्गी ने बुद्धि से कार्य किया। मन में विचार यदि मैंने इतने ब्राह्मणों के मध्य में महर्षि ज्ञाज्ञवल्क्य जैसे ऋषि का अपमान किया और मैं प्रश्न करती ही रही, तो हो सकता है, कि ये ब्राह्मण

इसे अपमानित अवश्य करें। इसलिए उस विवेकनी, महामाया, माता गार्गी ने ब्राह्मणों की सभा में कहा था कि हे ब्राह्मण जनोजितने भी तुम सभा में !ऋषि समाज ! विराजमान हो, इसमें महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज सबसे बुद्धिमान हैं।

तो मेरे भद्रपुरूषों! उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि हमें प्रत्येक वाक्य का ज्ञान होना चाहिए। ज्ञान के बिना हमारा जीवन शून्य रह जाता है। महर्षि याज्ञवल्क्य भी ज्ञान के द्वारा ही सभापतितव कर सके, अन्यथा ज्ञान से शून्य प्राणी क्या बनता है, ज्ञान से शून्य प्रत्येक देवकन्या और प्रत्येक मानव हर समय दुखित रहते हैं। इसलिए मेरे भद्रपुरूषोंआओ आज तुम्हें मैं केवल एक वार्त्ता प्रकट करता चला गया जो ! महात्मा याज्ञवल्क्य और माता गार्गी की चर्चा थी। यहाँ हमें विचार विनियम कर लेना चाहिए, कि हम अपने जीवन को कहाँ लेते चले जाएं।

जैसा आज के वेद पाठ में माता गार्गी के शब्दार्थो में भी वसुन्धरा का वर्णन आता चला आ रहा था तो हमारे यहाँ बेटातीन प्रकार की माता होती है। एक माता वह ! होती है जो जननी माता कहलाती है जो जन्म देती है, द्वितीय हमारी माता पृथ्वी कहलाती है और तृतीय हमारी गो माता कहलाती है। प्रथम हमारी जन्म देने वाली कौन सी माता है? जिसके गर्भस्थल में बेटा !हमारा जीवन पनपता है। मेरे भद्रपुरूषों ! मेरे पवित्र माताओं को विचार विनिमय कर लेना चाहिए, कि मेरी प्यारी माता परमात्मा के कितने निकट है। माता के जरायुज में केवल एक बिन्दु जाता है उसी बिन्दु से हम जैसे प्यारे पुत्रों और आदि आदि पुत्रों की रचना हुई, यदि मै अपनी माता से यह प्रश्न करूँ कि हे मातेश्वरी! तेरे इस गर्भस्थल में इस पीटर और पुत्री कि रचना कौन कर रहा है ?तो कोई उत्तर नही मिलेगा, परन्तु इसका उत्तर यह होता है कि हे हे मातेश्वरी! वह परमपिता परमात्मा तेरे कितना निकट है, तेरे गर्भस्थल में एक बिन्दु से उस परमपिता परमात्मा, कलाकार ने तेरे शरीर में एक पुत्र जैसे बालक का निर्माण कर दिया तो मेरे भद्रपुरुषों! वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि यह जो परमपिता परमात्मा हैं वह हमारे जीवन का साथी है और हमें महान महान प्रेरणा देकर हमें ऊँचा बनाता है हे मातेश्वरी ! आज जो तेरे गर्भस्थल में जो रचनात्मक है,

वह परमपिता परमात्मा की है उसकी हमें ज्ञान सहित उपासना करनी चाहिए

माता रेधनी

मेरे भद्रपुरूषोंवह हमारी माता कहलाती है जिससे हम जन्म लेते हैं। वह अपने गर्भ ! में ही हमारा लालन पालन करती है। हमारे आचार्यों का कथन है कि जब माता का गर्भ छठे माह का होता है, उस समय माता के गर्भस्थल में बालक के संस्कार बनते हैं और जो संस्कार उस माह में माता पुत्र के अंतःकरण में ओत प्रोत करा देती है वह न तो गुरू के द्वारा ही प्राप्त होते हैं न ऊँचे ऊँचे गृहों में और न ऊँचे ऊँचे शिक्षालयों में ही प्राप्त होते हैं। इसलिए हमें विचार विनियम करना है। संसार में पुनः से भगवान राम, गौतम महर्षि पतंजलि, कणाद, जैमिनी इत्यादि महापुरूषों का जन्म हो जाएं तो यह संसार अज्ञानता से दूर जा सकता है। हे मेरी प्यारी मातातुझे आज ! संसार का कल्याण करना है। आज मुझे त्याग और तपस्या की बेदी पर पहुंचना होगा, अन्यथा यह संसार जो प्रतीत हो रहा है, भयंकर रूपी अग्नि की वेदी पर विराजमान होता चला जा रहा है।

मेरे भद्रपुरूषोंसप्तम माह में बालक की बुद्धि का निर्माण होता है। जैसी माता की ! बुद्धि होगी, माता के संस्कार होंगे उसी के अनुकूल पुत्र की पवित्र बुद्धि बनती चली जाएगी। इसी प्रकार मेरी पवित्र माताओं को विचार विनियम करना है मुझे एक वार्त्ता नहीं अनेक वार्त्ताएं स्मरण आती चली जा रही है। मुनिवरों जिस समय महर्षि ! अगस्त्य की माता रेधनी के मन में यह कल्पना जागी, कि मुझे एक बालक ऐसा उत्पन्न करना है, जो संसार के ज्ञान और विज्ञान को बनाने वाला हो, तो माता रेधनी के हृदय से एक वेदना जागृत हुई। जब एक बिन्दु से जुरायुज की स्थापना हुई, तो माता क्या करती? देखो, मार्ग की वनस्पतियों को पान करके, उनसे अपने जीवन का निर्वाह करती और गऊ के दुग्ध को पान करती। बेटामाता रेधनी का जीवन मुझे ! स्मरण है। उन्होंने अपने मन में किसी प्रकार के पाप की कल्पना ही नहीं की। तो मेरे भद््रपुरूषोंमुझे स्मरण है !, माता रेधनी के गर्भ से बालक अगस्त्य मुनि का जन्म हुआ, जिसने बेटातीन आचमनों में समुद्र को पान कर लिया। आज ऐसे बालक !

संसार में होने चाहिए जिससे पुनः संसार का उत्थान हो सके।

तीन आचमन

मैंने तीन आचमनों की चर्चा तो पूर्व काल में प्रकट की है। आज मुझे समय इतनी आज्ञा नहीं दे रहा है। आज मैं केवल इतना प्रकट कर सकता हूँ, कि ज्ञान के तीन आचमन होते हैं, ज्ञान, कर्म और उपासना। जो तीन प्रकार के ज्ञान विज्ञान को जानता है, वह महान पुरूष कहलाता है। इसी प्रकार एक नहीं, मैं नाना माताओं की चर्चा प्रकट करने लगूं, तो ये मुझे सुंदर प्रतीत नही होगा

भगवान् राम का जन्म हुआ। माता कौशल्या ने राष्ट्र कोष में से एक अंकुर भी पान नहीं किया। माता कौशल्या के मन में एक वेदना थी, कि आज का संसार संस्कृति से दूर चला जा रहा है, मुझे अपने गर्भ से ऐसे बालक को जन्म देना है, जिससे वह संस्कृति का उत्थान करता चला जाएं। भगवान राम जैसे महापुरूषों का जन्म हुआ। बेटामाता कौशल्या कला कौशल करके अन्न को पान !मुझे स्मरण है कि बेटा ! आज मेरी पवित्र माताओं को पुनः से विचार विनियम !करती थी। तो मेरे भद्र पुरूषों करना होगा, त्याग और तपस्या की वेदी पर पहुंचना होगा। अन्यथा यह संसार कहा जा रहा है कुछ प्रतीत नहीं और कहाँ जाकर समाप्त हो जाएगा। मेरे भद्र पुरूषों ! आज का संसार उस भयंकर अग्नि पर विराजमान हो रहा है जहाँ मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ समय के पश्चात् संसार में अग्नि प्रज्ञवलित होती चलीजाएगी। ऐसा क्यों है? क्योंकि आज संसार केवल काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इत्यादि की वेदी पर विराजमान हो रहा है। एक क्षण समय में मुक्ति को चाहता है परन्तु मुक्ति तो कर्मणयता से, त्याग और तपस्या से प्राप्त होती है।

मेरे भद्रपुरूषों महानन्द !एक समय मेरे प्यारे !जी ने वर्णन कराया है, कि आज आप केवल आत्मा और परमात्मा की चर्चा करते हैं। माताओं की चर्चा करते चले जाते हैं। आज का संसार तो विज्ञान का समाज है और विज्ञान का युग है। यह आप क्या चर्चा करते हैं? मैंने अपने प्यारे महानन्द जी से कहा, कि हे पुत्रवत्यह संसार विज !्ञान का है, तो होने दो। विज्ञान तो रावण के राज्य में था, विज्ञान तो द्वापर युग के काल

में भी था, परन्तु उस विज्ञान का क्या हुआ? उस विज्ञान का जो उस काल में हुआ, वह ही अब इस विज्ञान का होने वाला है। तो बेटाइसका बनेगा क्या !? विज्ञान के साथ साथ मानव में ज्ञान की मात्रा, विवेक की मात्रा होना बहुत अनिवार्य है। यदि इस विज्ञान के साथ साथ मानव में आत्मिक तत्त्व नहीं रहे, तो संसार का विनाश होता चला जाएगा। जब एक महान वैज्ञानिक संसार बन जाता है और सुविधाएं मानव के समीप हो जाती हैं, तो मानव में अभिमान होता है जहां अभिमान होता है वहाँ मानव का विनाश होता चला जाता है।

मेरे भद्रपुरूषोंजब माता के गर्भ से पृथक हुए तो पृथ्वी की गोद में आ गये। यह ! पृथ्वी हमारी माता है। हमें अपने में बसा लेती है। हमें कहीं अन्न देती है कहीं नाना प्रकार की वनस्पतियां देती है तो कहीं खनिज और खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति कर देती है। हे वसुन्धरातू हमारा कल्याण कर। इस पृथ्वी के गर्भ में एक महान् अध्यात्मिक ! वेत्ता बन जाते हैं। इसी में एक ऐसा वैज्ञानिक बन जाता है, जो खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति करता है और एक ऐसा वैज्ञानिक है जो इस पृथ्वी माता के गर्भ से खनिज पदार्थों को एकत्रित करने का कार्य करने लगता है। जैसे माता का बालक माता की लोरियों में विराजमान होकर दुग्ध पान कर लेता है, इसी प्रकार पृथ्वी माता के गर्भ में आकर के कोई महान प्राणी वैज्ञानिक बनता है, खाद्य पदार्थों का, कोई खनिज पदार्थों का, कोई सूर्य चन्द्रमा में जाने का। इसी पृथ्वी में से धातु ले ले करके नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण हो जाता है।

एक हमारी माता गो कहलाती है। गो माता क्या है? गो माता वह जो हमें दूध देने वाली हो। जब माता की लोरियों से पृथक हुए, तो गऊ माता की लोरियों के आँगन में चले गएं और गऊ माता की जो दुग्ध देने वाली सुन्दर लोरियां हैं उसको पान करके हम बलिष्ठ होते है, ओजस्वी, तेजस्वीऔर ब्रह्मचारी बनते है वह जो गऊ माता है वह राष्ट्र की एक धेनू कही जाती है। जिस राजा के राष्ट्र में बेटागऊ का पूजन ! होता है, गऊओं की रक्षा होती है, उस राजा के राष्ट्र में किसी प्रकार की हानि नहीं होती। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने कहा है कि राष्ट्र में जो अन्न की हानि हो जाती है !,

वह गऊ का पूजन न होने से होती है क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में गऊओं का दुग्ध होता है, कामधेनु गऊएं होती हैं, उस राजा के राष्ट्र में किसी प्रकार की हानि नहीं होती, क्योंकि वह माता अपने प्यारे पुत्रों का पालन करती है, दुग्ध देती है, सुन्दर सुन्दर पदार्थ देकर के मानव को बलिष्ठ बना देती है। वीर बना देती है इसलिए हे मेरी पवित्र माता! हे मेरे भद्र पुरुषों! आज गऊ का पालन करो और गऊ को रक्षा करते चले जाओ क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में गो रूपी पशु होता है उसकी पूजा होती है उस राष्ट्र में अन्न की या और किसी प्रकार की हानि होती है।

गऊ की पूजा

आज हम पूजा किसे कहते हैं? पूजा कहते हैं सदुपयोग करने की। मानो गऊ की पूजा क्या है? गऊ की पूजा है, उसे खाद्य पदार्थों का अच्छा पान कराया जाएं और उससे दुग्ध को लिया जाएं, राष्ट्र की महान् सम्पत्ति होती है। इसलिए उसका पूजन कहा जाता है। जो जैसा पदार्थ है उसको उसी रूप में स्वीकार करना, उसी रूप में ले जाना, वह केवल एक उसकी पूजा करना जैसे अग्नि है, अग्नि का सदुपयोग करना है अग्नि से यज्ञ करना है, सुगन्धि को प्रसारण कराना है, मानो उससे अन्य इत्यादियों को पचाना है, तो यह अग्नि की पूजा कहलाती है। अग्नि की पूजा वह नहीं होती, कि अग्नि प्रदीप्त हो रही है, मानव उसके समीप विराजमान है, उसका सदुपयोग ही नहीं कर रहा है, वह उसकी पूजा नहीं होती, पूजा केवल वही होती है जो उसके नियम है, उसके जो कटिबद्धता है, उसे अपने में धारण करना, उसका सदुपयोग करना, यह उसका पूजन कहलाता है। अति ब्रह्मणे में जान करके केवल अग्रणी में अज्ञानता में भी जो विश्वास किया जाता है, वह भी राष्ट्र को समाज को अन्धकार में ले जाता है। इसलिए मेरे भद्र पुरूषोंआज संसार में अज्ञान नहीं रहना चाहिए। वेद की पताका ! को ऊँचा बनाना है। वेद की पताका को लेकर चलना प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या का कर्त्तव्य है

मेरे भद्रपुरूषों !ब्राह्मण समाज को, राष्ट्र समाज को विचार विनियम करते हुए, राष्ट्र में गऊओं का पालन होना चाहिए। प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्याएं जब गऊ का दुग्ध

पान करेंगे, तो उससे बल बुद्धि और हमारा शरीर ओजस्वी और तेजस्वी बनेगा। हम अपनी वास्तविक दशा को जान सकते हैं।

आज हम अपने मातेश्वरी जीवन को ऊँचा बनाएं। हे माताआज जो पृथ्वी का भार ! है वह माताओं के ऊपर होता है क्योंकि जब माता अपने गर्भ में उत्तम बालक को जन्म देने से विहीन हो जाती है तो वह बुद्धिमानता नहीं रहती, प्रजा में अज्ञान छा जाता है। जब अज्ञान छा जाता है तो हम पराकष्ठा में रमण कर जाते हैं, हम शूद्र संज्ञा को प्राप्त हो जाते हैं, हमारी मानवीयता दशा अमानवीयता की दशा में परणित हो जाती है।

राष्ट्र निर्माण

भगवान !मनु के समय को बेटा !मनु से पूर्व संसार में कोई राजा नहीं था। भगवान ! अति समय हो गया है मै काल को तो वर्णन नहीं करना चाहता। केवल वाक्य यह चल रहा था कि भगवान मनु ने सबसे पूर्व राष्ट्र का निर्माण किया। राष्ट्र का निर्माण किस लिए किया जाता है? धर्म की रक्षा के लिए और यदि राष्ट्र धर्म की रक्षा नहीं की जाती, तो यह राष्ट्र नहीं कहलाता है। वह राष्ट्र आज नहीं, तो कल अवश्य नष्ट भ्रष्ट हो जाएगा।

बेटायह जो ज्ञा !न का वन है। मैं कहाँ तक इन वाक्यों को उच्चारण करता चला जाऊं। वाक्य चल रहा था, कि हम अपनी मानवीयता को ऊँचे शिखर पर ले जाएं और वह उसी काल में ले जा सकते हैं जब पूजन करने की सामग्री हमारे द्वारा होगी। पूजन की सामग्री हमारा ज्ञान है, हमारा विज्ञान है। हम उसका सदुपयोग करते चले जाएं। यही हमारा सबसे यथार्थ पूजन है। माता की पूजा क्या है? आज हम माता की पूजा करते हैं। वेद में भी आता है कि मातेश्वरम् ब्रह्मणे पूजनम ब्रव्हेनः आक्यानी गिरत्यनी माता का पूजन है, माता की सेवा करना। माता के लिए नाना सुविधा देना, यह माता की पूजा कहलाती है। हम माता की वास्तविक पूजा करें, श्रद्धालु बन करके, उसका जो कष्ट है, उसका निवारण करने का प्रयत्न करें, यह पुत्र के लिए माता की एक विशेष पूजा होती है। इसलिए मेरे लिए भद्रपुरूषोंयहाँ वैदिक !

साहित्य में पूजा का जो अभिप्राय है उसका सदुपयोग करना, उसकी यथार्थ रूपों में स्वीकार करना, यह उसकी पूजा कहलाती है।
मेरे भद्रपुरूषोंवाक्य मैं यह उच्चारण कर रहा था !, कि हम माता दुर्गेवेति, हे माता ! दुर्गुणां ब्रह्मे आज हमारे दुर्गुणों को नष्ट कर, जिससे आज हम तेरा पूजन करते हुए, तेरी महिमा को जानते हुए और ज्ञान के सहित संसार में भ्रमण करें। देखो,अति ! अज्ञानता की श्रद्धा भी समाज का विनाश कर देती है। समाज को अन्धकार पर ले जा करके, हमारे जीवन के जो विकास होते हैं, वे नष्ट हो जाते हैं। मानव के जीवन का विकास नष्ट नहीं होना चाहिए। मातेश्वरी! हमारी तो यह एक आराधना है, जिसको वैदिक साहित्य में दुर्गेवेति कहा है क्योंकि आप दुर्गुणों को नष्ट करने वाली हैं। मेरे भद्रपुरूषोंजब तक हम परमपिता परमात्मा दुर्गे के अनुकूल कार्य करते हैं !, तो वास्तव में शीघ्र हमारे दुर्गुणों को नष्ट कर देती है। आज हम विद्या, सरस्वती की पूजा करें। सरस्वती हमारे कंठ में विराजमान हो जाती है। वह हमारे जीवन की साथी बनकर के हमारे जीवन का उत्थान करने वाली है। मेरे भद्रपुरूषोंइस मनोहर विद्या ! का नाम सरस्वती है। दुर्गेवेति उस महान जो दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है, इसको जो प्राणी धारण करता है और उसका जो परिणाम है, दुर्गुणाम् दुर्गस्ता दुर्गुणों को नष्ट कर देती है, हमारा जीवन, हमारा समाज में निर्मलता में परिवर्तित होता हुआ एक महान बन जाता है।
हम संसार में यथार्थ रूप का ले करके चलें, यह बुद्धिमानों का कर्तव्य है। समाज अज्ञानता में चला जा रहा हो, उसे अज्ञानता से ज्ञान के मार्ग में लगाना, यह बुद्धिमान ब्राह्मणों का कर्तव्य होता है। ब्राह्मण केवल अपने ऐश्वर्य के लिए, अपने स्वार्थ के लिए समाज को अन्धकार के मार्ग पर न ले जाएं। वह जहाँ कामनाओं का स्वार्थी बन जाता है। वहाँ राष्ट्र का, समाज का विनाश होता चला जाता है। इसलिए वेद नाद सहित उच्चारण कर रहा है, कि हे ब्राह्मण समाजआज तू राष्ट्र और प्रजा को ऊँचा ! बना और धर्म के मार्ग परचला, परन्तु धर्म संकुचित्त नहीं है धर्म बहुत व्यापक है जैसे वायु संसार में रमण कर रही है। वायु जैसा वहाँ प्राण देती है, ऐसा ही चन्द्र

मण्डल में, ऐसा ही बृहस्पति मण्डल में, ऐसा ही सूर्य मण्डल में, ऐसा ही मृत मण्डल में देती है यह उसका धर्म है। वह कितना व्यापक है, जो सब लोक लोकान्तरों में एक सा प्रतीत होता है। इसी प्रकार उसका नाम धर्म कहलाता है।
हम धर्म के पुजारी बनें, परन्तु हमारा धर्म क्या है? हमारा धर्म है यथार्थ उच्चारण करना। मनसा वाचा कर्मणा हम मन से, कर्म से और वचन ने किसी प्रकार का पाप न करें। यह हमारा धर्म कहलाता है। प्राणी मात्र से हमारा स्नेह हो, यह हमारा धर्म कहलाता है। केवल संकुचित्त बनकर बुद्धि को नष्ट करने को धर्म नहीं कहते। धर्म केवल अपने तक सीमित नही है धर्म तों व्यापक है जैसा यहाँ धर्म है, वैसा सूर्य मण्डल में है। जैसा सूर्य मण्डल में है वैसा ही प्रत्येक लोक लोकांतरों में। धर्म की एक ही संज्ञा मानी जाती है, इसलिए आज हमें धर्मज्ञ बनना है। जिस कार्य को करते समय मन में भय, शंका और लज्जा उत्पन्न न हो, उसका नाम धर्म कहलाता है। आज एक मानव मिथ्या उच्चारण करता है, और जो उसका हृदय पुकारता है, अरे, मिथ्या है परन्तु वह स्वार्थ के वशीभूत होकर के मिथ्या उच्चारण कर देता है। किसी को कष्ट देता है, या अज्ञानता के एक मार्ग पर चला देता है, तो यह उसका स्वार्थ, उसकी रूढ़ि, उसे उस आँगन में ले जाती है, जहाँ उसे जाना नहीं होता, परन्तु वह उस पर चला जाता है। उसे धर्म नहीं कहा जाता। धर्म उसको कहते हैं, जिससे हम किसी कार्य को करते समय, किसी वाक्य को समाज में उच्चारण करने से पूर्व हमारे अन्तःकरण में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न न हो। यदि उत्पन्न होती है, तो वह अधर्म कहलाता है। इसलिए मुनिवरोंवेद हमें यही आज्ञा देता है। अब हम वेद की परम्परा ! पर, ऋषि मुनियों की परम्परा पर चलें। जो हमें परम आनन्ददायक मार्ग दर्शाता है उन पद चिन्हों पर चलें, भगवान मनु ने राष्ट्र के, समाज के, धर्म के नियम दिए हैं, हमें उनको मानना, उन्हीं पर चलना आदि कार्य ऋषियों की परम्परा पर चलना, यही हमारा कर्त्तव्य है और इसी से हमारा परम उत्थान हो सकेगा।
यह है मुनिवरोंआज का हमारा आदेश। आदेशों का अभिप्राय यह है !, कि हम उस मातेश्वरी जो दुर्गुणाम् दुर्गस्ते जो हमारे दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है, उसी माता दुर्गा

का हम पूजन करते चले जाएं, उसका सदुपयोग करते चले जाएं, आज हम उसको श्रद्धा में परिवर्तित करते हुए, श्रद्धालु बनकर के, विश्वासी बन करके अंधविश्वासी नही परन्तु वेद जिसकी आज्ञा देता है, ज्ञान और विवेक के सहित जो विश्वास है परन्तु मन्थन किया हुआ, उसके अनुकूल चलना हमारा कर्त्तव्य है जिससे मुनिवरोंहमारा ! धर्म, हमारा चलन संसार के लिए बेटाव्यापकता में परिवर्तित होकर के और पुनः से ! जैसा मैंने पूर्वकाल में कहा चक्रवर्ती राजा बनें औरयौगिक बनें, महान पुरूष बनें, जिससे संसार में हमारा एक महान नाद बजता चला जाएं। यह आज का हमारा आदेश है। अब शेष चर्चाएं बेटासमय मिलेगा !, तो कल उच्चारण कर सकूंगा। अब तो समय नहीं कि और आगे चर्चाएं करूं क्योंकि यह तो ज्ञान का वन है, समय मिलेगा तो बेटा मैं द्वितीय काल में प्रकट !करूंगा। आज का आदेश अब समाप्त होने जा रहा है। आज के आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हम अपनी मानवीयता को ज्ञान और विज्ञान के शिखर पर पहुँचा करके हम अभिमानी न बनें। काम और क्रोध में तल्लीन न हों और धर्म की उपासना करते हुए, कर्म करते चले जाएं। वह है बेटाआज का ! हमारा आदेश। अब शेष चर्चा कल प्रकट करूंगा यदि समय मिलेगा तो वेद का पाठ होगा।

१९ 13 11 1966 राष्ट्र कल्याण का आधार

१३ नवम्बर १९६६ को राष्ट्र कल्याण यज्ञ समारोह की पूर्ण आहुति के पश्चात समाज सदन वीसी पार्क सरोजनी नगर में. दिया हुआ प्रवचन।

जीते रहो ,

देखोआज हम तुम्हारे समक्ष कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले !मुनिवरों , जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पुनः से, जिन वेदमन्त्रों का पाठ किया। जब हम पुनः की भांति सुन्दर मन्त्रों का पठन पाठन किया करते हैं तो उस वेद की सुन्दरता हमारे हृदय और कण्ठ को मधुर बना देती है। जब हम मधुरता का अनुभव करते हैं, तो उस मधुरता का बडा सुन्दर परिणाम और उसका एक सुन्दर वृक्ष उत्पन्न हो जाता है। जब हम यह कल्पना करते हैं, कि उस मधुरता का वृक्ष

उत्पन्न हो गया, तो हमारा हृदय उज्ञवल हो जाता है और हृदय में पवित्रता आ जाती है। जब हृदय स्थल में सुन्दर भूमि के महान् अंकुरों को निर्धारित किया जाता है, तो उन सुन्दर अंकुरों का वृक्ष उत्पन्न होता है, बेटाकितना सुन्दर वृक्ष ?कैसा वृक्ष होगा ! इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा का धन्यवाद ?होगा करते हुए, अलौकिकता को वर्णन करते हुए, हमें तो बेटा-एक कण मैं ओत-ऐसा प्रतीत होता है। जैसे वह एक ! प्रोत होकर के अब मानव को क्या, सर्व सृष्टि को संहार करता हाला जा रहा है| इसलिए उस वेदज्ञ स्वरूप परमपिता परमात्मा की, जो आनंद स्वरूप है,उस आनन्दमयी पवित्र माता का गुणगान गाते चले जाएँ जिसका आनंद परम है जिसकी महिमा आदि आदि ऋषिजन गाते हुए औए उसी की आराधनाऔर तपस्या मैं संलग्न होने के पश्चात उनके हृदय की उदारता और मधुरता का कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता|

आज मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ प्रेरणा देते चले जा रहे है इनकी भी सुंदर प्रेरणा किसी काल मैं हमें भी प्रभावित कर देती है,आज मेरे प्यारे महानन्द जी का संकेत यज्ञ के संबंध मैं कुछ वाक्य उच्चारण करने का है,परंतु इनकी भी इच्छा है,वह तो अभी अभी निर्णय किया जा सकेगा,जैसा मेरे प्यारे महानन्द जी भी उच्चारण कर रहे है,कि यज्ञ की सुंदर प्रक्रिया है आज हम उसके लिए अपने जीवन की उस यज्ञमयी मातेश्वरी सुंदर वेदी के समीप ले जाने के योग्य बनाएँ,जब हम उसके समीप जाते है तो वेदी कितना सुंदर पवित्र शब्द है ,अरे,ज्सिसे स्वयं पवित्र है ऐसे ही मानव को भी पवित्र बना देती है| यज्ञशाला मैं प्रविष्ट होते ही, ब्रह्मा के समीप जब होता गया,यज्ञमान सभी विराजमान होकर के सुंदर यज्ञ कर्म करते हैतो उनकी उदारता की कोई सीमा है ही नहीं,उस यज्ञवेदी की जो उदारता है उसका क्या प्रमाण है? एक शाकल्य हम देते है उसी शाकल्य का कई गुना बनकर के मानव के लिए कृषि रूप मैं कई सुंदर सुंदर पदार्थों के रूपों मैं,विहारों के रूपों मैं हमारे जीवन को सुंदर और पवित्र बना देती है,इसीलिए आज हमें यज्ञ कर्म में कितना संलग्न होना चाहिए। परन्तु जहां हम यज्ञ कर्म करते हैं, वहां हम यज्ञवेदी के अनुकूल भी बनें। यज्ञ वेदी हमें सुगन्धित देती है ,हम सुगन्धि को धारण करैं और दुर्गंधि को अपने अन्तःकरण में

आने ही न दें।

वह जो एक सूक्ष्म सा शब्द है यज्ञ, परन्तु यज्ञ का जो विस्तार हैयज्ञ रूपी जो वृक्ष , है, वह कितना श्रेष्ठ है। कल मेरे प्यारे महानन्द जी अपने कुछ तेजस्वी वाक्यों में प्रकट करते चले जा रहे थे। इनका वाक्य था शब्द पर। मानो उनका वाक्य था "गौ" कि गौओं की रक्षा। गौओं का पूजन। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे वर्णन कराया कि आज अब्रेह गृत्यानि अस्वीही गौ रशी अस्ताः जहां हम पवित्र बन करके गौ के समीप जाते हैं, गौ नाम विद्या का भी है परन्तु गौ नाम जैसा महानन्द जी ने उच्चारण किया, कि गौ रूपी जो पशु है, वह अग्ने कहलाता है। आज जब हम इन विचारों पर जाते हैं, कि वह हमारे लिए पवित्रता देता हैउसी पशु के घृत के द्वारा यज्ञमान आहुति , देकर अपने जीवन को सफल बनाता है। जब जीवन सफल बनाया जाता है, तो हम क्यों न ऐसे सुन्दर सुन्दर यज्ञ करें। कुरीतियां अपने गृह में न आने दें। यज्ञ कर्म करने का लाभ उसी को होता है, जो अपने जीवन को भी वैसा ही पवित्र बनाए जैसी यज्ञ वेदी है। छल कपट से अपने जीवन को अलग रक्खे। इसी प्रकार अपने यहां होने वाली जो कन्याएं हैं, होने वाले जो पुत्र हैं, वह सब श्रेष्ठ और ऊंचे कर्म करने में तत्पर हों। यदि आज हम यज्ञ कर्म करने में तत्पर रहते हैंऔर हमारी जो कन्याएं , हैं, गृह में उत्पन्न होने वाले मानो जो पुत्र हैं, वह हमारे अनुकूल नही बनते, तो उनका जो दायित्व हैंउनका जो भार है ,, वह जो शुभ कर्म में नहीं लगतेयह उन माता , उन याज्ञिक पुरुषों का सूक्ष्म विचार होने के नाते ,और पिताओं की, उनके अन्तःकरणों में कुछ घृणात्मक होने के नातेकुछ उनके द्वारा राष्ट्रीय भावना होने के नाते ,, उनकी कन्याएं और पुत्र श्रेष्ठ नहीं बनते। जब हम प्रत्येक वस्तु पर अनुसन्धान करते हैं, तो हमें यह प्रतीत होता है कि हम बडे सूक्ष्म हैंहम बडे भ्रष्ट हैं ,, हमारा जीवन इस प्रकार का नही बना, जिस प्रकार का हम बनाना चाहते थे।

परमात्मा

जहां हम इन वाक्यों पर जाते हैं, कि यज्ञ कर्म करना बहुत ही श्रेष्ठ है। मुझे तो परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा से पूर्व काल में समय भी प्रदान किया गया ,

सुन्दर सुन्दर कर्मों में परम्परागत हमारा अधिकार रहा है, इसीलिए हमें अपनी परम्परागत को त्यागना नहीं चाहिए। आज मानव मानव से रुष्ट हो जाता है, परन्तु दो से मत रुठो। दो क्याएक तो परमपिता परमात्मा और एक याजक। एक यज्ञ स ?े नही रूठना चाहिए, एक परमात्मा नही रुठना चाहिए। मानव मानव से रुष्ट हो जाए, तो कुछ नही बनता| तो भद्र पुरुषों ,परमात्मा में जब हमारी निष्ठा ?परमात्मा क्या है ! आस्था रहती है, तो हमारा जीवन श्रेष्ठ बनता है। और जब हमारी उदारता, यज्ञ में पवित्र कर्म में, जैसे यज्ञ वेदी की अग्नि में शाकल्य ओतप्रोत करने पर उसमें से - उसमें से सुगन्धित उत्पन्न हो जाती है ,उदारता, उसी प्रकार हमें अपनी सुगन्धि को नहीं त्यागना चाहिए। जैसे यज्ञ अपनी सुगन्धि को नहीं त्यागता, इसी प्रकार हमें भी अपनी सुगन्धि को नही त्यागना चाहिए।

जीवन की ऊर्ध्वा गति

आज मानव जैसा कि महानन्द जी ने कल के आदेशों में भी प्रकट कियादैत्य बन , करके आता है और देवता पर आक्रमण करता है, वृत्तियों पर आक्रमण करता है, तो मुनिवरोंवह मानव वास्तविक देवता होता है !, जो उस दैत्य के प्रभाव में न आ करके, अपनी उदारता को नहीं त्यागता। अपनी उदारता और मानवीयता की सुगन्धि को नहीं त्यागता हैवह देवता कहलाता है। वह यज्ञ कर्म करने वाला श्रेष्ठतम , कहलाता है और वह स्वर्ग के स्थान को ग्रहण कर लेता है।आज हम इस प्रकार के याज्ञिक कर्म करते हैं, तो हमारी शुद्ध और पवित्र भावना ओत प्रोत रहती है। मानव के जो विचार हैंमानव की जो धाराएं हैं उनके ऊपर उसका पूर्णत्व अधिकार हो , जाता है। जहां माता पिताओं का सम्बन्ध है, जैसा मेरे प्यारे महानन्द जी ने वर्णन कराया, माता पिता का कर्तव्य होता है, कि अपने प्यारे पुत्रों को एक स्थान में विराजमान करता हुआ, सुन्दर शिक्षा दे। हे बालकआज !हे ब्रह्मचारिणी !हे ब्रह्मचारी ! तू परमात्मा का चिन्तन कर, वह माता पिता उन ब्रह्मचारियों की पूजा करते हैं।

पूजा किसको कहते हैं ,प्रीति करना ,उनको यथार्थ बुद्धि देकर उनका सत्कार करना ? उन्हें योग्य ,उनसे अति प्रेम करना मानो देखो बनाने में तत्पर रहें, तो वह माता पिता

बालक के लिए देवता कहलाते हैं। आज हमें देवता बनना है। दैत्य नही बनना है , देवता बन करके संसार में विचरण करना है। यह जो संसार क्षेत्र है, केवल पाप करने के लिए नहीं हैंयह जो पशु ,, गौ इत्यादि है, वह भक्षण करने के लिए नहीं हैं, गौ इत्यादि की रक्षा करनी होती है। इसीलिए हमें विचार विनमय करना हैहमें , अपनी प्रकृतियों को ,अपनी रसना के आनन्द को, जो हमें नीचे को ले जाती हैं, उन पर हमें अपना अधिकार करना है, यदि हम उन पर अपना अधिकार नहीं करते, तो हम ऐसे संस्कारो को जन्म देते रहते हैं, जो हमें नीचे प्रकृति के आंगन में ले जाते हैं। ऊर्ध्वगति बनाना मनुष्य का कर्तव्य होता है, वेद तो हमें यही कहता है कि तुम स्वयं वैज्ञानिक बनो। ज्ञानी बनो और अपने प्यारे पुत्रों को बनाओ। अनुशासन में स्वयं बनो और अपने अपने उत्पन्न होने वाले, प्यारे पुत्र, कन्याओं को बनाओ। यदि वह नही बनते, तो मै तो यह कहा करता हूं कि यह तो माता पिता की सूक्ष्मता रहती है। क्यों? जब माता पिता जिस समय बालक के लिए अपने उद्देश्य ले करके गृह आश्रम में प्रविष्ट होते हैं, तो वे यह नहीं विचारते, कि हमें सुयोग्य महान सन्तान को जन्म देना है। ऐसा न विचार करके, वे केवल आकृतियों में अशुभ कार्यों के करने से क्या होता है, कि पुखा नक्षत्र मेंत्रिगोणियों में इस प्रकार का जैसे ऋषियों के प्रमाण प्राप्त , होते हैं, हम उनको तिलांजलि नहीं देते। ऐसे वातावरण मेंऐसे समय में जहां दैत्यों , का प्रकोप रहता है और शरीर की जो प्रकृति है, उसमें अग्रणियों में जैसे पूर्णिमा के दिवस चन्द्रमा के आंगन को चला जा रहा है, इसी प्रकार हमारे शरीर में भी चन्द्रमा और समुद्र की तरंगों का प्रभाव, हमारे शरीर पर रहता है इसीलिए हमें विचारना है, हम ऋषि मुनियों की सन्तान पुत्र और पुत्रियां कहलाते हैं। ऋषि मुनि यही कार्य करते, कि वेद अनुकूल गृह में प्रविष्ट होते। परमात्मा का विज्ञान केवल यज्ञ तक ही सीमित नहीं है और मैं यह भी कहा करता हूं कि यज्ञ तक सीमित है। केवल इस यज्ञ तक सीमित नहीं है, जो हम अग्नि में आहुति दे देते हैं, मानो यज्ञ का संबंध हमारा पुत्र और पुत्रियों तक, राजा और प्रजा तक, परमात्मा और भक्त तक और गुरु और शिष्यों तक, उस महान परमपिता परमात्मा की दी हुई वाणी का प्रसार होना

चाहिए। यह सब कुछ जो मैने वर्णन किया, याज्ञिक कहलाता है। यह सब यज्ञ कर्म हैं मानो जब हम अपने सदाचारशिष्टाचार और अनुशासन में रहते हैं ,, तो जीवन ऊंचा बनता है।

अनुशासन में रहने के लिए राजा और प्रजा दोनों को विचार विनिमय करना होगा। जैसा मुझे महानन्द जी ने वर्णन कराया कि मूर्खों का चुना हुआ राजा मूर्ख होता है, तो महानन्द जी ने यह बहुत सुन्दर वाक्य कहा। इस वाक्य से वास्तव में मुझे मग्नता भी आती है और कटुता भी प्रतीत होती है और आनन्द का भी वाक्य है, कि जिस राजा को साधारण, अशिक्षित प्रजा मत देती है, वह राजा कदापि भी राष्ट्र के हित का नही हो सकता। क्यों नही हो सकता। क्योंकि बुद्धिमानों का चुनाव बुद्धिमानों के समीप होता है और बुद्धिमान ही उसको चुनते हैं। आज जैसे यज्ञशाला में विराजमान होने वाले ब्रह्मा का चुनाव करना है, परन्तु ब्रह्मा का चुनाव वही कर सकता है, जो ब्रह्मा के महत्व को जानता हैयज्ञमान के ,उदगाता के महत्व को जानता है ,जो अध्वर्यु , महत्व को जानता है। जो इसके महत्व को नही जानता, वह इसका चुनाव करता है, तो देखोउस चुनाव में ऐसा भी ब्रह्मा बन सकता है ,, जिसको अक्षरों का बोध ना हो , जिसको बुद्धि ही नहीं, जो उस यज्ञ में ब्रह्मा बनने का अधिकारी नही होता। यज्ञमान बनने का अधिकारी नहीं होता। इसीलिए मेरे प्यारे महानन्द जी ने बहुत ही सुन्दर शब्द कहा इसीलिए बुद्धिमान उसी को चुनें, जो उसके महत्व को जानते हैं। जो महत्व को नहीं जानते, वह उसका चुनाव भी कदापि नहीं कर सकते।

आओअब हम यह विचार विनिमय करें !मेरे भद्र पुरुषों ,, कि हम मूर्ख किसको कहा करते हैं। मूर्ख हम किसी को नहीं कहा करते, महानन्द जी मूर्ख ही मूर्ख उच्चारण किया करते हैं, जैसा इन्होंने कल कुछ मूर्ख शब्द का प्रयोग किया। हमने भी किया। मैंने तो इनकी वार्त्ता को पुनः से लिया, परन्तु इन्होंने अपने स्पष्ट शब्दार्थों में कहा कि मूर्ख, परन्तु मूर्ख वह होते हैं, जो उसके महत्व को नहीं जानते और उस महत्व के लिए वह आगे कहते हैं, कि मैं इस महत्व को जानता हूं, वह कौन होते हैंतो वह ? मूर्खत्व माना जाता है। इसीलिए हमें !बेटा विचार विनिमय करना होगा। प्रत्येक

संसार की जितनी वार्ता है, उन्ही सब पर विचार विनिमय करना होगाअ्रथवा हमारी , महत्वता किसी भी काल में न रह सकेगी।

पुरातन कालीन राजा

अ्राज हम प्रजा अ्रौर राष्ट्र, दोनों मिलकर के अ्रपने जीवन को अ्रौर राष्ट्र को ऊंचा बनाएं| महानन्द जी ने जैसे मुझे वर्णन कराया, तो मुझे इनकी वार्ता श्रवण करके एक बडा महान कष्ट हुअ्रा, अ्राधुनिक काल में भी ऐसे राजा, जो अ्रपने लाभ अ्रौर हानि को नही जानते, वह राजा क्यों चुने जाएं? मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक वाक्य बडा ही सुन्दर कहा, कि लाभ अ्रौर हानि को जानना, यह राजा का कर्तव्य है। केवल वह स्वयं अ्रपनी बुद्धि से विचारें। अ्राज जो मानव मतों से किसी वाक्य का निर्णय करना चाहता है, वह प्रजा में भ्रमण करे, प्रजा में राजा महाराजाअ्रों का मुझे स्मरण है, महाराजा दिलीप क्यामहाराजा रघु रात्रि काल में अ्रपनी पत्नी से अ्राज्ञा पा ले करके ,, पति पत्नी राष्ट्र के ऊपर विचार विनिमय करते अ्रौर पति पत्नी अ्रपने राष्ट्र में भ्रमण करते अ्रौर यह कहा करते, कि किसी गृह में दुःखद घटना तो नहीं है, प्रजा दुखित तो नहीं हैपशु का पालन भी अ्रच्छी तरह होता ,गौअ्रों की रक्षा भी होती है , उनको उचित स्थान भी दिया जाता है या नहीं ,है, दोनों भ्रमण करते, तो उनके राष्ट्र में एक अ्रानन्दवत् रहता। अ्रपने वाहन में विराजमान होते, रात्रि काल में ही भ्रमण करते। न तो उनको भय ही होता, न उनको शंका होती है, क्योंकि शंका अ्रौर भय उनको होता है जो पापी पुरुष होते हैं, शंका, भय उनको नहीं होता, जो प्रजा के लिए विचारते हैं। अ्राज जैसा मेरे ऋषि ने मुझे वर्णन कराया, अ्राधुनिक काल के इस अ्रार्यावर्त भूमि में रहने वाले, जो राजा हैं, उनको लज्जा बहुत है, वह समाज में नही अ्रा सकते। उसका परिणाम तो मैंने एक ही जाना, कि इन्हें पापी तो उच्चारण नहीं करना चाहिए, परन्तु ये उच्चारण करना बहुत सुन्दर है कि वह अ्रपने कर्तव्य की वेदी पर नहीं हैं, यदि वे अ्रपने कर्तव्य की वेदी पर हो, तो उन्हें भय किसका है। प्रजा उनका अ्रादर करेउनका सत्कार करे ,, परन्तु प्रजा उनका सत्कार करती है, जिनके द्वारा कर्तव्य की भावना होती है, जो अ्रपनी बुद्धि से कार्य करता है, अ्राज जो दूसरों

के अग्रणों में जा करके कुछ कार्य करना चाहता, तो वह सुन्दरता नहीं है। राजा और प्रजा को दोनों को ही हानि होती है, जैसे वेद ने राष्ट्र का निर्माण किया है, मैं तो प्रभु से यह कहा करता हूं तू ऐसे महापुरुषों को संसार में उत्पन्न कर, जिनके द्वारा सुन्दर राष्ट्र का निर्माण हो। आज ऐसे राजा के, ऐसी प्रजा के अग्रणों को न बना, जिससे भगवन्राजा और प्रजा दोनों विनाश को प्राप्त होते चले जाएं। !

आज मैं यज्ञ के सम्बन्ध में प्रकाश दे रहा था, यहां हम राष्ट्र कल्याण यज्ञ कर्म करते हैं, परन्तु राष्ट्र कल्याण यज्ञ करने का किसको अधिकार होता हैउसको राजा करता ? है। क्योंकि राजा अपने राष्ट्र का कल्याण चाहता है। यह प्रजा का कार्य नही कि हम राजा स्वयं ब्रह्मा ,राष्ट्र कल्याण यज्ञ करें। उसमें सहयोग दें। प्रजा उसके समीप जाए अधिपति बन करके यज्ञपति बन करके आदि सुन्द ,बन करकेर ब्रह्मा का चुनाव करके, उसकी आज्ञा का पालन करकेयज्ञ कर्मकाण्ड ,यज्ञ के विधान को बना करके , को करें। इसी प्रकार जो अपने राष्ट्र की यज्ञवेदी है, इसका भी विधान उसी प्रकार का होना चाहिए। क्योंकि यज्ञ में ब्रह्मा हमें ज्ञान कराता है, कि शिष्टाचार से रहो , ब्रह्‌्मचर्य से रहोव्रत को धारण करो और व्रत क्या है ,? कि जो नियम मैंने बनाएं हैं, इनके अनुसार अपने जीवन को बनाते चले जाओ। याज्ञिक बनोइसी प्रकार ब्रह्मा , वह ,उद्गाता का और अध्वर्यु का। देखो ,यज्ञमान का ,चुनाव करता है होताओं का चुनाव केवल ?चुनाव किसलिए करता हैमतों से नहीं, उनके गुणों के अनुकूल उनका चुनाव स्वयं कर देता है, वह ब्रह्मा। वह बुद्धिमान होता है ,वेदों का उसे ज्ञान होता है , वेदों में यहां तक है, कि मानव के अन्तःकरण को ब्रह्मा जान लेता है और जानने के पश्चात वह उसका चुनाव कर देता है। जो राजा इस प्रकार के याज्ञिक होते हैं, यज्ञ कर्म करने में तत्पर होते हैं। तो मानो उनका तो बडा सौभाग्य होता है, वह अपने राष्ट्र को और अपने जीवन को धन्यवाद देते हुएपरमात्मा की आज्ञा का और बुद्धिमानों , की आज्ञा का पालन करता हुआ, जैसे यज्ञवेदी को रचाया जाता हैउसमें गौ की , रक्षा के लिए आता हैउसमें नियमबद्ध करता ,अहिंसा परमोधर्म हमें ज्ञान कराता है , उसमें कर्तव्य की भावना लाता है। ज्ञान की भावना उसमें होती है ,है| इसी प्रकार

जिस राजा में इतने गुण होते हैंवह यह ,ब्रह्म ज्ञान भी हो ,त्याग की भावना हो , जानने वाला हो, कि आत्मा तो अजर, अमर है, मुझे भय किसका हैभय से रहित , शंका लज्जा से रहित हो ,हो,दुराचार उसके मन में न हो,सदाचार की वेदी पर रमण करने वाला होतो वह राजा जब इस यज्ञवेदी पर ,व्रत का पालन करने वाला हो , आ जाता है, तो उसका आदर होता है, ब्रह्मा उसका चुनाव करता है। गुरु उसका चुनाव करता है, उसके पश्चात उसे राष्ट्रीयता में धारण कर देता है। वह जानता है, कि ब्राह्मणक्षत्रिय वैश्य और शूद्रों का जो कर्तव्य है ,, उसको पालन करने के लिए नियम होते हैं। जैसे नियम होता, उसी नियम के अनुकूल राष्ट्र का चुनाव होता है, इस प्रकार के चुनाव से राष्ट्र में रहने वाली प्रजा सुख अनुभव करती है।

वेद से राष्ट्र

ऐसा राष्ट्र हमारे यहां वेद में आता है। हमारे यहां जो यज्ञ है, यह एक राष्ट्र का चुनाव है। यह एक राष्ट्रीयता लाता है, त्याग भावना हैनिर्द्वंद्वता है ,, इसमें जैसे अग्नि यज्ञशाला में निर्द्वन्द्व हो करके प्रदीप्त होती है। ज्ञान रूपी अग्नि, जिसके शरीर रूपी यज्ञशाला में इस प्रकार प्रदीप्त होती है, उसे संसार में किसी का भय नही होता, भय किसे होता है? जो ज्ञानी नहीं होता है| इसीलिए मेरे प्यारे महानन्द जी ने जो कल सुन्दर सुन्दर वार्त्ता प्रकट की, इनकी वार्त्ता में कटुता तो अवश्य थी, परन्तु वाक्य बडे ही श्रेष्ठ थे, वास्तव में ऐसी श्रेष्ठता थी, कि हम ऋषि परम्पराओं को स्वीकार करें। हम ऋषि के आदेशों को लेकर चलें। और उन आदेशों से, हम अपने जीवन में सुन्दरत्व रमण करते चले जाएं। यह आज का हमारा सुन्दर आदेश है। अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपना कुछ यज्ञ के सम्बन्ध में अपना प्रकाश दे सकते हैं।

पूज्य महानन्द जी ओ३म् यज्ञः मयातम् ब्रह्मे वर्त्तस्वःकृति विध्यानः देवम्।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेववास्तव में मेरे !आदि ऋषिगण !मेरे पूज्यपाद भद्रमण्डल ! पूज्यपाद गुरुदेव तो बडे ही दयालु हैं, क्योंकि परम्परागतों से गुरुओं का एक भाव रहा है। गुरु वही होते हैं, जिनका हृदय बहुत उदार होता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे आज पुनः से कुछ वाक्य उच्चारण करने का सौभाग्य प्राप्त कराया है। आज मुझे

कोई विशेष चर्चा प्रकट नही करनी है। वाक्य तो इस संसार में उच्चारण करने के लिए बहुत ही हैं, परन्तु मुझे विशेष पोथी की आवश्यकता नही, कि आज मैं संसार की पोथी को लेकर चलूं या आधुनिक काल की पोथी को लेकर चलूं। हम तो इतना ही प्रकट कर सकते हैं, कि आज के संसार कोआज के याज्ञिक पुरुषों को ,, अपने जीवन में कुछ न कुछ सुन्दरता और अच्छाईयों को धारण करना ही चाहिए।

योग्य संतान

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तुम्हारे समक्ष एक राष्ट्र का चित्रण किया, कि राष्ट्र किस प्रकार का होना चाहिए। मैंने कल के आदेशों में राष्ट्र के सम्बन्ध में कुछ प्रकट किया और प्रजा के सम्बन्ध में कहा। आज हम अपने जीवन को या राष्ट्र कल्याण जो यज्ञ है इनको करके भी हमारी तृप्ति नही होती, उनसे हमारा जीवन तृप्त नहीं होता। हमारा जीवन तो उस काल में तृप्त होता है, जब मेरी प्रत्येक मातामेरा भद्र पुरुष और , यज्ञ कर्म में जिनकी आस्था ,राजा और महाराजा सब ही देखो श्रेष्ठतम हो, जो हमारी परम्परा का आर्यावर्त था, उसी के अनुकूल बनें, तो हमें शान्ति हो सकती है। ऋषि मुनियों की जो पवित्रता है ,उनकी जो आत्मा है ,ऋषि मुनियों की जो धारणा है , उनकी जो व्याकुलता है, वह केवल यही आदेश दे रही है, कि आज प्रत्येक मानव को वेद के अनुकूल अपने जीवन कोअपने कर्म को और अपने प्यारे ,अपने राष्ट्र को , गृहस्थी के आश्रम में जाता हूं ,पुत्रों को बनाना चाहिए। आज जब मैं प्रत्येक, तो कहां तो पूर्व का गृह आश्रम था, जहां देखोमहाराजा दिलीप और उनकी ,महाराजा रघु , प्रजा। इसी प्रकार के गृह थे, जहां अनुशासन था। कैसा अनुशासनयदि माता अपने ? आज तुझे पन्द्रह दिवस तक यही रहना है !पुत्र को यह उच्चारण करती कि हे पुत्र, तो पुत्र उसकी आज्ञा का पालन कर रहा है, आज का पुत्रवाद क्या उच्चारण कर रहा है, कि माता की जिस वार्ता को आप उच्चारण कर रहे हैं, वह समय तो दूरी चला गया है। जहां इस प्रकार की भावनाएं पुत्रों में हों और माता अपने हृदय को शान्त करके विराजमान हो जाए, तो मैं जानता हूं कि माता और पुत्र उनमें कोई भाव नही रहता ? यह संसार इस प्रकार का ?अब इसकी मूल धारा जाननी होगी। मूल धारा क्या है

जहां गृह आश्रम में म ?क्यों है ाता पिता उपन्यासों को, आज जिनमें दुराचार की भावना दी जाती हो, आज देखो जिस राष्ट्र में, जिस आर्यावर्त में मेरी पवित्र माताएं, मेरी कन्याएं, मेरी पवित्र भौजई जहां अपने आदर को नष्ट करके, द्रव्य के बदले, दे करके अन्न का भक्षण करती हो, तो वह कोई राष्ट्र और प्रज्ञा नहीं कहलाती। यहां मैं एक वाक्य प्रगट करने जा रहा हूं कि आज माता के द्वारा क्या सूक्ष्मता हैजहां ? उपन्यासों का और नाना प्रकार की अशुद्ध पोथियों का पठन पाठन करके, जब हम सन्तान को उत्पन्न करते हैं, तो वह सन्तान तो उपन्यासों के अनुकूल ही उत्पन्न हो सकेगी, वह वेद और शास्त्रों के अनुकूल क्यों हो सकेगीवह अनुशासन में क्यों रह ? अनुशासन तभी चलता है ?सकेगी, जब हम वेदज्ञ बनते हैंवेद कर्म में हमारी निष्ठा , होती है, परमात्मा में हमारा अटूट विश्वास होता हैउसके प्रति हमारी अति श्रद्धा , होती है।

वेद शास्त्रों में जहां महर्षि कपिलगौतम और देखो जहां वेद व्यास के यहां ,कणाद , महात्मा सुखदेव जैसे जन्म लेने वाले हों आज उन माता पिताओं की आवश्यकता है। पूज्यपाद गुरुदेव ने भी वर्णन किया और मैं भी अब ?आज यहां क्या हो रहा है उच्चारण कर रहा हूं, कि आज तो इस संसार में राष्ट्र के लिए जो राष्ट्रीय बनाए जाते हैं, आज जो मेरी पवित्र माताएंमेरा भद्र समाज ,, जो सन्तान को उत्पन्न कर रहा है, वह कीडों को उत्पन्न कर रहा है। वह कीडे क्यों हैंवह ,आज कीडा क्या करता है ? उत्पन्न होता है, क्रीडा करने लगता है। न उसे ज्ञान है, न कर्म का ही ज्ञान है क्योंकि वह तो परमात्मा का एक कारागार है। आज का जो विद्यार्थी समाज हैआज जो , माता पिताओं की सुन्दर कन्याएं हैं, वह भी कीडे के सदृश हैंक्योंकि न कर्म है ,, न धर्म है। जब इसकी प्रवृत्ति नहीं है, तो आज राष्ट्र का भविष्य हम ऊंचा अनुभव करें, तो वह असम्भव है। इसीलिए हम सबको विराजमान होकर विचारना होगा, कि हमें आज संसार में किस प्रकार का बनना हैसमाज को किस ?राष्ट्र को कैसा बनाना है ? ?प्रकार का बनाना है

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो आधुनिक काल को दृष्टिपात नहीं करते, परन्तु मैं यह उच्चारण

करने जा रहा हूं, आज मै उन वाक्यों को प्रकट नही करना चाहताआज तो मैं यह , जानता हूं कि आज के राजा महाराजाओं का जो प्रजा चुनाव करती है, वह कलंकित होती है, क्योंकि वह सदाचार और मानवता को दृष्टिपात में लाती हुई चुनाव नही करती। मैं तो यह जानता हूं कि यह प्रजा और राष्ट्र दोनों गड्ढे में चले जाएंगें। समय बहुत निकट आ रहा है, जब इस संसार में अग्नि प्रदीप्त होगी और अग्नि के मुख में चले जाएंगें। इसका कारण क्या हैआज के ,आज के संसार को दृष्टिपात करते हुए ? आज के गृह आश्रमों को दृष्टिपात करते हुए ,समाज को, जहां आज ब्रह्मचर्य ही , स्वीकार न किया जाए। जहां कणाद और गौतम जैसे महान आत्माओं ने गृह आश्रम में प्रविष्ट होकर दर्शनों के अनुकूल उत्तम सन्तान को जन्म दिया, वेद व्यास जैसे महान पुरुषों ने देखोजिसकी महानता का ,महान सुखदेव जैसों को जन्म दिया , आज कोई प्रमाण नहीं। जब वह माता के गर्भसे उत्पन्न हुए और पांच वर्ष के पश्चात गृह को त्याग दिया। वह गुरु के भाव के लिए राजा जनक के द्वार पर पंहुंचा। तीन दिवस तीन रात्रि हो गए मानो अन्न से पीड़ित हुए और निद्रा को ग्रहण न किए, तीन दिवस हो गए। उसके पश्चात वह राजा जनक के द्वार जा पंहुचें। गुरु के चरणों में नम्र भाव से ओत प्रोत हो गए। गुरु ने जान लिया, कि वास्तव में यह बालक शिष्य बनने का अधिकारी है। अधिकारी को जब शिष्य बनाया जाता है, तो गुरु और शिष्य दोनों का मान होता है। जहां अनाधिकारियों को शिक्षा और दर्शनों का योग दिया जाता है, तो मैं यह जानता हूं, कि यह भी अभागा संसार है। क्योंकि वहां अधिकार और अनधिकार को नहीं विचारा जाता, आज के संसार में, आज के समाज में गुरुओं की सूक्ष्मता नहीं है। गुरु बहुत है, परन्तु गुरु क्या कहते हैं यह तो प्रभु ही जानता है, क्योंकि वह सुन्दर कन्याओं को शिष्य बना लेते हैं। आज प्रत्येक प्राणी को शिष्य बना लेते हैं, शिष्य बना करके क्या करते हैं, कि कोई तो राष्ट्र के प्रति ही चलता हैकोई , कोई शिखा का विरोध ,कोई यज्ञ का विरोध करता है ,वेद के अनुकूल नहीं चलता यह गुरुवाद नहीं ?यज्ञोपवीत का विरोध करता है। यह क्या है ,कोई देखो ,करता है, यह विनाशवाद कहा जाता है। क्योंकि जहां गुरु और शिष्य दोनों में स्वार्थ है, वहां

गुरु और शिष्य का भाव कहां? इसी प्रकार जैसे गुरु और शिष्य का भाव है इसीप्रकार राजा और प्रजा का भाव है, प्रजा यह जानती है, कि अपने विचारों के अनुकूल राजा चुनों, चाहे उनके विचार कितने ही दुराचारमय हों। जब इस प्रकार के राजा चुनेंगें, तो यह राजा भी यह जानेगा, कि इसने तेरा बहुत मत दिया है , इसीलिए तेरा कर्तव्य है, कि इसका कार्य पहले कर। मानो देखो, जब प्रजा को एक दृष्टि से दृष्टिपात नही किया जाएगा। तो यह क्या हैयह न राष्ट्र है ?, न राष्ट्र की गृणी है, उसे तो केवल एक विनाशवाद कह देना चाहिए। मैं तो अपने शब्दार्थों में यही कहा करता हूं, प्रश्न होता है कि यह है क्यायह ग्राहणा प्रज्ञम् ब्रह्मे अकर्मणीयामी दर्हस्तेः ? यह मानो कर्म से बहुत दूर है। कर्म से दूर होने के नाते ,यह अकर्मणीय है, प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या उसके राष्ट्र में चिन्तित होता है, और जहां इस प्रकार की चिन्ता होती है, वहाँ राजा के राष्ट्र में सुन्दरता नहीं होती। विनाशवाद की भावनाएं होती हैं उसके राष्ट्र में, इसीलिए मुझे और अधिक आदेश प्रकट नही करना है।

गौवर्धन पूजा

आज में एक वाक्य और प्रकट करता चला जाऊं, कि कल के आदेशों में, मैं दीपावली के सम्बन्ध में कुछ प्रकाश देना चाहता था, परन्तु गुरुदेव ने आज्ञा ही नहीं दी। आज मैं उस गोवर्धन के ऊपर प्रकाश देना चाहता हूं, जहां भगवान कृष्णा जैसे महा पुरुषों ने गोवर्धन, गौ की पूजा की। उस महान गौ के गोबर की पूजा की। आज पूजा का भाव क्या हैविचार विनिमय करना है ?, कि इसका भाव क्या है? इसका भाव है, कि जिस भूमि से हम अन्न लेते है,उस भूमि में जब हम गौ के गोबर को ओतउसमें विद्युत शक्ति होती है ,प्रोत करते हैं-, एक जीवन शक्ति होती हैउस जीवन , शक्ति को, जब पृथ्वी में दिया जाता है तो इससे अधिक अन्न उत्पन्न होता है, जब अधिक अन्न उत्पन्न होता है, तो गौ माता के जो पवित्र भाव हैंउसके अंग से जो भी , कुछ उत्पन्न होता है, वह मानव के लिए श्रेष्ठतम कहलाता है।

भगवान कृष्णा आज के दिवस संसार के महान पुरुषों को एकत्रित करते और इस गोबर की पूजा करते। गौ वहां एकत्रित रहतीं, उनकी पूजा करते और भगवान कृष्णा

यह आदेश देते, कि राष्ट्र में ,समाज में यदि कोई माता है, तो यह गौ रूपी पशु है, भगवान कृष्णा के ऐसे विचार होने के नाते उन्हें गोपाल कहा जाता है| क्योंकि गौ का पालन करने वाले यहां एक नहींमहाराजा विराट के यहां ,, गौओं का कितना आदर था, महाराजा दुर्योधन द्वारा विराट की गोओं के ले जाने के पश्चात, महाराजा अर्जुन वहां केवल नपुंसक की वृत्ति में थेवह गौओं को छुडाने के लिए ,, गोओं की रक्षा करने के लिए, एक सूक्ष्म से बालक को ले करके जा पंहुचें। आज वह कर्तव्य की भावना जहाँ दुर्योधन केवल गौओं का वध नही करता था, केवल उनकी रक्षा करना, कि राजा हमारी गौओं को क्यों ले गया। जहां इस प्रकार के भाव होजहां गोओं का , सुन्दर भावना ,आदर की भावना हो ,इतना आदर होता हो, जिस राष्ट्र के महापुरुषों में हो, आज जिसका भक्षण किया जाता है, तो उसको क्या कहा जाएगाजिस गौ , के घृत को यज्ञवेदी में यज्ञमान विराजमान हो करके, ब्रह्मा उसकी सुगन्धि को पान करने वाला होप्रकृति उस सुगन्धि को लेने वालि हो मानो जिस यज्ञशाला में , विराजमान हो करके, जिसका साकल्य बन करके, अग्नि में जाएवह अग्नि देवता के , प्रति, गौ के प्रति क्या भाव होते हैं। यह सब विचारणीय वाक्य है। इसके ऊपर मानव को अध्ययन करने की आवश्यकता है। जो राजा बन करके और प्रजा बन करके, दोनों इन वाक्यों पर विचार नहीं करते, तो इसको क्या कहा जाएगा। इसीलिए कल के वाक्यों में मैंने एक ही वाक्य प्रकट किया था, कि आज संसार में अन्न क्यों उत्पन्न होगा, यह वाक्य था हमारे समक्ष, अन्न क्यों उत्पन्न नहीं होता।

अन्न का अभाव क्यों

अन्न इसीलिए उत्पन्न नहीं होता, कि यज्ञ कार्य नहीं होते। यज्ञ कर्म नहीं होते, तो इसीलिए यह अन्न नहीं होगा। हो ही नही सकता। यदि राजा राष्ट्र कल्याण यज्ञ न करें और प्रजा करें, तो यह क्या हैप्रजा को क्या अधिकार है ?, राष्ट्र कल्याण यज्ञ करने का। राजा करे और राजा वह करे, जो अपने राष्ट्र को ऊंचा बनाना चाहता है। प्रजा उसके साथ चलती हैउ ,सके अनुकूल चलती है। प्रजा उसका आदर करेगी। जब इस प्रकार के कर्म नही किए जाएंगें तो क्या होगाअन्न उत्पन्न हो ही नहीं ?

सकता। जहां वह कर्म किए जाएं, कि माताओं से सन्तान उत्पन्न नहीं होनी चाहिए और मुर्गों से सन्तान उत्पन्न होनी चाहिए, भक्षण करने के लिए। तो क्या बनेगा इसकाआज प्रत्येक मानव के लिए विचारणीय ?मानो इसको क्या कहा जा सकेगा ? पुण्य ,प्रश्न है। जहां माताओं के गर्भ से तो मनुष्य जीवन बडे भाग्य से प्राप्त होता है कर्मों से प्राप्त होता है, आज उनके लिए तो प्रतिबन्ध है और जिन योनियों को मानव घृणा की दृष्टि से पान करता है, आज उनको कण्ठ में ला रहा है। आज गृह में ऐसे ऐसे जो गन्ध को धारण करने वाला हो, उसका आदर होता हो, और जो दुग्ध देनेवाला पशु है उसका अनादर होता हो, तो इस राष्ट्र को और इस संसार को क्या कहा जाएगाइसके ऊपर विचार करो। यदि नहीं विचारा जाएगा तो मैं तो ? यह कहा करता हूं, कि यह संसार विनाश के मार्ग को चला जा रहा है।

आज मुझे परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा से सूक्ष्म शरीर के द्वारा इस पुण्य कर्मयज्ञ वेदियों पर विराजमान हो कर दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैं , जन-जन होता-यज्ञ कर्म करने वाले ब्रह्माइत्यादियों को सुन्दर आशीर्वाद देता हूं। जैसा मैंने पूर्व कहा है कि पूर्व के अनुकूल तो यज्ञ नहीं, परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भी कहा करते हैं और भी कहा करते हैं कि न करने से कुछ करना बहुत सुन्दर है। देखो कहां तो यज्ञ कर्म था, कि महाराजा रघु के हृदय में जब ये भावना हुई कि मुझे यज्ञ कर्म करना है, तो पुरोहित ने कहा कि तुम एक वर्ष तक अखण्ड ब्रह्मचारी रहोगे और एक सहस्त्र गायत्रियों का नित्य प्रति पठन पाठन किया करोगे। पति पत्नी दोनों को यह आदेश दिया और कहा कि इसके पश्चात तुम यज्ञमान बनने के अधिकारी बनोगे। जब वह यज्ञ कर्म होता है, तो मानो कितना श्रेष्ठतम् कर्म होता है। वहां ब्रह्मचारी ऋषि मुनिऔर यज्ञमान और यज्ञमान ,तपस्वी भयंकर वनों से लाए गए , धर्मदेवी दोनों पवित्र हों, होताजन भी ब्रह्मचारी हों, साकल्य भी उसी प्रकार के हों , वेदपाठ भी स्वर सहित हो, चाहे वह वर्षों में यज्ञ कर्म होते, परन्तु देखोउनका प्रभाव , पवित्रता से होता ,शुद्धता से, तो वह राष्ट्र और प्रजा दोनों सुखी होतें। तो कहां वह यज्ञ और कहां यह यज्ञ ,जहां द्रव्य के पीछे द्रव्य के आंगन में उसके विचारों को

दृष्टिपात नही किया जाताआज उनको यज्ञवेदी पर लिया जाए त ,ो कहां वह कर्म और कहां यह कर्म।

आर्यवर्त

तो मैं इस वाक्य को अधिक नहीं ले जाना चाहता। मैं तो यह कह करता हूं, कि ऐसे समय में ऐसे भयंकर काल में यदि ऐसे कर्म भी होते रहें, तो बहुत ही सुन्दर है। आज प्रत्येक मानव कोप्रत्येक देव कन्या को अपने मनों में यह संकल् ,प धारण करना चाहिए, कि हमें प्रत्येक वाक्य में देखो दीपावली के अवसर पर आकर के जहां हम नाना दुर्गन्धि देते हैं, वहां वह सुगन्धि वाले सुन्दर सुन्दर यज्ञ कर्म करने वाले भी बनें। जिससे देखोकुछ पवित्रता आती चली जाए। सुगन्धि आती चली जाए। यही , तुम्हारा कर्तव्य है। कोई मानव जीवित रहना चाहता हैकोई मानव भयंकर अग्नि को , त्यागना चाहता है, तो परमात्मा का चिन्तन, यज्ञ कर्म, परमात्मा की आराधना। अन्धकार में न जाना हो, तो कामप्यारे ,मोह पर शासन करना ,लोभ ,मद ,क्रोध , तो इस भय ,पुत्रों को ऊंचा आदेश देना। आज इस वेदी पर आ जाओंकर अग्नि काण्ड से पृथक हो सकते हो। आज के मानववाद में, आज के समाज में, ऐसे सुन्दर यज्ञ कर्म करते रहना, यह बहुत ही सुन्दर है और इसकी सुगन्धि देवताओं को प्राप्त होती है। यदि इस प्रकार के यज्ञ, एक ही समय में दीपावली के अवसर पर इस आर्यावर्त मेंजहां देखो आर्य ,ों का राष्ट्र रहा हैहोते ,श्रेष्ठ पुरुषों का राष्ट्र रहा है , रहे, तो बहुत सुन्दर है। आर्य इनको क्यों कहा जाता है ?आर्यावर्त इसे क्यों कहते हैं ? क्योंकि परम्परा से इसकी यज्ञ में बहुत निष्ठा रही है। यहां के राजा महाराजा सब ही यज्ञ में निष्ठावान रहे हैं।

आज के राजा कहते है, जहां उन्हें यज्ञ कर्म करने की प्रेरणा दी जाए, कि यहां तो मुहम्मद के मानने वाले भी हैं, यहां ईसा के मानने वाले भी हैं, तो हम इस प्रकार के कर्म, हम किस प्रकार कर सकते हैं। क्यों नही कर सकतेमोहम्मद ,मानो देखो ? मोहम्मद के मान ,कोई पापी नही थाने वाले पापी नहीं, जो यज्ञ में नहीं आ सकते हैंईसा के मानने वाले पापी नहीं और यदि यह ऐसे शुभ कर्म को यह कहते हैं ,, कि

नही होने चाहिए, तो उनको राष्ट्र से पृथक कर देना चाहिए। उनका आर्यों में रहने का कारण ही कुछ नहीं है, क्योंकि आर्यों में वह रहता है, जो आर्य वन करके रहता है। आज जो आर्यों की श्रेष्ठ भावनाओं को नष्ट करने वाला हो, वह राजा के राष्ट्र में नहीं रहना चाहिए। यदि रहता है, तो आर्य बन करके रहे, उपनिषदों का बन करके रहें, दर्शनों का बन करके रहे।

आज मैं तुम्हें एक ज्ञान और कराए देता हूं, कि आज जितना विज्ञानवाद है, कोई चन्द्रमा में जा रहा है, कोई समुद्रों की यात्रा कर रहा है, इस प्रकार का जो विज्ञान है, वह दर्शनों में है, सब वेदों में है| मैंने कल के आदेशों में कहा है, बाईबिल में नहीं हैमोहम्मद के मानने वालों में नहीं है ,, क्योंकि मुहम्मद बिचारा विज्ञान तो जानता नहीं था और ईसा भी नही जानता था। तो यह जितना भी विज्ञान है, सब दर्शनों से गया है, यह आर्यावर्त की पवित्र विद्या है, यह विद्या सार्वभौम बनी है। मैं यह नही कह सकता, वह किसी वाणी में रहो, किसी भाषा में रहो, कोई भी उसकी वाणी बदल जाएउसका परिवर्तन , हो जाए, परन्तु वह सब वार्त्ता दर्शनों में, वेदों में और इत्यादि ग्रन्थों से गई है। जैसे मैने पूर्व काल में दृष्टिपात किया, महाराजा अर्जुन की विशेषज्ञ विज्ञान की एक पोथी, जिसमें चन्द्रमा में जाने वाला यातायातमङ्गल में जाने , वाला यातायात, सब कुछ उसमें क्रियाबद्ध थी, परन्तु इस भारत भूमि का, इस आर्यावर्त भूमि का दुर्भाग्य रहा, कि वह सब अग्नि के मुख में चला गया। हमारे यहां वेदों की ११२७ शाखाएं, सब अग्नि के मुख में चली गई। कुछ संक्षेप में रही, जिनका संग्रह आज भी मानव के समक्ष है। उनमें आज भी विज्ञान है। आज का वेदपाठी यह नही जानता, कि आज हम एक ऐसा यन्त्र वेदों से बना ले, जिस यन्त्र में विराजमान होकर हम अपने एक यज्ञमान के द्वारा जा सकें। परन्तु पूर्व के ऐसे महान ब्राह्मण वेद पाठी रहे हैं। जो यज्ञमानो के द्वारा अपने वनाए हुए यन्त्र से, वह यज्ञमान के समीप आते। परन्तु यह क्यों हैयह इसीलिए है कि जिन वैज्ञानिको ने पूर्व काल में निर्णय ? है, वेदों से जिनका घनिष्ट सम्बन्ध रहा है, वह वेदों की पोथी तो रही, परन्तु उनकी जो और शाखाएं थी, उनका जो निर्वाचन थाउनका जो अनुवाद था ,, वह सब अग्नि

के मुख में चला गया। जो बची रहीं, उन्हें भी ले कर यह स्वार्थी बन गए, जो अपने को आर्य कहते हैं, और जो ये कहते हैं कि विज्ञान पश्चिम से आएगा, वह यहां से लेकर चले गए और जा करके उन्होंने विज्ञान का प्रसार किया। आज देखोजितनी , जितना उनका गौणिक नाम है ,धातु है, वह सब उनकी वाणी में हो गया। और हमारी वास्तविक जो प्रणाली थी, हमारा जो वास्तविक दर्शन था, उसकी रुप रेखा परिवर्तन हो गया। आज परिवर्तन होने से ही, आज हम दूसरों को कहते है कि विज्ञान जानते हैंबुद्धि से तो कार्य करो। जिनके धर्म प्रवर्तक वैज्ञानिक न हो ,अरे !, वहां विज्ञान कहां से आ गयाविज्ञान तो वहाँ होता है ?,जिनके धर्म प्रवर्तको,जिनकी पोथियों में विज्ञान और ज्ञान कीशिष्टाचार और सदाचार की चर्चा हो ,, वहीं विज्ञान होगा। इसीलिए देखो विज्ञान को लिया जाए, तो वेदों से माना जा सकेगा। आज क्यों नहीं हमें वेदों को ऊंचा स्थान देना चाहिए। आज राजा से कहें, कि प्रजा के शिक्षालयों में क्यों नहीं वेद के भाष्य को लिया जाताआरणयक और शतपथ को लिया ,आज क्यों नही उपनिषद ? वह कहते हैं कि यदि यहाँ शतपथ को लेंगें ?जाता, तो हम मुहम्मद की वार्त्ताओं को भी लेंगें। जो उनकी अच्छी और सुन्दर वार्ता हो, उसको ले लोउनसे मिलान करो। , शिक्षालयों में जब इस प्रकार की शिक्षा होगी, तो क्या यह हो सकता है कि ब्रह्मचारियों में सदाचार और अनुशासन न रहे। अनुशासन अवश्य रहेगा। अनुशासन तो यहां का समाज, इन ब्रह्मचारियों कोइन गुरुओं को बनाता चला जा रहा है ,, क्योंकि शिक्षा की पद्धति नहीं है। यदि शिक्षा की पद्धति नही लाई जाएगी, तो भयंकर परिणाम होगा। मैं तो अब भी यह उच्चारण कर रहा हूं, कि आज ब्राह्मण समाज सारा आर्यावर्त सब ही एक वाणी से यह कहें, कि आज हमें अपनी वाणी का परिवर्तन करना है, हमें आरणय और शतपथ ब्राह्मणों और उपनिषदों को लाना है। अपने शिक्षालयों में सांख्यवाद को लाना है, जब यह विद्या आएगी, तो अनुशासन रहेगा। और यदि यह नहीं रही, पश्चिम वार्त्ता को लेते चले गए। हम दूसरों के प्रभाव में आते चले गए, तो क्या होगाइसका एक भयंकर परिणाम होगा। यह नही जानना चाहिए ?, कि इसका परिणाम कुछ नहीं होगा। इसका परिणाम भयंकर होगा। वह समय

आएगा, जब गृह गृह में अग्नि के काण्ड होगा। यदि यह नहीं किया गया तो मैं यह कहा करता हूं, कि आर्यावर्त की भूमि के, एक एक गृह के आगे रक्त की धारा हो सकती है।

मैं तो अब भी उच्चारण कर रहा हूं, कि यहां प्रत्येक पशु की रक्षा हो। अरेपरमात्मा , के श्रद्धालु बनो। परमात्मा के विश्वासी बनो। परमात्मा ने जो पशु उत्पन्न किया है, वह कोई न कोई लाभ का पशु है। वह तुम्हें कोई न कोई लाभ देता है, तुम्हें कोई हानि नहीं पंहुचाएगा। जहां तुम अन्न को ग्रहण करते हो, जहां तुम इतने पदार्थों को पाते हो, क्या परमात्मा के इन पशुओं के लिए पदार्थ नहीं दिया हैअवश्य दिया है ?, जहां परमात्मा ने पशुओं के लिए भोजन दिया है, तो आज एक राजाएक समाज अपने , ऊपर इनका भार क्यों लेता है, कि अन्न नहीं हैइनके लिए भोजन नहीं है ,, आज इनका क्या बनेगाइन ?का भार तुम क्यों लेते होउसको वह प्रभु जानें ?, जिसने संसार को बनाया है। जब राजा और प्रजा में यह विश्वास नहीं होगा, तो यह राष्ट्र कदापि भी ऊंचा नही बनेगा।

यह वह आर्यावर्त भूमि है जहां गौओं के लिए क्या नहीं किया जाता था। महाराजा दिलीप बारह वर्ष तक नन्दनी के पीछे रहे और सिंह को महाराजा दिलीप ने यह कहा था हे मृगराजतू मुझे भक्षण कर !, परन्तु नन्दनी को कष्ट न दें। यह मेरी नन्दनी हैमेरे राष्ट्र का भूषण है ,, मेरे जैसा पुरुष तो उत्पन्न हो सकता है, परन्तु नन्दनी जैसी गौ राष्ट्र में उत्पन्न नहीं हो सकेगी। तो जहां इस प्रकार का आदर्श हो, आज वहां क्या हैविचार विनिमय करना होगा ,इसके ऊपर मानव को अध्ययन ?, अन्यथा यह संसार, मैं इस आर्यावर्त की वार्त्ता नहीं कह रहा हूं, इस संसार की वार्त्ता कह रहा हूं। जहां अग्नि काण्ड होने के कुछ समय रह रहा है। तो यह होता रहेगा, हम इसके ऊपर क्यों जाएं और विचार विनिमय नहीं करना चाहिए। विचार विनिमय यह करना है कि हमें श्रेष्ठ बनना है, सब प्रजा को अपने अपने मन का अधिकारी बनना हैइसके , ऊपर अनुशासन करना है और श्रेष्ठ यज्ञ कर्म करने में, हमें तत्पर रहना है। दुराचार के आंगन में नही जाना, जहां दुराचार की वार्त्ता, तुम्हारे श्रोत्रों में आती हो, उस कार्य

कोवेदान्तवाद इत्यादि ,सांख्यवाद ,वेद वाक्य ,उस वाणी को त्याग दो। सदाचार , उसी की ,देखो इनके मानने वाले बनो जो ऋषियों का मत है। उसके अनुकूल चलोगे नियमावली राष्ट्र में प्रजा में आएगी, तो यह संसार ऊंचा बनेगा अन्यथा जो हो रहा है वह होता ही रहेगा।

कन्या पूजन

तो अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा। जितना वाक्य मुझे प्रकट करना था, मैंने किया। हमारे आज के आदेशों का अभिप्रायः केवल यह था, कि हमें राष्ट्र की प्रजा को, सभी को ही ऊंचा बनाना है। ऊंचा बनने के लिए दर्शन इत्यादि पोथियों को ग्रहण करना है। प्रत्येक गृह आश्रम में ब्रह्मचर्य की पोथी और दर्शनों की पोथी होनी चाहिए। जहां मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन किया है, कि सन्तानों को उपन्यासों की सन्तान न बनाओं। वेद के पुत्र और पुत्रियों को जन्म दो, जिससे तुम इन देवियों की पूजा करोब्रह्मचारियों का आदर करो। यह वह आर्यावर्त है ,, जिसमें पुत्रों के, ब्रह्मचारियों के, माता पिता चरणों को छूते हैं, परन्तु बडे आश्चर्य का शब्द है। यहां मुझे स्मरण है। राजा रावण की पत्नी के जो पिता थे,महाराजा महिदन्त, जब महाराजा महिदन्त की कन्या मन्दोदरीं शिक्षालय से आई, तो राजा ने ब्रह्मचारिणी को, जब गृह में प्रवेश कराया तो इसके चरणों की पूजा की गई। पूजा करने के पश्चात, उसका स्थान दिया। ऋषि मुनियों को आदर दिया और यज्ञ कर्म कराया। जहां ब्रह्मचारी का और ब्रह्मचारिणी का इतना आदर किया जाता होमाता पिता इतने , आदर करने वाले हों, पूजा क्यों की जाती हैइस ?इस पूजा करने में भाव क्या है ? इनकी पूजा करने का अभिप्रायः यह है ?वाक्य के गर्भ में क्या है, कि माता पिता कहते हैं। हे कन्यायदि ?तू हमारी पूजनीय देवी है और तू हमें देती है। क्या देती है ! तुम सदाचारता से, मानववाद से रहोगे तो हमें मान मिलेगामर्यादा मिलेगी ,, राष्ट्र ऊंचा बनेगा और विश्वेभान हमारे विचार बन करके, तुम्हारे विचार बनेंगें। तो हम और तुम दोनों से हमारा गृहस्थ आश्रम सर्वत्र पवित्र बनेगा। तो यह वाक्य उसके गर्भस्थल में विराजमान रहता ,है इसीलिए हमें विचारना है, हम प्रत्येक ब्रह्मचारी और

ब्रह्मचारिणी की पूजा करें। किस काल में करेंगें, जब हम गृहस्थ आश्रम से पूर्व दर्शनों का, वेदों इत्यादियों का अध्ययन करने वाले बनें। उसी के अनुकूल हम ऋषि मुनियों की पद्धति को विचार करके गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट हो करके पुत्र और पुत्रियों को जन्म दें।

राष्ट्र का जन्म कहां से होता है? माताओं से| आज मैं यह उच्चारण कर रहा हूं, कि आज जब मैं यह विचारता हूं कि माताओं पर आक्रमण होता है, एक कन्या अपने घर से चलती है, और यदि कन्यापुत्री और भौजाई की दृष्टि से नहीं दृष्टिपात किया , जाता, तो क्यों नहीं किया जाता? इसके ऊपर भी तो विचार विनिमय करना होगा। यह इसीलिए नही किया जाता, क्योंकि वह सुन्दर कन्या है, या जो उसे कुदृष्टिपात करने वाले हैं,उनके स्वयं के जीवन की सुन्दर रुप रेखा बनी हुई नहीं हैं, इसीलिए वह उसको भौजाईमाता और कन्या की दृष्टि से दृष्टिपात कर ही नही कर सकता। , यह उन माताओं में है ?तो सूक्ष्मता किनमें हैं, जो माता शिक्षा देने वाली है। जो माता उनको बनाने वाली है, उनमें यह सूक्ष्मता होती है, क्योंकि वह यह जानती है कि यदि आज तुम्हारे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक, यदि तुम पर ही आक्रमण करता है, आज तुम्हारे श्रृंगार को अपने में धारण करना चाहता है, तो वह क्या पुत्र हैक्या ? उत्पति है तुम्हारी संसार में। इस प्रकार से यह संसार ऊंचा नहीं बनेगा। संसार ऊंचा बनेगा, मानवता को लाने से। आज मानवता लाई जाएगी, अध्ययन करने सेयज्ञ , श्रेष्ठ पुरुषों की वार्त्ता धारण करने से। ,कर्म करने से

आज यज्ञ कर्म को तो कहा जाता है कि अरेयह सब पाखण्ड हो रहा है। और जहां ! मांस भक्षण में और ,दुराचार जहाँ इस द्रव्य को हम दुरुपयोग करते हैंदुराचारियों के आहार और व्यवहारों को करते चले जाते हैं, उसको पाखण्ड नहीं कहा जाता। जहां प्रजा में इस प्रकार की भावना हो, यज्ञ जैसे कर्मों को पाखण्ड कहा जाए, और उनको पाखण्ड नही कहा जाए तो इस समाज का क्या बनेगाइसको प्रभु ही जानता ? है। तो मैं यही वाक्य प्रगटकर रहा हूं कि यज्ञ कर्म करोयही आज ,श्रेष्ठ कर्म करो , मैं निर्णय देने आया हूं और मेरे वाक्य उच्चारण करने का कोई भाव नहीं है। आज

गुरुजी कुछ वाक्य उच्चारण कर जाओ। मैं भी कुछ वाक्य उच्चारण कर जाऊं, परन्तु रहोगे वैसे ही जैसे तुम हो। क्योंकि तुम्हारी प्रकृतियां उस प्रकार की बन गई है। आज तुममें मानवता है, तो तुम्हें यज्ञ कर्म करने चाहिए और बुद्धिमान ब्राह्मणो का आदर करो, जिससे हमारे वेद की रक्षा होहमारी ऋषि परम्परा ,दर्शनों का आदर कर सकें , सदा संसार में बनी रहे। तो यह आज का हमारा आदेश समाप्त होने जा रहा है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगां।

पूज्यपाद गुरुदेव हास्यवाक्य तो बहुत ही सुन्दर ....., परन्तु महानन्द जी जितने वाक्य उच्चारण करते हैं, वह बडे ही कठोर और उनमें एक ऐसी धारा होती है, जिन धाराओं का आदर हमारे यहां नहीं किया जाता है, परन्तु चलो, जो उच्चारण यह करते हैं, न प्रति किस भाव को लेकर किया करते हैं। आज के हमारे आदेशों का जो अभिप्राय थामहानन्द जी ने कुछ वाक्य उच्चारण किया ,, भगवान कृष्ण के सम्बन्द में। भगवान कृष्ण महान उज्ञवलगौ रक्षक और गौ की पूजा करने वाले। जहां इस प्रकार का , महान पुरुष हो, उस भूमि को धन्य है। आज मैं केवल इतना उच्चारण कर रहा हूं, कि प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्याओं को यज्ञ कर्म करना।अपने धर्म की जो पोथी है, धर्म वास्तव में बहुत व्यापक होता है, परन्तु मूल तो सब धर्मों का एक ही होता है, अच्छाईयों को ग्रहण करना और दुराचार को त्याग देना। मिथ्यावाद को कोई भी यह उच्चारण नही करता, कि यह सत्य है और सत्य को कोई मिथ्या नहीं उच्चारण करता। सत्यता का जो गर्भ है, वह बहुत विस्तार का है, सत्यता का तो एक बडा विशाल वृक्ष है, इस वृक्ष की चर्चा तो किसी काल में ही करेंगें, आज तो केवल यह आदेश चल रहे थे, कि राष्ट्र और प्रजा दोनों श्रेष्ठ बनें। महानन्द जी के वाक्यों का भी अभिप्रायः यही था, तो आज का यह आदेश समाप्त हो गया है, कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं प्रकट करेंगें।

महानन्द जी ने आज भी समय ले ही लिया, क्योंकि वह बडे धूर्त हैं और धूर्त क्यों हैं जहां उदार वाक्य कह करके फिर कठोरता में चले जाते हैं। चलो, कोई वाक्य नहीं, हम तो यह कहा ही करते हैं कि नम्र बनो और महानन्द जी अब तक नम्र नही बने।

नम्र क्यों नहीं बने, क्योंकि विचारधारा और संसार का प्रभाव इनके ऊपर आ गया है। जैसा यह आधुनिक काल के समाज का उच्चारण करते हैं, इन पर प्रभाव आ गया। हास्यतो अब मैं यह वाक्य समाप्त कर रहा हूं ....., विनोद का वाक्य। अब शेष वाक्य कल होंगें।

२० 00 12 1966 पुष्प 08 राजा का चुनाव बुद्धिमान द्वारा होना चाहिए।

जीते रहोआज हम तुम्हारे समक्ष !देखों मुनिवरों !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का पठन पाठन करते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन मन्त्रों का हमने पुनः से पाठ किया। आत हामरे उन वेद मन्त्रों का पाठ प्रारम्भ हो रहा है जिनमें परमपिता परममात्मा के ज्ञान विज्ञान का वर्णण किया जा रहा है। जैसा हमने कल के आदेश में कहा था कि परमात्मा का रचाया हुआ यह ब्रह्मण्ड एक सुन्दर सा शिक्षालय ही माना जाता है। इसमें प्रत्येक मानव, प्रत्येक प्राणी अपने अपने संस्कारों को ले करके यहाँ विद्या के पठन पाठन के लिए आता है। यहाँ परमपिता परमात्मा ने सुन्दर सा भवन बनवाया परन्तु यहा प्रकृति को जो स्वरूप हमें प्रतीत हो रहा है यह सब उस परमपिता परमात्मा का सुन्दर भवन है, विद्यालय है जिसमें प्रत्येक प्राणी शिक्षा ग्रहण करने के लिए आता है।

मुनिवरोंदेखो !,प्रत्येक मानव आता है !, माता के गर्भ से पृथक् होता है और संसार में आने के पश्चात् वह केवल विद्यार्थी और शिक्षक बन करके अपने जीवन को ऊर्ध्वगति वाला बनाता है। जैसे एक भौतिक विज्ञानवेत्ता होता है वह अपना जीवन उज्ज्वल बनाने के लिए नाना प्रकार के यन्त्रों से माना परमाणुओं को एकत्रित करने में उसकी संलग्नता रहती है। उसी संलग्नता को ले करके वह सुन्दर सुन्दर यन्त्रों का निर्माण करता है। वह शिक्षा उसे कहाँ से प्राप्त हुई? परमात्मा ने इस ब्रह्माण्ड में ही

शिक्षालय में, जो प्रभु ने सृष्टि के प्रारम्भ में सुन्दर सा एक भवन रचा। इसी विद्यालय में आने के पश्चात मानव दैत्य और देवता बनता है यह सब ही कुछ मानव विचार विनिमय में लाता है। जब हम किसी वस्तु को अनुसन्धान में ले जाते हैं तो वही वस्तु हमारे लिए उज्ज्वल बनती है और यदि बिना अनुसन्धान के उसका दुरूपयोग करते है, उसकी वास्तविकता को नष्ट कर देते हैं तो उसका कोई मूल्य नही रहता है।

आज के प्रारम्भ के वेद मन्त्रों में परमात्मा की कृति का वर्णन आ रहा था। उसकी कृति प्रकृति के कण कण में समाहित है। इसलिए हमें उस प्रभु का धन्यवाद करना और उसकी महिमा को जनना हमारा कर्त्तव्य है। जो भी प्राणी परमात्मा की इस शाला में आता है वह अनुसन्धान वेत्ता बन करके आता है। यह प्रकृति क्या है? यह तो उस प्रभु को प्राणी के लिए एक देन है। इसलिए उस परम पिता परमात्मा का गुणगान गाना, उसकी महिमा को जानना हमारा कर्त्तव्य है। उसकी महिमा का जानते हुए हमारे ऋषि मुनि बेटाअन्त में मौन हो गए और कहा धृतिमानश्चति सुप्रजा ! बाचनोति वातन्या धृतयः सुप्रजः अगृध्म् कि बहुत से शब्द मानव की बद्धि से दूर होते है। प्रभू का जो बहुत सा विज्ञान है उस पर पहुंचने के बाद मानव मौन हो जाता है। जैसे हम आत्मा का विषय लेते है, आत्मा क्या है? परमात्मा क्या है? प्रकृति क्या है? मानव क्या है? इन सब पर मानव अपने अपने विचार प्रकट करता है। जब हम उसकी मौलिकता को लेते है तो जब उसका विराट् रूप हमारे समक्ष आता है तो हम मौन हो जाते है। जैसे मेरी प्यारी माता अपने गर्भस्थल से अपने पुत्र को जन्म देती है, परन्तु उसे किसी काल में यह ज्ञान नही होता कि तेरे गर्भस्थल में तेरे पुत्र या पुत्री की रचना किसने की। यदि माता को यह ज्ञान हो जाए तो प्रभुउसके कितने ! निकट है। आज मानव मान अपमान की मात्रा का त्याग कर प्रभु का दिग्दर्शन करता है तो परमात्मा उसके निकट होता है।

जब मुनिवरोंमानव यह विचार में लाता है कि हमें तो संसार में केवल देखना है तो ! हमे बलवत राग करते होगे। उच्चारण करने में देवता नही बनजाते। देवता तब बनते है जब देवपुरी का मन्थन किया जाता है। देवपुरी का मन्थन करने वालो कौन होता

है? मन्थन करने वाला देवता कहलाता है। दैत्य और देवताओं का जब मन्थन होता है तो मुनिवरोंदेखो !,इसी प्रकार मानव का अपने जीवन को उज्ज्वल बनाना है। इस ! मानव जीवन का मन्थन करना है। प्रभु के शिक्षालय में आ करके यह मन्थन किया जा सकेगा। मेरी प्यारी माता अपने जवान का मन्थन करती है। तेरे शरीर में रज और वीर्य का केवल एक बिन्दु पहुंचा परन्तु उससे कितना विशाल ज्ञान तेरे गर्भ स्थल में हुआ, कैसे इसको पालना हुई कहाँ से अमृत, कहाँ से नाना धातुओं का बना हुआ यह सुन्दर शरीर हमारे समक्ष आ गया।

यहाँ दैत्य और देवताओं का संग्राम हर समय प्रारम्भ रहता है। प्रत्येक मानव प्रत्येंक देवकन्याएं आज एक महान व्यक्ति है परन्तु कल प्रतीत नही क्षण समय में यह दैत्य भाव आ करते किसी प्राणी का हनन कर सकता है। वह दैत्य और देवताओं का दोनों का संग्राम हो रहा है। आज यह जो संग्राम उस प्रभु के शिक्षालय में हो रहा है इसे अनुशासन में लाना है। यदि हम उस अनुशासन में ही नहीं ला सके, तो हम शिक्षार्थी नही हम विद्यार्थी नही हम केवल गुरू बनने को, परमात्मा को इस यज्ञ वेदी पर, इस भवन में ऐसे आए जैसे हम भवन का जानते हैं कि वह भवन है परन्तु उसमें प्रविष्ट होकर कदापि नही देखा तो यह क्या है? इसी प्रकार मनुष्य होता है कि परमात्मा के शिक्षलय में आता है, यदि उसका उज्ज्वल कर्म नही है, पवित्रता उनके द्वारा नही है तो वह भवन को दृष्टिपान कर रहा है, वर्णन भी कर सकता है कि स्तम्भ भी है और सुन्दर सुन्दर रूपों से इसका निर्माण भी हो रहा है परन्तु उसमें प्रविष्ट नही हुआ। प्रविष्ट कौन होता है जो दैत्य और देवताओं का मन्थन करता है। देवता कौन होते हैं जिनकी अपने जीवन और परमात्मा के बनाए हुए पदार्थों में आस्था होती है और वह विचार विनिमय में लगता है। प्रकृति के आँगन में वह इतना संलग्न नही होता जिसमें उसकी मानवीयता, उसकी, राष्ट्रीयता, उनका जीवन आजीवन बनता चला जाए। इन विचारों में वह नहीं जाता। वह केवल यह विचारता है कि यह परमात्मा का शिक्षालय है इसमें हम सब ही शिक्षा को ग्रहण करते है कि जैसे हम प्रजा को अनुशासन में करना चाहते है, ऐसे ही हमारी जो इन्द्रियाँ है इनकों अनुशासन में करना बहुत

अनिवार्य है। यदि एक राजा बन जाने के पश्चात् उसकी मनोकामनाओं, उसकी कर्म इन्द्रियों और ज्ञान इन्द्रियों पर अनुशासन नही हुआ तो वेद कहता है राजन्नमों ब्रह्मणो वाचनोति घृणाश्चति वेद कहता है वह राजा राष्ट्र का अधिकारी नही।

तो मेर भद्र पुरुषोंजब प्रत्येक प्राणों विद्यार्थी बन करके उस प्रभ का अटूट विश्वासी ! हो जाती है तो उसका इस संसार सागर से उपराम हो जाता है, इस प्रकृति के क्षेत्र को त्याग देता है जहाँ वाद विवाद, मान अपमान क मात्रा मानव के समीप आती रहती है। आज मैं उस आदेश को गम्भीरता में नहीं ले जाना चाहता। केवल वहाँ ले जाना चाहता हूँ जहाँ महानन्द जी ने के कुछ संकेत बारम्बार प्राप्त होते चले जा रहे है। इन्होंने कहा है कि आज के प्रारम्भ के वेदमन्त्र में गो शब्द आया है परन्तु मैंने पूर्व कई स्थलों में वर्णन किया है गौः क्या पदार्थ है? गौः नाम पृथ्वी का भी है जो हमारी पालना करती है गौः नाम इन्द्रियों का भी है, गौः नाम इन्द्रियों का भी है, गौः नाम पशु का भी है, गो नाम सूर्य को पवित्र किरणों का है, गौः नाम चन्द्रमा की कान्ति का भी है, गौः नाम माता का भी है जो हमें गर्भस्थल में धारण करती है।

मुनिवरोंजब हम नीचे के स्थान में राष्ट्रीयता पर आते हैं तो भगवान् मनु के शब्द ! हमारे समीप आते हैं। राष्ट्र क्या पदार्थ है? राष्ट्र कहते हैं जहाँ महान् पुरुषों का आदर किया जाता है और दुराचारियों को दण्ड दिया जाता है उसे वास्तविक राष्ट्र कहा जाता है। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे कई काल में वर्णन कराया कि आज का ! राष्ट्रवादी यह उच्चारण कर रहा है कि हम धर्मज्ञ नहीं बनना चाहते हम तो केवल स्पर्शो धर्मश्चति प्रभाश्चति। मैं तो महानन्द जी से कहा करता हूँ कि भाई धर्म क्या है? मानव को नष्ट करना ही केवल धर्म नहीं, धर्म उसे कहते हैं जो यथार्थ को यथार्थ उच्चारण करता है। आज जो वेद की पवित्र निधि है, जो स्वतः प्रमाण है उसकी आज्ञाओं का नाम धर्म कहलाता है। हमारे ऋषि मुनियों की जो पवित्र धारा है जिसको महान् पुरुष अपनाते हुए मोक्ष को प्राप्त होते चले आए हैं, राष्ट्रीयता में उसे लाए हैं उसका नाम धर्म कहलाता है। आज मैं धर्म की विशेष व्याख्या नहीं करना चाहता।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे पूर्व काल में वर्णन कराया कि रा !जा के राष्ट्र में जो गो नाम का पशु है उसका हनन किया जाता है और इन्होंने प्रश्न किया है कि यह प्रकृति की गति है अथवा उस राजा या प्रजा का दुर्भाग्य है? जब गो नाम का पशु है उसकी रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है क्योंकि यह एक ऊँचा पशु है जो हमें वह पदार्थ देता है जिस से बल और वीर्य की वृद्धि होती है। मानव को सत् गति और सत् बुद्धि देता है। उस प्राणी की रक्षा करना हमारा व राष्ट्र का कर्त्तव्य हो जाता है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे एक वाक्य और प्रकट किया कि आधुनिक काल की ! शिक्षा पद्धति अधूरी है। मैंने इनके प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा था कि राष्ट्र की पद्धति को राजा ऊँचा नहीं बनाया करते परन्तु ऊँचा बनाते हैं ब्राह्मण समाज। राजाओं से ऊँचा राष्ट्र में एक समाज होता है जिसको गुरु समाज कहा जाता है। उनके नियम होते हैं कुछ उद्देश्य होते हैं जिन्हें लेकर वह क्रान्तिकारी बनते हैं। मूर्ख क्रान्तिकारी नहीं बन सकते। जिसके समीप शिक्षा की पद्धति नहीं है वह नहीं जानता कि जिन उद्देश्य को लेकर तू चला है वह क्या है? उसमें कितनी वास्तविकता है? तेरे में कितना आत्मिक बल है? बुद्धिमानों का कार्य करने के लिए उसे पूर्व अध्ययन करने की आवश्यकता है। उसके पश्चात् उसके मस्तिष्क में, हृदय में एक महान् क्रान्ति का ज्ञान होता है।

महान् क्रान्ति किसे कहा जाता है? मैंने पूर्व काल में महानन्द जी के प्रश्नों में कहा था, वेद में आया है कि जैसा प्रातःकाल में सूर्य के उदय होते ही संसार को क्रान्तिकारी बना देता है। कैसे बना देता है। रात्रि को हनन करता चला जाता है और संसार को प्रकाश देता चला जाता है। इसी प्रकार बुद्धिमान क्रान्तिकारी होते हैं। जहाँ बुद्धिमान को राष्ट्र में अधिकार प्रतीत होता है जो उसी समय अपनी सतोगुणी और वैदिक क्रान्ति दे करके छूने मात्र से वह अन्धकार लिप्ट होता चला जाता है। ब्राह्मणों का कर्त्तव्य है कि वह अपना पवित्र विद्या का मानवीयता के आचरण का ब्रह्मचारियों को शिक्षालयों में प्रविष्ट करायें जिसमें वह उस विद्या समाज दोनों ही पवित्रता को प्राप्त होते चले जाते हैं। परन्तु महानन्द जी ने बहुत पूर्व एक शब्द कहा कि यदि

किसी राजा का चुनाव मूर्ख समाज करता है तो वह राजा भी मूर्ख हुआ करता है। मैंने इस शब्दार्थ को बहुत ही सुन्दरता में ग्रहण किया। क्योंकि यदि राजा का चुनाव बुद्धिमान ब्राह्मण करते हैं तो राष्ट्र का रक्षक होता है और यदि मूर्ख उसका चुनाव करते हैं तो वह प्रजा का भक्षक बन जाता है।

तो मेरे भद्र पुरुषोआज यदि संसार को ऊँचा बनाना है !, मानव समाज को ऊँचा बनाना है, मेरी प्यारी माताओं को ऊँचा बनाना है, अपनी लज्ञा को ऊँचा बनाना है तो आज संसार में केवल बुद्धिमानों की आवश्यकता है। बुद्धिमानों का एक जन समाज हो और वह राजा से जाकर उच्चारण करें कि हे राजायह तू क्या कर रहा है !? यह राष्ट्र में अनर्थ हो रहा हे। बुद्धिमानों की जब यह वाणी राजा के मस्तिष्क में पहुंचेगी तो उसका मस्तिष्क एक समय क्रान्तिकारी होता चला जाएगा क्योंकि बुद्धिमान उसे शिक्षा देते हैं। एक मूर्ख व्यक्ति जाता है और राजा को अपशब्द उच्चारण करता है तो वह राजा उस प्राणी का भक्षक बन जाता है। अपशब्दों में नहीं जाना है। मूर्खो का समाज नहीं बनाना है।

मूर्ख कौन होता है? जो अपने जीवन को अनुशासनहीनता में ले जाता है। वाणी पर अनुशासन नहीं, चरित्र पर अनुशासन नहीं, मानवीयता पर अनुशासन नहीं। यदि उसके मस्तिष्क में कोई क्रान्ति आती है तो वह अपनी नहीं परन्तु किसी की दी हुई क्रान्ति है। बिना अध्ययन के की हुई क्रान्ति एक समय अधूरी बन सकती है।

बेटामुझे स्मरण है जब राजा रावण का चुनाव हुआ रावण से पूर्व लंका में ! महाराजा कुबेर राज्य करते थे। कुबेर से पूर्व महाराजा महिदन्त राज्य करते और महिदन्त से पूर्व उनके पिता गौणुक काम के राजा राज्य करते थे। गौणूक के जो पिता थे उन्हें सुरगीत ऋषि कहा करते थे। यह सब चक्रवर्ती राजा कहलाए गएं हैं। तो लंका की प्रणाली बहुत विचित्र मानी गई है। यहाँ एक वाक्य और आया है कि जब महाराजा महिदन्त से महाराजा कुबेर ने इस लंका को विजय कर लिया तो महाराजा महिदन्त को लंका से दूर कर दिया। वह अपने वही राष्ट्र में आ गएं जो सूक्ष्म सा राज्य रह गया था। महाराजा महिदन्त की कन्या मन्दोदरी का संस्कार महाराजा

रावण से हुआ जिसका बाल्यकाल का नाम वरुण था। ब्राह्मण और वेदों का पण्डित होने के नाते रावण को राजाओं ने सहायता दी और कुबेर को राज्य से पृथक् कर दिया और लंका का स्वामी रावण बन गया। जब लंका का अधिपति बन गया तो उस समय सभी राजा महाराजाओं ने रावण का चुनाव किया और कहा कि भाई यह ब्राह्मणकुल का बालक है और महाराजा पुलस्ति ऋषि का पौत्र है इसका चुनाव किया जाएं तो इसका क्या नाम उच्चारण करना चाहिए? सब राजाओं ने मिलकर इसका नाम रावण नियुक्त किया। रावण नाम दानी का है। रावरण नाम बुद्धिमान का है। यह अपशब्द नहीं, व्याकरण की दृष्टि से, मानव समाज की दृष्टि से रावण कहते हैं महादानी को। तो मुनिवरोंउसका नाम वरुण से रावण नियुक्त किया गया। उसने ! सबसे पूर्व अपनी लंका में बहुत सुन्दर नियम बनाएं परन्तु आगे चल करके अपनी पद्धति को नष्ट करके दुराचारी बन गया जिससे लंका का विनाश हो गया। राज्य का और राष्ट्र का विनाश उस काल में होता है। जब राजा स्वयं अपनी मानवता पर दृष्टिपात न करके मुर्खो के जीवन को दृष्टिपात करके राष्ट्र के नियम बनाता है। राष्ट्र का नियम बनता है उच्चता से और दृढ़ता से। राजा को विचारना चाहिए कि प्रजा का, मानव समाज का, राष्ट्र का किस में हित होता है।

मुनिवरोंहमारा राज्य बहुत पुरातन काल से चला आया है। परन्तु यहाँ यज्ञों की बड़ो ! परम्परा रही है। यज्ञ किसे कहते हैं? गौर्घृधायणी वेद के महापण्डितों ने कहा है कि भाई यज्ञ करो। राजा से कहो कि यदि तू राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो यज्ञ कर परन्तु यज्ञ क्या पदार्थ है? गो घृत लेकर के सुन्दर अग्नि प्रदीप्त करके सुन्दर वनस्पतियों की आहुति देनी चाहिए। वेद मन्त्रों के द्वारा, सत्संगों के द्वारा और अपने शिष्टाचार द्वारा वातावरण को शुद्ध बनाया जाएं। यज्ञ में हमें सभी नियम प्राप्त होते हैं। कल के शब्दार्थो में रत्नागृति शब्द आया। इसी यज्ञ कर्म करने से जब सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु वायु मण्डल में जाते हैं तो वह और भी सूक्ष्म होते हैं। सूर्य की किरणों में जाते हैं, उनका शोधन होता है और सूर्य से वह परमाणु चन्द्रमा से जाकर छूते हैं और जो बड़े तेजस्वी परमाणु थे वह एकदम शीतलता में पहुंच गएं तो मुनिवरों !

देखो,उन्हीं से चन्द्रमा की क्रान्ति द्वारा रत्न जैसी धातु बन गई। तो यज्ञ कर्म करने ! से संसार में बहुत बड़ा लाभ होता है।पर्वतों में स्वर्ण की उत्पत्ति होती है, रत्नों को उत्पत्ति होती है। एक नहीं इस पृथ्वी माता के गर्भ में नाना पकार की सुगन्धि उत्पन्न होती है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे एक काल में यह भी वर्णन कराया कि कपिल कणाद ! की जो यह पवित्र भूमि है इसमें अन्न उत्पन््न नहीं हो रहा। भाईयह पृथ्वी तो ! दयालु माता है, माता की आज्ञा के अनुकूल चलो तो यह पदार्थ देगी। पुण्य दोगे तो पुण्य देगी। पाप दोगे तो पाप देगी। इसलिए हमें पुण्य और शुभ कर्म करने चाहिए। जिस राजा के राष्ट्र में केवल मांस का भक्षण किया जाता हो, अन्न को त्यागा जाता हो तो यह पृथ्वी माता हमें अन्न क्यों देगी।

मुनिवरोंजहाँ तक गो नाम के पशु का प्रश्न है कि इसे भक्षण किया जाता है और ! इसे नष्ट किया जाता है तो मैं एक वाक्य कहा करता हूँ कि यह केवल राष्ट्र की सूक्ष्मता नहीं मैं इसे धूर्तता मानता हूँ ब्राह्मण समाज की।क्योंकि जब ब्राह्मणों का बुद्धिमान् समाज होता है और बुद्धिमानों में भी तपस्वी होते हैं तो वह राजा से कहा करते हैं कि हे राजन्तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बना। उस समय राजा विचार विनिमय ! करके उस राष्ट्रीयता पर पहुंचता है कि वास्तव में मेरे राष्ट्र में दुराचार और शासनहीनता नहीं होनी चाहिए। जब राजा के समीप उसकी संस्कृति, और ऋषि मुनियों का आदर होता है तो राजा जानता है कि तेरा कर्त्तव्य क्या है। जहाँ कर्त्तव्य पालन नहीं किया जाता है वहाँ राष्ट्र हीनता, अनुशासनहीनता सब कुछ होता रहता है। संसार में राजा किसके लिए चुना जाता है? दुराचारियों को दण्ड देने के लिए। सभा का सभापति बनाया जाता है कि उसके सभापतित्व में जो विषय चल रहा है उस विषय से कोई व्यक्ति दूर न जा सके उसे अनुशासन में रखे। इसी प्रकार ..?.. अपने पुत्र का नेतृतव करती है। यदि माता अपने पुत्र या पुत्री का नेतृतव नहीं कर सकती तो माता कहलाने की अधिकारी नहीं होती। इसी प्रकार राजा यदि अपने राष्ट्र को, प्रजा को अनुसन्धान में, विचित्रता में नहीं ला सकता तो वह राजा कहलाने का

अधिकारी नहीं होता। वेद की जो पद्धति है उसको विचारना हमारा सब बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है। मूर्खो का कर्त्तव्य नहीं। राजा का चुनाव किया जाएं तो बुद्धिमानों को करना चाहिए।

तो मेरे भद्र पुरुषोमैं अभी अभी अपने कुछ विचार प्रकट कर रहा था कि हम गो ! माता की रक्षा करने में तत्पर हों परन्तु उससे पूर्व हम विचार कर लें कि गो नाम के पशु की हम किस प्रकार रक्षा कर सकते हैं। यह केवल दुद्धिमान् ही विचारेंगे और ये ही राजा के समीप जाएं। मूर्ख व्यक्ति नहीं क्योंकि जितने भी मूर्ख व्यक्ति एकत्रित होकर राजा के समीप जाएंगे वे राष्ट्र को हानि पहुंचायेंगे। और यदि बुद्धिमान अपने कर्त्तव्य को, राष्ट्रीयता को मानवीयता को लेकर जाएंगे तो राजा को विचारना अनिवार्य हो जाता है। इसलिए मेरे भद्र पुरुषोमानव के मस्तिष्कों में कांति होनी चाहिए। वेद ! कहता है कि हम अपने जीवन को, अपनी मानवीयता को, अपनी राष्ट्रीयता को ऊँचा बनाएं।

मेरे भद्र पुरूषोंआज तो महानन्द जी के कथानुसार ऐसा प्रतीत हो रहा ! है कि संसार में वह समय बहुत निकट है जब यहाँ रक्त की धारा बह सकती है क्योंकि बुद्धिमानों ने अपने कर्त्तव्य को त्याग दिया है और द्रव्य के पीछे है। वैदिकता में सबसे पूर्व धर्म आता है। धर्म के व्यापक कोण से बुद्धिमान और वेदपाठी और धर्म उनके साथ होता है। द्रव्य के स्वामी कौन होते है? राजा और वैश्य। जब सबसे प्रथम धर्म को त्याग दिया जाता है। , ब्राह्मण समाज जो राजाओं के गुरू होते हैं, वह अपने धर्म को त्याग देते हैं तो क्या होता है? स्वार्थ की क्रान्ति होती है और रक्त की धारा व्यक्त होती है।

मेरे भद्र पुरूषों मुझे स्मरण है जब महाभारत का संग्राम हुआ और रक्त की धारा बह गई। क्या कारण था? स्वार्थता, बुद्धिहीनता। ब्राह्मण समाज अपने कर्त्तव्यों को त्याग चुका था। दोनों विधाताओं में संग्राम हुआ, संसार के प्राणी आए और रक्त की धारा बह गई। मुझे तो ऐसा प्रतीत होंता है कि कुछ ही समय के पश्चात् यहाँ संसार में पुनः से वह रक्त की धारा आने वाली है। आज संसार को ऊँचा बनाना है तो संगठन

से, मानवता से और वैदिकता से ऊँचा बन सकेगा। यदि आज वैदिकता को त्याग दिया जाता है, अपनी मानसिक पद्धति को नष्ट कर दिया जाता है, शिक्षा पद्धति को ऊँचा नहीं बनाया जाता तो क्या होता है? संसार अग्नि के मुख में चला जाता है। तो मेरे प्यारेआज मैं तुम्हारे विचारों से बहुत ही सहमत हूँ परन्तु मैं तो !महानन्द जी ! यह उच्चारण कर रहा हूँ कि तुम तो केवल गोः के ऊपर उच्चारण कर रहे हो परन्तु मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ कि राजा का राष्ट्र उस काल में पवित्र होता है जग राजा के राष्ट्र में किसी भी प्राणी का हनन नहीं होता। महाराजा मनु ने सबसे पूर्व राष्ट्र का निर्माण किया तो मछली तक की रक्षा किया करते थे। मछली को जल में भोजन दिया करते थे। अरे, राष्ट्र की पद्धति तो वहाँ ऊँची बनती है जहाँ गोः नाम को पशु नहीं, प्राणी मात्र की रक्षा होता है। आज कोई मानव यह उच्चारण करता है कि गो के लिए अन्न कहाँ से आए। अरे, परमपिता परमात्मा ने जिनको उत्पन्न किया है वह ही उनके खान पान की व्यवस्था किया करता है। हम उन गऊओं को उत्पन्न नहीं करते, हम किसी प्राणी को जन्म नहीं देते क्योंकि हम ही किसी के जन्म दिए होते हैं इसलिए आज उनका भार हमारे ऊपर नहीं होता। उसका भार परमात्मा के ऊपर होता है। उसके खान पान की व्यवस्था वह परमात्मा किया करता है, केवल प्राणी ही नहीं किया करता। मानव तो केवल सहायक होता है, परमात्मा के विश्वास पर उन्हें क्यों नहीं त्यागता? अपने ऊपर क्यों लेते हो?

आज मैं यह कहा करता हूँ कि यदि आज हम किसी प्राणी को जीवन नहीं दे सकते तो किसी को हनन करने के अधिकारी भी नहीं हो सकते। क्योंकि मानव जीवन हनन करने का उसी समय अधिकारी होता है जब हम किसी प्राणी को जीवन प्रदासन करते चले जाएं। उनको नष्ट भी कर सकते हैं। परमपिता परमात्मा संसार को जीवन देता है उसको नष्ट भी कर सकता है क्योंकि यह उसका नियम हैं। प्रकृति का नियम है क्योंकि प्रकृति को परमात्मा ने इतना सामर्थ्य दिया है। इसलिए आज हमें इस पर अपने मस्तिष्क में विचार विनिमय करना है। महापुरूषों को विचारना है कि हम बुद्धिमान बनें और हम उस प्राणी को अपने मनोविज्ञान के आधार से देखो, आज हम

किसी प्राणी को जीवन नहीं दे सकते, रक्षा नहीं कर सकते तो उसे नष्ट करने को अधिकार भी नहीं है।

तो मेरे भद्र पुरूषों मैं राष्ट्रीयता के !विषय में केवल एक ही वाक्य उच्चारण कर रहा हूँ कि राजा से ऊँचा समाज होता है। ब्राह्मण समाज, बुद्धिमान समाज के मस्तिष्कों में शान्ति होनी चाहिए। क्रान्ति शान्त बुद्धिमानों के मस्तिष्कों में आती है तो साधारण मनुष्यों के समाज में आती है और समाज के मस्तिष्क में जब वह क्रान्ति आती है तो वह अपने कर्त्तव्य पालन करने में तत्पर हो जाते हैं।

मेरे भद्र पुरूषोंमैं अभी अभी अपने आदेशों को प्रकट कर रहा था कि हम ! मानवीयता, राष्ट्रीयता को अपने विचार विनिमय में लाएं। अपने जीवन को वैसे ही नष्ट न करें। मानव जीवन मूल्यवान हैं। इनको एक एक धारा पर विचार करें तो हमें प्रतीत होगा कि वह क्या है। जब हम अपने जीवन की स्वतंत्र उच्चारण करते हैं तो स्वतंत्र उस काल में होते हैं जब हम मन, वचन, कर्म से किसी प्रकार का पाप करने के लिए तत्पर नहीं होते। अन्यथा, हम किसी न किसी के अधीन रहते हैं। कहीं काम के अधीन रहते हैं, कहीं तृष्णा के अधीन रहते हैं, कहीं मान अपमान के अधीन रहते हैं, तो परतंत्र ही बने रहते हैं। अपनी सर्वशः इन्द्रियों पर शासन करना मानत्व को ऊँचा बनाना, आत्मिक बल को ऊँचा बनाना यह हम सब बुद्धिमानों का कर्त्तव्य होता है।

तो मेरे भद्र पुरूषोंमैं अभी अभी एक आदेश तुम्हारे समक्ष नियुक्त कर रहा था कि ! हम प्राणी, प्राणी को नष्ट करने वाले न बनें, परन्तु उनकी रक्षा करने वाले बनें। प्राणी एक दूसरे का सहायक होता है। मृत्यु तो प्राणी को आती ही है, उससे भयभीत नहीं होता है। यदि हम भयभीत हो जाते हैं तो हमारे जीवन की जो विचार धाराएं है जो जीवन की कर्त्तव्यता है वह हमसे दूर चली जाती है। हम अपनी मानवता को विचित्र और सुंदर बनाएं। जो गो रूपी पशु है इसका पालन करें। जब हम इसकी रक्षा करते हैं कि वास्तव में जो गो शब्द है, गो करूणा है यह हमारे जीवन की एक मूल धारा है।

मुनिवरोंमैं अभी अभी एक आदेश प्रकट करने जा रहा था कि यह समाज वैसे ही ! ऊँचा नहीं बनता। ब्रह्म कश्मीर रुद्रो सर्वाकृतिब्राह्मणाः जहाँ कृति को जानने वाले ब्राह्मण जन होते हैं, राजा को विश्वास कराते हैं कि हे राजा तू भयभीत क्यों हो रहा है, यह तो तेरा सौभाग्य है कि तू इतने जन समूह का नेतृतव कर रहा है। आज तू अपने जीवन को ऊँचा बनाता चल, मानवीयता को लेकर चल जिससे तेरे राष्ट्र में प्रणाली ऊँची बनती चली जाए।

यह है बेटाहमारा आज का आदेश। महानन्द जी ने कहा था कि मूर्खो का चुना ! हुआ राजा मूर्ख होता है। वह प्‌्राणी का भक्षण करने वाला बन जाता है और यहाँ बुद्धिमान किसी को अपना अधिराज चुनते हैं तो मानो वह राष्ट्र के लिए होता है और वह बा्रह्मणों की पुकार को उनकी वेदना को स्वीकार करता है। राम राज्य जब आता है। वेद की पद्धति हमारे समीप हो। मनु जी की सिंद्धात और उनकी राष्ट्रीयता हमारे समीप हो तो हम अपने राष्ट्र को ऊँचा बना सकते हैं। और वह जो राजा होते हैं वह चक्रवर्ती राजा बना करते है। वह राजा चक्रवर्ती राजा नहीं बना करते जो अपना स्वार्थ ललायित करते हैं, प्रजा का नेतृतव अच्छी प्रकार नहीं करते। और ब्राह्मण समाज उनका चुनाव नहीं करते तो क्या होता है? स्वार्थी राजा मानव का भक्षण करने लगता है, अनितियां आ जाती है, रक्त की धारा बह जाती है, जब राजा के समक्ष सम्पन्न विद्याओं का प्रसारण किया जाएगा तो यह संसार और मानव समाज ऊँचा बन सकता है अन्यथा महानन्द जी के कथनानुसार यह संसार अधोगति को चला ही जा रहा है।

तो यह आज का आदेश समाप्त हो गया। आज के आदेशों का क्या अभिप्राय था? कि हम अपने कर्त्तव्य को जानें। गोः रूपी पशु का पालन करें। ब्राह्मणों के समाज को एकत्रित करके राजा का सुदंर चुनाव करें और वैदिक पद्धति को लेकर चलें। वेद की पताका राजा के समीप हो। हे राजा तुझे वेद रूपी प्रकाश की रक्षा करनी है। जब राजा के समीप ये कर्त्तव्य होते हैं तो राजा उनके ऊपर विचारता है। तो यह आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया। अब समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा

अब वेद पाठ होगा। दिसम्बर में ग्राम माजरा 1966 डवास में दिया हुआ प्रवचन

२१ 11 05 1967 सांय वसुन्धरा की याचना ब्रह्माण्ड में प्रत्येक तत्व तप के लिए

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ नित्यप्रति कुछ मनोहर पठन पाठन का कर्म, प्रायः परम्परागतों से आधरित उच्चारण अथवा मनोहर पद्धति में उसका प्रसारण होता रहता है, जिससे हम यह जान सकतें हैं, कि हमारा जीवन परम्परा से सुगठित रहता है। हमारे जीवन में यदि परम्परा नहीं होगी, तो हमारे जीवन का अपना कोई अस्तित्व नहीं रह सकेगा। तो मेरे प्यारेआज का !ऋषिवर ! हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था, आज के हमारे इस मनोहर वेद पाठ में, कहीं शकुन्तका, कहीं धेनु और कहीं वसुन्धरा का वर्णन आता चला जा रहा था, हे माँ वसुन्धरातू वास्तव में हमारा कल्याण करने वाली है !, हे कल्याणमयी माँहम तेरे ! समीप आयें हैं, तू हमारे कल्याण को हमारा कल्याण करने वाली है। हम अपने जीवन को उन्नत चाहते हैं। माँहम तेरे गर्भ में बसते है !, इसीलिए आपको वसुन्धरा कहते हैं। वसुन्धरा का अभिप्रायः है, कि हम उसमें बसते हैं, बसने के नाते, उसको वसुन्धरा कहते हैं।

वसुन्धरा

आओ, मेरे प्यारेहम उस महामना !ऋषिवर !, मातेश्वरी वसुन्धरा की याचना करते चले जाएं, जो हमारा लालन पालन करने वाली है, हमें महान जीवन प्रदान करने वाली है, जीवन को उगलने वाली है, हम उस माता वसुन्धरा को बारम्बार नमस्कार कर रहे हैं। इसीलिए वेद ने नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्दों का विवेचन करते हुए कहा है, वसुन्धरा के नाना पर्यायवाची हैं, जैसे वसुन्धरा पृथ्वी को कहते हैं, जो नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थों को प्रदान करने वाली है, वह वसुन्धरा, जिसके गर्भ में हम नाना प्रकार की वनस्पतियों के द्वारा पनपते रहते हैं। तो आज हम उस माता को वसुन्धरा कहा करते हैं।

मेरे प्यारेजब हम यह विचारने लगते हैं !ऋषिवर !, कि वसु ब्रह्मे मानो जो नाना प्रकार के खनिज को उत्पन्न करने वाली है, और मानव जीवन से उनका कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है, जब हम यह विचारने लगते हैं, तो हमारा हृदय विशालता को प्राप्त होने लगता है। हम अपने मन में, यह अनुभव करते हैं, अपने स्वयं हृदय में यह अनुभव करते हैं, कि वह तो वास्तव में महामना है, वह तो महामना है। हमारा कल्याण करने वाली है। तो मुनिवरोंआ !ज हम उस माता के जब, उस वसुन्धरा के आँगन में आएं हैं, इसीलिए उसको बारम्बार हम नमस्कार कर रहे हैं। तो मेरे प्यारे ! आज का हमारा वेद पाठ क्या कह रहा था !ऋषिवर, हमारा वेद का पाठ यह उच्चारण करता चला जा रहा था। हमारे यहाँ, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का जहाँ गुणगान गाया जाता है, वह वास्तव में जब उसको तत्त्व तत्व से विचारने लगते हैं। तो हमें यह प्रतीत होने लगता है, कि वास्तव में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड वसुन्धरा का स्वरूप माना गया है, क्योंकि वसुन्धरा महामना प्रभु को भी कहते हैं, जिसके गर्भस्थल में बेटा !यह सर्वत्र जगत विराजामन हो रहा है। जिसकी प्रक्रियाओं से यह बेटा ! पृथ्वी क्रियामान हो रही है, सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसी के आश्रित भ्रमण कर रहा है। आज हम उस परमपिता परमात्मा को भी वसुन्धरा के रूपों में परणित किया करते हैं, और उसका गुणगान गाते हैं, गुणों का गुणवाद करते हुए कहा कहते हैं कि वह जो प्रभु है, जो संसार का रचयिता है, जो क्रियात्मक देने वाला है, परन्तु वही जगत में व्याप रहा है, उसी की महान ज्योति से हम सर्वत्र ब्रह्माण्डसर्वत्र प्राणी ,, प्राणी मात्र, बेटा ! उसी की ज्योति से व्याप रहा है। उसी के आँगन में रमण कर रहा है।

तो मेरे प्यारेजब उसी की ज्योति में हम सब व्याप रहे हैं। वह हमें !ऋषिवर ! व्यापक बनाता चला जा रहा है, प्रकाशमयी बनाता चला जा रहा है। तो हम उस प्रभु के गुणगान गाने में सदैव तत्पर रहते हैं। उसी के गर्भ में यह सर्वत्र लोक लोकान्तर विराजमान है, इसका निर्वस्त्र जिसकी महिमा बेटाबड़े सुन्दर !आदि ऋषियों ने बेटा ! रूपों से वर्णन की है। आओ, मेरे प्यारेआज हम उच्चारण करते चले जाएं !ऋषिवर !, कि वह जो देव की जो अनुपम देन है, वह जो अनुपम प्रकाश है, उसमें नाना प्रकार

का ज्ञान और विज्ञान आता है, और नाना प्रकार की प्रतिभा उसमें विराजमान होती हमें प्रतीत होती है।

तो मेरे प्यारेआज हम उस महान !ऋषिवर !, वेद वेदवाणी में ही प्रभु की आनन्दमयी जो देन है, उसका अनुवाद करते हुए वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है, हे महाअकृते !हे महा प्रभु !, तू वास्तव में हमारा कल्याण करने वाला है। जीवन को उदबुद्ध करने वाला है। तेरी ही महती अनुपम कृपा से यह जीवन हमारा उदबुद्ध हो रहा है, अहा, तेरी ही रचना हमें व्याप रही है। तेरी महानता में हम सदैव रमण करने वाले हो, हमें नाना प्रकार का जो अज्ञान आता है। वह आपको दूरी कर देते हैं अपने हृदय से, तो उस समय हमें अज्ञानता की प्रतीति होने लगती है। तो प्रभुहम चाहते ! हैं, कि हम सदैव प्रकाश में रमण करते रहें, आनन्द में ही रमण करते रहे, कि हमारा जीवन, सदैव आनन्द के लिए उत्पन्न होता है। जीवन की प्रतिभा को जानने के लिए उत्पन्न होता है। हमें कोई ऐसा महान सामर्थ्य प्रदान करो, जिससे भगवनहम ! आपकी अनुमप कृपा के द्वारा, आपकी महिमा को जान करके अपने मनस्तव को जानते चलें जाएं। हे प्रभुयह आपकी महती !, यह आपकी अनुपम देन हैं, जब हम यह विचारते हैं कि आप इस जगत में ओत प्रोत हो रहे है। और ये जगत आपसे व्याप्त हो रहा है, तो प्रभुहम कहां जाए !? किस आँगन में रमण करें? परन्तु यहाँ मैं केवल उसकी महिमा का गुणगान गाने ही नहीं आए हैं, बेटावाक् यह उच्चारण करते ! चले जाएं, कि आज का मानव जैसा मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे कई काल में ! वर्णन कराते हुए कहाहै। इन्होंने उच्चारण करते हुए कहा है, कि हम सदैव इस संसार को उन्नत बनाना चाहते हैं, परन्तु संसार उन्नत उस काल में बनता है, जब प्रत्येक मानव अपने अपने कर्तव्यवाद का पालन करता चला जाता है। जैसा मैंने काल में बेटावर्णन करते हुए कहा है !, कर्तव्यवाद को ही कहीं कहीं धर्मज्ञ कहा है, धर्म कहा है।

अमृतमयी ज्योति

तो मुनिवरोंजहाँ कर्तव्यवाद होता है !, वहाँ मानव की प्रतिभा होती है, मानव का

जीवन उन्नत होता प्रतीत होता है। मैंने कई काल में वर्णन करते हुए कहा है, गुरु शिष्यों के सम्बन्ध में, क्या गुरु शिष्य उस परमात्मा के मध्य में विराजमान करके जब शिक्षार्थी, शिक्षा को अध्ययन करता है। उसकी बुद्धि तत्परता आती चली जाती है, और आचार्य के हृदय में विशालता आती चली जाती है, परन्तु जब दोनों ही आचार्य और शिक्षार्थी दोनों में स्वार्थवाद की अनुपमता आ जाती है, स्वार्थवाद आ जाता है, उस समय बेटान तो शिष्य ही ऊँचा बनता है !, और न गुरु ही तपता है। क्योंकि संसार यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड तपस्या में ओत प्रोत है। तो मेरे प्यारेजब गुरु !ऋषिवर ! अपने कुल में तपता है, परन्तु ब्रह्मचारी गुरु के कुल में तपता है, सूर्य बेटादेखो !, अपने आँगन में तपता है, समुद्र अपनी परिधि में तपा करता है, पृथ्वी अपने आँगन में तपती है, चन्द्रमा अपने रसों में तपता है, इसी प्रकार बेटायह जो सर्व जगत है !, यह तप से ऊँचा बना है। और तप से ही इसका मुख्य विवेक भी रहता है।

मेरे प्यारेजब यह संसार तपा करता है !ऋषिवर !, तभी यहाँ ऊंचे ऊंचे वनस्पति, यह पृथ्वी तपा करती है, तो बेटासुन्दर सुन्दर वनस्पतियों का जन्म होता है। मेरी पुत्री ! ब्रह्मचारिणी जब तपा करती हैं, बेटातपने के पश्चात वह सुन्दर बालक को जन्म देती ! है, कणाद और गौतम जैसे ऋषियों का जन्म होता है, राम और कृष्णा जैसों का जन्म होता है, बेटाजब यह सूर्य तपा करता है !, तपता है, तो समुद्रों से जलों का उत्थान होता है। जल से मेघ बनते हैं, और मेघों से सुन्दर धीमी धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है, उससे नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म होने लगता है। इसी प्रकार बेटाजब ! यह चन्द्रमा मुनिवरोंग्रीष्म ऋतु में देखो !, जब यह तपता है, अपनी अमृतमयी ज्योति प्रदान करता है, तो कृषक करने की, कृषक की जो भूमि होती है, उसमें अमृत प्रदान करता है, परन्तु वह जो अमृत मेरी भूमि है, अन्न है, उसको अमृत प्रदान करके बेटा ! वह सर्व अन्न अमृतमय हो जाता है। यहाँ तकनहीं है, यहाँ तक है कि माता के गर्भस्थल में जो जरायुज होता है, वहाँ तक अमृत प्रदान करता चला जाता है। तो वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः क्या है, बेटाजब यह संसार तपता है !, क्योंकि तप में ही सर्वश जगत विराजमान रहता है। आचार्य के कुल में बेटाब्रह्मचारी तपता ! है,

हे ब्रह्मचारी! तू वास्तव में तपस्या में है, क्योंकि तेरा जीवन ही तप है, हे आचार्य ! जब तू अपने कुल में तपता है, मानो जब तू विद्या से तपायमान हो जाता है, तेरा तप क्या है, जब तू ज्ञानमयी अग्नि को ग्रहण कर लेता है। ज्ञानमयी ज्योति को ग्रहण कर लेता है, तो तेरा जो तप है, वह महान बन जाता है।

ऋत का स्वरूप

मेरे प्यारेमुझे स्मरण आता रहता है !ऋषिवर !, तप की वार्त्ता, तप क्या है !मुनिवरों ? देखो, तप मानव का विचार है, मानव का आहार और व्यवहार है, क्योंकि जब आचार्य तपता है, तो देखो, आहार और व्यवहार से तपा करता है, परन्तु हमारे यहाँ परम्परा यह कहती है, हमारे यहाँ गुरु और शिष्य का संवाद यह कहता है, आचार्य जनों के उदगारों में आता है, कि यहाँ तप करने के लिए कहा है। बेटाएक समय ! मुझे स्मरण है, जब महर्षि पिप्लाद मुनि के आश्रम में देखो, यह रेवक इत्यादि जब छह जिज्ञासु आचार्य के गृह में पंहुचे, मुनिवरोंदेखो !, उस समय जिज्ञासुओं ने कहा प्रभुआपकी शरण में आए हैं !, उन्होंने कहा क्या शरण, क्या चाहते हो? उन्होंने कहा प्रभुहम ऋत को जानना चाहते हैं !, ऋत किसे कहते हैं, उस समय बेटा महर्षि ! पिप्पलाद जी ने कहा कि अच्छा, आप सब देखो, यह हमारे आश्रम का नियम है, यह चार सौ गऊ है, इनका एक वर्ष तक इनका लालन पालन करो। उसके पश्चात, तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दिया जा सकेगा, उस काल में जब कि मैं जानता हूँगा तो। मुनिवरोंदेखो !, वह जिज्ञासुओं ने, ब्रह्मजिज्ञासुओं ने एक वर्ष तक बेटा! नियम धारण किया, कि हम गऊओं का पालन करेंगे। बेटागऊओं का लालन पालन करते थे !, जब पालन करते रहे, एक वर्ष हो गया लालन पालन करते हुए, एक वर्ष के पश्चात पिप्पलाद मुनि के चरणों में ओत प्रोत हो गएं, और चरणों में ओत प्रोत हो करके, उन्होंने कहा कि भगवन अब हम यह जानना चाहते हैं कि !ऋत किसे कहते हैं, ऋत को जानने के लिए, आपकी शरण में आएं हैं। उन्होंने कहा बहुत सुन्दर, क्या तुम यही जानना चाहते हो, उन्होंने कहा कि हाँ, महाराज! क्या जिस स्थिति से तुमने, एक वर्ष तक गऊंओं का पालन किया, उसी को हमारे यहाँ ऋत कहते हैं।

सत्य के तीन प्रकार

तो मेरे प्यारेकितना संक्षिप्त उत्तर है ऋषि का !ऋषिवर !, ऋषि ने कहा जिस प्रतिभा से, जिस श्रद्धा से, जिस आस्था से, जिस तरंगों से तुमने गऊओ का पालन किया है, संयम से रहे हो, उसी को ऋत कहा जाता है। आज हम ऋत को जानना चाहते हैं, बेटाऋत नाम है !, तपस्या का, क्योंकि तपस्या एक रूपों में ऋत का स्वरूप धारण कर लेती है। तो मेरे प्यारे !ऋषिवर जब हम ऋत का वर्णन करते हैं। कि इससे यह संसार क्रियात्मक हो रहा है, उसी को ऋत कहा जाता है, और ऋत और सत मानो देखो, द्वितीय शब्द सत्यता में परणित होता है, बेटादेखो !, सत्य में भी देखो, तीन प्रकार के सत्य का विवेचन देखो, हमारे यहाँ आता है, देखो, एक तो अभाव में सत्य है, एक सत्य सत है, एक ब्रह्म सत है, मानो देखो, एक तो वह, जो प्रकृति हमें प्रतीत हो रही है, सत है। परन्तु इसका अभाव भी होता है, परन्तु इतना नहीं होता, यह सदैव सत रहती है। परन्तु एक अभाव में सत है, एक मेरे प्यारेमहानन्द जी मुझे ! दृष्टिपात आ रहे हैं, परन्तु कुछ समय के पश्चात जब यह परमाणु रूप हो जाता है। अहा, देखो, इसी स्वरूप का, इसी सत का अभाव हो जाता है। एक माता का पुत्र हमें प्रतीत होता है, परन्तु माता प्रतीत हो रही है, शिष्य गुरु को प्रतीत हो रहा है, परन्तु शिष्य के नेत्रों के समीप गुरु जन हैपरन्तु गुरु जनों का अभाव है ,, क्यों अभाव है? क्योंकि उसका जो स्थूल शरीर है, वह नहीं रहेगा, परमाणुवाद बन जाएगा, इसीलिए देखो, वह जो स्वरूप हमें प्रतीत हो रहा था, वह सत था। परन्तु सत के आँगन में सत नही अभाव प्रतीत होता है, एक ब्रह्म सदैव सत्य रहता है मानो देखो, जो ब्रह्म सत है, अहा, ब्रह्म सत है वो सदैव उसका किसी काल में भी अभाव नहीं होता।

शरीर सुगठन के परमाणु

तो मेरे प्यारेआज हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते चले जाएं !ऋषिवर !, जिसका किसी काल में भी अभाव नहीं होता, मानो उसका अभाव होता ही नही, इसीलिए आज हम मानवतव के सम्बन्ध में जब यह उच्चारण करने लगते हैं, कि

वास्तव में मानव का जीवन क्या है? विचार विनिमय आता है, कि मानव का जीवन क्या हैउसमें एक महानता प्रतीत होने लगती है !तो बेटा ?, जब यहाँ मैं अपनी प्यारी माता से एक मेरी प्यारी माता अपने पुत्र के लिए व्याकुल हो रही है, परन्तु जब मैं यह प्रश्न करता हूँ, हे मातायह जो तेरा पुत्र !, जिसके लिए तू व्याकुल हो रही है, यह पुत्र तेरा कहाँ था, इस पुत्र का यह पुत्र कहां चला गया, तो माता से कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता। क्योंकि वह मोह में परिपक्व है, मोह में लिप्त भी हो चुकी है, क्या वह अपनेपन को समाप्त कर चुकी है, परन्तु जब ज्ञान और विवेक के गर्भ में जाते हैं। ज्ञान और विवेक की प्रतिभा में जाते हैं, तो यह प्रतीत होने लगता है, क्या वह जो पुत्र था, परन्तु हे मातातेरा जो पुत्र था !, वह कहां चला गया, परन्तु उत्तर मिलता है, उसका मुझे प्रतीत नही, हे माता! मैं यह जानना चाहता हूँ, कि तेरे पुत्र का जो निर्माण है, वह निर्माण किस वस्तु से हुआ है, तो उत्तर मिलता है, कि माता के गर्भस्थल में सूक्ष्म से बिन्दु से इसका निर्माण होता है। अहा, मुनिवरोंदेखो !, वह कहां चला गया, वह किस स्थान में चला गया, जैसा पिप्पलाद ऋषि से, उनकी पत्नी ने कहा था, हे प्रभु! हमारा जो यह मानव शरीर है, इसका निर्माणवेत्ता, किस वस्तु से इनका निर्माण होता है? तो उत्तर मिलता है ऋषि से, क्या इस मानव जीवन का जो निर्माण है, वह सूक्ष्म से बिन्दु से होता है, अहा, उन्होंने कहा कि यह जब विकृत हो गया, यह परमाणु जब मानो हमारा यह शरीर इस रूप में नहीं था, तो इससे पूर्व यह शरीर, किस रूप में विराजमान था? उन्होंने कहा कि यह जब इस रूप में नहीं थे, तो माता के गर्भस्थल में विराजमान थे। माता के गर्भस्थल में पनप रहे थे, उसी के आँगन में रमण कर रहे थे। ऋषि देवी ने कहा प्रभुजब यह हमारा मानव शरीर ! मानो जब यह माता के गर्भस्थल में नही था। उससे पूर्व यह परमाणु कहाँ रहते थे? उन्होंने कहा, इससे पूर्व ये परमाणु देखो, माता पिता के रज वीर्य के रूप में विराजमान थे, उन्होंने कहा हे भगवनमैं यह जानना चाहती हूँ !, जब माता पिता के शरीरों में रज वीर्य भी नहीं था, उससे पूर्व यह परमाणु कहां रहते थे? उन्होंने कहा, यह परमाणु कुछ अन्न में थे, और कुछ नाना प्रकार की वनस्पतियों में थे, उन्होंने

कहा हे भगवनमैं यह जानना चाहती हूँ !, क्या जब यह वनस्पतियां और अन्न भी नही था, उससे पूर्व यह परमाणु कहां रहते थे? उन्होंने कहा ये परमाणु मानो यही परमाणु देखो, कृषक की भूमि में ललाहित हो रहे थे, कृषक की भूमि में विराजमान थे, उन्होंने कहा कि हे भगवनजब यह कृषक ! की भूमि भी नहीं थी, उससे पूर्व यह परमाणु कहां रहते थे? उन्होंने कहां, यही परमाणु मानो देखो, पृथ्वी में बिखरे हुए परमाणु थे, यह पृथ्वी में बिखरे हुए थे, परमाणु रूप में थे, उन्होंने कहा क्या भगवन ! ये पृथ्वी के ही परमाणु हैं। उन्होंने कहा कदापि नही, कुछ मानो अन्तरिक्ष के परमाणु हैं, कुछ जल के परमाणु है, कुछ वायु के परमाणु हैं, और कुछ अग्नि के परमाणु और कुछ पृथ्वी के परमाणु ये पञ्च महाभूतों का पिण्ड माना गया है। उन्होंने कहा अरे, परमाणुओं को सुगठित करने वाला, इस मानव शरीर में जीवात्मा रहता है, जीवात्मा उन परमाणुओं को सुगठित करने वाला है। जब इस शरीर से यह जीवात्मा चला जाता है, उस समय यह परमाणुओं का पिण्ड रह जाता है। परन्तु क्रिया से शून्य हो जाता है, यह क्रिया शून्य हो जाता है, इसी को अग्नि के मुखारबिन्दु में अर्पित कर दिया जाता है। अग्नि के परमाणु अग्नि में चले जाते हैं, जल के परमाणु जल में चले जाते हैं। वायु के परमाणु वायु में चले गएं, अन्तरिक्ष के परमाणु अन्तरिक्ष में चले गएं, और पृथ्वी के परमाणु पृथ्वी में रमण कर गएं, अहा, देखो, संसार में नष्ट कोई वस्तु होती ही नही। परन्तु देखो, स्थूल का जो दृष्टिपात आ रहा था, उसका अभाव हो गया है।

ऋत व सत

तो तीन प्रकार के सत्यों में मानो देखो, एक सत यह भी मानो शरीर भी सत है, परन्तु इसकी सतता में भी अभाव रहता है, इसका परमाणु रूप हो जाता है, तो अभाव है, परन्तु स्थूलता में प्रतीत होता है, इसका अभाव कभी नही होता। इसीलिए वेद के ऋषियों ने कहा है, आचार्य जनों ने कहा है, क्या प्रकृति है, यह भी सत है, परन्तु इसका रूपान्तर होता रहता है। आज यह स्थूल रूप में है, परन्तु प्रलय काल आता है, तो यह सूक्ष्म रूप में परिणत हो जाती है, यह ब्रह्म के गर्भ में चली जाती

है, एक सदैव ब्रह्म है, जो सदैव चैतन्य क्रियाशील ज्ञान स्वरूप रहता है। मानो देखो, उस ब्रह्म का किसी काल में भी बेटाअभाव नहीं होता !। तो मेरे प्यारे !ऋषिवर ! कितना दूरी चला गया हूँ। वाक् उच्चारण !आज मैं वाक् उच्चारण करते करते बेटा करने का अभिप्रायः यह चल रहा था, कि हम देखो, ऋत की व्याख्या करने जा रहे थे, ऋत नाम ब्रह्म को कहा गया है, ऋत नाम चैतन्य शक्ति को कहा गया है, क्योंकि उसी के आश्रित में हम सभी जकड़े हुए रहते हैं, उसी में कटिबद्ध रहते है। इसीलिए वेद के ऋषियों ने कहा है, कि हम सदैव मानो देखो, उस ब्रह्म के आँगन में सत और ऋत के आँगन में रमण करते रहते हैं, ऋत क्या है, आज हमें ऋत को जानना है। शिष्य और गुरु जब दोनों विराजमान होते हैं। तो ऋत और सत का विवेचन करते रहते हैं, मानो वह अपने जीवन की प्रतिभा को जानते रहते हैं, दोनों तपे हुए होते हैं, तो मेरे प्यारेहमारे यहाँ !ऋषिवर !, परम्परागतों में ये माना गया है, क्या प्रथम हमारे यहाँ देखो, गुरु और शिष्य को, दोनो को तपस्वी बनाने के लिए आज्ञा दी जा रही है। अहा, हे गुरुओंतुम्हे वास्तव में मनो वैज्ञानिक बनना है !, तुम्हे ऐसा मनों का विज्ञान तुम्हें अपने समीप लाना है, जिससे तुम ब्रह्मचारी को अच्छा चुन सको, क्योंकि ब्रह्मचारी को चुनना ही होता है, अधिकार अनधिकार को देखो, विचार विनिमय करना होता है। वह मेरे प्यारेमहानन्द जी ने एक समय कहा था !, कि संसार में जब से अधिकार चेष्टा चली गई है, तभी से संसार में देखो, यहाँ बुद्धिमानों का अभाव होता चला जा रहा है, क्यों होता चला जा रहा है?, अधिकार को अनधिकर को नहीं विचारा जाता। उस पर विवेचन नहीं किया जाता। यदि विवेचन किया जाता, तो यह संसार इतना गढ़ेले में नहीं जाता। परन्तु इसमें विवेचना होती, सुन्दरवाद होता।

तो मेरे प्यारेउच्चारण करने का अभिप्रायः क्या है !ऋषिवर !, हे गुरुजनों !तुम्हें उत्तम बनना है तपना है, और तपने के पश्चात ब्रह्मचारी को तपाना है, और उस शिक्षण को, उस संस्कृति को अपनाना है, जिस संस्कृति में ऋषितव होना चाहिए। जिसमें विडम्बना नही, विवेक होना चाहिए। परन्तु देखो, उसमें अशुद्धवाद नहीं होना चाहिए। मेरे प्यारे ! देखो !ऋषिवर, जब अपभ्रंश शब्द हो जाते हैं, तो बुद्धिमानों का कर्तव्य है, क्या उन

शब्दों का शोधन कर लेना चाहिए, राष्ट्र की अनुमति ले करके, उनका संशोधन करना, यह हमारा सभी प्राणियों का, बुद्धिमानों का कर्तव्यवाद कहलाता है। क्योंकि शिक्षार्थी और गुरुजन वहीं होते हैं, जिनका दोनों में परस्पर प्रीति और स्नेह और देखो, एक दूसरे में एक दूसरे के कर्तव्य का पालन उनमें, विशेषकर होता है, तपे हुए होते हैं, तो मुनिवरोंदेखो !, उनके विचारों में जब तप और विवेक, तप का विवेचन होता है। तप की भावना होती है, तो बेटादेखो !, शिक्षालयों में, एक महानता की ज्योति प्रदीप्त हो जाती है। चरित्रवाद की प्रतिभा होती है, परन्तु द्वेष की मात्रा नही होती, वहाँ सदैव आस्था की प्रतिभा, आस्था वाली जो ऋत है। उसका ओत प्रोत होता रहता है।

तप से उत्पादन

तो मेरे प्यारेआज का हमारा यह वाक् क् !ऋषिवर !या कहता चला जा रहा है, मैं कोई अधिक वाक् उच्चारण करने नहीं आया हूँ, केवल यह वाक् उच्चारण करने के लिए आ पंहुचे हैं कि हमारा जीवन वास्तव में तपना चाहिए बेटाजब यह संसार ! तपता है, तपने के पश्चात ही संसार में कोई वस्तु आती है, बेटाजब पृथ्वी माता ! ग्रीष्म ऋतुमें तपा करती है, जब यह तपती है, तो मुनिवरोंदेखो !, तपने के पश्चात ग्रीष्म ऋतु में सूर्य के प्रकाश में तपा करती है, तपने से बेटाइसमें जीवन की ! प्रक्रिया आती है, जीवन प्राप्त होता है अरे, जीवन जब वर्षा ऋतु आती है, मेघों से वृष्टि होती है, उस समय बेटा !नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म होता है बेटा ! जब आचार्य तपता है तो बेटादेखो !, ब्रह्मचारी को उत्तम बनाता है, और जब पृथ्वी तपा करती है, तो नाना प्रकार की वनस्पतियां यहीं तक नहीं बेटायह खनिज पदार्थ ! भी इसी तपने से प्राप्त होता है। जहाँ यह पृथ्वी अधिक तप जाती है, अधिक तपमय हो जाती है, वहाँ बेटा सूर्य से उन !किरणों का, उन किरणों की प्रतिभा इसमें आनी प्रारम्भ हो जाती है। जिससे नाना प्रकार की धातुओं का जन्म होता है बेटा ! मेरे प्यारे पृथ्वी में नाना प्रकार का स्वादन होता है इस पृथ्वी में !ऋषिवर !कितनी विभाजन क्रिया प्रतीत हो रही है, एक सूक्ष्म से स्थान में, नाना प्रकार की वनस्पतियां होती है। उनके नाना प्रकार के रस्वादन होते हैं, बेटाउसमें विभाजन क्रिया है !, इसमें

मनस्तव है, मनस्त्व जो पृथ्वी में विराजमान है, परन्तु उसी से देखो, वह विभाजनता में रसों का विभाजन होता रहता है, प्राण की सत्ता से, प्राण के विवेग्रनों से बेटा ! नाना प्रकार की वनस्पतियों का भिन्न भिन्न प्रकार का रस्वादन होता है। पृथ्वी के परमाणुओं में, पृथ्वी के कणों में नाना प्रकार का उत्पादन होता है, जिस पृथ्वी में बेटाकैषला !, कैषले में कड़वाहट होता है, कड़वाहट में मधु होता है, वहाँ जानो, बेटा !स्वर्ण जैसी धातु का जन्म होगा मेरे प्यारे !ऋषिवर !वाक्यों का अभिप्रायः यह है, कि हमें यह जानना है, यह विचारना है कि यह पृथ्वी जो तपा करती है। तो बेटा ! नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थो का इसी से जन्म होता है, और इसी से हमारा जीवन महान बना करता है, जिससे हमें विचारना है, आज हमें विज्ञान के क्षेत्रों में जा करके विचारना है, तप के क्षेत्रों में विचारना है, बेटायह जो प्रभु का ! मनस्तव है, इसको विचारते हुए इसके ऋत को जानते हुए, बेटाइस सब ऋत का ! हीवर्णन है, इनमें सबमें ऋत रमण करती रहती है बेटा ।!

ब्रह्मचारी का तप

आओ, मेरे प्यारेसूर्य की नाना किरणें तपा करती हैं !ऋषिवर !, समुद्र को तपाती हैं, बेटासमुद्र से जब जलों का उत्थान होता है !, जल से मेघ बनते हैं, मेघ बेटादेखो !, उससे जलों की उत्तम वर्षा होती है, वृष्टि होती है उससे बेटादेखो !, समुद्रों में एक महानता की ज्योति जाग्रत हो जाती है, बेटाउसी से जीवन उन्नत बना करता है !, उसी से मानो जीवन में रस आता है। आनन्दतव आता है, तो हमें विचारना है, कि यह सर्वत्र वस्तु तपा करती है। तो मेरे प्यारेमानव क !ऋषिवर !ा जीवन भी तपमय होना चाहिए। मेरी प्यारी माता, जब विचारों में तपती है, विचारों में तपा करती है, तो बेटायहाँ कणाद और गौतम को जन्म देती है !, मुझे स्मरण है बेटाजब महर्षि ! अगस्त मुनि का जन्म हुआ, माता स्नेहलता के गर्भ में जब बेटा! महर्षि अगस्त मुनि जी थे, उस समय माता तपती थी, विचारों में तपती थी, मानो विवेक में तपा करती थी, उस माता के गर्भ से बेटादेखो !, अगस्त जैसा महान विभूति का जन्म हुआ। तो मेरे प्यारेसंसार में प्रत्येक वस्तु तप चाहती है !ऋषिवर !, इसीलिए तपना चाहिए।

ब्रह्मचारी कुल में बेटाजब शिक्षालय में ब् !रह्मचारी तपते हैं बेटाअपने ब्रह्मचर्य से ! तपा करते हैं, तपने का अभिप्रायः क्या हैब्रह्मचारी कौन होता है ,? जो बेटाब्रह्मविद्या ! में चरता है, ब्रह्मविद्या को चरी करने वाला जैसे पशु मानो पशु पृथ्वी में से नाना प्रकार की वनस्पतियों को चरता है, देखो, चरता है इसी प्रकार जब ब्रह्मचारी ब्रह्म को चरता है, ब्रह्म किसे कहते हैं, विद्या को चरता है बेटाउसको चरने के पश्चात वह ! ब्रह्मचारी उसी काल में चरता है, जब ब्रह्मचर्यतव उसके समीप होता, उसका जीवन उस महानता में तपा हुआ होता है बेटाआज का हमा !ऋषिवर !तो मेरे प्यारे !रा वाक् क्या कहा रहा है, कि तपना चाहिए। तप उसे कहते हैं, जहाँ मान अपमान नहीं होता, जहाँ गुरु की शरण में रहा जाता है और गुरु कैसा तपा हुआ, क्या, गुरु उसे अपने गर्भ में धारण कर लेता है बेटाक्या गुरु जब उसे अपने आँगन में ,कहा है ! धारण कर लेता है, अहा, उसको शिक्षार्थी बना देता है, उज्ज्वल बना देता है, और कहता है चक्षुम्मे शुन्धामि, प्राणम्मे शुन्धमि, श्रोत्रम्मे शुन्धामि हे बालकतू !हे ब्रह्मचारी ! अपनी इन्द्रियों को मुझे अर्पित कर मानोउन्हें में चक्षुम्मे शुन्धामि, मैं तेरे चक्षुओं को सुन्दर बना रहा हूँ। इनका शोधन कर रहा हूँ, देखो, आचार्य सबसे प्रथम जो कह देता है, ब्रह्मचारी! अब तू अपने गुरु के आँगन में आ गया। तू तपतू अपनी इन्द्रियों , को तपा, इन्द्रियों को तपाना है ज्ञान से, विवेक से, मानो उनमें विडम्बना नहीं आनी चाहिए। इनमें तप होना चाहिए।

मेरे प्यारेऋषि !वरआज का हमारा वाक् क्या कह रहा है कि संसार में तप होना ! चाहिए हमारे यहाँ तप नही होगा, तो जीवन में कोई सार्थिकता नहीं होगी, तो मेरे प्यारेआओ !ऋषिवर !, हम सर्वश इन्द्रियों का शोधन, गुरु की शरण में करना चाहते हैं। परन्तु गुरु इतना बुद्धिमान होना चाहिए, अहा, उसका जीवन स्वयं तपा हुआ होना चाहिए, यदि गुरु का जीवन तपा हुआ नहीं होगा, तो बेटावह ब्रह्मचारी को भी नहीं ! तपा सकेगा। तपा वही सकता है, जिसका स्वयं का जीवन तपा हुआ होगा, विचारों में तपा हुआ, ब्रह्मज्ञान में तपा हुआमानो संसारिक व्यापार में तपा हुआ ,, राष्ट्र विधान में तपा हुआ, वही बेटाब्रह्मचारी को तपा सकता है !, और उज्ज्वल बना सकता है।

तो मेरे प्यारेआज का हमारा वाक् यह क्या कहा रहा है !ऋषिवर !, हमें वास्तव में अपने जीवन को उन्नत बनाना है, पवित्र बनाना है, हमारे यहाँ आचार्यों के यहाँ, बेटा ! देखो, यहाँ अधिक विद्या की आवश्यकता नही है, संसार में जो ज्ञान है, विवेक है, वह बहुत सूक्ष्म सा है। परन्तु वह नाना प्रकार की पोथियों में नही है, वह मानव के विचारों में विराजमान रहता है। मानव की प्रतिभा में विराजमान रहता है। तो मेरे प्यारेहमें यह विचारना है !ऋषिवर !, कि हमें अपनी प्रतिभा को ऊँचा बनाना है, महानता की ज्योति को ऊँचा बनाना है, जिससे हम प्रभु की उस महानता को, उस विचारमयी जीवन को विचार सके, जिस महानता से प्रभु ने इस जगत और ब्रह्माण्ड की रचना की है, यह जो जगत हमें प्रतीत हो रहा है, इसकी रचना में क्या क्या तत्त्व है, इन सबको विचारना हमारा कर्तव्यवाद कहलाया गया है, और उस कर्तव्यवाद में बेटाधर्म परणित रहता है। ! इसी में धर्म की प्रतिभा होती है। ऋषि ने कहा था, जब जिज्ञासुओं ने कहा कि प्रभुक्या ऋत इसी को कहते हैं !, उन्होंने कहा कि जन्तं ब्रह्मे प्रव्हा कृति मानो देखो, जिस शक्ति से तुम क्रिया करते हो, तपते हो, इस तपने का नाम ही मानो देखो, ऋत कहलाया जाता है। ब्रह्मज्ञान में जो तप लेता है, ब्रह्मचर्य में जो तप लेता है, ब्रह्म में विचरण कर लेता है, बेटाउच्चारण करने का अभिप्रायः यह ! है, कि रसों की रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य नहीं कहलाया जाता है, ब्रह्मचारी वह होता है, जो ब्रह्म का चिन्तन करता है, ब्रह्म के ऊपर विचार विनिमय करता है। मेरे प्यारे ! आज का हमारा वाक् यह क्या कहता चला जा रहा !ऋषिवर, कि हम प्रभु का चिन्तन करते हुए, उस माता वसुन्धरा की याचना करते हुए, जो संसार को अपने में बसाती चली जा रही है, बेटाउसको वसुन्धरा कहते है। हमारे यहाँ वह जो सत्यम् ! जो ब्रह्म है, उस ब्रह्म को भी वसुन्धरा कहते हैं, क्योंकि सर्वत्र जगत उस महान देखो, माता वसुन्धरा के गर्भ में ओत प्रोत हो रहा है।

तो मेरे प्यारेआज का हमारा यह वाक् क्या कहा !ऋषिवर ! रहा है, मुझे कोई अधिक वाक् उच्चारण नहीं करने हैं, केवल वाक्यों का अभिप्रायः यह है, कि हम माता वसुन्धरा के गर्भ में जाना चाहते हैं, माता के लिए हम सदैव अपने जीवन को उसमें

रमरा कराना चाहते हैं, तो मेरे प्यारेहम उस मातेश्वरी की याचना करते !ऋषिवर ! चले जाएं, वह वसुन्धरा है, वसु हमें अपने में बसा, अपने में बसाती चली जा रही है। तो मेरे प्यारेआज का यह वाक् अब हमारा समाप्त होने जा रहा है !ऋषिवर !, आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः ये, कल बेटामुझे समय मिलेगा !, तो मैं अधिकार और अनाधिकर के ऊपर कुछ विचार विनिमय कर सकूंगा। आज के इन वाक्यों का अभिप्राय यह कि हम ब्रह्म की याचना करते हुए कि हम सदैव अपने मानवतव को जानते हुए, ब्रह्म में विचरण कराते हुए और अपने मानवतव को जानते हुए कि हमारा मानवतव है क्या, मेरी प्यारी माता कितनी व्याकुल हो रही है, एक पुत्र के बिछड़ जाने के पश्चात। परन्तु हे मातामानो इसमें कोई वस्तु नष्ट ?यह तेरा पुत्र है क्या ! नहीं होती, तो तू अज्ञान में क्यों व्याकुल हो रही है, मानो यह सब अज्ञान है, इसीलिए कहा है कि तपना चाहिए। हे मातातू अपने विचारों को तपा !, हे मानवतू ! अपने विचारों को तपा, व्याकुल न हो क्योंकि संसार में किसी वस्तु का अभाव नहीं होता। वह सदैव, परन्तु उसका रूपान्तर होता रहता है, उस रूपान्तर में अभाव स्वीकार कर लेते हैं। मानो देखो, यदि गम्भीरता से विवेक से विचार विनिमय किया जाता है, तो मृत्यु जो शब्द है, अज्ञानता का प्रतीक माना गया है। तो यह है बेटा ! आज का हमारा वाक्, अब मुझे समय मिलेगा, तो मैं शेष चर्चाएं बेटाकल प्रगट ! कर सकूंगा, आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः ये, कि हम प्रभु की याचना करते हुए, उस महादेव की याचना करते हुए, अपने मानवतव को उन्नत बनाते चले जाएं। प्रभु के जगत में आएं है। माता वसुन्धरा के गर्भ में हैं, हम वास्तव में उस माता की याचना करते हुए, उसको बारम्बार नमस्कार कर रहें हैं और नमस्कार करके अपने वाक्यों को समाप्त करने जा रहे है।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंआज का यह वाक् समाप्त होने जा रहा है !, आज के वाक्यों का अभिप्रायः कल मुझे समय मिलेगा तो अधिकार अनिधकार के ऊपर विचार विनिमय किया जाएगा यह मैंने इससे पूर्व काल में भी अपने विचार दिए है, आज भी

मुझे सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। तो यह है बेटाआज का वाक् !, अब समय मिलेगा, शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगे, आज का वाक् यह समाप्त होने जा रहा है।

पूज्य महानन्द जीः गुरूदेव वाक् तो बहुत सुन्दर परन्तु !समय बड़ा सूक्ष्म।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यचलो ...., बेटाकल समय मिलेगा तो अधिक चर्चाएं कल ! प्रगट करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन।

पूज्यपाद गुरुदेवः वेदपाठ, ओ३म् ब्रह्म भूषणाः आभ्यां ऋषि वाचा रयीणां गायन्ताहाम्। ओ३म् तनु ब्रह्मा व्यापाश्वरी इदं आ भा गृही वन्धनाः मानं भगाः। ओ३म् देवं सर्वत्र तु रथा आभ्यां ऋषि वाचन्नम वन्धना प्रागताम्। ओ३म् धेनुं गता रयि शन्ना आत्मा भद्राणि गयानि चमा रेवं आ भाहाम्। ओ३म् उदुग्रीवाः चरी इदं मां धेनु गया आ भा मनो प्राची रथा अमृता मानं देवं भा गाहाम्। ओ३म् देवं मया सर्वं भद्रा ब्रह्मणाम्। पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् !

२२ 26 07 1967 पुष्प 09 राजा और चरित्र चित्रण

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज जिन वेद मन्त्रों का पूर्व से पाठ किया। हमारे यहाँ वेद मन्त्रों का पठन पाठन नित्य प्रति होता है, परन्तु जिस काल में वेद मन्त्रों का पठन पाठन होता है, वह भी परमात्मा का दिया हुए एक उज्ज्वल समय होता है। जितना समय वेद मन्त्रों की ध्वनि में व्यतीत होता है वह परमात्मा का प्रसाद है और हमारे जीवन में वह सौभाग्य का समय होता है। मैं प्रभु से यही कहा करता हूँ कि हे देवआप कितने दयालु हैं !, आपकी मनोहर दया से हमारा जीवन पनपता है और आप ही की कृपा से आपके गुणगान गाने का ऐसा समय प्राप्त होता है।

हे प्रभुवास्तव में तो आपकी सर्वज्ञ महिमा को हम नहीं जान सकेंगे !, क्योंकि हमारे में अल्पज्ञता है। हम वायु मण्डल में रमण कर सकते हैं, चन्द्रमा और सूर्य के पास जा सकते हैं, परन्तु हमारे में इतनी शक्ति नहीं है, कि आपके राष्ट्र से, आप की जो

इतनी विशाल रचनात्मकता है उसकी सीमा से दूर जा सकें। हे देव हम आपका कहाँ तक गुणगान गाएं, वाणी में इतनी शक्ति नहीं।

आचार्यजनोंआज का हमारा वेदमन्त्र क्या उच्चारण करता चला जा रहा था। आज ! हम उस परम पिता परमात्मा की याचना करते चले जा रहे थे जिसको वेदों ने गो कहा है, धेनु कहा है। भिन्न भिन्न प्रकार से उसका रूपान्तर किया है। आज मैं केवल उन वाक्यों को प्रकट करने आया हूँ जो आदि ऋषियों के चुने हैं और जो वास्तव में सर्वोपरि माने जाते हैं। जहाँ हम न वाक्यों को लेते हैं कि परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाने वाले और ब्रह्मवेत्ता कितने ऋषि हुए, तो बेटावह भी अनन्त ! हुए। राजा और महाराजा भी ब्रह्मज्ञानी हुए। हमारे यहाँ एक वाक्य आता है कि राष्ट्र की परम्परा और मानवीयता उस काल तक ऊँची रहती है जब तक मानव चरित्रवाद की महान महिमा होती है।

एक राजा एक राष्ट्र का पालन कर रहा है। यदि वह ऐश्वर्य में आ जाता है, तो अपने राष्ट्र का पालन नहीं कर पाएगा। परन्तु जिस काल में अपने को प्रजा का सेवक स्वीकार करता और चरित्र उसके द्वारा होता है, तो वह सेवक नहीं होता, परन्तु प्रजा उसे अपना स्वामी स्वीकार कर लेती है। जब चरित्रवाद नहीं रहता और प्रजा पर अनुशासन करना चाहता है, तो यह असंभव है।

करोड़ों वर्षों तक बिना राष्ट्र के समाज

बेटामुझे स्मरण है जब संसार में राष्ट्र का निर्माण हुआ था। बिना राजा के यह ! राष्ट्र करोड़ों वर्षों तक रहा। जब प्रजा में अनुशासन हीनता हो गई, कर्त्तव्यता में सूक्ष्मता हो गई, उस काल में ऋषि मुनियों ने, महान व्यक्तियों ने, राष्ट्र का चुनाव किया और राजा चुना। सबसे पूर्व इस भू मण्डल पर भगवान मनु हुए। मनु से पूर्व कोई राजा न था। मनु महाराज की लगभग साढ़े सात हजार प्रणालियों ने केवल अपने चरित्र के आधार पर राज्य किया। जब राजा स्वयं ऊँचा होता है, तो प्रजा में अनुशासन स्वयं आ जाया करता है। जब माता पिता चरित्रवाद और अनुशासन वाले होते हैं, तो पुत्र भी उसी अनुसार हो जाते हैं।

आध्यात्मिक बल की सर्वश्रेष्ठता

मेरे प्यारेहमारे यहाँ !आचार्यजनों !, परम्परागतों से एक वाक्य माना है, कि द्रव्य का बल नहीं होता। यदि मानव के द्वारा मानवीयता का बल है, चरित्र बल है, आध्यात्मिक बल है, तो यह द्रव्य बल कुछ नहीं। इस द्रव्य बल के द्वारा मानव संसार में अपना सूक्ष्म सा कर्त्तव्य कर सकता है परन्तु कोई द्रव्यपति यह उच्चारण करे, कि मैं राष्ट्र का स्वामितव प्राप्त कर सकता हूँ, तो नहीं कर सकता। यदि चरित्र के आधार पर अनुशासन की वेदी को अपनाता है, तो प्रजा उसे स्वयं अपना अधिपति चुन लेती है, अपना स्वामितव उसे बना लेती है।

मुनिवरोंमुझे भगवान मनु और उसकी प्रणाली का राज्य स्मरण आ जाता है !। महाराजा मनु जी के पुत्र का नाम अक्षणु था और अक्षुण के पुत्र का नाम सूर्य था। अक्षुण मार्ग में केवल एक सूक्ष्म से आश्रम में रहा करते और राष्ट्र में प्रजा उनके अनुकूल कार्य करती। वह राष्ट्र सुन्दर और प्रजा में नाना प्रकार का अनुशासन था। बेटाजब ऐसी मानवीय !ता मानव के द्वारा होती है तो वह राष्ट्र क्यों न ऊँचा बनेगा। मैंने कल के आदेशों में प्रकट किया था, कि जब प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या में स्वार्थ परम्परा आ जाती है तो उस काल में प्रजा सब भ्रष्ट हो जाती है।

आज मैं संक्षेप में परिचय दे रहा था कि भगवान मनु के काल से करोड़ों वर्ष तक कोई राष्ट्र नहीं था। राष्ट्र किस लिए होता है? मैंने पूर्व भी प्रकट किया था, कि राष्ट्र होता है प्रजा को अनुशासन में लाने के लिए। यदि स्वयं राजा के द्वारा अनुशासन हीनता होगी, तो प्रजा अनुशासन में कदापि भी बद्ध नहीं हो सकेगी। राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो उसे दो वाक्यों को विचारना होगा। सबसे पूर्व उसका चरित्र और मानवीयता इतनी ऊँची होनी चाहिए, कि सब प्रजा उसका सम्मान करने वाली हो। वह प्रजा में प्रत्येक माता को माता की दृष्टि से, पुत्री को पुत्री की दृष्टि से, भौजाई को भौजाई की दृष्टि से दृष्टिपात करेगा तो उस काल में, उस राजा का आदर क्यों न होगा और वह प्रजा स्वयं उसके अनुसार कर्म करती हुई, राष्ट्र को ऊँचा बना लिया करती है। जहाँ राजा में अनुशासन हीनता होती है, वहाँ नाना प्रकार के विवाद

होते हैं। सबसे पूर्व राजा के द्वारा स्वार्थ नहीं होना चाहिए। यदि राजा तपस्वी, त्यागी और चरित्रवान है तो उसे प्रजा का स्वागत करना चाहिए कि आइए भगवनआज ! मुझे आपकी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है, मैं आपकी सहायता करूंगा।
यहाँ जब राज्य के विषय का वर्णन आता है, तो मुझे नाना प्रकार के वाक्य स्मरण आने लगते हैं। मैंने पूर्व काल में कहा है कि राजा प्रजा के वैभव को संग्रह करने के लिए नहीं आता, राजा होता है प्रजा की सेवा करने के लिए, उनके द्वारा कर्त्तव्यवाद को देने के लिए। यदि राजा स्वयं कर्त्तव्य का पालन नहीं करता तो राजा और प्रजा दोनों ही गढ़ेले में विराजमान हो जाते हैं। जहाँ कर्त्तव्यवाद है वहीं राष्ट्र है, वहीं जीवन है, वहीं मानव है। जहाँ यह नहीं होता, वह न राष्ट्र है, न मानव है, न द्रव्य है इत्यादि है। सब भ्रष्ट हो जाता है। हमारे यहाँ मर्यादा होनी चाहिए।
मेरे आचार्यजनो !कल मेरे प्यारे !महानन्द जी का प्रश्न था जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल है और जैसा हमारे यहाँ वेद जो पोथी रूप में है, वह क्या अन्य लोक लोकान्तरों में पोथी रूप में है और अथवा नहीं? हम उनके प्रश्न का उत्तर तो दिया करते हैं, परन्तु यह भय रहता है कि न जाने यह आगे क्या प्रश्न कर दे। वास्तव में कहीं कहीं तो वेद के सम्बन्ध में ऐसा माना जाता है, कि मानव के यहाँ जब गुरु परम्पराएं चली आती हैं, तो वहाँ पोथी की आवश्यकता नहीं रहती, जैसे हमारे यहाँ सूर्य मण्डल है, ध्रुव, बृहस्पति, आरूणि, जेष्ठाय, रोहणी, सप्तऋषि, आरूणि मण्डल।
पूज्य महानन्द जीः भगवन आप आरुणि मण्डल द्वितीय उच्चारण कर रहे हैं। !
अरूणागति मण्डल, भौमकेतु मण्डल, विश्वानि केतु मण्डल, आभूषण केतु मण्डल, अनुगात केतु मण्डल, आभूषणागति मण्डल, वशिष्ठ मण्डल, किरकोतुक नाम का मण्डल आदि हमारे यहाँ विशेष मण्डल माने जाते हैं। मैं इन मण्डलों का अधिक वर्णन करने नहीं आया, केवल महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देने आ पहुँचा हूँ कि इन लोकों मे वेद की पोथी किस रूप में है। वेद धर्म, सार्वभौम धर्म है, तो वह किस रूप में है? वास्तव में यह बडे अनुसन्धान का विषय है।
विभिन्न लोकों की स्थिति

मुनिवरों हमारे !यहाँ जितने पर्थिव तत्त्व होते है, जिसमें पार्थिकता प्रधान होती है, वहाँ तमोगुण और रजोगुण की मात्रा अधिक होती है। चन्द्रमण्डल में जाते हैं, तो वहाँ भी तमोगुण की मात्रा अधिक होती है और रजोगुण की भी, परन्तु जब मंगल मण्डल में जाते हैं, तो वहाँ कुछ सतोगुण सतोगुण तो यहाँ भी है। पार्थिकता में भी सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण की प्रधानता मानी जाती है। आगे जहाँ वृहस्पति इत्यादि का वर्णन आता है यहाँ वायु प्रधान होती है, जहाँ सूर्य का वर्णन आता है वहाँ अग्नि प्रधान होती है। जिस मण्डल में जाओगे, तो जो तत्त्व वहाँ प्रधान है, वहाँ वैसी ही योनियां, वैसी ही पुस्तकें और उसी प्रकार की धाराएं तुम्हें प्राप्त होती चली जाएगी।

कहीं कहीं हमारे सिद्धांतवादियों ने ऐसा माना है, कि यह आत्मा जब इस शरीर को त्यागता है तो सतोगुण प्रधान होता है। मेघावी से ऋतम्भरा तक के जो प्राणी होते हैं, उन बुद्धियों को अनुसन्धान करने वाले मंगल, बुद्ध इत्यादि मण्डलों को त्यागती हुई, सूर्य मण्डल में विराजमान हो जाती है। उसे हमारे यहाँ विष्णु लोक कहा करते हैं। वहाँ के राष्ट्र का जो स्वामी है उसे विष्णु कहते हैं।

इसी प्रकार जब हम और भी विचार विनिमय करते हैं, जहाँ वायु तत्त्व प्रधान है, जल तत्त्व प्रधान वहाँ भी इसी प्रकार घ्राण रूपों में माना जाता है। यहाँ बड़े जटिल प्रश्न उत्पन्न होते हैं, कि जहाँ तत्त्व प्रधान हो, वहाँ पोथी का रूपांतर किस प्रकार होता है? बेटा यह तो वही प्रश्न है कि !योनि भी कैसे प्राप्त होती है, ज्ञान कैसे होता है? यह तो प्रश्न करने योग्य ही नहीं, वहाँ उसी प्रकार का वाक्य, उसी प्रकार के पात्र बन करके, उसी प्रकार की उनकी रूप रेखा होती है। प्रत्येक लोक लोकांतरों में उसमें पार्थिवता भी होती है, अग्नि भी होती है, पञ्चमहाभूत भी, परन्तु किसी एक तत्त्व की प्रधानता होती है और उन्हीं तत्त्वों के कारणों से वह उन्हीं में कटिबद्ध रहते हैं, उन्हीं की सीमा में बद्ध रहते हैं। परमात्मा का जो नियम है, उस नियम के आधार से लोक लोकांतरों की प्रक्रियाएं चलती हैं।

मेरे आचार्यजनों हम और भी गम्भीरता से विचार विनिमय करते !हैं। जेठा नक्षत्र में वायु प्रधान है। वह कितना प्रबल है। किस प्रकार उसकी गणना होती है, तो सुनो

जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल माना जाता है, ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वी सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं और जैसा सूर्य मण्डल है, ऐसे सूर्य वृहस्पति में 72 समाहितहो जाते हैं जैसा वृहस्पति है, ऐसे ऐसे एक सहस्त्र वृहस्पति अरूणि मण्डल में समाहित हो जाते है। जैसा आरुणि मण्डल है ऐसे ऐसे एक सहस्त्र ध्रुव मण्डल अरुणागति मण्डल में समाहित हो जाते है जैसा अरुणागति मण्डल है ऐसे ऐसे एक सहस्त्र अरूणागति मण्डल जेठाय नक्षत्र में समाहित हो जाते हैं। तो यह प्रभु की विचित्रता है। मैं कहाँ तक वर्णन करूं। मुझे तो किसी काल में यह मार्ग ही प्राप्त नहीं होता, कि मैं उस प्रभु की महिमा को त्याग कर कहाँ चला जाऊं। तो बेटामैं ! उच्चारण कर रहा था, कि यह जो जेठाय नक्षत्र है, उसमें वायु तत्त्व प्रधान होता है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवनयह आपने कैसे जाना !?

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीजहाँ तक मानव के आत्मा की जानकारी की सीमा ! होती है वहाँ तक यह जान ही लेता है। योग की क्रियाओं से, गुरुओं से द्वारा उनके चरणों में ओत प्रोत होकर, उनसे विचार विनिमय करते हुए तर्कवाद में भी जाते हैं, तो यह सिद्ध हो ही जाता है।

तो मुनिवरोंमहानन्द जी प्रश्न कर रहे थे। यह तो मैं पूर्व कहा करता हूँ !मेरे प्यारे ! कि इनके जितने प्रश्न होते हैं, वह सब मूर्खों वाले होते हैं। चलो, कोई वाक्य नहीं, जहाँ जक इनकी बुद्धि है, वहीं तक यह अपना प्रश्न किया करते हैं। इसमें सुदंरता भी है।

मैं अभी अभी उच्चारण कर रहा था कि जेठाय नक्षत्र में वायु तत्व प्रधान है। वहाँ जो प्राणी हैं, मानव है, वह वायु तत्त्व में विचरण करने वाले होते हैं। कहीं कहीं ऐसा माना जाता है, कि जहाँ पार्थिव तत्त्व अधिक नहीं होंगे, वहाँ प्राणी किस प्रकार रह सकते हैं। मैं यह कहा करता हूँ, कि गंधर्व ग्रित योनियां जो वायु मण्डल में विचरण करती हैं, तो हमारे यहाँ पार्थिव तत्त्व को क्यों प्रधानता दी गई है और सूर्य में अग्नि तत्त्व को क्यों प्रधानता दी गई है। जब वहाँ प्राणी स्वीकार नहीं करते, तो इतने बड़े लोक लोकान्तरों का भी वर्णन नहीं आएगा। परन्तु ब्रह्म व्यापनोति अस्तम् मुनिवरों !

सब लोकों में आत्मा रहती है।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या प्रभुमैं आपसे एक वाक्य जान सकता हूँ !?

पूज्यपाद गुरुदेवः क्या?

पूज्य महानन्द जीः भगवनजब परमात्मा !, जीव और प्रकृति अनादि हैं, तो संसार में आत्माएं कितनी होगी?

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य अनन्त हैं। !बेटा .....

पूज्य महानन्द जीः तो क्या अनन्त आत्माओं को नहीं जान सकते?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाइसका संक्षेप उत्तर केवल यही है !, कि प्रभु अनन्त हैं और आत्मा भी अनन्त है, परन्तु राजा अपने राष्ट्र के प्राणियों की गणना करता है, पृथ्वी मण्डल की भी गणना कर सकता है, योगी किसी लोक की भी गणना कर सकता है, परन्तु यह आत्मा कितनी हैं? इसकी गणना नहीं की जा सकती। इसका कारण है कि इसमें अल्पज्ञता है और परमात्मा इतना पूर्ण है, कि वह इसकी गणना को जानता है, इसके गर्भ में है। जब यह आत्मा गणना को जान जाता है, तो यह भी मौन हो जाता है, और परमात्मा के आनन्द में, उसके गर्भ में समाहित हो जाता है। इससे पूर्व इसे ज्ञान नहीं होता, कि आत्मा कितनी है। बेटाअरबों !, खरबों की गणना तो ही कुछ नहीं। जैसे प्रभु अनन्त हैं, ऐसे ही उसके लोक लोकान्तर भी अनन्त हैं और उसमें रहने वाली आत्माएं भी अनन्त हैं। तो बेटायह तीनों पदार्थ संसार में अनादि है !, परन्तु अनन्त हैं। इनकी सीमा मानव नहीं जान सकता। यदि वह अल्पज्ञता न होती, तो यह सीमा में बद्ध नहीं हो सकता था। परमात्मा सब में रमण करता हुआ भी पृथक है। आत्मा शरीर में रहता है, उसकी रूप रेखा बाहर नहीं परन्तु जहाँ तक उसके शरीर की ज्योति है, वहीं तक है। परमात्मा इस संसार में सबमें ओत प्रोत है और सबसे पृथक भी। उसकी इस विचित्रता को बारम्बार विचार विनियम करना, यह हमारा कर्त्तव्य है।

धर्म

मैं अभी अभी वेद और धर्म के सम्बन्ध में उच्चारण कर रहा था। धर्म उसको नहीं

कहते, कि आज हम रूढ़िवाद को लेकर उसे धर्म स्वीकार कर लेते हैं। धर्म उसे कहते हैं, जो हमारे एक दूसरे के पिछले विभाग में, जो कार्य कर रहा है और जो शुद्ध रूप से हो रहा है। जैसे हमारे नेत्र हैं, और किसी को दृष्टिपात कर रहे है नेत्रों में माधुर्यता है माता को माता की दृष्टि से दृष्टिपात किया जा रहा है तो इसके पिछले विभाग में जो पीला पटल है, वह भी वही कार्य कर रहा है। पीले पटल के पिछले विभाग में तन्मात्राएँ हैं वह भी यही कार्य कर रह है और उनके पिछले विभाग में जो मन का मण्डल है, वह भी यही कार्य कर रहा है। और मन के पिछले विभाग में जो बुद्धि का मण्डल है वह भी यही कार्य कर रहा है। उसके पिछले विभाग में जो चित्त का मण्डल है, वह भी यही कार्य कर रहा है। उसके पश्चात् जो आत्मा है, उससे जो ज्योति आ रही है वह भी इसी प्रकार की आ रही है। उच्चारण करने का अभिप्राय है, कि उसका नाम धर्म कहलाता है। अब यह धर्म पृथ्वी मण्डल से क्या, सूर्य मण्डल से क्या, संसार में व्यापक है।

जब मानव रसना से किसी वस्तु को शुद्ध रूपों में पान करता है, तो उसका मुख भी वही कार्य कर रहा है, पांचों प्राण भी वही कार्य कर रहे हैं। जहां तक उनकी सीमा है वहीं तक वह वही कार्य कर रहे है अब यह धर्म सब जगह है। किसी लोक में जाओ, किसी द्वार पर रहो, परन्तु धर्म व्यापक है। मानव पगों से भ्रमण करता है, यह धर्म उसका व्यापक है। आज मानव परमात्मा का चिन्तन करता है, वह जहाँ तक वेद मन्त्रों की महिमा और विज्ञान के सहित होता है, वह उसका धर्म है और वह धर्म प्रत्येक लोक लोकान्तरों में व्यापकता से रहता है।

अधर्म

अब अधर्म पर आ जाओ। एक समय महर्षि वशिष्ठ और अरूणधती दोनों विराजमान थे और उनके मध्य में भगवान राम आ गए। वह भगवान राम को शिक्षा देने लगे। राम ने महर्षि वशिष्ठ से कहा कि प्रभुमैं धर्म और अधर्म को जानना चाहता हूँ। उस ! समय उन्होंने एक वाक्य कहा, कि मानव के द्वारा इन्द्रियों से जितनी अधिक तरंगे उत्पन्न होंगी, उतना उसमें अधर्म होगा। उन्होंने अनुसन्धान करने के पश्चात् वर्णन

कराया, कि हे रामजैसे एक मानव का संस्कार होता है !, संस्कार होने के पश्चात् पति और पत्नी की एक इच्छा होती है, कि हम एक पुत्र उत्पन्न करें। दोनों की एक कामना होती है। परन्तु जब एक ब्रह्मचारी का, मेरी एक ब्रह्मचारिणी के नेत्रों का विवाद होता है, तो जो पति और पत्नी होते हैं, उनकी एक पल में लगभग एक सहस्त्र तरंगे उत्पन्न होती हैं, तो इतने समय में बिना पत्नी के दूसरी देवी और पुरुष के मन की प्रवृत्तियां चलायमान होती हैं, तो उसी कार्य के करने में उतने समय में ही एक सहस्त्र अधिक तरंगे उत्पन्न होती हैं और जिस काल में भोगाम् ब्रह्मणी होता है, उस काल में तीन सहस्त्र तरंगे उत्पन्न हो जाती हैं और यदि उस काल में उसे कोई दृष्टिपात कर लेता है, तो उतने समय में चार हजार तरंगे उत्पन्न हो जाती हैं। ऋषि ने कहा कि उसका नाम अधर्म कहा जाता।

मानव का जितना शुभ कार्य होता, सुदृष्टि होती है, उतनी ही सूक्ष्म तरंगे होती हैं। जहाँ सूक्ष्म तरंगे होंगी और शुभ कर्मों में प्रवृत्ति होगी, उतना धर्म, और अधिक तरंगे उत्पन्न हो जाती हैं वहाँ पाप। बिना पाप के अधिक तरंगे उत्पन्न नहीं हो सकेंगी। जब मानव शान्त प्रभु का चिन्तन कर रहा है, तो मानव के शरीर में जो आत्मा का मण्डल है, वह मानो एक भोजन प्राप्त कर रहा है और जब प्राणी किसी दुर्गुण के लिए चलता है, तो मानव के हृदय की गति प्रबल हो जाती है, जिसका कारण है, कि वह अधर्म के मार्ग पर चल दिया है। इसलिए हमारे ऋषि मुनियों ने कहा है, कि आज हम यह विचार लें, कि हमारा धर्म और अधर्म क्या है? यह जो धर्म अधर्म का वर्णन किया है, वह प्रत्येक लोक लोकान्तरों में एक सा व्यापक रहता है और ऐसा ही वेदों में निहित है।

विभिन्न लोकों में वेदों का स्वरूप

वेद नाम प्रकाश का है, जहाँ प्रकाश होता है, वहीं मानव अपने धर्म में व्यापक रहता है। हे मानवतू वास्तव में कहाँ जा रहा है !? तू उस आँगन को मत ग्रहण कर, जिससे तेरे हृदय की, तेरी मानवीय दृष्टि अधिक से अधिक समाप्त हो जाएं। धर्मज्ञ प्राणः आज किसी के अपमान को सहन न करना, किसी किसी काल में लोकाचार में

उसको धर्म कह देते हैं।

बेटावाक्य उच्चारण करते करते बहुत दूर चला गया। वास्तव में महानन्द जी का प्रश्न ! था, कि यह जो वेद की पोथी है यह प्रत्येक लोक लोकान्तरों में व्यापक है, अथवा नहीं। इसका संक्षेप उत्तर यह है कि जहाँ जैसा तत्त्व प्रधान होगा, वहाँ वैसा ही उसका कर्त्तव्य होगा, वैसी ही उसकी व्याहृतियां होंगी। मैं आज कोई अधिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया। यह तो ज्ञान का भयंकर वन है, मैं कहाँ तक इन सूक्ष्म वाक्यों को प्रकट करता रहूँ।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या आप थकित हो गए।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यथकित का !बेटा ..... प्रश्न नहीं, समय की अवहेलना नहीं करनी चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः भगवनआज आपके वाक्यों में आनन्द आ रहा है। कुछ सूक्ष्म ! वाक्य और प्रकट कर दीजिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा हास्यमहानन्द जी किसी किसी काल में !तो मेरे प्यारे ..... बहुत विनोद करते हैं। इनका विनोद भी किसी किसी काल में बहुत सुन्दर होता है। '

राजा का कर्तव्य

मेरे प्यारेमैं अभी अभी प्रारम्भ के वाक्यों में राष्ट्रवाद की चर्चा प्रकट कर रहा था। ! राजा कौन होता है? प्रजा कौन होती है? प्रजा और राजा एक ही होते हैं। राजा सदाचारी हो, तो प्रजा सदाचारी बन ही जाती है। जब माता पिता सदाचारी होते हैं, तो पुत्र और पुत्री सदाचारी बन ही जाते हैं। संसार में सदाचारियों के लिए न किसी काल में राष्ट्र रहा है और न रहेगा, क्योंकि राष्ट्र किनके लिए हेता है? जो दुराचारी होते हैं, हिंसक होते हैं। हिंसक प्राणियों के लिए राष्ट्र का चुनाव होता है, राजा बनते हैं और वह विधान बनाते हैं। परन्तु दुराचारी आततार्इयों को नष्ट करने के लिए विधान बनाते हैं। राजा के राष्ट्र में हिंसक कौन होता है? जो सदाचारिता से नहीं रहता। सदाचार किसे कहते हैं? जहाँ मानव अपने गृह में रहता है, धर्म के दस लक्षणों को जानने वाला हो और उनका वितरण करने वाला हो। जो राजा धर्म के दस लक्षणों

का वितरण करता हो, उस राजा के राष्ट्र में अनुशासन हीनता किसी काल में आती ही नहीं।
हे राजन् तेरे राष्ट्र में तेरा !वैश्य रूपी जो उदर है, जब यह संग्रह बनने वाला बनेगा, उसी काल में तेरी सब शक्तियां सूत्म हो जाएगी। तू शक्ति हीन हो जाएगा। एक काल तेरे लिए वह आएगा कि यह प्रजा तेरी अपकीर्ति करके, अपने से दूर कर देगी। जैसे मानव का शरीर है। जैसे जब इसके उदर में अधिक संग्रह होने लगता है और यह प्रबल हो जाता है, एक समय वह आता है, जब वह हृदय भी अपनी गति को त्याग देता है। जब हृदय अपनी गति को त्याग देता है, तो इन्द्रियां अपना कार्य त्याग देती है, चत्तु अपना कार्यत्याग देते है घ्राण अपना कार्यत्याग देते है, संग्राम हो जाता है और संग्राम होने पर राजा बना हुआ और जो अच्छी प्रकार वितरण नहीं कर सकता, वह उदर भी, जो पार्थिक तत्त्व था, पृथ्वी में मिलान हो गया।
तो मेरे आचार्यजनोंमैं अभी अभी उच्चारण कर रहा था !, कि राष्ट्र में राजा ऐसा हो, कि वह धर्म के दस लत्तणों को जानने वाला हो। अपनी प्रजा में प्रजा के वाक्यों को लेकर के उदर को ऊँचा बनाना, उसका कर्त्तव्य होता है। जैसे मानव के शरीर में हमारे यहाँ सामान्य प्राण कहते हैं, यदि उनकी संग्रह करने की प्रवृत्तियां हो जाएं, तो यह नस नाड़ियाँ सब नष्ट हो जाती हैं। राजा के राष्ट्र में जब वितरण करने वाला वैश्य, भ्रष्ट हो जाता है, संग्रह करने लगते हैं, निगलने लगते हैं, उस काल में मेरे प्यारे राजा का उदर नष्ट हो जाता है। जब !प्रजा अपने कर्त्तव्य को, अपनी गति को त्याग देती है, तो राजा भी स्वतः त्याग देता है। जैसे प्रजा चल रही है, वैसे चलना चाहिए। वह मानव स्वार्थवादी बन जाता है, तो वह मानव राष्ट्र का पालन करने योग्य नहीं होता। हे ब्राह्मणोंतुम राजा से कहो !हे बुद्धिमानों !, कि तेरा जो उदर है, वह भ्रष्ट हो चुका है, आज तू उसको ऊँचा बना।
मुनिवरोंमानव के शरीर का उदर जब भ्रष्ट हो जाता है !, तो वैद्यराज चलते हैं, चिकित्सा करने के लिए। इसी प्रकार राजा की चिकित्सा कौन करता है? राष्ट्र के उदर की चिकित्सा करते हैं, त्यागी ब्राह्मण। जब त्यागी ब्राह्मण वैद्यराज बनकर राजा

के समीप जाते हैं, तो कहा करते हैं कि राजन्तेरे राष्ट्र में ! भृष्ठता आ गई है आज तेरा उदार भृष्ट हो गया है तेरे राष्ट्र में सदाचार और मानवीयता होनी चाहिए।

हे मेरे पूज्य ब्राह्मणोंचलो !, आज तुम अपनी उस वैदिकता को लेकर चलो, अपनी त्याग और तपस्या को लेकर के चलो और राजा से जाकर कहो, कि तू राजा कहाँ है? तू किस गाढ़ निद्रा में विराजमान है? प्रजा त्राहिमाम् त्राहिमाम् कर रही है। संग्रह करने वाले अधिक हो गएं हैं, तेरा उदर भ्रष्ट हो रहा है। एक समय तू नष्ट हो जाएगा। जब ब्राह्मण इस प्रकार का आदेश देते हैं, तो वह राजा धर्म के दस लक्षणों का पालन कर सकते हैं।

जिस राजा के राष्ट्र में मेरी पुत्रियां अपने श्रृङ्गार को भ्रष्ट करके, अपने उदर की पूर्ति करती हैं, वह राष्ट्र भ्रष्ट हो जाया करता है। जिस राष्ट्र में बेटामेरी पुत्रियों के कारण !, मेरी माताओं के श्रृङ्गार को नष्ट किया जाता हो, उस राजा को नष्ट हो जाना चाहिए। राष्ट्र की जैसी परम्परा रही है, आज उस संस्कृति को, उस मानवता को लाने के लिए, हमें तत्पर रहना चाहिए। मेरे महानन्द जी जब आधुनिक काल की चर्चा प्रकट करते हैं, तो मैं चकित हो जाता हूँ।

अब हमारा यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय यह है, कि धर्म हमारा सामान्य है। धर्म की व्यापकता बहुत विलक्षण है और राष्ट्र का जो धर्म है, वह भी व्यापकता में परिणित रहता है। शेष चर्चाएं कल प्रकट कर सकेंगे। आज का यह वाक्य समाप्त हो गया।

पूज्य महानन्द जीः ‘धन्य हो भगवनयदि कल हमें समय दें !, तो राष्ट्र की हम भी कुछ चर्चा प्रकट कर सकेंगे।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यकल समय मिलेगा !बेटा ....., तो कल के वाक्य कल ही हो सकेंगे।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् । !

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरोंआज का यह वाक्य समाप्त होने चला। शेष चर्चा !एं कल प्रकट करेंगे। वेदों का पाठ।

२३ 28 07 1967 पुष्प 09 राजा प्रजा तथा धर्म

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व ही भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का हमने पाठ किया। आज के प्रारम्भ के वेदमन्त्र में उस परम पिता परमात्मा, जिसकी महिमा से यह संसार क्रियाशील होता चला जा रहा है, उसके गुण गान गाते हुए हमारा हृदय मग्न हो रहा था।

मुनिवरोंहम परमपिता परमात्मा के गुण गान गाते हुए !, अपने हृदय स्थल में अपनी मानवीयता में शान्ति और न्याय को धारण करते चले जाएं, क्योंकि जिस वस्तु को हम न्याय की दृष्टि से दृष्टिपात करते हैं तो उसी काल में हमारा हृदय गद् गद् होने लगता है। जब राष्ट्र अथवा योग की चर्चाएं आती हैं, तो हृदय गद गद होने लगता है जब हृदय में मग्नता होगी, विचित्रता होगी तो हृदय पवित्र होगा और मानवत्व विचित्रता में परणित होता चला जाएगा

दिव्य माताएँ

मेरे भद्र पुरुषोंमैं कल के वाक्यों में कुछ अपनी माताओं की प्रशंसा कर रहा था !, जिन माताओं ने कणाद, गौतम, राम और कृष्ण को जन्म दिया, जिन्होंने इस भूमि को उज्ज्वल किया है। आज मैं माताओं की विशेष चर्चा करने नहीं आया, जिन माताओं के हृदयों में वेदना होती है, कि आज हमारा हृदय पवित्र हो। परन्तु यह वेदना केवल वेदना से पूर्ण नहीं हो सकती। यह उस काल में पूर्ण हो सकेगी, जब हम वेद के प्रकाश में रमण करने वाले बनेंगे। वह प्रकाश हमारी वेदना को निगल जाएगा और शुभकामनाओं की पूर्ति करता चला जाएगा। मुझे माता गार्गी, माता अहिल्या और माता अनुसुईया का जीवन स्मरण है। उनके जीवन में सदैव ज्ञान और प्रकाश की अग्नि प्रदीप्त रहती थी। जिस काल में यह अग्नि माताओं के समीप रहती है, तो उनके हृदयों से सुगन्धि उत्पन्न होती है, तो राष्ट्र और समाज और यह सर्वस्व संसार ऊँचा बन जाता है। जिस गृह आश्रम में मेरी पवित्र माता के हृदय में वेद की पवित्र भावनाएं प्रदीप्त रहती हैं, विवेक और चरित्र होता है, मानवीयता होती है, वह

गृह बड़ा सौभाग्यशाली होता है। जिन गृहों में कलेश की मात्रा रहती है, एक दूसरे की निंदा होती है, वह गृह, गृह आश्रम में प्रविष्ट होने वालों के लिए नरक हो जाता है।

मानव का कर्त्तव्य

हे मेरे भद्र पुरुषोंआज तुम नर !क आश्रम को ग्रहण मत करो। आज जैसे मेरी पवित्र माताएं हैं इसी प्रकार मानव समाज को बनाना चाहिए। जब गृह आश्रम के आँगन में विराजमान होते हैं, तो उस समय उनके हृदय में प्रसन्नता की तरंगे उत्पन्न होती हैं। जैसे मानव पुष्पों की वर्षा करता है, ऐसे ही जब मानव उस गृह में जाता है, तो प्रसन्न होता है, अपने चरित्र और मानवीयता के पुष्पों की वर्षा करता चला जाता है। इसलिए हे मानवआज तुम्हें भी उसी प्रकार बनना है !, जैसा वेद माता कहती है। आज यदि तू संसार को राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, तो तुम्हारे आँगन में आने वाली तुम्हारी धर्म देवी है। उसे जैसे तुम शिक्षक हो, उसे शिक्षा दो, मानवता के आँगन में ले जाओ। उस आँगन में न ले जाओ, जहाँ मेरी उस पवित्र माता और तेरी जो धर्म देवी पतित हो जाएं। हे मानव तू स्वयं पतित न बन। जब !स्वयं पतित बनेगा, तो तेरा राष्ट्र, तेरी मानवीयता कैसे ऊँची बनेगी। मानव को किसी काल में, ऐसा क्रोध नहीं करना, जिससे जीवन में हानि हो। इस जीवन को ऊँचा बनाना, यह मानव का कर्त्तव्य होता है। जहाँ मानव द्वारा चरित्र की तरंगे होती हैं। वहाँ सुगन्धि स्वयं हुआ करती है।

जब महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज अपने आश्रम में रहा करते, तो उनकी धर्मपत्नी अरुणधति उनके भिन्न भिन्न प्रकार के प्रश्न किया करती और कहा करती कि प्रभु ! चन्द्रमा की जो यह तरंगे आती हैं, उनका इस संसार में क्या प्रभाव है? उस समय वशिष्ठ मुनि ने कहा कि हे देवीइसको प्रत्येक बालक जानता है। चन्द्रमा की किरणों ! को रेणुका कहा करते हैं, यह रेणुका रात्रि में अपने प्रताप को लेकर चलती है और अन्धकार को अपने में निगल जाती है, पृथ्वी की शीतल बनाकर अमृत प्रदान कर देती है और कृषक की भूमि को उज्ज्वल बना देती है। माता के गर्भ स्थल में रहने

वाले जरायुज के द्वारा भी अपने अमृत का पान करा देती है। चन्द्रमा की क्रान्ति से उनकी नाना इन्द्रिय और नाड़ियों से सम्बन्ध होता है।

तो आओ मेरे आचार्यजनोंप्रत्येक मानव !, प्रत्येक देव कन्या को संसार में ऊँचा बनने की आवश्यकता है। यदि कोई मानव राजा है, तो उसकी विचारधाराएं वेद में इतनी परिपक्व होनी चाहिए जिससे वह उच्चता को प्राप्त करता चला जाएं। जीवन की परम्पराओं को, मानवीयता को लेकर वह चलता है, तो उसकी धाराएं संसार में ओत प्रोत होती चली जाती है और यह राष्ट्र, यह समाज सब ऊँचा बनता चला जाता है।

आज मैं एक सामूहिक वाक्य प्रकट करता चला जा रहा था। आज मेरे प्यारे ! महानन्द जी अपने कुछ विचार प्रकट करेंगे, मैं तो केवल इतना वाक्य प्रकट करने जा रहा हूँ कि आज हम अपने जीवन को, राष्ट्र को और गृहों को स्वर्ग बनाने का प्रयत्न करें। वेद के प्रकाश की ओर आ जाओ। जैसे रात्रि काल में मानव अन्धकार में संलग्न हो जाता है और प्रातःकाल अपने आसन को त्याग करके अपने कार्यों में संलग्न हो जाता है, इसी प्रकार जब वेद का प्रकाश तुम्हारे मस्तिष्कों में, हृदयों में प्रदीप्त रहता है, तो वह अन्धकार तुम्हारे समीप नहीं आ सकेगा, जिस अंधकार से तुम्हारा मानवीयता में सूक्ष्मता आती है। वह प्रकाश इस प्रकार का है, कि जिस अंग को छूता है, वह छूने मात्र से पवित्र होता चला जाता है। आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया। अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने कुछ विचार प्रकट करेंगे। !

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् उत्तम मया भद्रा कर्मणा वात नानि रुद्रो भवेति कामाः। मेरे पूज्य गुरुदेव! और मेरे भद्र मण्डलआज मैं कितना सौभाग्शाली हूँ कि परमपिता ! परमात्मा की अनुपम कृपा से, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे पुनः कुछ उच्चारण करने का सौभाग्य प्राप्त कराया। आज मैं कुछ राजनैतिक विचार देने को आया हूँ। मानवीय समाज में भिन्न भिन्न प्रकार की धाराएं होती हैं। मैं उन धाराओं पर तो नहीं जाऊंगा क्योंकि संसार तो होता ही इस प्रकार का है जहाँ अच्छाइयां भी निहित रही है और त्रुटियां मानव के समीप रहती हैं वेद का जो साम्य विचार है, उसे आज प्रकट कराने जा रहा हूँ।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी कुछ अपने विचार प्रकट किए। उनका तात्पर्य था, कि आज के मानव समाज में और विशेष कर गृह आश्रम में, वास्तव में स्वर्ग होना चाहिए। परन्तु स्वर्ग कैसे बनेगा? स्वर्ग बनाने के लिए मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अपने कुछ वाक्य प्रकट किया करते हैं तो मैं बड़ा मग्न होता हूँ और कहा करता हूँ कि गुरुदेव बड़े ही भोले हैं। यह जो वाक्य प्रकट करते हैं, वह वेद से लेते हैं परन्तु यदि वह संसार के उस वातावरण में पहुंच जाएं, तो इन्हें यह प्रतीत हो जाएं कि यह राष्ट्र और समाज कैसे ऊँचा बनेगा और स्वर्गमय होगा। मेरी माताओं के बारे में कल इन्होंने जितने विचार दिए वह वेद का प्रकाश भी यही आज्ञा देता है। आज भी गुरुदेव ने उन वाक्यों की पुनरूक्ति की, परन्तु आज के वाक्यों को उच्चारण करने का अभिप्राय केवल यही था कि मेरी पवित्र माताएं सदैव ऊँची रहनी चाहिए। जब यहाँ भगवान राम, गौतम, कणाद, व्यास और नाना प्रकार के ऋषियों जैसों का यहाँ पुनः से साम्राज्य होगा, तो उस काल में यहाँ राष्ट्र समाज और मानवीयता ऊँची बन सकती है।

राष्ट्र में स्वर्ग

मैं अभी अभी अपने विचार देता चला जा रहा था। राष्ट्र के सम्बन्ध में विचार देता हूँ। जब आधुनिक काल के राष्ट्रवादियों के द्वारा जाता हूँ, तो यह प्रतीत होता है कि अरे, यह संसार कहाँ चला गया। कहाँ वह गौतम, कणाद, मनु महाराज व राम की परम्परा? आज के राष्ट्रवाद में धर्म पर जब टिप्पणी होती है, मानव की अच्छाइयों पर टिप्पणी होती है तो उस समय इनका हृदय इतना स्वच्छ हो जाता है कि यह उस यथार्थता को उच्चारण करते हुए इन्हें भय होता है, कि यह दूसरे प्राणी तुम्हें निगल न जाएं। जहाँ इस प्रकार का भय होता है, वह साम्राज्य नहीं, परन्तु एक प्रकार की शमशान भूमि होती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव एक वाक्य प्रकट कर रहे थे कि यहाँ राजा और राज लक्ष्मी को यज्ञ करना चाहिए परन्तु वास्तव में यहाँ कोई राजा ही नहीं। यदि राज लक्ष्मी है भी, तो वह उसको पाखण्ड कहा करते हैं। उन्हें यह ज्ञान नहीं है कि पाखण्ड किसे कहते हैं। पाखण्ड उच्चारण करने से पूर्व मानव को यह ज्ञान होना चाहिए, कि पाखण्ड की परिभाषा क्या है। पाखण्ड वहाँ होता है, जहाँ मानव में

स्वार्थ होता है, संकुचित्त विचार होते हैं। जहाँ मानव के व्यापक विचार होते हैं, व्यापक सुगन्धियां होती हैं, वायु मण्डल ऊँचा बनता हो और परमाणु शुद्ध उत्पन्न होते हों क्या उसको पाखण्ड कहोगे अथवा उसे धर्म का साम्राज्य कहना चाहिए। जहाँ मानव यज्ञ कर्म करता है, वेद मन्त्रों से ज्ञान वर्षा करता है, सुगन्धि देता है और जब वह सुगन्धि वायु मण्डल में जाती है, तो वातावरण सुन्दर बन जाता है और जब वायु मण्डल सुंदर बन जाता है, तो राष्ट्र श्रेष्ठ बन जाता है। जहाँ राजा और राज लक्ष्मी इस प्रकार के कार्य करते हैं तो प्रजा स्वयं यज्ञ कार्य करने में संलग्न हो जाती है और जब प्रजा यज्ञ करती है तो वायु मण्डल सुगन्धि से भर जाता है और जब वायुमण्डल सुगन्धि से भर जाता है तो समय पर वृष्टि होती है और सब कार्य समय पर होकर राष्ट्र में स्वर्ग आ जाता है।

रूढ़िवाद

आज इन वाक्यों को राष्ट्र के कर्मचारियों से या उनके राष्ट्र नायकों से प्रकट करें तो कहेंगे, कि यह तो केवल रूढ़िवाद है। हमें मुहम्मद के मानने वाले क्या कहेंगे? ईसा के मानने वाले क्या कहेंगे? अरे, मूर्खों तुमने किसी काल में यह विचारा ही नहीं, कि मुहम्मद और ईसा क्या थे और वह इस संसार को क्या बनाना चाहते थे। तुमने उनके मौलिक विचारों को ही नहीं लिया। मुहम्मद के मानने वाले ही मुहम्मद के वाक्यों को ठुकरा देते हैं। अरे, तुम उनकी प्रणालियों पर क्या लेते हो? अपने ऋषि मुनियों की प्रणाली को अपनाने के लिए क्यों तत्पर नहीं हो रहे हो? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो वास्तव में यह कहेंगे कि यह तो मूर्ख है और क्यों आलोचना कर रहा है। परन्तु आलोचना नहीं, यथार्थ वाक्य प्रकट करने जा रहा हूँ। जब स्वयं राष्ट्र के नेताओं के हृदयों में ऐसी संकुचित्त भावनाएं आ जाती हैं तो हम क्या करें।

अरे, तुम्हारे द्वारा यथार्थता के क्या पुष्प हैं? मुहम्मद क्या चाहता था? मुहम्मद चाहता था, कि यहाँ अच्छाइयों का साम्राज्य हो, राष्ट्र में किसी प्रकार की त्रुटि न हो। राष्ट्र में वह कार्य नहीं होने चाहिए, जो मानव को क्षीण बनाएं, दूसरों के चरित्र पर आक्रमण नहीं होना चाहिए। इस प्रकार की उन्होंने कई बार वार्त्ता प्रकट की। **हमारे विचारों में**

हो सकता है, कि वह मूर्ख हो। मैं इस वाक्य को पूर्व काल में प्रकट कर चुका हूँ। आज मैं उस पर टिप्पणी नहीं करना चाहता। मैं वाक्य प्रकट करने आया हूँ कि मुहम्मद के मानने वालों से यह जान लो, कि वह क्या चाहते हैं? वह भी दुर्गन्ध नहीं चाहते, वह भी सुगन्धि चाहते हैं। जब वह सुगन्धि चाहते है तो उन्हें सुगन्धि दो, शिक्षा दो, और उस सुगन्धि के के क्षेत्र में लाने का प्रयास करो और कहो कि अरे, भाई ! यह यज्ञ तो सुगन्धि है, इससे वायु मण्डल पवित्र होता है। और इसको विचारो। परन्तु इस पर विचार ही नहीं है, विचार है कि यह हमें क्या कहेंगे। तो इस प्रकार मानव के द्वारा आत्महत्या है।

हे राष्ट्र कर्मचारियोंवास्तव में इसमें इस प्रकार का बन जैसे कमल होता !हे राजन् ! है। तेरे राष्ट्र में भिन्न भिन्न विचार धारा के प्ाणी रमण करते हैं। परन्तु तू महापुरुषों की वार्त्ता को अपने पर्गों से न ठुकरा। यदि ठुकराएगा तो तेरा जीवन बहुत ही संकुचित्त होकर, इस प्रकार का बन जाएगा, कि तू इस राष्ट्र पर, इस प्रजा पर शासन करने योग्य न रहेगा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी एक वाक्य प्रकट कराया था, कि राज लक्ष्मी आए और यज्ञ कर्म करने वाली बने। परन्तु उन्हें ज्ञान ही नहीं होता, कि यज्ञ कैसे होता है क्योंकि स्वार्थ में आत्महत्या होती है। जिस राजा में इस प्रकार की भावनाएं आ जाती है, उस राष्ट्र पर दूसरे राजा आक्रमण कर देते हैं।

ब्राह्मणों का कर्तव्य

मैंने बहुत पूर्व काल में यह प्रकट कराया कि संसार की और राष्ट्रों की ऐसी गति होती जा रही है। आज धीमे धीमे वह अग्नि प्रदिप्त हो रही है, जो कुछ समय के पश्चात् मानव के हृदयों को भस्म करती चली जाएगी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कल के वाक्यों में कहा था कि यहाँ ब्राह्मण होने चाहिए, जिनमें विवेक हो और उनका हृदय तपा हुआ। जो ब्राह्मण तपने के पश्चात् राष्ट्र में आता है तो उसके तप के प्रभाव से यहाँ राजा अपने आसन को त्याग देता है और उसके चरणों को स्पर्श करके कहा करता है कि आईए, भगवन्ऐसे ब्राह्मणों की आवश्यकता ह !ै। परन्तु ऐसे ब्राह्मण बनेंगे कैसे? ऐसे ब्राह्मण तो अज्ञानता में प्रविष्ट हो गएं और उन्हें संसार में नाना प्रकार

के आक्रमणों से हताश किया जाता है। हताश इसलिए होते हैं, क्योंकि उनके द्वारा तप की मात्रा सूक्ष्म होती है।
जब सूर्य तपता है तो समुद्रों से जल का उत्थान होता है, मेघ मण्डल बनते हैं, उनसे वृष्टि होती है और वृष्टि से नाना प्रकार की वनस्पतियां होती हैं जिनसे मानव का जीवन आता है। चन्द्रमा तपता है तो शीतलता आती है। माता तपती है तो सुन्दर बालक को जन्म देती है। ब्रह्मचारी तपता है तो वह तेजस्वी बनने के पश्चात् संसार में ब्रह्मचारी कहलाता है। यह पृथ्वी भी तपने के पश्चात् ही वनस्पतियों को उत्पन्न करती है। सृष्टि के आदि में परमात्मा स्वयं तपता है जब यह संसार रचता है, प्रकृति में क्रिया आती है जब यह प्रकृति तपती है तो इसमें नाना खाद्य और खनिज पदार्थों की उत्पत्ति हो जाती है इसी प्रकार मानव में तप होना चाहिए, जिस तप के द्वारा हम अपने जीवन को ऊँचा बना सकें, अपने मित्रों को ऊँचा बना सकें। आज मित्रों को ऊँचा नहीं बनाया जाता, परन्तु गढ़े में पहुंचाया जाता है, राष्ट्र को ऊँचा नही बनाया जाता, राष्ट्र को गढ़े में पहुंचाने का प्रयास करते हैं।

राष्ट्र का उदर

जब राष्ट्र का उदर भ्रष्ट हो जाता है, तो राष्ट्र में भ्रष्टाचार स्वयं आ जाया करता है। राष्ट्र का उदर क्या है, यह मैंने पूर्व काल में प्रकट कराया है। राष्ट्र में मानो जो वैश्य है, वह संग्रह करने वाले नहीं होने चाहिए। यदि राष्ट्र में इसी प्रकार चलता रहा, तो वह समय निकट आने वाला है, कि संग्रह करने वालों पर आक्रमण कर, उन्हें नष्ट कर दिया जाएगा। इसलिए राष्ट्र में वितरण सुन्दर होना चाहिए।
मैं इन वाक्यों पर अधिक टिप्पणी नहीं करना चाहता। मैं तो केवल एक वाक्य ही प्रकट कराना चाहता हूँ, कि राष्ट्रवादियों को धर्म को विचार लेना चाहिए। धर्म क्या है? मानवता क्या है? सुगन्धि को कौन प्राणी नहीं चाहता? यज्ञ को कौन नहीं चाहता? परोपकार को कौन नहीं चाहता? परन्तु तुम्हारा हृदय इतना तुच्छ हो गया है, कि तुम स्वयं इन वाक्यों को विचार विनिमय में ही नहीं लाते और दूसरे प्राणियों से इतने भयभीत हो गएं हो और उस कायरता का यह परिणाम है कि तुम्हारे राष्ट्र के द्रव्य में

किसी प्रकार के धर्म की प्रणाली नहीं।

हे राजन्वेद यहाँ कहता है !, भगवान मनु ने कहा है, कि यदि राजा के राष्ट्र कोष में धर्म का कोई द्रव्य नहीं, उस द्रव्य का विभाजन नहीं होता, तो इस राजा के कोष में एक समय पाप अधिक हो जाएंगे। अरे, जिस लक्ष्मी में धर्म नहीं रहेगा, तो एक समय वह आएगा कि लक्ष्मी चली जाएगी, क्योंकि इसके पति की पूजा नहीं। लक्ष्मी का पति कौन है? लक्ष्मी का पति परमात्मा है। परमात्मा क्या, धर्म है। जब धर्म की पूजा न होकर के लक्ष्मी को अधर्म में लगाया जाएगा, तो यह लक्ष्मी स्वयं मानव के द्वार से चली जाएगी। वहाँ न धर्म रहेगा न लक्ष्मी रहेगी।

वास्तव में मेरे उच्चारण करने से कोई लाभ नहीं, परन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ, कि यह वाक्य वायुमण्डल में तो आवश्य जाएंगे और वायुमण्डल में जाएंगे तो वातावरण भी पवित्र बनेगा। मानव के हृदय तो इन वाक्यों में परिवर्तित होने से रहे, क्योंकि वह इतने परिपक्क हो गएं हैं कि उच्चारण करते हैं कि यह सब पाखण्ड है। उनके मस्तिष्कों में, मानव समाज में इस प्रकार की वार्त्ता आ पहुंची है कि वह पाखण्ड शब्द उनके हृदय से जाता ही नहीं, क्योंकि स्वार्थ है।

आज मैं कोई अधिक वाक्य प्रकट कराने नहीं आया, केवल यह कि आज हम मुहम्मद के मानने वालों से भयभीत न होकर, उन्हें अपने आँगन में लाए, यह यज्ञ कर्म करने में तत्पर हो जाओ। परंपरा के आधार से यदि राजसूय यज्ञ किया जाएं, तो राष्ट्र पर जितने संकट हैं, यह सब समाप्त हो सकते हैं। परन्तु यथार्थ ब्राह्मण होने चाहिए। जब कोई यज्ञ कर्म करता है, तो ब्राह्मण आ ही जाते हैं, यह पृथ्वी मण्डल ऐसा नहीं बना है, जहाँ ऐसे ब्राह्मण न हों, परन्तु यहाँ तो कर्म करने वालों की सूक्ष्मता है।

आज मानव कितना निकट आ गया है। वायुयान से विराजमान होता है, समुद्रों से पार चला जाता है और वापिस आ जाता है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के कितने निकट चला गया है। हे मानवयह तो सुन्दर है परन्तु तुम्हारा हृदय कितना दूर होत !ा चला जा रहा है। हृदय से विचार करो, तुम्हारी विचारधारा कितनी दूर हो गई है। जब तुम

एक दूसरे को नष्ट भ्रष्ट करने जा रहे हो, तो इन वायुयानों का क्या बनेगा? इन यन्त्रों का क्या बनेगा? जब तुम्हारे हृदयों में विवेक नहीं होगा, स्नेह नहीं होगा, पवित्रता नहीं होगी तो न तुम्हारे इन वाक्यों का कुछ बनेगा, न यन्त्रों का कुछ बनेगा। अरे, मानव ! यन्त्रों से निकट जाना कोई निकटता नहीं मानी जाती। निकटता वह होती है जहाँ मानव के हृदयों में स्नेह होता है, एक राष्ट्र, दूसरे राष्ट्र को विधाता के तुल्य स्वीकार करता है।

आज के राष्ट्र में ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण हो रहा है, जिनका एक प्रहार करने से एक राष्ट्र भस्म हो सकता है, तो यह क्या है? अरे, मानव ऐसे यन्त्रों का भी निर्माण किया है जिनके प्रहार करने से मानव का जीवन समाप्त हो जाएगा। परन्तु ऐसा नहीं है। अरे, ऐसा यन्त्र है यज्ञ कर्म। आज भी यज्ञ कर्म किए जाएं। प्रत्येक मानव, प्रत्येक राजा अपने राष्ट्र में राजसूय यज्ञ करें, तो जो भी यज्ञ में जाएगा उसके विचारों में परिवर्तन होता चला जाएगा। वह यन्त्र शान्ति का यन्त्र है। उस यन्त्र को लाने का प्रयास करो। वह यन्त्र भी न लाओ, तो ऐसे बुद्धिमानों को चुनो, जिससे तुम्हारे समाज में सात्विकता आए हे मानवऐसे यन्त्र बनाओ जिससे इस समाज को !, इस राष्ट्र को जीवन प्राप्त हो जाएं।

भगवनआज मैंने अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा एक राष्ट्र का भ्रमण किया। वहाँ इस प्रकार ! के यन्त्र का निर्माण हुआ है, जो चन्द्रमा के ऊपरले विभाग में भ्रमण करेगा। इस विषय में अभी उनका पूर्ण निश्चय नहीं परन्तु अनुमान है। उनसे यह प्राप्त किया जाएं, कि इससे लाभ क्या होगा, तो वह कहेंगे कि यह बुद्धि का विकास है, विज्ञान की पहुंच है। हमने विज्ञान का चमत्कार तो स्वीकार कर लिया, परन्तु यह है क्या? एक योगी दो वर्ष की तपस्या में अपनी आत्मा का इतना विकास कर सकता है कि चन्द्रमा के ऊपर जो मंगल है उसमें रमण कर सकता है, तो यन्त्र की कोई विशेषता तो नहीं होती। इससे अभिमान की प्रवृत्ति बढ़ेगी। जब अभिमान की प्रवृत्तियां इतनी प्रबल हो जाएगी, कि ऐसे ऐसे यन्त्रों के निर्माण हो जाएंगे, तो वहाँ उनके द्वारा प्रहार होगा, जिससे इस पृथ्वी मण्डल में जो वनस्पतियां हैं, राष्ट्रीय संपत्ति है, वह नष्ट हो

सकती है। मेरे विचारों में तो यही नहीं आया कि इनका बनेगा क्या?

आधुनिक विकास

आज का मानव इसे विकास कहता है। पूर्व का मानव समुद्रों की यात्रा नहीं कर सकता था, वायुयान में भ्रमण नहीं करता था, लोहपथगामनी में भ्रमण नहीं करता था, मार्ग में जो यन्त्र भ्रमण कर रहे हैं उनमें नहीं जा सकता था, मानव मानव से बहुत दूर था। यह वाक्य तो सुन्दर है कि इतना विकास हुआ परन्तु इस विकास से शरीर से तो मानव बहुत निकट आ गया जिसकी कल्पना नहीं परन्तु जब इनके हृदय दूर हो गएं तो दूसरे स्थान से दूर हो गये। तो यह वाक्य कि जहाँ का तहां रहा यह संसार। जब यातायात की उन्नति हुई तो मानव के हृदय दूर हो गए। जब यातायात नहीं था, तो एक मानव दूसरे राष्ट्र में विराजमान है परन्तु हृदय बड़ा निकट था। तो इस संसार का बना क्या? मैं तो यह कहा करता हूँ कि यह संसार ज्यो का त्यों रहा। जैसे एक कृषक कूप से अपनी वाटिका को सींचता है और जिस यन्त्र से सींचता है, जिसमें जल आता है वह वहीं का वहीं भ्रमण करता रहता है। इसी प्रकार यह संसार प्रकृति के आँगन में भ्रमण कर रहा है। अशुद्ध परमाणुओं का वातावरण वायुमण्डल में छाता जा रहा है। समय वह आ जाता है कि संसार में परमात्मा का प्रकोप प्रारम्भ होता है, आपस में संग्राम होकर वही परमाणु तुम्हारे विनाश के कारण बनते चले जाएंगे।

आज के मानव समाज में यह एक निकटता रही है कि एक मानव में दूसरे मानव से भय उत्पन्न हो गया है। राजा के प्रति तुमने किसी प्रकार की समालोचना अथवा वार्त्ता की, तो उसी काल में तेरे ऊपर प्रहार आ जाएगा। राजा अपनी प्रजा को स्वयं शासन में नहीं कर सकता। राजा का राष्ट्र जब रूढ़िवाद में परणित हो जाता है, तो उस राजा के राष्ट्र में विनाश का कारण बन जाता है। हे राजनतू रूढ़िवाद को त्याग ! करके तेरी जो व्यापकता है, जिससे तेरे राष्ट्र में सुगन्धि हो, चरित्र निर्माण हो, ऐसे महान कार्यों को जब रचाएगा तो तेरे राष्ट्र में स्वयं सदाचार आ जाएगा। धर्म तेरे द्वारा बहुत अनिवार्य है।

धर्म निरपेक्ष राष्ट्र

आज का राष्ट्र यह कहता है कि हमारा जो राज्य है वह धर्म निरपेक्ष है, उसमें किसी का पक्ष नहीं है। अरे, मूर्ख यदि तुम यह कहो कि नेत्रों से दृष्टिपात करना धर्म नहीं है, यह अधर्म है, तो क्या कोई तुम्हारे इस वाक्य को स्वीकार कर लेगा। धर्म की परिभाषा क्या है? अरे, यदि राजा इन रूढ़िवादियों को एक धर्म स्वीकार करेगा, तो वह प्रजा में शासन किसी भी काल में नहीं कर सकता। राजा तो उस राष्ट्र में शासन करता है, जहाँ प्रजा के विचारों में रूढ़िवाद से उपराम होता है। राजा लाभ की सब चर्चाओं को स्वीकार करने वाला हो और यज्ञ कर्म करने वाला हो तो उसके पश्चात् प्रजा में स्वयं यह आएगा कि राजा अच्छा कर्म कर रहा है और वह तुम्हारी आलोचना करने वाले हैं वह भी एक समय सच बन सकते हैं। परन्तु जब तुम करना ही नहीं चाहते और निरपेक्ष उच्चारण करते हो। मैं तो यह जानूं कि परमात्मा ने धर्म बनाया है कि श्रोत्रों से श्रवण करो परन्तु तुम इन नेत्रों से श्रवण करने लगो और श्रोत्रों से चक्षुओं का कार्य करने लगो घ्राण से मल त्यागने का कार्य करने लगो, तो जानो तुम्हारा राष्ट्र धर्मनिरपेक्ष है। धर्म की परिभाषा तो विचार लो। विचारना तो कुछ नहीं, केवल यह कि प्रजा में किसी प्रकार का विवाद न हो जाएं। अरे, प्रजा में विवाद बहुत समय से चला आ रहा है, चलता रहेगा। परन्तु राजा के विचार प्रजा से ऊँचे होते हैं। वह प्रजा के आँगन को नहीं जाता कि प्रजा कैसे रूढ़िवाद में है। राजा अपने लाभ और हानि को स्वयं विचारता है। वह राजा नहीं जो स्वयं नहीं विचारता, केवल दूसरों के विचारों को लेता रहता है, लाभ हानि को विचारता नहीं। तो यह मूर्खता नहीं होनी चाहिए। राजा वह होता है, जिसके विचार प्रजा से ऊँचे होते हैं, लाभ हानि को, वेद के साहित्य को, बुद्धिमानों के द्वारा जानकारी करता रहता है, वह राजा अपने राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाया करता है।

हमारे यहाँ कुछ पूर्व एक महात्मा नानक हुए हैं उन्होंने सार्वभौम वाक्य कहा है कि यथार्थ उच्चारण करना सबके लिए सुन्दर है, सब उसको स्वीकार करते हैं और यथार्थता में बन्धे हुए जितने कार्य हैं, उन सबको सत्य कहते हैं। इनमें सबमें धर्म है।

आज अपनी रसना के लिए दूसरों की हिंसा करता हैं, वह कोई मानव नहीं। वह तो पक्षियों में और जलचरों में जो मांस भक्षण करने वाले प्राणी होते हैं, उनमें उनकी संज्ञा दे देनी चाहिए। यह वाक्य नानक ने बड़े सुन्दर शब्दों में कहा है। परन्तु महात्मा नानक ने, महात्मा गोविन्द ने जो शब्द कहे, राजा ने उन्हें तो विचारा नहीं। केवल उनके अनुयाईयों को, जिनमें त्रुटियां हैं, उन त्रुटियों को विचार लिया और उनके मौलिक विचारों को त्याग दिया। त्यागने का परिणाम यह हुआ कि राष्ट्र, समाज और जिसे हम धर्म कहते हैं वह धर्म ही नहीं रहा। उसका परिवर्तन ही कुछ ओर हो गया। इसलिए राजा का विचार होना चाहिए, कि महान आत्माओं से मौलिक विचार को ले और उनसे कहो कि तुम्हारे महापुरुषों ने ऐसा कहा है और ऐसा हमें करना चाहिए। तो कौन उस राजा के वाक्य को ठुकराएगा। कोई नहीं ठुकराएगा। ठुकराया उस काल में जाएगा, जब बुद्धि से कार्य नहीं करेगा और स्वार्थवाद में तल्लीन हो जाता है। उस राजा के राष्ट्र में नाना प्रकार चंचलताएं, विडम्बना, एक दूसरे पर आक्रमण और उसको नष्ट करने वाले प्राणी हो जाते हैं।

तो अब मैं अपने वाक्यों को समाप्त करने जा रहा हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझसे केवल इतना ही वाक्य प्रकट कराना था। हम सर्वोपरि धर्म को अपनाएं। सर्वोपरि धर्म क्या है? वह है जिसे हम वैदिक धर्म कहते हैं। वेद का धर्म कहते हैं। वेद पोथी को नहीं कहते। वेद कहते हैं प्रकाश को, जिसमें पक्षपात नहीं होता, केवल ज्ञान का भण्डार होता है जिसमें राष्ट्र और समाज का कल्याण किया जाएं उसको वेद कहते हैं और उसको अपना लो। जिसमें यज्ञ इत्यादियों का कार्य और राष्ट्र को ऊँचा बनाने का कर्म हो, उसे अपना लो, उसी को धर्म कहते हैं। जहाँ धर्म की परिभाषा, मैंने पूर्व काल में की थी, आज तो मुझे इतना समय नहीं। मैंने अपने कुछ संक्षिप्त विचार प्रकट किए। आज के वाक्यों का अभिप्राय यह कि धर्म निरपेक्षता किसे कहते हैं। यहाँ मूर्खता की कोई सीमा नहीं। इस मूर्खता का परिणाम यह होगा, कि कुछ समय के पश्चात् अग्नि प्रदीप्त होकर यह संसार अग्नि के मुख में चला जाएगा। वास्तव में मेरे वाक्यों में जो मृत मण्डल में जा रहे हैं, वहाँ कहते होंगे कि यह तो मूर्ख वाले शब्द

हैं, कहीं ऐसा होता है। परन्तु ऐसा होता नहीं है, हो रहा है। इस पर विचार विनियम के पश्चात् आगे चलो। ब्राह्मण और राजा दोनों को राष्ट्र में ऊँचा बनना है ब्राह्मण को तो अपनी पोथी और वेद को नहीं त्यागना चाहिए। जब वह अपनी वेद की पोथी को त्याग करके, राज्य के पद को अपनाना चाहता है तो यह वैदिकता, धर्म, शिक्षा, विधान सूक्ष्म होते चले जाएंगे। इसलिए उसे अपनी पोथी को लेकर चलना चाहिए। राजा से ऊँचा स्थान बुद्धिमान का होता है और जो विवेकी होता है, उसका स्थान तो राजा से कई गुणा ऊँचा होता है। परन्तु क्या करे आज का संसार भौतिकवाद में तल्लीन हो रहा है और ऐसे रमण कर रहा है जैसे गंगा का जल समुद्र के आँगन को रमण कर रहा है। जैसे गंगा का जल समुद्र के आँगन को रमण कर रहा है जैसे गंगा की धारा समुद्र में तल्लीन हो जाती है, इसी प्रकार आज जो अपने को बुद्धिमान कहते हैं, वह भी राष्ट्र के पद को चाहते हैं और जो बुद्धिमान हैं, वह प्रतीक्षा कर रहे हैं कि हमें भी यह पद प्राप्त हो जाएं। इस मूर्खों वाले समाज में चले जाएं। अब यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। अब मैं गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः 'महानन्द जीयह वाक्य तुमने कहाँ से चुने हैं !, हमें यह विचार ही नहीं आ रहा। '

पूज्य महानन्द जीः 'भगवनयह चुनना क्य !ा, यह तो होते जाते हैं। इनमें मिथ्यावाद तो होता ही नहीं। '

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य .....'बेटाजिस समय तुम आलोचना करते हो !, तो सीमा से दूर चले जाते हो। आज तुमने कई शब्दार्थों में मूर्ख कहा है। यह कितना असभ्य है। यह नहीं होना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं उच्चारण तो क्या क्या करता, परन्तु आपने समय ही रहीं दिया। गृहणामि प्रजा नरोति कामा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य अच्छा। .....'

तो मेरे प्यारेमहानन्द जी का वाक्य तो सुदंर हुआ !मेरे प्यारे !आदि ऋषि मण्डल !, परन्तु कटुता अधिक थी। जब यह अपने बाल्यकाल के आँगन में आ जाते हैं, तो यह

अपनी वाणी पर संयम नहीं कर सकते। चलो, कोई वाक्य नहीं। जो कुछ इन्होंने कहा उसका तो हमें ज्ञान नहीं। हम केवल इनके विचारों से यह उच्चारण कर सकते हैं, कि जिन राजाओं के विचारों में, राष्ट्रवेत्ताओं के विचारों में, ऐसे विचार होते हैं, कम्पन्नता के विचार होते हैं, तो उसको राष्ट्र तो नहीं कहा जाता।

पूज्य महानन्द जीः भगवनआज इस समय तो ऐसा प्रतीत हो रहा है !, कि इस मृत मण्डल में आज कोई राजा ही नहीं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य शान्तम् ब्रह्मा। !अच्छा बेटा............

तो मेरे प्यार आदि ऋषि मण्डल !आज जो इन्होंने कहा है, वह बड़े ओज से कहा है और इन वाक्यों में इनकी वेदना है, ऐसा मुझे प्रतीत होता है। एक वाक्य इन्होंने बहुत सुन्दर कहा, कि विज्ञान से मानव बहुत निकट आ गया है हृदयों से दूर चला गया है। इन वाक्यों से स्पष्ट अभिप्राय तो यह है, कि मानव भौतिक विज्ञानवेत्ता हो, तो आध्यात्मिक वेत्ता भी होना चाहिए। तो यह वाक्य बहुत ही प्रिय है। मैं यह स्वीकार कर लेता हूँ, कि इनके विचारों में कुछ वेदना होती है, और न प्रति क्यों होती है। हमने कई काल में कहा है, कि बेटासंसार को ऊँचा उपदेश देते चले जाओ !, अब यह संसार कहीं जाएं। तो आज का यह वाक्य बहुत सुन्दर। मुझे कुछ वाक्य प्रिय लगे, परन्तु कुछ वाक्य ऐसे थे कि श्रोत्रो को शान्त करना पड़ा। चलो, कोई वार्त्ता नहीं। आज का यह वाक्य समाप्त हुआ। समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे, अब वेद पाठ होगा। उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त।

२४ 29 07 1967 पुष्प 09 हे माता! तू यथेष्ट संतान को जन्म दे

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले आ रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, कि आज से पूर्व जिन वेद मन्त्रों का हमने पाठ किया। हमारे यहाँ नित्य प्रति वेदों का पठन पाठन होता है। उस पठन पाठन की जो पद्धति है, यह आर्ष है। उसी पद्धति में बेटाहमारा जन्म ! हम पनपे !हुआ। उसी परम्परा में मानो मानव पनपता है। जिन संस्कारों में बेटा, आज भी यह संस्कार प्रकट होते चले आ रहे हैं। हमने बहुत पूर्व काल में कहा है कि

वेद मन्त्रों में जब परमात्मा के विज्ञान का वर्णन आता है और उसकी महिमा का गुण गान गया जाता है तो हृदय में एक उज्ज्वलता जागृत होने लगती है और हमें ऐसा प्रतीत होने लगता है, जैसे परमपिता परमात्मा का जन जीवन हमें प्राप्त होने जा रहा है क्योंकि जब हृदय प्रसन्न होता है, तो जानो, कि परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा है। उसी की देन से हमारा जीवन संचालन हो रहा है। यदि उसकी देन हमारे सम्मुख न होती, तो यह हमारा जीवन क्रियाशील नहीं हो सकता था।

निर्माण वेत्ता प्रभु

बेटा माता पिता अपने उस बिन्दु के द्वारा !बालक की स्थापना करते हैं, परन्तु गर्भ स्थल में बालक की सुन्दर रचना होती है, तो हमें यह प्रतीत होता है, कि वह जो सुन्दर रचना है, वह मेरे प्रभु की है। वह माता पिता की नहीं। जब हमें यह ज्ञान हो जाता है, तो बेटा हमारा हृदय गद् गद् होने लगता है। मुझे मेरे !प्यारेमहानन्द जी ! ने एक समय प्रकट कराया कि आधुनिक काल का नास्तिक यह उच्चारण करता है, कि जो रचना होती है वह माता पिता के संयोग से होती है, और वह उन कणों से स्वयं हो जाती है। परन्तु यह आँगन में नहीं आता कि स्वयं किस प्रकार हो जाती है? मेरे प्यारेआदि आचार् !यजनोंमानव का जब नेत्र बनता है और नेत्रों में पीला पटन ! होता है, उसके पिछले भाग में ज्योति का सूक्ष्म अंकुर होता है। परन्तु वह जो ज्योति का एक सूक्ष्म अंकुर होता है, वह किसने रचाया? क्या मेरी भेली माता को यह ज्ञान है, कि तेरे गर्भ स्थल में अब पुत्र के नेत्रों की रचना हो रही है? मुख मण्डल की भी बेटाकैसी सुन्दर रचना है कि यदि जिह्वा सुन्दर नहीं होगी !, तो मानव कोई वाक्य ही उच्चारण नहीं कर सकेगा। हास्य परन्तु .....जिह्वा के पिछले भाग में सूक्ष्म सूक्ष्म अंकुर होते हैं और उन अंकुरों में यह विशेषता होती है कि वह वायु मण्डल में से वाणी के सम्बन्धी परमाणुओं को आकर्षित करते रहते हैं और जब वह आकर्षित करते हैं तो रसना के द्वारा वही वाक्य प्रकट होने लगता है। हास्यकितनी सुन्दर रचना है ....., बेटा उस मेरे प्यार प्रभु की। !

मुनिवरों इसी प्रकार जब हम श्रोत्रों की रचना पर !जाते हैं तो हमें आश्चर्य होता है।

मेरे उस प्रभु ने श्रोत्र किस प्रकार बनाएं हैं? उस सूक्ष्म से मार्ग में बेटाएक सूक्ष्म सा ! अंकुर होता है, उस अंकुर में वायुमण्डल से वाक्य आया और उस महान सूक्ष्म से अंकुर से उस वाक्य को ग्रहण करते हैं और उस वाणी से संबंधित होता है उस वाणी से उच्चारण कर देती है। यह कितनी सुन्दर उस प्रभु की रचना है। बेटामेरे तो ! आँगन में नहीं आता कि इसको मेरी माता बना सकती है अथवा पिता बना सकता एक नहीं देखो !है। बेटा, त्वचा कैसी सुन्दर बनाई है और त्वचा में भी ज्ञान का प्रसार है। कैसा व्यापक? और कैसा व्यापक? और मुनिवरोंदेखो !,हमारे दंत हैं परन्तु दंतों ! के पिछले भाग में रोम आगणीकेतु यन्त्रों का निर्माण किया है। घ्राण देखो, कैसे सुगन्धि ले लेती है, कहाँ से इसे ऐसा ज्ञान हो जाता है? यदि वह यन्त्र नहीं तो मानव शून्य है। बेटा उस प्रभु ने विज्ञान !से परिपक्व यह मानव शरीर की कैसी सुन्दर रचना की है।

तो बेटाइसका निर्माण वेत्ता कौन है !? मेरे प्यारेमहानन्द जी कहा करते हैं !, कि आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है कि यह तो माता पिता के प्रभाव से रचना हो गई। उस बिन्दु से रचना हो गई। यह तो मैं स्वीकार करने के लिए उद्यत हूँ कि माता पिता का जो मिलान हुआ उससे माता के जरायुज में बिन्दु की स्थापना हो गई, परन्तु उसके पश्चात् क्या होता है माता पिता को उसके पश्चात् का ज्ञान नहीं रहता। यदि माता पिता के ज्ञान से रचना होती, तो माता पिता को यह ज्ञान होता, कि अब तेरे पुत्र की या पुत्री की इन्द्रियों की रचना हो रही है और उसमें अमुक यन्त्र, अमुक स्थान पर स्थिर किया गया है परन्तु माता को कोई ज्ञान नहीं।

मेरे आचार्य जनोंमें प्रभु की महिमा का वाक्य उच्चारण करने जा रहा था। आज के ! प्रारम्भ के वेद मन्त्रों में उस परमपिता परमात्मा की रचना का वर्णन आ रहा था। उस प्रभु ने कैसी सुन्दर रचना की। हम उस रचना को दृष्टिपात करते हुए ही बड़े चकित हो जाते हैं। यदि हम यह भी स्वीकार कर लेते हैं, कि रचना माता पिता के अग्रणों से और कणों से होती है और एक मानव शरीर की रचना हो गई और संसार क्षेत्र में आ गया। अब मानव की कल्पना जागी कि आज मुझे अमुक स्थान में जाना है परन्तु

वह तो तरंग उत्पन्न हुई, मैं वैज्ञानिकों से प्रश्न करूँ की यह जो तरंग उत्पन्न हुई उसका कितना विशाल रूप है, कितनी ऊर्ध्वा में है, कितनी दक्षिणा में, कौन से आँगन में है? परन्तु इसका कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता। तो वे जो तरंगे उत्पन्न होती है, वह कहाँ से उत्पन्न हुई, इसका कोई उत्तर नहीं। परन्तु आध्यात्मिक वेत्ता तो इसका उत्तर देते हैं, कि यह केन्द्र आत्मा का है और आत्मा के द्वारा जो केन्द्र है, वह परमपिता परमात्मा का है। उस महान तरंग का नाम ही हमारे यहाँ ईश्वर की एक महान चैतन्य सत्ता कहा करते हैं।

बेटाआज मुझे इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है !, कि आज मैं केवल दर्शनों की ही चर्चा प्रकट करता रहूँ और इस गम्भीर विषय को उच्चारण करता रहूँ। हमारा तो केवल एक ही वाक्य रहता है, कि प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्या को अपने जीवन को बहुत ऊँचा बनाना है। मेरी पवित्र माताओं को ऊँचा बनाना है और पुरुषों को ऊँचा बनाना है परन्तु जब माताएँ ऊँची बन जाती हैं, तो पुरुष स्वयं ऊँचे बन जाते हैं, जैसे राजा के ऊँचे होने से प्रज्ञा ऊँची बन जाती है। इसी प्रकार माता का जीवन जहाँ अनुशासन में निहित होता है, तो प्यारे पुत्रोंयहाँ !का भी हो जाता है। तो बेटा ! यह राष्ट्र और समाज की जो सहकारिता है, यह सभी कुछ सहयोग से ऊँची बनती है। मेरे प्यारेमहानन्द जी ने क्या !, हमने भी कल के वाक्यों में कुछ राष्ट्र का वर्णन किया, परन्तु राष्ट्र में माताओं की सहकारिता होना बहुत अनिवार्य है।

बेटाहमारे यहाँ माता को सर्वोच्च कहा है क्योंकि उनके गर्भ में हमारा जन्म होता है। ! ऋषि मुनि होते हैं तो माताओं के गर्भ से होते हैं। महापुरुष जितने भी होते हैं जैसे भगवान राम, भगवान श्रीकृष्णा इत्यादि सभी का जन्म इन माताओं के आँगन से आता है। तो हे मेरी पवित्र मातातू कितनी ऊँची है। तेरा आना कितना उदार है !, जो तू महापुरुषों को जन्म देती है। तेरा गर्भाशय किस प्रकार का होगा? माता जब तू यहाँ कणाद, गौतम, राम, कृष्णा आदिओं को जन्म देती है, तेरे हृदय की उदारता किस प्रकार की होगी, यही विचार में नहीं आता। क्योंकि हे माताजब प्रभु तेरे गर्भ स्थल ! में पुत्र की रचना करते हैं, तो उस समय जो सूक्ष्म सूक्ष्म यन्त्र बनते हैं, यह यन्त्र तेरे

भाव से बनते हैं। परमात्मा उन यन्त्रों के बनाने में जो द्रव्य लेता है, वह द्रव्य तो तेरे द्वारा है परन्तु बनाने की शक्ति नहीं है। रचाने वाला तो प्रभु है।

तो माता जितने ऊँचे तेरे भाव होंगे, उतने ही तेरे गर्भ स्थल में होने वाले, हम जैसे पुत्रों के भाव भी ऊँचे होंगे, परन्तु जहाँ तेरे विचारों में, तेरी रचना में देखो, स्वादन होगा, तो देखो, स्वादन से प्रभु रचना करते हैं। यदि तू मांस का भक्षण करती है, तो उसके जो परमाणु होगे, उन परमाणुओं से परमात्मा तेरे पुत्र या पुत्री की रचना करेंगे। यह तू स्वयं जान सकती है की वह कैसे परमाणु होंगे यदि वह तमोगुणी होंगे, तो तेरे पुत्र या पुत्री का तमोगुणी चुनाव होगा। हे मेरी पवित्र माता !जब तू संसार में ऊँची बनती है, तेरे हृदय की उदारता तेरी मानवीयता सतोगुण में प्रसारण होती है तो माता! तेरे शृङ्गार पर, कोई आक्रमण नहीं का सकता हे माता! । तेरे शृङ्गार पर, तेरी तेरी मानवीयता पर उस काल उस काल में आक्रमण होता है जिस समय तू अपनी मानवीयता को और अपने वास्तविक स्वरूप को त्याग देती है। मेरे प्यारेआदि ऋषि ! तुझे स्मरण है कि भगवान श्रीकृष्ण का जीवन !मण्डल, उनका जन्म राजा कंस के कारागार में हुआ, जहाँ राजा कंस के हृदय की वेदना थी, कि जन्म होते ही उसको नष्ट किया जाएगा, परन्तु वसुदेव और माता देवकी परमात्मा का चिन्तन कर रहे थे और उनके हृदय से एक वेदना जागृत हुई और वसुदेव ने कहा हे देवीयदि हम इस ! कारागार में अपने सुन्दर पुत्र को जन्म दे सकते हैं, तो बिना समय के उसकी मृत्यु कोई नहीं कर सकता। मेरे प्यारेदेखो !, माता देवकी और वसुदेव ने वैज्ञानिक रूपों से प्यारे पुत्र को जन्म दिया। जब जन्म हुआ, तो कारागार में जो कंस के द्वारपाल थे, वे भी निद्रा में तल्लीन हो गएं और रात्रि में ही बालक माता यशोदा के गृह में पहुंच गए। तो यह क्या है? यह माता पिताओं का एक ऊँचा तप होता है। रचाने वाला प्रभु है परन्तु उसे जैसे द्रव्य प्राप्त होते हैं, वैसी वह रचना किया करता है।

भगवान मनु

तो हे माताजब तू यहाँ राष्ट्रवादी भगवान राम जैसे पुत्र को !, मनु जैसे पुत्र को जन्म देती है, तो राष्ट्र ऊँचा बन जाता है। बेटा तुम्हें भगवान !मनु जी की माता का नाम

स्मरण होगा। भगवान मनु जी की माता का नाम लक्ष्मी था और उनके पिता का नाम सोमभानुकेतु ऋषि था। जब एक समय लक्ष्मी अपने पति से बोली कि हे प्रभुयह ! संसार में क्या हो रहा है? मुझे तो संसार कुछ अग्नि के मुखारविन्द में भ्रमण करता हुआ प्रतीत हो रहा है।
उस समय ऋषि ने कहा कि देवीप्रज्ञा में अनुशासन हीनता होती चली जा रही है !, अब क्या होना चाहिए? लक्ष्मी ने कहा कि प्रभुवेद में ऐसा आया है !, कि राष्ट्र में जब प्रजा में अनुशासन हीनता हो जाएं, तो राजा का चुनाव होना चाहिए। उस समय ऋषि ने कहा कि देवीर !ाजा कहाँ से आएगा? माता लक्ष्मी ने कहा कि भगवनमेरे हृदय ! की ऐसी इच्छा है, मैं प्रभु से ऐसी याचना करने जा रही हूँ, आज ऐसे नक्षत्र में हमें गर्भ की स्थापना करनी चाहिए, जिस समय रोहणी नक्षत्र हो, पुष्प नक्षत्र का उसमें योग हो और चन्द्रमा का उसमें मिलान हो। जब ऐसे नक्षत्र में गर्भ की स्थापना होगी और प्रकृति में शुद्धता हो, रजोगुण का योग हो और ऐसे समय में गर्भ की स्थापना होगी, तो निश्चित है कि हम एक राष्ट्रीय पुत्र को जन्म दे सकते हैं। जब माता लक्ष्मी ने यह विचारा, तो मनोनीत होती हुई, विचार विनियम करती हुई, प्रभु का चिन्तन करती हुई, राष्ट्रदा राष्ट्र मम देहि, शब्दों का पठन पाठन करती हुई, गर्भ की स्थापना हुई। माता ने अपने प्यारे पुत्र का जो चुनाव किया, वह ऋषिता लेकर के, पार्थिकता ले करके, रजोगुण के अंकुर ले करके, वेद के विचारों से द्रव्य दिया और उस द्रव्य से प्रभु ने माता के गर्भ स्थल में बालक की रचना की। उसके पश्चात् माता लक्ष्मी के गर्भ से भगवान मनु का जन्म हुआ। भगवान मनु का जीवन बेटाकितना उज्ज्वल था !, भगवान मनु देखो, पक्षियों पर भी दया करने वाले थे और मार्ग में विचरण करने वाले, जलचरों पर भी दया करने वाले थे, उनका जीवन कितना शिरोमणि, आध्यात्मिक वेत्ता और राष्ट्र निर्माण वेत्ता, मनोनीत वेत्ता थे। बेटाराष्ट्र का निर्माण ! लगभग !करने वाले सबसे पूर्व भगवान मनु हुए हैं। भगवान मनु के काल को बेटा 90, 89, 00, वर्ष हो चुका है। जिस समय इस पृथ्वी पर राष्ट्र का निर्माण 568 हुआ, जब माता लक्ष्मी के गर्भ से बालक का जन्म हुआ, तो माता जान गई और

अपने पतिदेव से कहा कि प्रभुयह आपका बालक है और यह मेरा हृदय उच्चारण ! कर रहा है, कि यह निश्चित राजा बनेगा और प्रजा को कोई न कोई नियमावली देगा, जिससे प्रजा में अनुशासन की हीनता न हो।

मेरे आदि प्यारे आचार्यजनोंमेरी पवित्र माता कितनी ऊँची होती है !, जो अपने जीवन को ऊँचा और इस राष्ट्र को जन जीवन दे देती है। परन्तु जब तक माता तपस्विनी नहीं होती, पिता तपस्वी नहीं होते, तब तक इस प्रकार के पुत्र नहीं होंगे। जब तक वृक्ष को अच्छी प्रकार सींचा नहीं जाता, तो फल भी सुन्दर नहीं होते। हे मातातू ! तपस्वी बन। माता जब तूतपस्विनी बनेगी तो तेरा गर्भाशय ऊँचा होगा, तेरी मानवीयता ऊँची होगी, परन्तु जब तक तू तपेगी नहीं, जब तब कुछ नहीं। तपने का अभिप्राय क्या है? कि मन, वचन, कर्म से जब तू पापों से रहित हो जाएगी और उस काल में तू ऐसे पुत्रों का जन्म दे सकेगी। जब तक तू रसना का आनन्द मनाती रहेगी, जब तक तू नाना प्रकार के श्रृंगारों में प्रदीप्त रहेगी, तब तक तू ऊँचे बालक को जन्म नहीं दे सकती। तू कीड़ों को जन्म देगी, परन्तु कीड़ों को जन्म देने से, हे मातावह तेरे श्रृङ्गार को हन !न करने वाला होगा। इसलिए आज तुझे विचारना है, कि वेद हमें क्या कहता है? वेद यही कहता है जो कुछ मैं उच्चारण कर रहा हूँ। मेरी पवित्र माताओंवेद और कोई वाक्य नहीं प्रकट कर रहा है। वेद तो केवल तुम्हारे ! जीवन का निर्माण कर रहा है। वेद के वाक्यों को तुम स्वीकार करो अथवा न करो, यह तो तुम्हारे ऊपर निर्भर है, क्योंकि परमात्मा तो उस काल में दण्ड देता है, जब तुम उसके विरूद्ध कार्य करते हो। परमात्मा तो उसी काल में दण्डित करता है।

मन, वचन, कर्म का श्रृङ्गार

वह माता बड़ी सौभाग्यशाली होती है, जो माता प्रकृति का श्रृङ्गार नहीं करती है, परन्तु मन, वचन, कर्म का श्रृङ्गार किया करती है। मेरे प्यारे !आदि ऋषि मण्डल ! आज मैं यह क्या प्रकट करने चला हूँ? माताओं की चर्चा प्रकट करने चला। क्या करूं, माताओं के ऊपर मेरा बड़ा गौरव रहता है, क्योंकि हमने भी किसी माता से जन्म लिया है। भगवान श्रीकृष्ण भी कहा करते थे, कि हमने भी किसी माता से जन्म

लिया है और वह माताएं कितनी ऊँची होती हैं, वह कितनी तपस्विनी होती है वह प्रभु ही जानता है बेटातुम्हें ज्ञान ही है !भगवान राम का जन्म हुआ तो बेटा !, मैंने प्रकट कराया था कि बारह वर्ष तक उन्होंने गायत्री का पठन पाठन किया। उसके पश्चात् माता कौशल्या अपना कला कौशल करके अपने अन्न को ग्रहण करती थी। गर्भ स्थापन के पश्चात् भी वही कार्य करती। उस माता का जो जप था, वह कहीं नहीं गया। भगवान श्री राम जैसे पुत्र को जन्म देकर के चली गई। इसी प्रकार और भी नाना माताएं इस प्रकार की हुई, जिन्होंने महर्षि कणाद, गौतम पतंजलि, महर्षि लोमश, अंगिरा, ऋषि आदित्य आदि ऋषियों को जन्म दिया।

पूज्य महानन्द जी गुरुदेवअंगिरा ऋषि की माता का क्या नाम था !?

वेदज्ञ चार ऋषि

हास्यतुम किसी काल में बहुत अशुद्ध वाक्य उच्चारण कर !महानन्द जी !मेरे प्यारे ..... देते हो। यह तुम्हारी अशुद्धता है, यह तुम्हें भोगनी तो होगी ही। अब यहाँ माता के सम्बन्ध में कोई विषय था? मैं स्वतः ही प्रारम्भ करने वाला था, चलो, तो प्यारे आदि ऋषि मण्डल !इन ऋषियों की माताओं ने उन ऋषियों को बनाया। कैसा सुन्दर ! उनको अपने विचारों की धारणा दी, आगे महर्षि अंगिरा, वायु, आदित्य और अग्नि यह चार ऋषि हुए सृष्टि के प्रारम्भ में, ऐसा हमारे यहाँ कहा जाता है, कि इन ऋषियों पर वेदों का ज्ञान आया। परन्तु इनके सम्बन्ध में ऐसा कहा जाता है, कि माता के गर्भ से उत्पन्न नहीं हुए। यह स्वतः ही पृथ्वी और परमात्मा के योग द्वारा प्रकट हो गए। कहीं कहीं इनके सम्बन्ध में ऐसा उल्लेखनीय विचार प्राप्त होते हैं, कि इनकी भिन्न भिन्न माता थी। अंगिरा की माता का नाम रोहिणी था, वायु मुनि ऋषि की माता का नाम रेणु था और आदित्य मुनि की माता का नाम सोमभाम था तथा अग्नि की माता का नाम करूचि था। कहीं कहीं ऐसा साहित्य प्राप्त होता है। बेटा अरब 1 इस सृष्टि को बने ! 8वर्ष हो चुका है 567 लाख 7 करोड़ 0, जब अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा ऋषि थे। वास्तव में सृष्टि के प्रारम्भ में जो आत्माएं आती हैं, उनमें इतनी शक्ति होती है, कि वह प्रकृति के कुछ परमाणुओं को ग्रहण करके स्वतः ही मानव जाति में आ

जाते हैं और ये ऋषि हुए। ये पूर्व थे, इनको वेदों का ज्ञान था। वेद का ज्ञान न कहीं से आता है और न कहीं जाता है। जहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में प्रभु का सञ्चार होता है वहीं वह आत्माएं आ जाती हैं, जिनको पूर्व से वेदों का ज्ञान था। जैसे एक मानव वेद पाठी रात्रि काल में निद्रा में तल्लीन हो जाता है। अब कोई कहे कि निद्रा में वेद पाठी था परन्तु निन्द्रा में भी था और जागरूक हो गया, उसके पश्चात् भी वेदों का ज्ञान था। तो वेद का ज्ञान न तो कहीं से आता है और न कहीं जाता है।

आत्मा में जितनी जिसमें शक्ति होती है उतना उसमें ज्ञान होता है और जितनी महानता होती है, वह प्रभु के गर्भ में होती है। यह बहुत विचारने वाला वाक्य है, बेटाइस !को बहुत गम्भीरता से विचारना है। हम तो बेटाइतने विचारक नहीं है !, और न इतना हमें बोध ही है, इसको हम अच्छी प्रकार विचार सकें। क्या करें, कुछ तो आपत्तिकाल है। गुरु के चरणों में कुछ ज्ञान प्राप्त किया था, वह प्रकट कर देते हैं परन्तु अब तो बेटान तो ज्ञान कहीं से आता है !, न हीं जाता है। अब ऐसा है जैसे मानो देखो, पञ्च तंत्रों में कर्मों के कारागार में है। इन कर्मों के कारागार की जो गति होती है वह बड़ी विचित्र होती है। यह प्राणियों को भोगनी ही पड़ती है। प्राणी के द्वारा नाना प्रकार के आक्रमण होते हैं, कहीं सांसारिक प्राणियों के आक्रमण होते हैं कहीं किसी के आक्रमण होते हैं परन्तु कर्मों का भोग प्रारम्भ ही रहता है।

बेटामुझे कर्मों के भोगों की चर्चा तो प्रकट करनी नहीं है। मैं तो केवल यह वाक्य ! प्रकट कराने जा रहा था, कि वह माताएं इस सृष्टि में कितनी सौभाग्यशाली हैं जो अपने ज्ञान स्वरूप अपने पुत्रों को जन्म दिया करती हैं। उन माताओं की विशालता को सराहना चाहिए। बेटाम !ाताएं तो अनेक होती हैं, परन्तु वास्तव में माता वही होती है, जो निर्माण कर देती है। बेटापुत्र तो कोई भी उत्पन्न कर सकता है !, परन्तु पालन करना, निर्माण करना, यह माताओं का कर्त्तव्य होता है और जब किसी पुत्र का माता के गर्भ से जन्म होता है, परन्तु वह बालक व्यभिचारी हो जाता है, कुकर्मी हो जाता है, यह परमात्मा का दोष नहीं, यह उस बालक के कर्मों का तो दोष होता ही है परन्तु इससे माता भी दुर्भाग्यशालिनी हो जाती है, उसमें माता के भी दोष होते

हैं क्योंकि माता ने उस बालक का अच्छी प्रकार निर्माण नहीं किया। जिस मेरे प्रभु ने जब यह बालक के तंतु बनाएं मानो शरीर में यन्त्रों का निर्माण किया तो माता के भाव से। माता के भाव रजम् बृहस्ता वीर्य के भाव अग्रण होते हैं, उससे उसकी चुनौति होती है, चुनने वाला प्रभु है।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेवआधुनिक काल की माताएं !, तो यह कहा करती हैं कि यह तो सब कहने का वाक्य है, इसमें कोई विशेषता नहीं है। यह तो सब एक प्रकार का आडम्बर और पाखण्ड माना गया है। आज के विज्ञान ने बहुत उन्नति की है।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यदेखो .....,सब मूर्खों !वही मूर्ख वाले वाक्य। जितने प्रश्न बेटा ! वाले। परन्तु यदि माताएं ऐसा कहा करती हैं, तो बेटाइसमें तुम्हें क्या आपत्ति है !?

पूज्य महानन्द जीः भगवन हमें तो कोई आपत्ति नहीं। !

पूज्यपाद गुरुदेवः महानन्द जीइसमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए !, क्योंकि जिसमें जितना ज्ञान होता है, उतना ही वह प्रकट किया करती है। जब उनमें यहीं तक का ज्ञान है, तो वह कहाँ तक का प्रकट करेंगी। परन्तु जब वह माता गार्गी होती है, तो राजा जनक भी होते हैं। जहाँ मुनिवरोंगुरु होते हैं वहाँ शिष्य भी स्वतः आ !देखों ! जाते हैं। यह तुम्हारा प्रश्न निरर्थक है। आज के विज्ञान का तो मुझे इतना ज्ञान नहीं है, परन्तु माताओं के गर्भ से वैज्ञानिकों का जन्म हुआ, बड़ा ही सुन्दर है। परन्तु यदि वह माता आध्यात्मिक बालक को जन्म दे देती है, तो और भी सुन्दर हो जाता है। भौतिक विज्ञानवेत्ता नास्तिक हो जाता है और आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता आत्मा का श्रद्धालु बन करके, ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है। यह अंतर होता है। इसी में सूक्ष्म सूक्ष्म वाक्य विचार लेने चाहिए।

तो मेरे आदि आचार्यजनोंमें अभी अभी कुछ वाक्य उच्चारण करने जा रहा था !म, कि हे मेरी प्यारी मातातू अपने प्यारे पुत्र को जन्म दे !, जिससे तेरी मानवीयता संसार में विचित्र बनती चली जाएं। कल के आदेश में हम प्रकट कर रहे थे, अधर्म और धर्म। धर्म किसे कहते हैं? और अधर्म किसे कहा जाता है? तो वह भी हमने बहुत सूक्ष्म वाक्य में प्रकट किया। बेटाधर्म वही कहलाता है !, जहाँ देखो, प्रेरणा तरंग उत्पन्न हो

और वह ज्यों का त्यों कार्य करती चली जाएं और जहाँ उसमें दोषारोपण हो जाता है, वहीं उसमें पाप हो जाता है। तो बेटासाधारणत्व से धर्म और अधर्म जब निचले ! स्थान से चलते हैं तो हमें और ही कुछ प्रतीत होता है, एक ब्रह्मचारी है, एक ब्रह्मचारिणी है। वह दोनों शिक्षालय में शिक्षा ग्रहण करते हैं। यदि वह ग्रह आश्रम से पूर्व भोग विलास के आँगन से आ जाते हैं तो बेटावह अधर्म हो जाता है। वही ! कन्या और वही ब्रह्मचारी जब वह गृह आश्रम में प्रविष्ट हो जाते हैं, गुरु के द्वारा संस्कार हो जाता है और यदि भोगाम् ब्रहणी न करें, तो बेटावही अधर्म हो जाता ! है। तो धर्म के लिए एक सूक्ष्म से वाक्य को ले लो और एक विशाल रूप को ले लो, परन्तु उसमें एक ही वाक्य आता है जहाँ उस कर्म के करने में अधर्म है वहाँ उसी कर्म के करने में एक स्थान में धर्म हो जाता है। जहाँ संस्कारों से बिखरे रहते हैं, वहाँ पाप है, जहाँ संस्कारों से कटिबद्ध हो गएं, वहाँ पुण्य हो जाता है। तो इसलिए हमारे आचार्यों ने संस्कारों को बड़ी पुण्यता दी है और इसका बड़े सुन्दर भावों से वर्णन किया है। तो मैं उच्चारण कर रहा था, कि हम पाप और पुण्य को सूक्ष्मता से स्वीकार करें। पाप पुण्य उसी में होता है, जहाँ हमारी वाक्य तरंग उत्पन्न हुई, ज्यों का त्यों कार्य किया तो पुण्य है, धर्म है और यदि उसमें परिवर्तन न आ जाएं, तो वही अधर्म हो जाता है। तो मेरे प्यारेमैं इस सूक्ष्य विषय को !आदि ऋषि मण्डल ! वर्णन नहीं कराने आया। वास्तव में तो हमारा जो वेदमन्त्र है, वह हमें बारम्बार प्रेरणा देता चला जा रहा है, आज्ञा दे रहा है, कि हम अपने जीवन को ऊँचा बनाते चले जाएं, जिससे हमारा जीवन विशाल बन जाएं।

यह है बेटाआज का हमारा वाक्य। मैं कोई अधिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया !, केवल सूक्ष्म परिचय कराने आया था भगवान मनु का, संक्षिप्त परिचय कराने आया था वेदों का, कि वेद हमें क्या कहते हैं

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव मैं एक वाक्य आपसे !और जानना चाहता हूँ, कि जैसे हमारे इस पृथ्वी मण्डल पर भगवान मनु हुए, तो क्या जिस काल में सूर्य मण्डल में, राष्ट्र का निर्माण हुआ, तो क्या वहाँ भी कोई मनु उत्पन्न होता है अथवा नहीं?

पूज्य गुरुदेवः हास्ययह वाक्य तुम्हें कहाँ से आ ग !बेटा .....ए। हमारे विचार में नहीं आता, कि तुम यह कुतर्क क्यों करते हो, यह तर्क नहीं है, इसमें कोई वास्तविकता तो प्रतीत होती नहीं।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्आपके वाक्यों में क्या वास्तविकता रह गई !?

पूज्य गुरुदेवः अरे, यह कुतर्क न करो। यह प्रश्न नहीं, यह कुतर्क है। इनमें कोई सार नहीं है। आज हमने जितना वाक्य प्रकट किया, जब तुमने वही नष्ट कर दिया, तो इससे अधिक क्या कुतर्क कर सकते हो।

पूज्य महानन्द जीः हास्यऐसा है शम्भु निरक्रियाणी बालकानी कर्मणः !गुरुदेव ..... कुतन्डानी ग्रिति सुप्रजाः।

पूज्य गुरुदेवः हास्यअच्छा ....., कोई वाक्य नहीं।

तो मेरे आदि ऋषि मण्डलमहानन्द जी का एक बड़ा सुन्दर प्रश्न है !मेरे प्यारे !, परन्तु वास्तव में उसे प्रश्न तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु इसका उत्तर यह है कि वास्तव में सूर्य मण्डल में अनुशासन हीनता होती ही नहीं, और यदि होती भी तो वहाँ मनु जी का निर्माण नहीं होता। वहाँ विष्णु का निर्माण होता है। विष्णु का जन्म माता सविता के गर्भ से होता है और उस राजा का चुनाव स्वतः हो जाता है भगवान मनु के और वहाँ के राष्ट्र निर्माण सिद्धान्त भिन्न होते हैं। यहाँ बहुत ही स्थूल वाक्यों में माना गया है कि राष्ट्र में राजा बहुत ऊँचा और चरित्रवान होना चाहिए। भगवान मनु का प्रारम्भ में कुछ ऐसे वाक्य भी मर्यादा में कटिबद्ध कर दिए हैं कि जैसे पिता है और पुत्री है वह एकान्त स्थान में कोई चर्चा प्रकट न करें। माता का पुत्र युवा हो, तो माता और पुत्र को एकान्त स्थान में नेत्रों से निहित होकर कोई वाक्य प्रकट नहीं करना चाहिए। सूर्य मण्डल में सत्तोगुण प्रधान होता है, इसलिए रजोगुण की मात्रा आती ही नहीं। वहाँ पुत्र माता की लोरियों में रमण करता चला जाता है। माता और पुत्र युवा हो और सूक्ष्मता में एक स्थान में हों, तो वह अपने अपने स्थान में हो, तो वह अपने अपने आसन पर विराजमान रहते हों। वह विज्ञान के क्षेत्र में भी और माता के क्षेत्र में भी माता को माता ही स्वीकारता है। जहाँ पार्थिकता होती है, वहाँ रजोगुण और

तमोगुण की मात्रा होती है और वहाँ मनु का सिद्धान्त सर्वोपरि होता है। वहाँ ऐसा मनोनित सिद्धान्त माना गया है, कि जैसे पिता और पुत्री को देखो, पिता की गोद में विराजमान है और स्वीकार करती है कि यह मेरा पिता है और वह पुत्री है। उनमें सतोगुण की अधिक मात्रा होने के नाते उनमें कुटिल भाव उत्पन्न होते ही नहीं।

सतोगुण की तीन मात्राएं

प्रश्न उत्पन्न होता है कि जहाँ सतोगुण है, वहाँ राष्ट्र के निर्माण की क्या आवश्यकता है? वहाँ अनुशासन की क्या हीनता आ जाती है? इसका उत्तर यह है, कि जहाँ सतोगुण होता है, वहाँ सतोगुण में भी भिन्नता होती है क्योंकि सतोगुण की भी तीन मात्राएं हैं। एक मात्रा प्रभु है, जो सदैव सत्य रहता है। एक प्रकृति की मात्रा है, वह भी सत्य है। एक मात्रा आत्मा है, वह भी सत्य है। इनकी तीन व्यहृतियां और बना दो। एक वह जो अभाव में सत्य है, जैसे मेरे प्यारे महानन्द जी का शरीर आज ! प्रतीत हो रहा है कल यह शरीर को त्याग दें तो कल इसका अभाव हो जाएगा तो ऐसे ही सूर्य मण्डल में अथवा किसी भी मण्डल में जहाँ अग्नि तत्त्व प्रधान होते हैं, वहाँ सतोगुण प्रधान होता है किन्तु जब उस सतोगुण का सूक्ष्मता से अभाव होने लगता है तो उसी काल में राष्ट्र की आवश्यकता होती है और राजा का चुनाव होता है। इस पृथ्वी मण्डल में भी जब मानव कर्त्तव्यवाद से दूर चला जाता है, तो उस काल में राष्ट्र का चुनाव होता है। तो बेटाइन वाक्यों !यह भिन्न भेदता होती है। बेटा ! कोऔर किसी काल में सांत्वना से विचारेंगे, यह बहुत विचारणीय वाक्य है। वेदों में तो इस प्रकार की सब विद्याए हैं, परन्तु इसको विचार विनिमय करना हमारा त्र्तवी है और इसको विचार लेना चाहिए, तो ऐसे ही जैसे बृहस्पति मण्डल है, वहाँ का बृहस्पति गुरु होता है और वहाँ ब्रह्मनामाकेतु नाम के राजा का वहाँ चुनाव होता है। इसी प्रकार जहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के तत्त्व हैं, वहाँ उसी प्रकार का निर्माण है। बेटा ! इसका तो मैंने सूक्ष्म रूप से तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दिया।

पूज्य महानन्द जीः चलो, भगवनकुछ कुछ संतु !ष्टि हुई तो सही, परन्तु पूर्ण रूप से तो होने नहीं पाई।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटामैने अभी अभी कहा है !, कि इन वाक्यों पर कुछ विचार विनिमय करने की आवश्यकता है और इस पर विचार करेंगें, तो पुनः पुनः इसका उत्तर देते रहेंगे।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन क्या आप कल इसका उत्तर दे सकेगें। !

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाकल तो नहीं दे सकेंगे। चलो !, किसी काल में सही।

तो मेरे प्यारे आदि ऋषि मण्डल इन वाक्यों पर !और भी विचार विनिमय किया जा सकेगा, क्योंकि प्रभु का विज्ञान तो इतना विशाल है, कि महर्षि कणाद और पतंजलि ने तो यहाँ तक कहा है, कि यदि मानव की सहस्त्रों वर्षों की अवस्था हो और विद्यार्थी ही बना रहे, अध्ययन ही करता रहे, विचार ही करता रहे, तो वह अवस्था हमारे लिए यहाँ बहुत सूक्ष्म मानी गई है। मानो बेटाअक्षरों का बोधी होने से ही प्रभु को नहीं ! पा लेता या ज्ञानी नहीं न जाता। ज्ञानी राजा उस काल में बनता है, बेटाप्रत्येक ! इन्द्रिय से सुगन्धि उत्पन्न होने लगती है। श्रोतों से सुगन्धि, घ्राण से सुगन्धि, मुखारविन्द से सुगन्धि, त्वचा से सुगन्धि, उपस्थ और ग्रीवा से भी सुगन्धि उत्पन्न होने लगती है। दुर्गन्ध उत्पन्न ही नहीं होती, किसी काल में, किसी इन्द्रिय से। उस काल में बेटा मानव का जीवन सर्वोच्च बन जाता है !और उसके जीवन में सतोगुण की तंरगें उत्पन्न हो जाती है। वह परमात्मा के गर्भ और उसकी महिमा का पात्र बन जाता है।

तो मेरे आचार्यजनोंआज अब यह वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्यों का ! अभिप्राय क्या है, कि हे मेरी पवित्र माता तू ऊँची बन। तू अपने शृङ्गार !को नष्ट कराने वाले कर्म न कर। मेरे प्यारेकर्मों की जो गति है !, वह बड़ी विचित्र है। आज मैंने धर्म और अधर्म की कुछ चर्चा संक्षेप में वर्णन की। तो आज का यह आदेश, अब समाप्त होने जा रहा है।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेवआपका आदेश तो प्रिय हुआ !, परंतु समय बड़ा सूक्ष्म था।

पूज्यपाद गुरुदेवः चलो, बेटासमय मिलेगा !, तो शेष चर्चायें कल प्रकट करेगें।

तो बेटाआज का यह आदेश अब समाप्त होने जा रहा है। आज के इन वाक्यों का !

अभिप्राय क्या? मेरी प्यारी माताएं कैसी बने? मानव किस प्रकार के हों? मानव के विषय में कुछ कल प्रकाश दे सकेंगे, आज नहीं। कुछ सूर्य मण्डल की चर्चाएं भी हुई। इस पर भी विचार किया जाएगा, तो इसे भी किसी काल में पूर्ण रूप से वर्णन करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा, इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्यदि कल कुछ सूक्ष्म सा ! समय प्राप्त हो जाए, तो बड़ा सुदंर रहेगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटाकल जैसा समय आएगा !, उसके अनुकूल होगा।

पूज्य महानन्द जीः भगवन् यह तो आपने इससे पूर्व भी कहा था। !'

पूज्यपाद गुरुदेवः चलो, बेटा कल का कल ही देखा ही जाएगा। !

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन् । !

२५ 17 10 1967 पुष्प 09 अग्नियों के तीन प्रकार

जीते रहो, देखो, मुनिवारों आज हम पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। इस पठन पाठन की पद्धति को हमारे यहाँ आर्ष कहा जाता है, तो सदैव नवीन रहती है। हमारे आर्यजनो ने कहा है कि मानव को उस महान पद्धति को नहीं त्यागना चाहिए, जिसमें किसी भी काल में वृद्धपन नहीं आता और अपने जीवन को नवीन बनाते चले जाओ। मानव का जीवन सदैव नवीनता में परिववर्तित होता रहता है और अपनी मानवीयता, अग्रगा और उद्देश्यों को पालन करते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाते हैं।

आग्रति सुप्रजा मनोति कामाः महर्षि दालभ्य ऋषि ने शिष्यगणों के मध्य में विराजमान होकर कहा कि हे ब्रह्मचारीतू अपनी मानवीयता को ऊँचा बनाने में सम्पन्न बन ! क्योंकि संसार में जो धर्म है, वह मानव की व्यापकता में विराजमान होता है। जितना भी मानव अपने विचारों को व्यापक बना लेता है, उतना ही मानव के द्वारा धर्म, मानवीयता और उसका कर्त्तव्य उसके समीप होता है। यदि मानव अपने विचार बहुत सूक्ष्म बना लेता है, अपने तक ही सीमित उसके विचार होते हैं, तो धर्म उसके द्वार से चला जाता है आज हम अपने मानवत्व को धर्म के आसन पर ले जाना चाहता हैं।

महर्षि दालभ्य ने एक समय श्वेतकेतु से कहा हे ब्रह्मचारीअब तुम बारह वर्ष के हो ! गएं हो, अपने गृह को त्यागने का प्रयत्न करो। योग्य बन करके, जब गृह में पुनः प्रविष्ट होगे, तो उस काल में तुम्हारा वास्तव में सम्पन्नता को प्राप्त हो सकता है। श्वेतकेतु ने ऋषि के कथनानुसार अपन गृह को त्याग दिया।

गृह त्याग करके महर्षि उद्दालक कुल में उत्पन्न होने वाले शनकेतु ऋषि महाराज के आश्रम में गुरु के चरणों में ओत प्रोत होकर के, पवित्र विद्या का अध्ययन करने लगे। वर्ष तक अखण्ड ब्र 25ह्मचारी रहकर और सम्पन्न विद्याओं को ग्रहण कर, जब वह अपने पिता के कुल में आया, तो दालभ्य ऋषि ने कहा कि हे श्वेतकेतुक्या तुम ! तपस्या में सम्पूर्ण हो? ब्रह्मचर्य का तुमने पालन किया है और बुद्धिमान बन गएं हो, परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या तुम्हारे द्वारा कोई अभिमान की मात्रा है? उस समय उसने कहा कि हे पितामैंने सब कुछ विद्याओं का अध्ययन किया है और ! अपने जीवन की धाराओं को अपनाते हुए मुझे यह प्रतीत हो रहा है, कि मैं एक महान बुद्धिमान बन चुका हूँ।

दालम्य ऋषि ने कहा कि हे पुत्रतत्त्वमसि ब्रह्मणा व्यापनोति कर्मणाः यह तत्त्वमसि ! क्या है? यह ब्रह्मा क्या है? जब तुम ब्रह्मा को नहीं जान पाते, तो तुम्हें अभिमान किसका है? क्या इस शरीर का अभिमान है, जो तुम्हें दृष्टिपात आ रहा है? इस मानव शरीर के कण, जिससे यह उत्पन्न होता है, आज से पूर्व यह कण कहाँ थे?

ब्रह्मचारी ने कहा प्रभुजब हमारा यह मानव शरीर इस रूप में नहीं था !, तो यह माता के गर्भ में था। परन्तु जब माता का गर्भ नहीं था तो उससे पूर्व कहाँ था? माता पिता के रज और वीर्य के स्वरूपों में था। उससे पूर्व कहाँ था? उससे पूर्व नाना प्रकार की वनस्पतियों के रूप में था। परन्तु जब वनस्पति भी नहीं थी, तो उससे पूर्व वह कण कहाँ थे? कृषक की कृषि में, पृथ्वी में यह कण बिखरे हुए थे। इन बिखरे हुए कणों को एकत्रित करने वाला, इनको धारण करने वाला कौन है, जिस शरीर पर आज तुम्हें महान अभिमान है? श्वकेतु ने कहा प्रभुमुझे इसका ज्ञान नहीं। मैं तो यही ! जानता था कि तत्त्वाम् ब्रह्मे व्थायम् व्रहण अशर्त। यह तत्त्वमसि क्या है?

तत्त्वमसि का ज्ञान कराते हुए, दालभ्य ऋषि ने कहा कि जैसे वट वृक्ष के सूक्ष्म से बीज में एक वट वृक्ष निहित हो रहा है। इसी प्रकार वह परमात्मा, जिसे हम नित्य रूपों से वर्णन किया करते हैं, प्रकृति के कण कण में ओत प्रोत हो रहा है। हे ब्रह्मचारीइसी प्रकार तुम्हें भी अपने जीवन को बना लेना है। जैसे प्रकृति और ब्रह्मा ! दोनों का मिलान होकर के, यह संसार क्रियाशील हो रहा है, इसी प्रकार संसार में हमारा जीवन भी क्रियाशील होना चाहिए। जहाँ ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी सुदंर विचारों में परणित होते है, कर्त्तव्य पालन करने की महानता होती है, वहीं धर्म की मान्यताएं और धर्म में उसकी विलक्षण गति होती है।

सर्वस्व संसार में पांच प्रकार के कर्म होते हैं व्यापक, आकुंचन, उर्ध्वा, ध्रुवा और क्रिया जिनकी व्याख्या पूर्व कह चुके हैं। संसार का जितना विज्ञान है, अणुवाद है, यह सब इन्हीं में निहित रहता है। हम अपने जीवन की मानवीयता को उस महान शिखर पर ले जाना चाहते हैं, जहाँ हमारा जीवन वास्तव में पारायणता को प्राप्त होता है।

मेरे प्यारेआज हम प्रभु का चिन्तन करते हुए !भद्र पुरुषों !, उन मनोहर आदेशों का पालन करते चले जाएं, जहाँ ब्रह्मचारी गृह आश्रम में प्रविष्ठ होता है, त्याग और तपस्या में परणित होता है हमारे यहाँ महर्षि श्वेतकेतु ऋषि ने कहा है कि हे ब्रह्मचारी ! जिस प्रकार गार्हपथ्य नाम की अग्नि की पूजा की है, इसी प्रकार आज तुम गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करने के लिए तत्पर हो जाओ। गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा का अभिप्राय है कि हम उस महान अग्नि को जानने वाले बने, जिसको जानने के पश्चात् वास्तव में हमारा जीवन अग्नि में परणित हो जाता है। तृतीय अग्नि का नाम आरण्य अग्नि कहा जाता है। तीनों प्रकार की अग्नियों को जानते हुए संसार सागर पार हो जाए। इस संसार से हमारा उपराम होता चला जाए। उपरामता को हम उसी काल में प्राप्त होते हैं, जब वास्तव में हमारे जीवन की जो अग्नि प्रदीप्त रहती है। इस प्रकृति में यह अग्नि, यह तेज न रहे, तो यह संसार शून्य हो जाता है। इसी प्रकार यदि हमारे जीवन में अग्नि और कर्त्तव्यवाद नहीं रहेगा, तो हमारा जीवन भी एक समय शून्यता को प्राप्त हो सकता है। आज हमें जीवन की धाराओं को जान लेना

चाहिए, जिस अग्नि की पूजा करते हुए, इस संसार सागर से हमारा उपराम होता है।

गार्हपथ्य अग्नि

सबसे प्रथम गार्हपथ्य अग्नि जिसमें ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है। ब्रह्मचारी उसे कहते हैं जो ब्रह्म विद्या में विचरण करने वाला होता है। जो ब्रह्म विद्या में विचरण करता हुआ, गुरु के आसन को ग्रहण करता हुआ, अपने जीवन को सदाचारता में, चरित्रता में परणित करता हुआ, इस संसार सागर का मन्थन करता हुआ, अनुसन्धान करता हुआ, आगे विचरण करता है।

गृहपथ्य अग्नि

उसके पश्चात् गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा है। जिस अग्नि की पूजा करने से पति और पत्नी एक आसन पर विराजमान होकर उस अग्नि की पूजा करते हुए सहस्राणि घृताणि ब्रह्मे व्यापनोति हमारी सहस्रों वर्षों की आयु व्यतीत होती है।

आराण्य अग्नि

आगे चल करके आराण्य अग्नि की पूजा करते हैं। यह वानप्रस्थियों के हृदय में प्रविष्ठ होती रहती है। जिस विद्या का अनुभूत करते हुए, जिस अग्नि को हमने जाना है, उस अग्नि का मन्थन किया हुआ, जो तत्त्व है, उसे संसार को देने के पश्चात्, हमारे हृदय में वास्तव मे शान्ति प्राप्त होती है।

इन तीन प्रकार की अग्नियों की पूजा करने के नाम ही हमारे यहाँ कर्त्तव्यवाद हैं। इसी को अपनाने के पश्चात् हमारे जीवन में मानवीयता, यौगिकता विराजमान हो जाती है जिससे आगे चल करके अपने जीवन को ऊँचा बना लेते हैं। संसार में हमारे आने का उद्देश्य केवल यह है कि हम अपने मानवत्व को जानने का प्रयास करें। यदि अपने मानवत्व को नही जाना तो उस मानव की इस ससांर में कोई मानवता नहीं रह पाती। मानव का जीवन किन तत्त्वों से बना है और पांच प्रकार के कर्म, जो संसार में ओत प्रोत हैं, उनको जानना हमारा कर्त्तव्य है। ध्रुवा कर्म क्या है, ऊर्ध्वा क्या है, व्यापक क्या है, आकुंचन क्या है और क्रिया क्या है? इन पांच प्रकार के कर्मों को

जानना ही हमारा जीवन कहलाता है।
वेद का ऋषि मानव के क्या क्या उद्देश्य बताता है। शम् भम्य आ काणी सुप्रजा मनोति कामाः संसार में मानव जितने आंकुचन विचार बनाता रहता है, उतना उसके द्वार से धर्म चला जाता है। मानव को धर्म अपना लेना चाहिए। धर्म किसे कहते है? धर्म के आचार्यों ने, जिन्होंने धर्म का मन्थन किया है कहा है कि मानव के नेत्रों की दृष्टि जब सौंदर्य पदार्थों को दृष्टिपात करती है, तो यदि वह दृष्टि जैसी पहुँची वैसी ही मानव के नेत्रों में समाहित हो जाती है, तो जानों, कि वह उसका धर्म है। यदि दृष्टि पापों में दूषित हो गई तो वही मानव का अधर्म हो जाता है। आज हमें सभी वाक्यों को विचार विनिमय कर लेना चाहिए। हे मानवतेरा जो जीवन है !, वह वास्तव में अग्नि है। आज तू उस अग्नि की पूजा कर, जो तेरे जीवन में अग्नि क्रिया कर रही है। उस अग्नि को जानने का प्रयत्न कर।
आज हम केवल इतना वाक्य उच्चारण करने जा रहे हैं, कि गृह आश्रम में जब मानव प्रविष्ट होता है, तो हमें अपने कर्त्तव्यवाद के लिए बाध्य होना चाहिए, कि हमारा मानवत्व क्या है? गृहपथ्य नाम की अग्नि को हम अपनाते चले जाए। वह अग्नि ही मानव का जीवन है, मानव के प्राण है, प्रकृति का प्राण है। यदि उस अग्नि की पूजा नहीं की जाएगी, तो हम किसी भी अग्नि को या ज्ञान विज्ञान को किसी भी काल में जान नहीं सकेंगे। मैं इस वाक्य को अधिक गम्भीर नहीं बनाना चाहता। हमें अपनी मानवीयता को विचारशील बनाने के लिए वास्तव में गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करते चले जाना चाहिए।
श्वेतकेतु ने महर्षि दालभ्य से कहा कि प्रभुक्या वट वृक्ष को जानना ही ब्रह्म ज्ञान है !? उन्होंने कहा कदापि नहीं। जैसे लवण का जल होता है वह मध्य से भी, अग्राणों से भी, ऊर्ध्वा से भी और ध्रुवा से भी, जिस स्थान से दृष्टिपात करोगे, वहीं लवणयुक्त होगा। इसी प्रकार जो मानव ज्ञान और विवेक के मार्ग में जाता है, वह किसी भी आँगन में जाता है, किसी भी क्रियात्मक में विचार विनिमय करता है, तो वहीं उसे ब्रह्म ही ब्रह्म प्रतीत होने लगता है। हे श्वेतकेतुआज तुम लवण की भांति !, संसार में

ब्रह्म को व्यापक दृष्टिपात करो।

आज मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे !ओर ही कुछ प्रेरणा देते चले जा रहे है। जैसा मुझे वायुमण्डल से प्रतीत हो रहा है, और जिस अग्राण में महानन्द जी उच्चारण कर रहे है, मैं भी अपनी शुभकामनाएं देता चला जाऊं। वास्तव में शुभ कामना यही होती है, कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या अपने कर्त्तव्यवाद में संलग्न होना चाहिए। मानव का जीवन और प्राण उसका कर्त्तव्यवाद है। यदि कर्त्तव्यवाद में सूक्ष्मता आ गई तो मानव जीवन की जो अमूल्य निधि है, वह उसके द्वार से दूर चली जाती है। मेरी शुभ कामना यही है, कि जैसे आँगन विराजमान होकर के ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी आनंद पूर्वक अपने अपने आसन पर विराजमान होकर कर्त्तव्यवाद में परांगत हुए, उनके मनों की जो प्रबल इच्छाएं हैं, हे परमात्मन्हे सर्वशब्र !हे सच्चिदानंद !ह्मे ! तू उन सभी क !आपनोति कामाः हे ब्रह्म ामनाओं को पूर्ण कर। क्योंकि आप ब्रह्म हैं, संसार के रचयिता हैं, इस प्रकृति को प्राण देकर क्रियाशील बनाया है। इसी प्रकार आचार्य और बुद्धिमान ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी को अमूल्य विद्या की संपत्ति दे करके उनके जीवन को महान और पवित्र बना दिया करते है।

जिस प्रकार वट वृक्ष के सूक्ष्म बीज में सर्वश वृक्ष अंकुर रूप में निहित रहता है, इसी प्रकार परम पिता परमात्मा भी सभी के हृदयों में विराजमान है। मानव में जब दूसरों के प्रति नाना प्रकार के कुविचार आ जाते है तो वह बेटापरमात्मा को अपने से दू !री कर देता है, कर्त्तव्यवाद को दूर कर देता है, नाना प्रकार के पापों में सलंग्न हो जाता है। यदि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या जब परमात्मा को अपने सम्मुख स्वीकार करते है, तो पाप कर्म करने के लिए, किसी भी काल में तत्पर नहीं होते। ब्रह्मचर्य आश्रम हो या गृहस्थ आश्रम हो परन्तु वह जो परमपिता परमात्मा है वह हमसे दूर नहीं होना चाहिए। यदि वह दूर हो जाएगा, तो हमारे में कोई सार्थकता नहीं रहेगी। नाना प्रकार की जो सामग्री प्राप्त होती है वह परमात्मा का प्रसाद है। इसे हम पाते हुए संसार के गागर से पार होते चले जाए।

आज हम केवल इतना वाक्य प्रकट करने आए है, कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या

अपने कर्त्तव्यवाद में सलंग्न रहे। मानवीयता को ऊँचा बनाना यह मानव के विचारों में संबंधित है। विचारों में ही सर्वस्व विज्ञान ओत प्रोत रहता है। जितना भी अणुवाद है, महाअणुवाद है यह सब मानव के विचारों में निहित रहता है यह विचार कहाँ से आते हैं?

जिस प्रकार वट वृक्ष के बीज में सूक्ष्म सा अंकुर होता है, इसी प्रकार मानव शरीर में सूक्ष्म सा एक अन्तःकरण होता है, और जिसके आँगन में, जिसे हम चित्त कहते हैं, जब चित्त और जीव का संघात होता है, मिलान होता है, तो विचारों की उत्पत्ति होती रहती है। उन्हीं विचारों से इस संसार में हमारा जीवन एक मानवीयता के ऊँचे ऊँचे क्षेत्रों में चला जाता है। कहीं वाणी का अनुसन्धान है, कहीं पृथ्वी के गर्भ का अनुसन्धान है, कहीं सूर्य मण्डल का अनुसन्धान है, कहीं चन्द्रमा का। यह नाना प्रकार का अनुसन्धान है और अनुंसधानवेत्ता विशेषज्ञ बनता चला जाता है। प्रभु से केवल यही आराधना रहती है, कि हे परमात्मासंसार में मिथ्यावाद से दूर ले चल !, सत्यवाद में हमारी प्रवृत्ति होनी चाहिए, जिससे हम संसार में महापुरुषों का आशीर्वाद लेकर इस संसार सागर से पार होते चले जाए।

आज हम जिस आँगन में आए है, उसी उद्देश्य के लिए, मैं भी अपनी सुंदर शुभ कामना प्रकट करता हूँ। जिन उद्देश्यों के लिए हमने इस विषय की चर्चा की है, वह क्या है कि पति और पत्नी सुंदर भाव से गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करते हुए, अपने ज्ञान विज्ञान को जानते हुए, इस संसार सागर से पार होते चले जाए। ऐसे प्राणियों के जीवन की इस संसार में भगवन्सहस्त्रों वर्षों से अधिक की अवस्था होनी ! चाहिए।

आज के हमारे वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि ब्रह्मचर्य आश्रम के पश्चात्, जो गृह आश्रम मे प्रविष्ट होता है, उसे व्यापक बनने की आवश्यकता है। जब यह संसार नहीं था, तो सर्वश संसार ब्रह्म में ओत प्रोत था। पंरतु जब उस परमपिता परमात्मा ने अपनी चैतन्य शक्ति से, प्रकृति को कंपायमान किया, तो संसार एक विस्तार वाला बन गया। इसी प्रकार मावन का जीवन होता है। जब वह गृह आश्रम में प्रविष्ट होता है,

तो उसके विचारों में व्यापकता आ करके उसके ऊपर एक महान कर्त्तव्यवाद निहित हो जाता है। कहीं आचार्यों का, कहीं माता पिता का, नाना प्रकार के उद्देश्य उनके समीप आते रहते है। ऐसे ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी के लिए आशीर्वाद रहता है कि हे परमात्मन्ऐसे सुंदर ब्रह्मचार !ी संसार में सदैव उत्पन्न होते हुए, इस महान संसार को स्वर्ग बनाते चले जाए।

मेरे भद्र पुरुषोंआज का यह वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है। समय मिलेगा !, तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज के इन वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या को, ब्रह्मचारी को अपने कर्त्तव्य पालन करने के लिए, संसार में तत्पर रहना चाहिए। अब वेदों का पाठ होगा, उसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त।

२६ 18 10 1967 पुष्प 09 आत्मज्ञता

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, जिन वेद मन्त्रों का हमने पूर्व से पठन पाठन किया। आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था। हमारा जो यह शरीर है, जिसमें मनोहर मस्तिष्क है, नेत्र है, घ्राण है और नाना प्रकार के यन्त्र विराजमान हैं, इसको हमारे यहाँ एक प्रकार का यन्त्रालय कहा जाता है। इसमें कहीं परिवार पर, समाज पर, सर्वस्व विश्व पर विचार विनिमय करता है, और कहीं मानव के समीप द्वेष की भावनाएं आने लगती है। इसका कारण केवल यह है कि यह मानव जीवन यन्त्रालय है।

हमारे आचार्यों ने कहा है कि इस मानव शरीर को जानने के लिए हमें बारम्बार अनुसन्धान की आवश्यकता है। यदि आज मानव वैज्ञानिक बनना चाहता है तो सबसे प्रथम यदि अपने जीवन का मन्थन नही कर लेता है, मानव जीवन की महत्वता को नहीं कर लेता है, तो वह महान वैज्ञानिक नही बन सकता है, ऋषि मुनियों ने बहुत से विचार दिए और देते भी रहते हैं, हम भी अपने विचार देते रहते हैं, परन्तु अन्त में इस संसार में कोई सार प्रतीत नही होता, क्योंकि मानव का जीवन ऐसा आवागमन है, ऐसी इसकी प्रकिया बनी हुई है। वेद बहुत सुन्दर वाक्य कहता है, कि जहाँ मानव

अपने जीवन को जान जाता है वहाँ अपने जीवन की प्रकियाओं को भी जान जाता है।

बेटामुझे एक समय की वार्त्ता स्मरण हो आई !, कि एक समय प्रजापति ने एक घोष कराया कि मैं आत्मा का ज्ञान अर्पित करता हूँ। जब यह घोष हुआ, तो दैत्य और देवताओं ने, सभी ने इसको श्रवण किया। दैत्यों का एक समाज एकत्रित हुआ और उसके अध्यक्ष बने विरोचन। विरोचन ने दैत्यों से कहा कि भाई! प्रजापति का इस प्रकार का घोष हुआ है, अब तुम क्या निर्णय देते हो। उन्होंने कहा कि प्रभु ! वास्तव में हमें आत्मा को जान लेना चाहिए, अन्यथा देवता जान जाएगें, तो हमारी हानि होगी। उसी समय एक स्थान से दैत्यों के धिराज विरोचन ने और एक स्थान से देवताओं के धिराज इन्द्र ने अपने आसन को त्यागकर तीन तीन समिधा लेकर प्रजापति के आँगन को रमण किया। दोनों की एक दूसरे से अच्छी प्रकार जानकारी न थी। प्रजापति के द्वार जा पहुँचे। विरोचन ने प्रजापति से कहा प्रभुआपने घोष कराया ! है, कि मानव शरीर में जो महान तत्त्व हैं, उसको आप जानकारी कराते हैं। उन्होंने कहा कि जो तुम उच्चारण कर रहे हो, वह यथार्थ है। तो विरोचन ने कहा तो प्रभु ! निर्णय कराइये।

प्रजापति हे विरोचनयह जो मानव शरीर है !हे इन्द्र !, यही आत्म तत्त्व है। इसकी जानकारी कर लो।

जब प्रजापति ने ऐसा कहा तो विरोचन और इन्द्र दोनों शान्त होकर अपने अपने आसन को चल दिए। विरोचन ने पहुँचकर दैत्यों से कहा कि हे दैत्योंयह जो मानव ! का शरीर है, इसी को ऊँचा बनाना, इसका पालन पोषण कराना, यहीं हमारा सबसे प्रथम कर्त्तव्य है। यही आत्मा और यही ब्रह्म है। दैत्यों ने वही कार्य प्रारम्भ कर दिया। उसी के आधार पर उनकी प्रक्रियाएं, न दान है, न कर्म है, केवल क्या है? मानव का शरीर ही आत्मा है, इसको जान लो।

परन्तु जब इन्द्र देवताओं के समाज में जाने लगे तो विचारा कि प्रजापति ने इस मानव शरीर को ब्रह्म का रूप वर्णन किया है परन्तु मैं इसको जान नहीं पाया। देवता

नाना प्रश्न करेंगे, यदि मैं इसे अच्छी प्रकार नहीं जान लेता हूँ, तो उनको निर्णय नहीं करा पाऊंगा। इसलिए देवताओं की सभा में जाने से पूर्व विचारा, कि यदि मानव का शरीर ब्रह्म है तो मानव की इन्द्रियां भी ब्रह्म होनी चाहिए, परन्तु जब मानव चक्षुहीन हो जाता है तो जीवित रहता है, घ्रणाहीन हो जाता है, तो सुगन्धिहीन हो जाता है, परन्तु जीवित रहता है, श्रोत्र चले जाते है तो दिशाओं से वाक्यों से वंचित्त हो जाता है पर जीवित रहता है। यह विचार विनिमय के पश्चात पुनः तीन समिधा लेकर प्रजापति के द्वार पर जा पहुँचे और कहा कि प्रभुमैं यह नहीं जान पाया हूँ !, कि आपने जो मानव शरीर को ब्रह्म कहा है, आत्मतत्व कहा है, यह किस प्रकार है, क्योंकि जब मानव शरीर से कोई इन्द्रिय चली जाती है, आधा अंग भी समाप्त हो जाता है तो वह जीवित रहता है। इससे यह प्रतीत होता है कि ब्रह्म कोई द्वितीय वस्तु है।

प्रजापति ने कहा कि हे इन्द्रवर्ष तक मेरे आश्रम में ब्रह्मचारी रहो 32 तुम !, उसके पश्चात् मैं तुम्हें निर्णय दूंगा। इन्द्र ने ऐसा ही किया। वर्ष पश्चात् प्रजापति ने कहा 32 कि जब मानव स्वप्न अवस्था में चला जाता है, नाना प्रकार की क्रियाएं करता रहता है वही ब्रह्म है। इन्द्र ने शान्त होकर उनके आसन को त्याग, प्रस्थान किया।

स्वप्नावस्था

मार्ग में विचार विनिमय किया कि प्रजापति ने जो यह कहा है कि यह जो सुषुप्ति अवस्था है, वही ब्रह्म है, वही आत्मा है, यह कैसे माना जाए। जब मानव स्वप्न अवस्था में विराजमान होता है तो कहीं धिराज बन जाता है, कहीं निर्धन बन जाता है तो कहीं भोग विलासी हो जाता है तो ब्रह्म नहीं हो सकता। जब उनके हृदय में ऐसे विचार आने आने लगे, तो वह पुनः तीन समिधा लेकर प्रजापति के द्वार जा पहुँचे। प्रजापति ने कहा हे इन्द्रके !से इस आसन को पवित्र किया। उन्होंने कहा कि प्रभु !मैं यह नहीं जान पाया जैसा आपने कहा कि इस स्वप्न अवस्था का नाम ब्रह्म है। मुझे यह निर्णय नहीं हो पाया, कि मैं इसे ब्रह्म कैसे स्वीकार करूं। उन्होंने कहा कि यह यथार्थ है। तुम पुनः वर्ष मेरे आश्रम में ब्रह्म 32चारी रहो, ब्रह्मचर्य के पश्चात् उन्होंने जाना, कि यह गाढ़ निद्रा है, इसी का नाम ब्रह्म और आत्मा है क्योंकि इससे मानव

को संसार का ज्ञान नहीं रहता केवल ब्रह्म में सलंग्न रहता है। इसलिए यह विचार होता है कि वही ब्रह्म है।

निद्रा अवस्था

इन्द्र पुनः शान्त होकर आसन की ओर जाने लगे। मार्ग में विचारा, कि इस निद्रा अवस्था में तो मानव को ज्ञान ही नहीं रहता, अज्ञान हो जाता है, शरीर शून्य दशा में चला जाता है, प्राण अपनी क्रिया करता है, यह ब्रह्म नहीं हो सकता। क्योंकि यह तो चित्त का दोष है, न कि आत्मा का गृही है। क्योंकि यह जो मन है यह अपनी ज्ञान इन्द्रियों को समेट करके, चित्त के आंगन में चला जाता है और उसी का नाम निद्रा अवस्था है यह आत्मा और ब्रह्म नहीं हो सकता। इन्द्र पुनः समिधा लेकर प्रजापति 3 के द्वार जा पहुँचे और कहा कि प्रभु यह जो सुषुप्ति अवस्था है, यह न तो आत्मा हो सकता है और न ब्रह्म हो सकता है। यह तो केवल चित्त और इन्द्रियों का समावेश है। मैं इसलिए इसे स्वीकार नहीं कर पाता।

प्रजापति ने कहा कि तुम यथार्थ उच्चारण कर रहे हो। वर्ष तुम मेरे आश्रम और 5 वर्ष पश्चात् प्रजापति ने कहा 5 रहो।, कि हे इन्द्रयह जो आत्मा है !, यह किसी काल में नष्ट नहीं होती। यह अजर है, अमर है, अभय है और नित्य है। मानव का जो शरीर है, यह केवल क्षणभंगुर है। आज नहीं तो कल नष्ट होने वाला है और मानव इसी का स्नेह करता रहता है। इसी मोह ममता में अपने को स्वीकार करता रहता है। जिनकी न दान में, न योग में, न कर्म में प्रवृत्ति और न आत्मा में निष्ठा होती है और शरीर को ही अपना आत्मा स्वीकार कर लेते है, यह केवल दैत्य प्रकृति के प्राणी होते है। इसलिए हे इन्द्रयह जो आत्मा है ! यह वह है जो मानव के शरीर से निकलने के पश्चात मानव का शरीर शून्य हो जाता है, वह जो आत्मा है वह इस शरीर का विशेष केन्द्र माना जाता है। वर्णन कराते हुए, प्रजापति ने इन्द्र से कहा कि हे इन्द्रयह जो ! हमारा शरीर है, यह इससे पूर्व कहाँ था?

मुनिवरोंमैंने इससे पूर्व कल के वाक्यों में प्रकट कराया था !, कि जिन परमाणुओं से मानव का स्थूल शरीर बनता है वह क्या परमाणु है। जिन कणों से मानव शरीर का

निर्माण हुआ है वह कण, वह परमाणु जब हमारा मानव शरीर नहीं था, तो वह कहाँ थे? वेद का ऋषि कहता है कि वह परमाणु माता के गर्भ में थे। परन्तु जब माता का गर्भाशय भी नहीं था, तो उससे पूर्व परमाणु कहाँ थे? वह परमाणु माता पिता के वीर्य और रज के रूप में थे। परन्तु जब रज और वीर्य भी नहीं था, तो कहाँ थे। निर्णय हुआ, इससे पूर्व कुछ अन्न के रूप में थे, कुछ वनस्पतियों के रूप में थे, कुछ वायुमण्डल में भ्रमण कर रहे थे। परन्तु इससे पूर्व कहाँ थे? निर्णय हुआ कि इसके पूर्व कृषक की भूमि में थे, प्रकृति के गर्भ में थे। पार्थिव तत्त्वों के रूप में यह परमाणु बिखरे हुए थे।

तो मेरे प्यारेइस मानव शरीर को जानना सर्वस्व ब्रह्माण्ड को जानने के !भद्र मण्डल ! तू !बहुत संदर सुंदर वाक्य कहता है। हे मानव !तुल्य है। वेद का ऋषि तो बेटा अपनी मानवीयता परविचार विनिमय करता चला जा। इस मानव जीवन का निर्माण वेत्ता कौन है? इसका निर्माण वेत्ता वह मेरा प्रभु है। जिस संसार के रचयिता ने इस प्रकृति को कंपायमान किया है बेटायह संसार द्वितीय से प्रारम्भ हुआ है। शून्यता से ! चैतन्यता में आने के पश्चात् यह सर्वस्व संसारक्रियाशील बनता चला जाता है। मैं इस वाक्य को अधिक महत्व न देता हुआ, केवल यह प्रकट कराता चला जाऊं, कि मानव के जीवन में विशेषता केवल उस अग्नि की है जिस अग्नि को धारण करने के पश्चात् मानव के जीवन में मानवीयता के विशेष अंकुर उत्पन्न हो जाते हैं। बेटाउन्हीं ! तत्त्वों से संसार का निर्माण होता है पंरतु उन सबका निर्माणवेत्ता वह प्रभु है क्योंकि जो वस्तु बनती है, वह केवल उस प्रकृति से बनती है, उसमें कोई चैतन्यता होती है और उसी से यह संसार क्रियाशील होता रहता है। परन्तु यह चैतन्यता देने वाला मेरा प्रभु है।

तो मुनिवरोंप्रजापति ने इन्द्र से कहा कि यह आत्मा किसी काल में नष्ट नहीं होती। ! जैसे सूर्य की किरणों पृथ्वी पर आती है या चन्द्रमा पर जाती हैं और चन्द्रमा पर जाकर शीतल बनती चली जाती हैं और वही शीतल चन्द्रमा की कांति पृथ्वी में अमृत ओत प्रोत कर देती है। इसी प्रकार मानव के आत्मा से जब कोई धाराएं चलती हैं,

चित्त के संघात में रमण करती हैं और चित्त से मानव का शरीर क्रियाशील बनता चला जाता है। इसका जो केन्द्र है वह आत्मा है, चैतन्य है। उसे जानने के लिए हमें अपने जीवन का मन्थन करना है, ज्ञान और विज्ञान में रमण करना है। यह हमारा कर्त्तव्य है। अज्ञान को त्याग देना ही मानव की वास्तविकता कहलाई जाती है। इन्द्र गुरु के चरणों को स्पर्श कर देवताओं की सभा में जा पहुँचे।

जो देवता प्रकृति के प्राणी होते है, वह आत्म विश्वासी होते है, वह इस शरीर को वास्तविकता न देकर के आत्मा को केंद्र स्वीकार करके आगे रमण करते हैं। जो दैत्य प्रकृति के होते हैं वह बिना विचारे जब आत्मा और विज्ञान की चर्चा करते हैं तो कहा करते हैं कि यह सब पाखण्ड है क्योंकि उनके लिए केवल शरीर का पालन पोषण करना परन्तु आत्मा को भोजन न देना। यह सब दैत्य प्रकृति के प्राणी हुआ करते हैं।

धर्म

तो मुनिवरोंवास्तव मे मानव को अपने विचारों में सुदृढ़ और आत्म विश्वासी होना ! संसार में राष्ट्र का स्वामी बन सकता है। जिस मानव !चाहिए। आत्म विश्वासी ही बेटा को अपनी आत्मा पर विश्वास नहीं होता, वह राष्ट्र का नेतृत्व नहीं कर सकता। राष्ट्र और आत्मा का सम्बन्ध होता है, केन्द्र तिति अभ्यास गति निश्चयति यह जो आत्मा मानव का केन्द्र है इसे जाने बिना वह कोई कर्त्तव्य नहीं कर सकता। आत्मविश्वासी बन करके दृढ़ता में पहुंचने के पश्चात् मानव के जीवन की एक ऊर्ध्वा गति बन जाती है। जीवन में व्यापकता आ जाती है। व्यापकता आने के पश्चात् मानव जीवन को धर्मज्ञ बना लेता है। ऋषि मुनियों ने कहा है कि इन्द्रियों को जानना, उनके विषयों को जानना, उनकी वास्तविकता जानना यही धर्म कहलाता है।

तो मेरे प्यारेअभी अभी हम प्रकट कर रहे थे !भद्र पुरुषों !, कि हे मानवतू वास्तव ! में व्यवहार में भी कुशल बन। आत्मा पर तेरी दृढ़ता होनी चाहिए। विश्वास, धारणा यह मानव का स्वाभाविक गुण और लक्षण होता है। इसे जानने की मानव में स्वतः इच्छा होती है। मानव को अपना जीवन बनाना ही उसका कर्तव्य है।

बालक माता के गर्भ से पृथक होता है, तो माता उसकी प्रकृति का सुन्दर रूपों से

निर्माण कर देती है। शरीर का निर्माण माता नहीं करती, परन्तु उसकी प्रवृत्तियों का, उसके विचारों का चुनाव माता के द्वारा होता है। प्रारम्भ का जीवन वास्तविक होना चाहिए। यदि मानव प्रारम्भिक जीवन में ही शान्त हो गया, उसकी प्रक्रियाओं में अशुद्धि आ गई, तो मानव जीवन के मध्यम में और अंत में जीवन की सार्थकता समाप्त होती चली जाती है। जैसे यदि गृह निर्माण में, प्रारम्भ में ही गृह की नींव ऊँची, सुन्दर और परिवक्व होती है, तो वह गृह बहुत काल तक नष्ट नहीं होता। इसी प्रकार मानव के प्रारम्भ के जीवन में वास्तविकता होनी चाहिए, ब्रह्मचर्य और विचारों में सुदृढ़ता होनी चाहिए। तो जब वह मध्य और अंत में जाता है, तो उसके जीवन में अशुद्धियां नहीं आती। वह हताश नहीं होता।

हताश प्राणी

हताश कौन प्राणी होते हैं? जो आत्मविश्वासी नहीं होता। जिसके द्वारा आत्मा और मन की सूक्ष्मताएं होती है। जो मानव यह जान लेता है, कि मुझे कर्तव्य दर्पण बनना है, अपने जीवन का दिग्दर्शन करना है, तो वह मानव संसार में अपनी क्रियाओं से हताश नहीं होता। हताश वही प्राणी होता है, जो अपने मानवत्व का मन्थन नहीं करता, जिसे अपनी प्रवृत्तियों पर विश्वास नहीं होता, आत्मा का ज्ञान नहीं होता, जीवन सदैव विडम्बना में व्यतीत होता है।

भगवान राम और रावण में भिन्न

मेरे प्यारेमैं अधिक चर्चा न प्रकट करता हुआ !भद्र पुरुषों !, इस वाक्य को उच्चारण कर शाँत होने जा रहा हूँ कि चरित्रवाद की जो प्रारम्भिकता है वह मानव के विचारों से और आत्मविश्वास से होती है। भगवान राम और रावण में क्या भिन्न भेदता थी? रावण में आत्मविश्वास और चरित्र नहीं था, परन्तु राम के द्वारा चरित्र और मानववाद था। संसार में उनकी विजय होती है, जो संसार में आत्मविश्वासी होते हैं। राम का जीवन कितना शिरोमणि और पवित्र था। उन्होंने पर्वतों के प्राणियों को, जो राज्य से दूर थे, उनको अपनाया। राष्ट्र जिन्हें सांत्वना नहीं देते थे, उनको आत्मविश्वास करा करके इतने बड़े साम्राज्य को विजय किया।

मानव का कर्त्तव्य

मानव जीवन तो दिवस तुल्य है। मानव का शिशुकाल प्रातः की भांति है, युवा मध्यम दिवस की भांति और वृद्धपन साँयकाल की भांति है। शिशुकाल में मानव जब मधुरता में आनन्दता में, नम्रता में रमण करता है, तो वह ऊँचे मार्ग पर चला जाता है। यदि मध्यम में तेज देकर उसे अभिमान हो जाता है तो मानव जीवन की मर्यादा भंग हो जाती है। सूर्य को किसी भी काल में अभिमान नहीं होता। प्रातः काल में वह मधु होता है। मध्यम काल आता है, संसार को तेज देता है। उसकी किरण संसार में विस्तृत हो जाती है। व्यापक हो जाने के पश्चात् संसार में नवीन ज्योति आती है। सांयकाल को वृद्धपन आया, तो सूर्य अस्त हो जाता है। हे मानवयदि तुमने जीवन ! का मन्थन नहीं किया, तो सांयकाल आने के पश्चात्, अज्ञान अन्धकार छा जाएगा जैसे रात्रि होती है, तो अपने जीवन का बारम्बार मन्थन करना यह हमारा मानववाद का कर्त्तव्य है। हे मानवतू वा !स्तव में ऊँचा बनने की चेष्टा अपने हृदय में धारण कर क्योंकि आत्मा ही संसार में विचित्र है। इस आत्मा से मानव शरीर क्रियाशील है। इसके निकल जाने पर मानव शरीर शून्य हो जाता है। इसलिए इनको धारण करके अभिमान न करो। नम्रता, विचित्रता को पाने के लिए, मानव शरीर प्राप्त होता है, अभिमान और विडम्बना के लिए नहीं। यह मानव शरीर, यह ज्ञान और विज्ञान हमें परमात्मा के द्वार पर जाने के लिए प्राप्त होता है।

आज का हमारा व्याख्यान अब समाप्त होने जा रहा है। हे मानवजितने भी व्यापक ! विचार होते हैं उतना उनमें कर्त्तव्य और आत्मविश्वास होता है। जहाँ मानव में यह नहीं होता, वहीं मानव बारम्बार हताश होता रहता है। अब हमारा यह वाक्य समाप्त होने चला।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव हमारे कुछ शेष प्रश्न थे। !

बेटाअब समय नहीं रहा !, किसी काल में तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देंगे। समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। आज के वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि यह जो मानव शरीर है, यह एक प्रकार का यन्त्रालय है। कहीं मानव विज्ञान की चर्चा करता

है, कहीं मानवता की करता है, कहीं हताश हो जाता है। मानव के द्वारा एक आत्मा को न जानने से, मानव किलिष्ट से किलिष्ट विचार विनिमय करता रहता है। यदि आत्मविश्वास हो जाता है, दृढ़ता हो जाती है, तो यह जो यन्त्रों का समूह है, यह एक मार्ग में रमण करने लगता है। आस्था और आत्मविश्वास के ऊपर, मानव जीवन का कल्याण हो जाता है। अब यह वाक्य समाप्त। पूज्य महानन्द जीः धन्य हो !

अब वेद पाठ होगा। इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त।

२७ 26 10 1967 पुष्प 09 चार प्रकार की बुद्धियों का विवरण

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज पूर्व से जिन वेद मंत्रों का का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ कुछ ऐसा माना जाता है, कि सृष्टि के प्रारम्भ में, जब देवताओं को मन्थन किया गया, तो इस त्रि विद्या का जन्म हुआ, जिस विद्या में बेटासर्व !स्व ब्रह्माण्ड का ज्ञान विज्ञान ओत प्रोत है। जिस प्रकार माता के गर्भस्थल में बेटाबालक के हस्त !, ज्ञान और कर्म इन्द्रियां सर्वस्व शरीर माता के गर्भ में निहित होता है, इसी प्रकार जिसे यहाँ त्रि विद्या कहा जाता है ज्ञान, कर्म और उपासना इसमें ब्रह्माण्ड का ज्ञान विज्ञान ओत प्रोत होता है। परन्तु इसमें जो चतुर्थ कांड है उसे विज्ञान कांड कहा जाता है।

सृष्टि के आरम्भ में बेटाहमारे यहाँ अग्नि !, वायु, आदित्य और अंगिरा यह चारों ऋषि हुए। इन चारों ऋषियों के द्वारा, इस पवित्र विद्या का आगमन हुआ। हमारे यहाँ ऐसा कहा जाता है, कि चारों वेदों की शाखा 1127एं मानी जाती हैं। मेरे प्यारे! महानन्द जी ने मुझे एक समय वर्णन कराते हुए कहा कि वर्तमान काल में यह सब शाखाएं उपलब्ध नहीं। मैं महानन्द जी से यह कहा करता हूँ कि बेटामुझे इसका पूर्णत्व ! ज्ञान नहीं। हमारे यहाँ महर्षिपिप्पलाद हुए, रेवक, कात्यानी, दालभ्य, शेनकेतु, गौतम, कन्याम्, पनपेतु, शांगति, भृगु इत्यादि ऋषियों का जन्म हुआ। इन्हीं ऋषियों के द्वारा बेटायह संहिता !एं बनी। जैसा सोमकेतु है, ब्रहणी है और इसी प्रकार नाना संहिताएं। मैं बेटासंहिताओं का वर्णन नहीं करने जा रहा हूँ !म, केवल यह उच्चारण करने चला

हूँ, कि आज का हमारा जो वेद पाठ है, वह क्या उच्चारण कर रहा था। संहिताओं का परिचय इसलिए देता चला गया, क्योंकि आज मैंने महर्षि श्रृंगकेतु मुनि शाखा के कुछ मन्त्रों का पठन पाठन किया जिसमें बेटाबुद्धि का विवरण और नाना प्रकार की ! रश्मियों का वर्णन और ज्ञान और विज्ञान कावर्णन आता चला आ रहा था। आज हम उसके ऊपर विचार विनियम करते चले जाएं।

शिव रूप परमात्मा

आज के हमारे प्रारम्भ के वेदमन्त्रों में उस परमपिता परमात्मा शिव की याचना की जा रही थी। हमारे यहाँ शिव को बेटासंसार का रचयिता कहा जाता है। वह शिव ! काल का भी महाकाल कहा जाता है और पालन पोषण करने के लिए महादेव को देव कहा जाता है। तो मेरे प्यारेआज उस महादेव की आराधना करते हुए !भद्र पुरुषों !, हमारा हृदय गद् गद् हो रहा था, और मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था, कि जैसे परमपिता परमात्मा शिव आज हमें कोई नवीन सत्ता प्रदान कर रहे हों, जिस सत्ता के द्वारा मानव का जीवन विभोर हो जाता है। आज मैं अधिक व्याख्याता नहीं बनना चाहता, केवल यह वाक्य उच्चारण करने चला हूँ, कि आज हम भगवान शिव की आराधना कर रहे थे, कि जो संसार के रचयिता हैं। जो राजाओं का भी धिराज है। जिसके राष्ट्र में बेटाकिसी भी काल में मानव किसी भी प्रकार का पाप कर !ेगा, तो उस राष्ट्र के कर्मचारी क्या, राजा स्वयं उसको दृष्टिपात कर लेता है। मैंने बहुत पूर्व काल में वाक्य उच्चारण करते हुए कहा है कि बेटाहमारे यहाँ शिव होना चाहिए। ! हमारा जो जीवन है, हमारी जो मानवीयता है, वह वास्तव में शिव का संकल्प करने वाली होनी चाहिए। क्योंकि हमारा जीवन शिव के आधार पर रहता है। आज यदि हम यथार्थ संकल्पवादी बनते हैं, तो हमारे जीवन में मानवीयता के अंकुर ओत प्रोत हो जाते हैं।

मेरे प्यारेमहानन्द जी कहा करते हैं कि आप तो शिव और नाना प्रकार की ! आत्माओं की चर्चा करते रहते हैं। कहीं परमात्मा की चर्चा करते रहते हैं। परन्तु आधुनिक काल का जो समाज है, जो मानववाद है वह कहीं चन्द्रमा की यात्रा कर

रहा है, कहीं शुक्र में जा रहा है, तो कहीं मंगल में जाने के लिए उद्यत हो रहा है। मैं यह कहा करता हूँ बेटायह जो संसार है यह तो अग्नि के मुख में ही चला जा रहा ! है। यह आत्मा का ज्ञान न हो तो यह संसार स्वतःअग्नि के मुख में ही चला जा रहा है क्योंकि सर्वगुण संपन्न जो गुण है, वह मानव के द्वारा मानवत्व का ज्ञान होना चाहिए, जैसा मैंने बहुत पूर्व काल में कहा है कि संसार में बेटानाना प्रकार का ! निर्माण हो, सुन्दर सुन्दर मार्ग भी हों और विज्ञान कितना विशाल हो परन्तु जब तक मानवत्व का निर्माण न हो तो राष्ट्र में बेटाकिसी भी प्रकार का निर्माण सफल नहीं ! होता। इसलिए मेरे प्यारेआज मैं क्या वाक्य उच्चारण करने चला गया। !भद्र पुरुषों ! आज हम शिव की याचना करते चले जाएं जो देखो, राजाओं का भी महाराजा है। जो राजा पाप करता है इसको भी दृष्टिपात करने वाला वह शिव है। तो मेरे प्यारे ! आओ, आज हम तुम्हें कहाँ ले चलें? उस आँगन को चलो, जहाँ मानव आत्मा की चर्चा करता है, जहाँ विवेक मानव के समीप आने लगता है।

मेरे प्यारे भद्र !पुरुषोंमैं आज अधिक ! वाक्य नहीं प्रकट करना चाहता। हमारे यहाँ बेटानाना प्रकार की धेनु की चर्चा हो रही थी। हमारे यहाँ ऐसा कहा जाता है कि ! धेनु हमारे यहाँ बुद्धि को कहा जाता है। धेनु नाम पृथ्वी का भी है। परन्तु धेनु नाम वास्तव में बुद्धि को कहा जाता है तो सदैव दुही जाती है। कामधेनु उसे कहते हैं, जो बेटासदैव दुही जाती हो !, जैसे गऊ नाम का पशु होता है, उसको उसका बछड़ा दुहता है, मानव भी दुह लेता है। इसी प्रकार मुनिवरोंमानव बुद्धि का भी सदैव मन्थ ! करता करता रहता है, इसको दुहता रहता है। मैने बहुत पूर्वकाल में वाक्य प्रकट करते हुए कहा है कि जब तक हमारे यहाँ आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान में समता नहीं होगी, तब संसार में मानववाद किसी भी प्रकार ऊँचा नहीं बनेगा, और न राष्ट्रवाद ही ऊँचा बन सकेगा।

बुद्धि की चार प्रकार की धाराएँ

मुनिवरोंदो प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ परम्पराग !तों से माना जाता है। हमारे ऋषि मुनियों का दोनों प्रकार के विज्ञानों से सदैव अधिकार रहा है। मुझे स्मरण है बेटा !

महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों प्रकार के विज्ञान को जानते थे परन्तु देखो, जैसे महर्षि कुक्कुट मुनि थे, सोमकेतु थे और गृति थे और जैसे विश्वामित्र थे, यह सब सदैव दोनों प्रकार के विज्ञानवेत्ता बने रहते थे। दो प्रकार का विज्ञान क्या है? एक को कहते है, भौतिक विज्ञान और द्वितीय को कहते हैं आध्यात्मिक विज्ञान। जब यह दोनों विज्ञान मिलकर करके चलेंगे, तो बेटामानव का सदैव कल्याण होगा और यदि ! संसार में भौतिक विज्ञान है, आध्यात्मिक विज्ञान नहीं है, तो संसार में बेटाहम कोई ! हमारे !विज्ञानवेत्ता स्वीकार नहीं किया करते हैं। मैंने बहुत पूर्वकाल में कहा है बेटा यहाँ ऋषि मण्डल मौन हो जाते हैं क्योंकि तपस्या की आवश्यकता है। जब परम तत्त्व पर जाते हैं, तो देखो, परम तत्त्ववेत्ताओं ने कहा है कि दोनों प्रकार का विज्ञान क्या है? हमारे यहाँ मानव शरीर में देखो, इस बुद्धि की चार प्रकार की धाराएं होती हैं। घी नाम बुद्धि का है। यह जो कामधेनु है, गो है, यह सब बुद्धि के पर्यायवाची शब्द हैं। जब हम यह विचार विनियम करते हैं, कि चार प्रकार की धाराएं होती हैं। जैसे बेटा! गंगा की चार प्रकार की धाराएँ होती है इसी प्रकार यहाँ बुद्धि की भी चार धाराएं हैं सबसे प्रथम धारा का नाम बुद्धि कहलाया जाता है, द्वितीय का नाम मेघा कहलाया जाता है, तृतीय का नाम ऋतम्भरा कहा जाता है और चतुर्थ को प्रज्ञा कहते हैं। अब ऊँचा बनने के लिए यह चार प्रकार की धाराएं होती हैं। आज हम विचार विनियम करते चले जाएं कि बुद्धि का क्षेत्र कहाँ तक है?

बुद्धि का क्षेत्र

बेटाबुद्धि तो दृष्टिपात करती है। आज कहीं खनिज पदार्थों का दृष्टिपात किया है !, कहीं मानव नाना प्रकार के वृक्षों को और नाना देवकन्याओं को दार्शनिकता से यह दृश्यमान कर देती है। जैसे एक मानव ब्रह्मचारी है, एक ब्रह्मचारिणी है परन्तु दोनों एक साथ आँगन में विराजमान हैं बेटाजब वह सौन्दर्यता को दृष्टिपात करते हैं तो ! तूने जो !उन दोनों से एक दार्शनिक कहता है कि हे पुत्रीआज संसार के यह नाना सौन्दर्य को दृष्टिपात किया है यह तेरे द्वारा कौन सी शक्ति है? तो उत्तर मिलेगा, कि मेरे नेत्रों ने इस सौन्दर्य पदार्थ को दृष्टिपात किया परन्तु यह निर्णय होगा, कि यह जो

नेत्र है, जो जड़ पदार्थ हैं, इनमें दृष्टि करने की कहाँ तक शक्ति है, कहाँ तक क्षमता है। तो मेरी यह पुत्री दार्शनिकता से उत्तर देती है, कि नेत्रों के पिछले भाग में एक पीला पटल होता है। उसने दृष्टिपात किया है परन्तु दार्शनिक कहता है अरे, वह पीला पटल भी तो जड़ पदार्थ है। आगे वह कन्या कहती है, कि इस पीले पटल के पिछले विभाग में पञ्च तन्मात्रों का मण्डल है, उन पञ्चतन्मात्राओं से हम दृष्टिपात करते हैं। आगे दार्शनिक कहता है अरे, यह जो पञ्चतन्मात्राएं हैं यह भी जड़ पदार्थ हैं, इनमें दृष्टिपात करने की कहाँ क्षमता है। अब वह पुत्री कहती है, कि इन पञ्चतन्मात्राओं के पिछले विभाग में एक मनीराम विराजमान है। मनीराम ने दृष्टिपात किया। तो आगे दार्शनिक कहता है कि यह जो मन है, यह तो हम जो अन्न पाते हैं, नाना वनस्पतियां पान करते हैं इन्हीं अन्न से उत्पन्न होता है इसमें दृष्टिपात करने की कहाँ क्षमता है। तो वह पुत्री उत्तर देती है, हे देवइस मनीराम के पिछले भाग म !ें बुद्धि का मण्डल होता है और वही बुद्धि दृष्टिपात करने वाली निर्णय देती है। नाना प्रकार के पदार्थों का निर्णय देने वाली, वह कौन है? वह बुद्धि है। हमें बारम्बार विचार विनिमय का लेना चाहिए कि यह जो बुद्धि है, वास्तव में हमें निर्णय देती है। इस बुद्धि का जो क्षेत्र है, वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों और नाना सौन्दर्य, पृथ्वी के खनिज और नाना पदार्थों को दृष्टिपात करने तक बुद्धि का क्षेत्र रहता है।

मेघावी बुद्धिवेत्ता

आगे मेघावी बुद्धि का क्षेत्र कहाँ तक है? बेटापृथ्वी के गर्भ में जो नाना प्रकार की ! धातुएं हैं, खनिज हैं, समुद्र के तरंगों में भी जो प्राणी रमण करते हैं और नाना धातुएं है, इसी प्रकार वायुमण्डल में जो परमाणु है कुछ रजोगुणी है, कुछ तमोगुणी है, कुछ सतोगुणी हैं यह तीनों प्रकार के परमाणुओं को मन्थन करने वाली, मानो वाणी का मन्थन करने वाला, यह जो क्षेत्र है, यह महान उस मेघावी का कहलाया जाता है।

बेटामेघावी बुद्धिवेत्ता ही यह विचार विनिमय करता है !, कि यह जो वाणी है, इस वाणी में कितनी तरंगे उत्पन्न होती है। इस वाणी में एक मानव जो श्वास लेता है, जो

उसमें कितने परमाणुओं का निकास हो जाता है। वेद का ऋषि कहता है, मेघावी बुद्धि वाला कहता है कि जब हम श्वास लेते हैं, तो लगभग देखो, एक श्वास द्वारा 5, 89, 65, परमाणुओं का निकास हो जाता है। विज्ञानवेत्ता यह विचार विनिमय करता 552 है, कि यह जो श्वासों के द्वारा नाम प्रकार के परमाणुओं का निकास हो जाता है, इतने परमाणु यह वायु मण्डल से लेता है, और इतने वह एक श्वास के द्वारा त्याग देता है। तो वेद का आचार्य कहता है, मेघावी बुद्धिवादी कहता है, हमारी जो वाणी है, हमने जो वाक्य उच्चारण किया है, यह कितने सार्वभौम स्वरूप बन गया वाणी का। यह वाणी अब हम उच्चारण कर रहे हैं, यही वाणी बेटादेखो !,यन्त्रों के द्वारा प्रसारण ! करते हैं, रेनकेतु नाम के यन्त्रों का इसका प्रसारण करते हैं तो बेटादेखो !,इसके ! सम्बन्धी यन्त्रालय होते हैं, परन्तु उनमें सर्वस वाणी ओत प्रोत हो जाती है। तो मेरे प्यारेतू वाणी पर संयम कर !हे मानव !भद्र पुरुषों !, क्योंकि यह वाणी आज जो उच्चारण करता है, यह व्यर्थ नहीं होती। यह जो शब्द है, रजोगुणी हो, तमोगुणी हों, , यह सब अन्तरिक्ष में ओत प्रोत रहते हैं। यह मेघावी बुद्धिवादियों का कथन है क्योंकि मेघावी यह विचार जानते हैं कि इसका जो विस्तार है, इसकी जो ग्रहणता है वह कितनी विशालता को प्राप्त हो जाती है।

मुनिवरोंमैं वाक्य उच्चारण करते करते कुछ दूरी जा रहा हूँ कि हमारे श्रोत्रों में जो ! यह नाना दिशाओं से शब्द आते हैं, अग्राण आते हैं, देखो, गुनगुनता आती है, मानो ध्वनि आती है इन सबका मन्थन करना, नाना प्रकार के परमाणु, त्रिसेणु, महात्रिसेणु इन सब परमाणुओं को एकत्रित करने वाले विज्ञानवेत्ता, यह मेघावीवादी होते हैं। जो मानव परमाणुवाद में विचरण करता है वह मेघावी बुद्धि वाला होता है। वह यह जानता है, कि तेरा जो मस्तिष्क है, इसमें जो उपज होती है, वह मानो वायु के लिए होती है, अग्नि के लिए होती है, समुद्र के लिए होती है, मानो आदित्य के लिए होती है। नाना प्रकार के परमाणुओं को सुगठित करता रहता है। नाना प्रकार के यन्त्रों को निकलता रहता है। मुझे स्मरण है बेटाराजा रावण के पुत्र नाराय !न्तक की वार्त्ता। वह इतना वैज्ञानिक था, बेटावह नित्य प्रति यन्त्रों में विराजमान होकर चन्द्रमा की !

यात्रा करता था।

मंगल मण्डल में महाराजा अर्जुन

मुनिवरोंमुझे स्मरण है !, कि द्वापर का काल, जब महाराजा अर्जुन लगभग तीन वर्ष तक मंगल मण्डल में रहे। तो मंगल में रहने का अभिप्राय क्या, कि नाना प्रकार के विज्ञान जानने के लिए। इसी प्रकार अपने मानवत्व को विचित्र बनाने के लिए इस महान विज्ञान को जानने के लिए, हमें वास्तव में विचित्र बनाना है। उसके पश्चात् यह मेघावी क्षेत्र कहलाया जाता है। मेघावी क्षेत्र कहाँ तक है? कि चन्द्रलोक को जा सकता है, मंगल में पहुँच सकता है, देखो, बुद्ध में जा सकता है। अपने अपने क्रियाओं द्वारा यन्त्रों के द्वारा, नाना धातुओं के द्वारा यन्त्रों को स्थिर करके, वह इन लोकों में रमण कर सकता है। नाना प्रकार के विज्ञान को जानता हुआ, वह वायुयान और भी नाना प्रकार के सूक्ष्म से सूक्ष्म यन्त्रों को निकास कर सकता है। मैं बेटा ! विज्ञान की चर्चा तो प्रकट करने वहीं आया हूँ कि आज मैं यन्त्रों की, धातुओं का प्रसारण करूं। केवल वाक्य यह उच्चारण करने जा रह हूँ, कि बुद्धि का क्षेत्र और मेघावी का क्षेत्र कहाँ तक है? मेघावी का क्षेत्र बेटाद !ेखो,इस परमाणुवाद में रमण ! करता है। सूर्य में नाना प्रकार की किरण उत्पन्न होती हैं, उनमें किस किस प्रकार के परमाणु हैं? कितनी उसमें धाराएं हैं, किस किस प्रकार की धाराएं हैं। यह सब मेघावीवाद का क्षेत्र है।

ऋतम्भरा बुद्धि

मुनिवरोंअब बुद्धि और मेघावी के पश्चात् ऋतम्भरा पर आ जाओ। ऋतम्भरा वादी ! कौन होता है? जो बेटाज्ञान और विज्ञान के द्वारा इन सबको जानता हुआ ऋतम्भरा ! योगी प्रकृति पर अपना !के क्षेत्र में चला जाता है। ऋतम्भरा उसे कहते हैं जहाँ बेटा शासन कर लेता है। प्रकृति पर जब उस विवेकी पुरुष का शासन हो जाता है तो यह जो परमाणुवाद है इसकी वास्तविकता को जान लेता है। इसके पश्चात् यह ऋतम्भरा के क्षेत्र में चला जाता है। ऋतम्भरा का क्षेत्र क्या है? कि इस प्रकृति के ऊपर आत्मा यह शासन करने वाला हो जाता है, क्योंकि सर्वस जो प्रपञ्च है, वह मन और प्राण

के ऊपर है। मन और प्राणों को एकाग्र करके, यह आत्मा इनके ऊपर सवार हो जाता है। सवार होने के पश्चात् बेटा इसे ऋतम्भरा बुद्धि ही कहा जाता है। !

मुनिवरोंआगे चलकर वेद का ऋषि कहता है कि उसके पश्चात् मानव ऋतम्भरा में ! परमात्मा का कुछ कुछ अनुभव करने लगता है, क्योंकि प्रकृति पर शासन हो जाता है, प्रकृति चरणों में ओत प्रोत हो जाती है, आगे वह गृत बन जाता है और ऋतम्भरा को त्याग करके यह प्रज्ञावी क्षेत्र में चला जाता है। बुद्धि, मेधावी, ऋतम्भरा क्षेत्र में कौन जाता है? जो बेटा महान योगेश्वर होता है। जो !अपने अष्टचक्र और नौ द्वारों को जानता हुआ, इस मन और बुद्धि को एकाग्र करता हुआ, मानो देखो, वह मूलाधार से लेकर हृदय नाभिचक्र और कंठ इत्यादि त्रिवेणी के स्थान में रमण करता हुआ, आत्मा को ब्रह्मरन्ध्र में ले जाता है।

त्रिवेणी

मैंने बेटा बहुत पूर्वकाल में योग !के सम्बन्ध में कहा है कि मानव का जो यह आत्मा है जब यह मन और बुद्धि को एकाग्र करके इनके ऊपर विश्राम किया करता है तो सबसे प्रथम यह मूलाधार में जाता है। मूलाधार में नाना ग्रन्थियां होती हैं वह स्पष्ट होती चली जाती है। मूलाधार से अगला स्थान नाभिचक्र का होता है। नाभिचक्र को हमारे यहाँ सुकनीति यन्त्र भी कहते हैं, सुकनीति धारा भी कहते हैं। आगे रमण करता हुआ यह आत्मा नाभिचक्र से हृदयचक्र में जाता है तो गंगा, यमुना और सरस्वती में यह आत्मा स्नान भी और विश्राम भी करने लगता है। स्नान करता हुआ, यह आत्मा आगे चला जाता है। बेटावेद का ऋषि कहता है !, योग का आचार्य कहता है, गंगा, यमुना, सरस्वती क्या है? बेटाइगिंला !, पिंगला, सुषुम्ना यह तीन नाड़ियां कहलाई जाती हैं। यह तीन नाड़ियां हैं, जिनमें यह आत्मा रमण करता है। इसके पश्चात् जब यह आत्मा आगे रमण करता है तो हृदयचक्र को त्याग करके यह स्वाधिष्टचक्र में जाता है। वहाँ भी बेटा !8ग्रंथियों का समूह होता है 4, वह स्पष्ट होती चली जाती है। आगे चलकर के कंठ चक्र जाता है और घ्राणचक्र आता है। उसके पश्चात् त्रिवेणी स्थान आता है। त्रिवेणी किसे कहते हैं? त्रिवेणी उसे कहते हैं जहाँ बेटाईंगला !,

पिंगला, सुषुम्ना का मिलान होता है। जहाँ यह तीनों नाड़ियां एक स्थान पर मिलती हों, उसे त्रिवेणी कहते हैं। मुनिवरोंत्रिवेणी में स्नान करके आगे !, यह प्रयाग आँगनपुर में जाता है, जिसको हमारे यहाँ ब्रह्मरन्ध्र कहते हैं। वेद का ऋषि कहता है कि जब यह आत्मा ब्रह्मरन्ध्र में जाता है तो सहस्रों सूर्यों का प्रकाश भी उस प्रकाश के आगे न होने के तुल्य माना जाता है। मुनिवरोंउसके पश्चात् यह ब्रह्मरन्ध्र में जा करके !, यह रीढ़ के स्थान में प्रविष्ट हो जाता है। रीढ़ के स्थान में जाकर के एक कुण्डली होती है जब वह जागृत हो जाती है, तो उसके पश्चात् बेटाउस परमयोगी को प्रज्ञावी बुद्धि ! प्राप्त हो जाती है।

तो मुनिवरोंबुद्धि !, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञा यह चार प्रकार की मानव की बुद्धि की धाराएं होती हैं। यह चित्त की धारा कहो या मन और बुद्धि और प्राण गृतियों की धारा कहो, परन्तु यह चार प्रकार की धारा होती है। बुद्धि और मेघावी का जो क्षेत्र है, वह तो केवल भौतिक विज्ञान का क्षेत्र है और ऋतम्भरा और प्रज्ञावी यह दोनों आध्यात्मिक विज्ञान के क्षेत्र हैं, जब यह चार धाराएं मानव के द्वारा होती है, राष्ट्र के द्वारा होती हैं, समाज के द्वारा होती हैं तो उस काल में बेटाअध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों ! ऊँचे होते हैं, क्योंकि भौतिकवाद कहते हैं, परमाणुवाद को। परमाणुवाद है, वायुयान को बनाना, चन्द्रमा में जाना। नाना लोक लोकान्तरों में धातुओं का समागम करना, यह सब प्रकृति का क्षेत्र है, परन्तु जब मानव, ऋतम्भरा मे ऊपर जाता है तो वह आत्मा परमात्मा का क्षेत्र कहलाता है। जब दोनों प्रकार के विज्ञान की एकता होगी तो उस काल में यह संसार स्वर्गमय होगा और वहाँ मानव में अभिमान नहीं होगा। जब भौतिकवाद होता है, तो मानव को अभिमान होता है और जहाँ अभिमान होता है, वहीं मानव के द्वारा मृत्यु होती है। आध्यत्मिकवाद से विवेक होता है, और विवेक से नम्रता होता है। मुनिवरोंजहाँ नम्रता और विवेक होता है !, वहीं मानव का जीवन है और जहाँ अभिमान है वहीं देखो, मृत्यु अपने आसन पर विराजमान होती है।

हमारे यहाँ भौतिकवाद का निषेध नहीं माना गया है परन्तु इसलिए निषेध भाव, क्योंकि उसको पाने के पश्चात् मानव में अभिमान आ जाता है और जहाँ अभिमान

होता है, विडम्बना होती है, नाना प्रकार की अग्रति होती है, दूरिता आने लगती है, तो वहाँ बेटामानव के समीप मृत्यु आ जाता है। आत्मिक जो विज्ञान है !, उसको इसलिए श्रेष्ठ कहा है, जहाँ आत्मा का ज्ञान होता है, नम्रता और विवेक होता है। वहाँ मानव में अभिमान नहीं होता। जहाँ अभिमान नहीं होता, वहाँ नम्रता होती, शिष्टाचार होता है, सदाचार होता है, मानवीयता होती है। बेटावहाँ मृत्यु नहीं होती !, परन्तु मानव के समीप जीवन होता है।

भस्मासुर का वद्ध का कथानक

तो यह है बेटाआज का वाक्। मैं आज का वाक् कोई गम्भीर या अधिक विलम्भ ! नहीं करना चाहता हूँ। केवल यह वाक्य प्रकट करने जा रहा हूँ कि हम इन दोनां प्रकार के विज्ञानवेत्ता बने। यदि हमने माता को अपना लिया और पिता को त्याग दिया, तो बेटाहमे !ः एक समय मृत्यु के मुख में जाना होगा। आज मुझे एक वाक्य स्मरण आ गया, उसकी कल्पना कर लो, बेटावह कल्पना यह है !, कि एक समय महाराजा भस्मासुर के मन में ऐसी इच्छा जागृत हुई, कि मैं तपस्वी बनूं। जब महाराजा भस्मासुर के मन में ऐसी इच्छा उत्पन्न हुई, तो देवऋषि नारद मुनि के दर्शन हुए। नारदमुनि ने कहा कि तपस्वी बनो। वह शिव की तपस्या करने लगे। तपस्या में बेटाअधिक समय हो गया !, उसी समय भगवान शिव आ पहुंचे। भगवान शिव ने कहा कि अरे, भस्मासुरक्या चाहते हो !? उन्होंने कहा कि प्रभु मेरी कोई इच्छा नहीं और न मैं कुछ चाहता हूँ। उन्होंने कहा तब भी। तो भस्मासुर ने कहा कि भगवन ! आपके द्वारा जो कंगन है, इस कंगन को मुझे अर्पित कर दीजिए। अब भगवान शिव ने वह कंगन दे दिया। उस कंगन में यह विशेषता थी, कि यदि वह मस्तिष्क के ऊपर ले विभाग में हो और उच्चारण कर दिया जाएं, कि भस्म, तो वह मानव भस्म हो जाता।

महाराज शिव तो कैलाश पर जा पहुंचे और भस्मासुर को यह अभिमान आ गया जिसको भस्म करने की इच्छा होती, उसे कंगन द्वारा भस्म कर देते। एक समय वह भ्रमण करते हुए कैलाश पर जा पहुंचे। जब मानव के विनाश का समय आता है, तो

उसी प्रकार की बुद्धि बन जाती है, उसी प्रकार के कारण बन जाते हैं। भस्मासुर के जब विनाश का समय आया तो वह भ्रमण करते हुए कैलाश पर जा पहुंचे। माता पार्वती के दर्शन करते ही, पार्वती पर मोहित हो गएं और मोहित हो करके, महाराजा शिव से कहा कि या तो मुझे पार्वती को अर्पित करो, अन्यथा इस कंगन से मैं आपको भी भस्म कर दूंगा। अब महाराजा शिव ने यह विचारा, कि यह तो एक मर्यादा का उल्लंघन होने चला, क्या करना चाहिए, उसी काल में उन्होंने कहा कि अरे, भस्मासुर मुझे कुछ समय प्रदान किया जाएं। उन्होंने कहा कि बहुत अच्छा। !

समय लेकर महाराज शिव कैलाश को त्याग करके बेटाब्रह् !मा के द्वारा जा पहुंचे। महाराज ब्रह्मा ने उनका बड़ा आदर किया और नमस्कार करके बोले कि कहिए भगवनआज आपने कैसे कष्ट किया है !? कैसे आपने इस आसन को पवित्र किया है। उस समय महाराज शिव ने कहा कि हे भगवनमहाराज भस्मासुर पार्वती को ! अपनाना चाहता है, हमें भस्म करना चाहता है, तो हे भगवनअब क्या करें !? यह तो मर्यादा का विनाश होने चला। उस समय ब्रह्मा बोले कि महाराजयह आपका विषय ! है, कि इसको हम नहीं जानते।

अब महाराजा शिव उस आसन को त्याग करके विष्णु के द्वार जा पहुंचे। विष्णु ने उनका बड़ा आदर किया। नमस्कार करके बोले कि भगवनआपने कैसे इस आसन ! मैं तो इसलिए आ पहुंचा हूँ क्योंकि वह !को पवित्र किया। उन्होंने कहा कि भगवन जो भस्मासुर है, वह पार्वती को अपनाना चाहता है, और हमें भस्म करना चाहता है, इसलिए आपके समीप आया हूँ। आप हमारी रक्षा करो। उस समय विष्णु ने कहा कि भगवनयह विषय आपका ! है, हम इस विषय को नहीं जानते।

बेटावह वहाँ से भ्रमण करते हुए इन्द्र के द्वार जा पहुंचे। इन्द्र ने भी यही उत्तर ! दिया। अन्त में जब सबसे निरूत्तर हो गएं तो भ्रमण करते हुए कैलाश पर आ गए। पार्वती से कहा कि देवीअब क्या करना चाहि !?। यह तो मार्यादा का विनाश होने चला है। यदि मर्यादा का विनाश हो गया तो देवी हमारा जीवन तो व्यर्थ हो जाएगा। उस समय पार्वती ने कहा कि प्रभुयदि आप मेरे वाक्य को स्वीकार कर लें !, तो मैं

आपको कुछ अग्रित कर सकती हूँ। महाराजा शिव ने कहा कि देवीउच्चारण करो। ! मेरा और भ !देवी ने कहा कि महाराजस्मासुर का नृत्य करा दीजिए। जब हमारा दोनों का नृत्य होगा, तो जहाँ मेरा भुज जाएगा, वहीं भस्मासुर की। जब भस्मासुर का भुज मस्तिष्क के ऊपरले विभाग में जाएगा, तो इस कंगन से भस्मासुर स्वयं नष्ट हो जाएगा। माता पार्वती के इस वाक्य को महाराज शिव ने स्वीकार कर लिया। अब महाराज शिव ने भस्मासुर से कहा कि हे भस्मासुरतुम पार्वती के सहित नृत्य क !रो, भस्मासुर मग्न होकर बोला कि बहुत सुन्दर। माता पार्वती और भस्मासुर दोनों का नृत्य होने लगा। जब बेटानृत्य होने लगा !, तो जहाँ माता का भुज जाता, वहीं भस्मासुर का जाता। भस्मासुर का भुज जब मस्तिष्क के ऊपरले विभाग में पहुंचा, तो बेटाभस्मासुर स्वयं कंगन से भस्म हो गया। तो मर्यादा की रक्षा हो गई। माता ! शिव ने कहा कि देवी बहुत सुन्दर। !पार्वती ने कहा कहिए भगवन

तो मेरे प्यारेइस वाक्य का अभिप्राय क्या है !भद्र पुरुषो !? मुनिवरोंभस्मासु !र वही होता है, जो संसार में अभिमानी होता है। बेटाआज भौतिक विज्ञानवेत्ता !, जो समाज होता है, जिसमें अणु, महाअणु, त्रिसेणु इत्यादि नाना प्रकार के कंगन रूपी यन्त्र एकत्रित किए जाते हैं जैसे अग्नि अस्त्र है, कहीं ब्रह्म अस्त्र हैं तो वहाँ आत्मा का ज्ञान नहीं होता, वह केवल प्रकृति से नाना कणों को एकत्रित करता है, नाना मंगन रूपी यन्त्रों को बनाता है और परमात्मा शिव को नष्ट करना चाहता है तो उस काल में जब मर्यादा का उल्लंघन होता है, तो माता पार्वती का नृत्य होता है, और नृत्य होकर के यह जो भौतिक विज्ञानवेत्ता समाज है, यह जो परमाणुवाद का समाज है यह स्वयं उस भयंकर अग्नि में भस्म हो जाता है क्योंकि पार्वती का तो नृत्य होता ही है। पार्वती नाम प्रकृति को कहा जाता है। शिव नाम परमात्मा को कहा जाता है और भौतिक विज्ञानवेत्ता में अब अभिमान हो जाता है, तो अभिमान को बेटा हमारे !यहाँ भस्मासुर कहते हैं।

तो मेरे प्यारेमैं आज अधिक चर्चा तो प्रकट करने जा रहा हूँ। अब मैं !भद्र पुरुषों ! अपना वाक्य समाप्त करने जा रहा हूँ। आज के वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि हम

दोनों प्रकार के विज्ञानवेत्ता बनें। अध्यात्मिक विज्ञान हो, तो भौतिक विज्ञान भी हो और भौतिक विज्ञान हो, तो अध्यात्मिकवाद भी हो। इसी से हमारा जीवन, हमारा मानवता ऊँची से ऊँची बनती रहती है। आज का हमारा यह वाक्य अब समाप्त होने चला। कल समय मिलेगा, तो बेटामैं इससे आगे की शेष चर्चाएं कल करूंगा। आज के ! वाक्यों का अभिप्राय यह है, कि हे मानवमहाराजा शिव की याचना करते रहो। शिव ! किसे कहते हैं? शिव नाम परमात्मा का है, शिव नाम ब्रह्मज्ञान का है और मुनिवरों ! देखो,इसी से हमारा कल्याण होगा। आज का यह वाक्य समाप्त। अब वेदों का पाठ ! होगा इसके पश्चात् वाक्य समाप्त हो जाएगा।

२८ 01 03 1968 पुष्प 09 मानव शरीर निर्माण गृह निर्माण

देखो, मुनिवरोंआज हम तुम्हारे समक्ष !, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे कि वह भी प्रतीत हो गया आज से पूर्व जिन वेद मन्त्रों का पाठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परगातों के आधारित कुछ मनोहर वेद गान होता है जिसे हमारे यहाँ आर्ष पद्धति कहा जाता है, जिसमें वृद्धपन नहीं आता, उसमें सदैव नवीनता रहती है।

हमें आचार्य जनों से प्राप्त होता है कि इस वेद की त्रयी विद्या की उत्पत्ति सृष्टि के प्रारम्भ से तीन देवताओं की मानी जाती है। तीन देवताओं का कारण कौन? वेद का ऋषि कहता है कि उसका कारण भी ब्रह्म है। आज मैं इस विषय को अधिक गम्भीर नहीं बनाना चाहता। महानन्द जी के भिन्न भिन्न विचार चलते रहते हैं, इनकी कुछ प्रेरणाएं प्राप्त होती रहती हैं। आज हमें क्या उच्चारण करना है उस सम्बन्ध में भी प्रकाश देना है। उससे पूर्व कुछ वेदों की त्रयी विद्या के सम्बन्ध में अपने विचार उच्चारण करने आ पहुंचे। उन विचारों को अधिक नहीं लेना चाहता। वास्तव में हमारा जो जीवन है वह वेद के प्रकाश के निकट है। यदि मानव के जीवन में प्रकाश न रहे अन्धकार छा जाएं तो इसी त्रयी विद्या से और उस प्रभु से बहुत दूर रहता है।

अज्ञान अंधकार किसे कहते हैं? जब मानव अपने पन को नहीं जानता, अपनी मौलिकता को नहीं जानता। जानता हुआ भी कुमार्ग पर चला जाता है तो वह मानव

वेद को जानता हुआ भी उससे बहुत दूर रहता है क्योंकि प्रकाश उसके निकट रहता है परन्तु प्रकाश को त्याग करके वह अंधकार के मार्ग को अपनाता है। परमात्मा की इस अनुपम सृष्टि में नाना प्रकार की विद्यायें है। मानव उन पर अनुसन्धान करता रहता है और अंत में शान्त हो जाता है। जैसे प्रभु अनन्त है इसी प्रकार उसकी रचना, उसकी महानता भी अनन्त है परन्तु उस प्रभु की महानता से बहुत सूक्ष्म रहते हैं।

मेरे प्यारेहम प्रभु की उस महान रचना का वर्णन करते चले जाएं। बहुत !भद्र पुरुषों ! पूर्व ऐसा कहा था कि इस मानव शरीर का निर्माण वेत्ता कितना जीवन महान और विचित्र है। किन किन वस्तुओं से जीवन का निर्माण होता है? वह निर्माण वेत्ता कहाँ रहता है? जिन परमाणुओं से निर्माण होता है वह रमाणु कहाँ रहते हैं और कितने प्रकार के परमाणु होते हैं?

मुनिवरोंएक समय श्वेतकेतु और रेवक मुनि महाराज महर्षि भृगु जी के आश्रम में ! हम यह जानना चाहते हैं कि !पहुंचे और उनसे नाना प्रश्न किए और कहा कि प्रभु जब हमारा यह मानव शरीर नहीं था तो रचना से पूर्व यह परमाणु जिनसे मानव जीवन की रचना हुई है कहाँ थे? उस भृगु जी ने कहा की रज, तम और सत्य यह तीन प्रकार के परमाणुओं से इस मानव शरीर की रचना होती है। ऋषि ने कहा कि यदि यह रचना तीनों गुणों से होती है तो जब यह मानव शरीर इस रूप में नहीं था तो इससे पूर्व यह कहाँ था? कहाँ से यह परमाणु आये?

भाईमाता के जरायुज में !, गर्भ में थे। माता के गर्भस्थल में बालक पनप रहा था और परमाणु उसी में सुगठित हो रहे थे। सूक्ष्म परमाणु थे।

उस समय रेवक ने कहा कि प्रभु मैं यह जानना चाहता हूँ कि जब माता के गर्भ में ! नहीं थे तो उससे पूर्व कहाँ थे? ऋषि ने कहा कि उससे पूर्व परमाणु माता पिता के रज और वीर्य में थे। उन्हीं एक बिन्दु से मानव शरीर की रचना होती है। रेवक ने कहा कि प्रभुजब वह इस रूप में नहीं थे तो उससे पूर्व यह परमाणु कहाँ थे !? ऋषि ने कहा कि जब यह परमाणु इस रूप में नहीं थे तो यह कुछ अन्न में थे, वनस्पतियों

में विराजमान थे। तो रेवक ने कहा कि प्रभुजब अन्न और वनस्पतियों में नहीं थे तो ! उससे पूर्व कहाँ थे? ऋषि ने कहा कि कृषक भूमि में ललाहित हो रहे थे। उसी में आनन्द ले रहे थे। रेवक ने कहा कि जब कृषक के भूमि में नहीं थे तो वे उससे पूर्व कहाँ थे? उससे पूर्व यह कुछ चन्द्रमा की कान्ती में, कुछ सूर्य की किरणों में थे कुछ वायु में रमण रहे थे, कुछ अग्नि में थे, कुछ परमाणु पृथ्वी में और जल में बिखरे हुए थे। इनका सुगठित होना ही तो प्रभुकी एक महान देन है। आज हम प्रभु को अपने ! से दूर कैसे कर सकते हैं। वह प्रभु हमसे दूर नहीं हो सकता।

जब हम इस परमाणुवाद पर जाते हैं, मनुष्य के शरीर की रचना पर जाते हैं तो हमें ऐसा प्रतीत होने लगता है कि प्रभु कितना विचित्र है जिसने इन परमाणुओं को कहाँ कहाँ से सुगठित किया है। कुछ परमाणु वायु में भ्रमण कर रहे थे, कुछ अग्नि में, कुछ जल में। प्रभु की रचना के द्वारा वह सुगठित होते हैं। अन्न की उत्पत्ति होती है। माता पिता अन्न वनस्पतियों का पान करते हैं। उसी से रज वीर्य उत्पन्न होता है और माता के गर्भ में एक बिन्दु जाने से ही इस मानव शरीर की रचना हो गई। उन्हीं परमाणुओं से मस्तिष्क, हृदय और सर्वस्व शरीर बन गया।

मेरे भद्र पुरुषोंप्रभु ने नाना परमाणुओं को लेकर जो वह एक भवन बनाया है इसका ! निरक्षण करते चले जाएं और इसमें प्रविष्ट होते चले जाएं कैसा सुन्दर गृह है जिसमें आत्मा विराजमान है। कितनी सुन्दर लेपन है। आज मानव एक सुन्दर सा भवन बनाता है उसी में उसे अभिमान आ जाता है उस प्रभु का दृष्टिपात करो जिसने ऐसा सुन्दर लेपन किया, इस आत्मा के लिए ऐसा सुन्दर भवन बनाया जिसका कोई प्रमाण नहीं। यदि यह आत्मा इस शरीर में न रहेगा तो इस मानव शरीर का निर्माण व्यर्थ हो जाएगा। यह आत्मा अपने मन बुद्धि द्वारा विचार शीलता में इतना मग्न हो जाता है कि इन दसों इन्द्रियों के ऊपर स्यमी बन जाता है। संसार में गृह उसी काल में सुरक्षित रह सकता है जब गृह वता संयमी होता है। यदि स्यमी नहीं होता तो वह गृह व्यर्थ हो जाता है। जैसे भौतिकवाद में सामान्यवाद में गृह पत्नी, गृह स्वामी अपने गार पथ्य नाम की अग्नि की पूजा नहीं करते तो वह गृह अथवा परमाणुओं से परिपक्व

हो जाते हैं। वहाँ महान पुरुषों का आगमन और उनके विचार भी अशुद्ध हो जाते हैं। इसलिए मानव के शरीर में विचारों का यज्ञ नहीं होता, विचारों की सामग्री नहीं होती और उसकी आत्मा रूपी शरीर में यज्ञशाला में आहुति नहीं दी जाती वह मानव जीवन भी व्यर्थ हो जाता है।

हमारे मानव शरीर के लिए बेटाइस गृह का निर्माणवेत्ता ने इसके लिए दस पात्र ! बनायें हैं। कार्य करने के लिए पांच ज्ञान इन्द्रियों और पांच कर्म इन्द्रियां। आज वाणी का क्या कार्य है? चक्षुओं का क्या कार्य है? श्रोण, घ्राण इत्यादि का क्या कार्य है? इनके विषय भिन्न होते हैं परन्तु जब इन महान पात्रों को एकाग्रह कर लिया जाता है, इनके विषयों की सामग्री बना ली जाती है और यज्ञ वेदी में जब यह आहुति दी जाती है तो यह आत्मा जो शरीर में विराजमान होने वाला है प्रभु के आँगन में चला जाता है। उसे हमारे यहाँ मुक्ति कहते हैं।

मेरे प्यारेमहानन्द जी मुझे प्रेरणा देते चले जा रहे थे कि !मेरे प्यारे !भद्र पुरुषों ! आज गृह निर्माण के विषय में कोई वाक्य क्यों उच्चारण करते। बहुत समय हो गया है जब आपने गृह निर्माण के सम्बन्ध में उच्चारण किया था। गृह में प्रविष्ट होने का कोई वाक्य उच्चारण करो। बेटामैं यह कहा करता हूँ कि गृह निर्माण और गृह प्रविष्ट होना ! चाहिए परन्तु उन गृहों में धर्म होना चाहिए। यदि धर्म नहीं होगा तो कुछ काल के पश्चात् वह गृह व्यर्थ हो जाएगा। जहाँ गृह में पति और पत्नी दोनों विराजमान होकर सुन्दर यज्ञ, सुन्दर विचार और महान कार्यों के लिए प्रेरित होते रहें, सुन्दर योजनाएं बनाते रहें। जब इस प्रकार मानव विचारों में मानवीयता लाता है, विचित्रता लाता है तो यह निश्चित हो जाता है कि उस गृह में निवास करने वाले दीर्घ आयु वाले होते हैं। सहस्त्रों वर्षों की आयु व्यतीत करके सुख पूर्वक अपने आसन को चले जाते हैं।

यह जो सारा ब्रह्माण्ड है यह किसी रचना से रचा गया है? उस प्रभु की रचना से और उस प्रभु ने ही कितनी सुन्दर रचना की इस मानव शरीर रूपी भवन में रहने वाले प्राणी की। इस भवन में विराजमान हो करके जैसे भी प्राणी कल्पना करते हैं उस भवन में बेटावही वस्तु उसके लिए प्राप्त होने लगती है। कितना सुन्दर भवन है। !

यह सर्वस्व जो ब्रह्माण्ड है जीवन का आधार है परन्तु यह सब उस प्रभु का रचाया हुआ सुन्दर भवन है। जिस प्रकार एक गृह पति और गृह पत्नी सुन्दर भवन का निर्माण करते हैं उसमें वास करते हैं इसी प्रकार वह प्रभु कितना सुन्दर है कि उस प्रभु ने गृह निर्माण किया और गृह के कण कण में समाहित हो रहा है। इसी प्रकार जो गृह में प्रविष्ट होने वाले यज्ञमान और उनकी पत्नी है उनके हृदयों में यह भावना हो कि हमारा जो गृह है वह केवल धर्मज्ञ है, ऊचा कार्य करने के लिए गृह का निर्माण किया है, गृह में हम प्रविष्ट हुए हैं। बेटामैं हृदय से चाहता हूँ कि ऐसे ! यज्ञमानों की जो कामनाएं हैं वह सदा सत्य और महान हों और उनकी आयु दीर्घ हो। संसार में आपना एक पथ दर्शाते चले जाएं जिससे उनकी महानता दार्शनिक होती चली जाएं।

बेटातुमने कहा है कि आज हम गृह में प !्रविष्ट होने आ पहुंचे हैं परन्तु इस गृह के कण कण में धर्म और महानता होनी चाहिए। यह माज, यह मानववाद गृहों से ऊँचा बनता है यह जितना मानववाद, समाजवाद, राष्ट्रवाद यह सर्वस्व विश्व संस्कारों में निहित हो रहा है। संस्कार ऊँचे होने चाहिए, कल्पना ऊँची होनी चाहिए, विलक्षण होनी चाहिए, जिससे मानववाद ऊँचा बनता चला जाएं। हम ऊँचे गृहों में प्रविष्ट होते चले जाएं। यह सदैव हमारी कामना रहती है। इन गृहों में ऋषि सी वास करते हैं, मानव भी वास करते हैं दैत्य प्रकृति के भी वास करते हैं, परन्तु उस प्रभु की रचना को देखो, जिस भवन में मानव वास करते हैं, जो इच्छा करते हैं प्रभु वही प्रदान कर देते हैं। कितनी सुन्दरता है। बेटाउस महानता में आओ। आज हम एक वार्त्ता प्रकट ! कराते चले जाएं जो मैंने कई काल में प्रकट भी की है। आज भी समय मुझे आज्ञा दे रहा है।

मुनिवरोंवाक्य उच्चारण करने का अभि !प्राय यह है कि यह जो प्रभु ने एक सुन्दर गृह का निर्माण किया है हम प्राणी इसमें विराजमान हैं यह संसार, यह विश्व, यह गृ इस प्रकार का कल्प वृक्ष कहलाया जाता है। इसमें ऊँचे विचार लाने की आवश्यकता है जब ऊँचे विचारों के यज्ञ, भौतिक सुगन्धि के यज्ञ होते रहते हैं तो गृह पति और गृह

पत्नी दोनों ही कुछ काल के पश्चात् महान पुरुष हो जाते हैं। आज मैं अधिक चर्चा न प्रकट करता हुआ केवल यह वाक्य कि हम गृहों से प्रविष्ट होते रहें परन्तु उनमें धर्म और अपनी मर्यादा से दूर न हो जाएं। हमारी मार्यादा ज्यों की त्यों होनी चाहिए यज्ञों की ध्वनि होती रहे जिससे गृह में प्रविष्ट होने वाले महान पवित्रता को प्राप्त होते चले जाएं। बेटातुम्हारे कथानुसार जो भी यज्ञमान पत्नी सहित गृह में प्रविष्ट हों उनकी ! दीर्घ आयु हो, अपने धर्म और मर्यादा को न त्यागे। यह हमारा एक सुन्दर आशीर्वाद के रूप में कहो तुम्हारे कथानुसार ऐसे विचार आते रहते हैं।

बेटाआज का यह वाक्य समाप्त होने चला। आज के इन वाक्यों का अभिप्राय यह है ! कि हम मानव जीवन की रचना और प्रभु की महानता को किसी भी काल में न त्यागे क्योंकि वह प्रभु महान है उसकी रचना भी महान है। जैसे प्रभु अनन्त हे ै उसी रचना भी अनन्त है। कोई मानव कहे कि प्रभु की सर्वस्व महानता का वर्णन करता हूँ तो यह उसकी वाणी से दूरी है। हम अपने को संयमी बनाते हुए संसार सागर से पार होते रहें। यह आज का वाक् समाप्त होने चला। अब शेष चचायें कल प्रकट करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा।

२९ 02 03 1968 पुष्प 09 ग्रीन पार्क में दिया हुआ प्रवचन

कल हमने सूक्ष्म रूपों से मानव की रचना का वर्ण किया कि मानव की रचना का जो भौतिक तत्त्व है वह कहाँ रहता है। जिन तत्त्वों से लेपन होता है, जिन तत्त्वों से वाणी बनती है, जिन तत्त्वों से घ्राण बनती है, जिन तत्त्वों से उपस्थ बनता है, हस्त आदि बना करते हैं उनमें किन किन तत्त्वों का मिश्रण है। किन किन तत्त्वों की प्रधानता मानी जाती है। आज हम उस वैदिक विज्ञान को जानते चले जाएं कि हमें गम्भीरता में लेता चला जा रहा है। कल बेटामैंने अपने वाक्यों को यहाँ समाप्त किया था ! क ि जिस समय यह मानव परमाणु कृषक की भूमि में नहीं होते उससे पूर्व कहाँ होते हैं। वेद के ऋषि ने इसका उत्तर दिया कि वह जो परमाणु थे, जिन जिन तत्त्वों के थे उन तत्त्वों में रमण करते रहते हैं जिसे अग्नि के परमाणु, वायु के परमाणु, जल के परमाणु, पृथ्वी के परमाणु और जैसे अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले विशेष

परमाणु होते हैं। तो यह पञ्च भूतों के परमाणु हैं जो कहीं वायु क्षेत्र में, कहीं अग्नि क्षेत्र में, कहीं पृथ्वी में बिखरे हुए होते हैं जिनसे मानव शरीर का निर्माण होता है।

मेरे प्यारेमहानन्द जी कहा करते हैं कि मानव ! के शरीर का जो चमड़ी का लेपन होता है उस लेपन में कौन कौन से तत्त्व प्रधान होते हैं। वेद के ऋषि ने कहा है कि माता के गर्भ स्थल में जब यह परमाणु जाते हैं तो उन परमाणुओं में एक विशेषता होती है कि वहाँ जल प्रधान होता है, आपोधान होता है और पृथ्वी के कण भी उसमें विशेष कर होते हैं। उन्हीं परमाणुओ से उनकी विशेषज्ञताओं से मानव की सुन्दर से रचना होती है और उन्हीं से लेपन होता है। मुनिवरोंदेखो !, जैसे खनिज पदार्थों में जाते हैं तो सूर्य की वैश्णव नाम की जो किरण है, पतंजलि नाम की जो किरण और जहाँ दोनों किरणों का मिलान हुआ तीसरी व्याकरण नाम की किरण उस पर सम्बोधन करती है। जल का मिश्रण हो करके पृथ्वी के कणों को शुष्क बनाया जाता है। अग्नि के परमाणुओं को मिश्रण करके उसकी पात बनती है और पात बन करके पातजलि नाम की किरण शनैः शनैः जल को शुष्क कर देती है और वह जो सूक्ष्म परमाणु कुछ अग्नि के कुछ पृथ्वी के कुछ जल के उनका इस प्रकार स्वर्ण बन जाता है। इसी प्रकार माता के गर्भ स्थल में जब एक बिन्दु से रचना होती है तो बेटात्वचा का जो ! लेपन है वह कैसे होता है?

बेटामेरा प्रभु कितना विचित्र है !, कितना महान है वह मेरा देव। किस प्रकार लेपन करता है और उस लेपन में भी कई प्रकार के भेदन होते हैं। कहीं कहीं ऐसा परमाणुवाद आता है कि अग्नि तत्त्व प्रधान होता है, कहीं कहीं जल की प्रधानता होती है, कहीं कहीं वायु की प्रधानता होती है, कहीं पृथ्वी की प्रधानता होती है। उनमें नाना प्रधानता होने से त्वचा के जो रंग रूप हैं वह कहीं सुन्दर है, कहीं माध्यम है कहीं कुरूप है। कितनी सुन्दर रचना मेरे प्रभु की। बेटावाणी में भी दो तत्त्व कार्य करते ! हैं। कहीं चन्द्रमा करता है कहीं अग्नि करती है और माध्यम में मिश्रित होने वाला जल है आपो है। आपो के गर्भ में ही दोनों पार्थिव तत्त्वे प्रधान हैं। ग्रीवा है उसमें दो तत्त्व कार्य करते हैं। अग्रिण जो भाग है उसका सम्बन्ध पृथ्वी से है और आन्तिक भाग का

सम्बन्ध जल से माना जाता है। श्रोत के अग्रिण भाग का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से है और जो आन्तरिक भाग है उसका सम्बंध वायु से रहता है। इसी प्रकार घ्राण है उसके अग्रिण भाग का सम्बन्ध पृथ्वी से होता है और आन्तरिक भाग में वायु की प्रधानता मानी जाती है। इसी प्रकार आज हम एक तत्त्व में दो तत्त्वों को दृष्टिपात करते हैं तो हमें प्यारे प्रभु का जो इनका रचयिता है का स्मरण आने लगता है। माता के इन गर्भ स्थल में कुछ स्वर्ण होता है, कुछ घ्रोण होता है मानो चन्द्रीय होता है। नाना प्रकार की धातुओं का मिश्रण होकर के उसकी पात बनाई जाती है। पात बना करके माता के गर्भाशय में उस प्रभु ने ऐसा एक सुन्दर यन्त्र रचाया है कि गर्भ स्थापन होने के पश्चात् उस यन्त्र द्वारा सवतः ही उस बालक के शरीर पर लेपन हो जाता है।

लेपन में कौन सा तत्त्व प्रधान है? बेटाजल प्रधान और अग्नि उसे शुष्क बना देती ! है। पृथ्वी से उसका जल आता है और तीनों पदार्थों का मिश्रण हो करके लेपन हो जाता है वायु के द्वारा छिद्र होते हैं। अरे, यह कितनी सुंदर रचना है। मेरे प्यार प्रभु की। आज हम विचार विनिमय करते चले जाए। उस तामा के गर्भाष्य की सराहना करते चले जाए।

इस सुंदर रचना के साथ इस मानव शरीर में विराजमान होने वाला जो अंतरात्मा है उसे प्रेरणा कहाँ से प्राप्त होती है? माता के विचारों से उसके सुन्दर विचारों की रचना होती रहती है। बेटाकहीं सतो गुण प्रधान कहीं तमो गुण कहीं रजोगुण है। यह ! तीलनों गुण उनके सस्कार और विचारों के अनुसार मानव शरीर में वास कर जाते हैं। आज रचनात्मक के इस क्षेत्र में अधिक नहीं जाना चाहता केवल यदि उच्चारण करते चले जाएं कि हम अपने प्रभु का गुण गान गाते हुए उसकी रचना पर भी विचार विनिमय करते चले जाएं। मेरे प्यारेमहानन्द जी कहा करते हैं कि आधुनिक काल ! में किसी किसी स्थानों में ऐसा माना जाता है कि प्रभु कोई वस्तु नहीं है। यह रचना मन और प्राण के द्वारा होती रहती है। हम इस वाक्य को स्वीकार करते हैं परन्तु इन मन और प्राण की जो रचना है, उनकी जो मौलिकता है उनको भी जो केन्द्रित करने वाला है वह भी कोई वस्तु है। उसी को हमारे यहाँ प्रभु कहा जाता है।

बेटासंसार विचारों से !, भावनाओं से, चरित्र से ही ऊँचा बनता है। राष्ट्र हो, साधारण प्राणी हो, कोई भी मानव हो परन्तु जब तक उसकी रचना सुंदर नहीं, ईश्वरीय से गुन्थी नहीं होगी तो वह रचना मानव की अधूरी रहती है। उस रचना में अभिमान होता है। उस अभिमान से मानव के जो मौलिक विचार होते हैं, आंतरिक विचार होते है वे सब उस अभिमान से नष्ट भ्रष्ट होते रहते हैं। इसलिए हम जो भी कार्य करते हैं उसमें प्रभु की सुगठितता अनिवार्य होती है। यदि प्रभु की सुगठितता नहीं होगी तो मानव मृत्यु से बचने का प्रयत्न करता है, मानव मानव से भय होता है। नाना प्रकार से प्राणी से भयभीत रहता है। मेरी प्यारी माताएं कहीं यह विचारती रहती हैं कि मेरी पुत्री कहाँ चली गई, कहीं यह चिंताएं विराजमान रहती है कि मेरा पति कहा चला गया। पति को पत्नी की चिंता रहती है। अरे, यह क्यों है? इस पर भी विचार विनिमय करना है, अनुसन्धान करना है। जब इस पर अनुसन्धान होने लगता है तो मुझे यह वाक्य स्मरण आता रहता है। जिस समय महाराज युधिष्ठिर ने महाराजा यद्ब से कहा था कि संसार में सबसे महान आश्चर्य है तो उसका नाम मृत्यु है। क्योंकि मानव की मृत्यु आती है, शरीर को त्यागता है परन्तु जीवन भर इससे बचने का प्रयत्न करता रहता है। उसके पश्चात् भी मृत्यु का प्रहार हो ही जाता है।

मेरे प्यारेमैंने बहुत पूर्व काल में कहा था कि शरीर को त्यागने को मृत्यु !भद्र पुरुषों ! नहीं है। यह तो रूपांतर हो जाना है। संसार में मृत्यु उसको कहते है जो संसार में मानव कायर बन करके रहता है। कायर किसे कहते है? जो मानव अपने कर्त्तव्य का पालन करता, जिसका अपनी इन्द्रियों पर संयम नहीं होता। उसकी अपकीर्ति होती रहती है परिणाम यह होता है कि उस प्राणी के जो मौलिक तत्त्व होते है वह वायु में मिश्रित होते हैं और प्रभु जो दण्डों का स्वामी है वह प्राणी को दण्डित ही करता रहता है। वेद के ऋषि ने कहा है, आचार्यजनों ने कहा है कि हे मानवकि तू शरीर ! को त्यागने को मृत्यु उच्चारण न कर, इसको रूपांतर बेला कहते है, एक शरीर को त्याग दूसरे शरीर को प्राप्त होना कहा जाता है। मृत्यु उसे कहते हैं जो मानव कायरता के क्षेत्र में रहता है, काम क्रोध मद लोभ आदि में ललाहित रहता है और अभिमानी

बन करके रहता है, मानव मानव को अपमानित करने के लिए तत्पर रहता है। वह प्राणी इस संसार क्षेत्र में कायर होता है और एक समय वह मृत्यु का आहार बन जाता है जहाँ उसे किसी भी काल में प्रकाश प्रतीत नहीं होता अंधकार ही अंधकार में रमण करता रहता है।

आज के हमारे वाक्यों का अभिप्राय क्या? कर्त्तव्यवाद में रमण करते हुए यह विचार विनिमय हुआ कि धर्म क्या है और अधर्म क्या है? महर्षियों ने कहा है कि जैसे मेरी एक प्यारी सुदंर कन्या है। उसके सौन्दर्य को दृष्टिपात करने की मानव की इच्छा जाग्रत हुई। यदि हमें उस सौन्दर्यता को ग्रहण करते करते अशुद्ध विचारों से बिखर जाते हैं तो उस बिखर जाने का नाम अधर्म कहलाता है और यदि वह ज्योति ज्यों की ज्यों की त्यों नेत्रों में समाहित हो जाए तो वह बेटाहमारे यहाँ धर्म कहलाता है। ! हमारे अन्तरात्मा में जिस समय कार्य करने की महानता होती है, लज्जा शंका नहीं होती, अशुद्ध विचार नहीं होते तो वह कार्य धर्मज्ञ होता है। उससे सर्वस्व समाज पतित हो जाता है, राष्ट्रवाद में हानि हो जाती है, संसार क्षेत्र में हानि हो जाती है। कर्त्तव्यवाद उस काल में होता है जब प्रभु हमारे समीप रहता है और हमारे हृदय में यह आस्था होती है कि प्रभु तो हमारे द्वारा है आज हम कहाँ जा रह हैं। अकर्त्तव्यवाद में जा करके कही हृदय की गति तीव्र और विलक्षण बन रही है। ऋषि ने यह भी कहा है कि जिन कार्यों के करने में मानव के हृदय की गति तीव्र हो जाए वह कार्य अधर्म है। जिन कार्यों के करने में हृदय की गति मंद होती है, सामान्य होती है तानो वह कार्य तुम्हारा कर्त्तव्यवाद से निहित होता है।

मेरे प्यारेआओ हम प्रभु की महिमा का गुणान्गान करते हुए यह उच्चारण !भद्र पुरुषो ! करते हुए चले जाएं कि वह कितना महान है, कितने सुंदर गृह का निर्माण किया है। बालक के पनपने के लिए कितने सुंदर यन्त्र बनाए हैं। उस गृह को कहते है गर्भाशय जिसमें बालक पनपता है, लेपन होता है, विचार बनते हैं, रसना का निर्माण होता है, नाना इन्द्रियों का निमार्ण होता है, कितना सुदंर वह कलाकार है। उस महान देव की सीमा को अपने से दूरी नहीं करना चाहिए यदि हम प्रभु की महिमा को अपने से दूरी

करते हैं तो जानो कि हम अकर्त्तव्यवाद में जा रहे हैं और आगे न प्रति हमें प्रकाश प्राप्त होगा अन्यथा नहीं आज हम प्रभु की महिमा को विचारते रहें। कितना सुदंर लेपन है, कितने सुदंर यन्त्र मेरे प्रभु ने बनाए हैं। मानव के इस अस्थियों वाले शरीर में कितना सुंदर लेपन है, उस लेपन में भी कितनी विचित्रता है, बाल्यकाल में वह और होता है, आगे मध्यम काल में आता है तो और विलक्षणता आ जाती है। मृत्यु के द्वार में चला जाता है तो और विलक्षणता आ जाती है।

उच्चारण कर रहा था कि हे मानवतू इस शरी !र को त्यागने को मृत्यु न कह। इसको अनिवार्य त्यागना होगा। आज नहीं तो वृद्ध होने के पश्चात् त्यागोंगे। बाल्याकाल में त्यागा जा सकता है, युवा में त्यागा जा सकता है, वृद्धपन में त्यागा जा सकता है परन्तु जो कायरता तुमने की है उसको तुम किसी भी काल में नहीं त्याग सकते। हे मानवतू वास्तविक मृत्यु को जानने का प्रयत्न कर। मेरी प्यारी माता जब अपने पुत्र ! के लिए अपने से दूरी होते ही व्याकुल होती है, तुझे कष्ट होता है परन्तु ज्ञान और विवेक की दृष्टि से कष्ट नहीं होना चाहिए। संसार में मृत्यु किसी वस्तु की नहीं होती। जब आत्मा इस शरीर को त्यागता है तो आत्मा किसी काल में नष्ट नहीं होती। इस शरीर में जो तत्त्व हैं, जो परमाणु हैं वे अग्नि के मुखारविन्द में जाने के पश्चात उन्हीं तत्त्वों में मिश्रित हो जाते है। जल में प्रवाह होने पर भी वहीं रमण कर जाते हैं, वह परमाणु समाप्त नहीं होता। मानव जिस रूप में था उसका रूपांतर हो गया। आज हमें उस प्रकार का दृष्टिपात नहीं आता परन्तु प्रवृत्तियां और संस्कार जीवात्मा के साथ रहते हैं। यदि हम व्याकुल हों तो कौन सी वस्तु को दृष्टिपात करके व्याकुल हों व्याकुल होने का कोई मार्ग प्रतीत नहीं होता है। व्याकुलता कहाँ आती है? जहाँ मानव में विवेक न होकर अज्ञानता के अंकुर होते है। विवेक होना बहुत अनिवार्य है।

मुनिवरोंविवेक किसे कहते है !? जब माता अपने प्यारे पुत्र का लालन पालन करती है तो माता के विचारों में व्यापकता और धर्म होना चाहिए। माता के गर्भाशय में बालक के आते ही वह राष्ट्र की एक महान संपत्ति बन जाती है। उस पर माता का अधिकार नहीं होता। हे माताजब तू लोरियों का पान कराती है तो उस काल में !

नामकरण संस्कार से तो उसे तेरा बालक उच्चारण कर सकते हैं पर कर्त्तव्य वेदी पर वह तेरा बालक नहीं सर्वस्व राष्ट्र कर ही पुत्र कहलाता है। जिस समय माता के हृदय शान्ति और कर्त्तव्यवाद के अंकुर होते हैं तो उस माता को अज्ञानता नहीं आती वह सदैव अपने कार्यों में दक्ष रहती है, विचित्र रहती है कर्त्तव्यवाद में उसका धर्म निहित रहता है।

आज का हमारा वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्यों का अभिप्राय क्या कि जैसा मेरे प्यारेमहानन्द जी ने मुझे वर्णन कराया उस महान गृह प्रविष्ठता में ! विराजमान हैं जिस प्रकार प्रभु इस प्रकृति को, इस संसार को रचता है और उसके कण कण में निहित है। इसी प्रकार जो मानव जिस गृह में प्रविष्ट होता है, निर्माण करता है उस गृह में मानों यज्ञमान और उसकी पत्नी की भावनाएं गृह के कण कण में निहित होती हैं। जिस प्रकार मेरी प्यारी माता भोजन बनाती है तो माता के विचारों में यदि कायरता होती है तो वह कायरपन के अंकुर उस महान भोजन में प्रविष्ट हो जाते हैं। व्याकल होती है तो व्याकुलता के परमाणु भोजन में प्रविष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार जिन विचारों का द्रव्य होता है, जिन विचारों से निर्माण किया जाता है, हे यज्ञमानवह विचार तेरे गृह के कण कण में निहित होते है। इसलिए उसमें तेरी ! महानता होनी चाहिए जिससे तेरा गृह गृह रहे कुरगृह न बन जाए। महानन्द जी के कथानुसार हमारी यह इच्छा रहती है कि गृह में विराजमान रहने वालों की दीर्घ आयु होनी चाहिए। अज्ञानता के अंकुर न होकर केवल ज्ञान के अंकुर होने चाहिए। जिस प्रकार प्रभु निर्माण वेत्ता है मानव भी निर्माण वेत्ता है परन्तु प्रभु की रचना को दृष्टिपात करके मनुष्य अभिमान को दूर कर देता है और जो प्रभु को अपने से दूर कर देते हैं वह अभिमान में तल्लीन हो करके अपनी मानवता को नष्ट कर देता है। मानव को धर्मज्ञ बनना चाहिए। विचार विनिमय होना चाहिए और अपने कार्यों में सदैव दक्ष रहना चाहिए जिससे इस मानव समाज का उत्थान होता चला जाए। अब हमारा वाक्य समाप्त हुआ कल समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं होगीं। आज वेदों का पाठ होगा।

३० 03 03 1968 पुष्प 09 ग्रीनपार्क में दिया हुआ प्रवचन

मेरे प्यारेआज अब हम इस मानव जीवन के सम्बन्ध में पुनः से कुछ !भद्र पुरुषों ! उच्चारण करते चले जाएं। इस मानव शरीर का मेरे प्यारेप्रभु ने लेपन भी कर ! दिया। लेपन के पश्चात् इसका बाहरीय और आंतरिक रूप क्या है इसकी कुछ सूक्ष्म सी चर्चा प्रकट करना चाहता हूँ। परमाणुओं से मानव का शरीर बन गया, लेपन भी परमाणुओं से हो गया परन्तु इसका जो उत्थान है, बाहरीय और आंतरिक रूप है यह किस प्रकार और क्या है।

मेरे प्यारेआज के वेद पाठ में मन का बड़ा सुंदर वर्णन आ रहा था और !भद्र पुरुषों ! प्राणों का भी वर्णन आ रहा था। महर्षि पातंजली ने भी जब प्राणों पर अपनी लेखनी बद्ध की तो विचार आया कि इस प्राण और मन के अग्रणों में, इनके गर्भ में कोई तृतीय स्थान मुझे प्रतीत नहीं होता। इसके ऊपर ऋषि ने बहुत विचार विनिमय किया, टिप्पणी की और गम्भीरता में विचार विनिमय करते हुए ऐसा कहा कि जब मानव शरीर की रचना हो गई तो इसमें प्रवृत्तियाँ लाने के लिए विभाजन की आवश्यकता हुई। इस आत्मा की दो धाराएं चली जिन्हें हमारे यहाँ ज्ञान और प्रयत्न कहा जाता है। ज्ञान और प्रयत्न के द्वारा मानव शरीर का विकास होता रहता है। पतन भी इन्हीं के द्वारा होता रहता है।

वेद के ऋषि ने, आचार्यजनों ने कहा है कि जब ज्ञान और प्रयत्न दोनों आत्मा के गुणगान गाते चले जाए तो ज्ञान का प्रतिनिधि तो मन बन गया और प्रयत्न का प्रतिनिधि प्राण बन गया। जब मन और प्राण दोनों इस शरीर में सुचारू रूप से कार्य करने लगे तो अब मन को कार्य कल्पना की उत्पत्ति कर देना। ज्ञान के द्वारा कामना की उत्पत्ति करता रहता है। मानव में ज्ञान होगा तो ज्ञान से संसार का कुछ न कुछ कार्य करता रहेगा। कुछ भी नहीं तो तत्त्वों के सम्बन्ध में विचार विनिमय होने लगा, और भी नहीं तो दर्शन में चला जाएगा, और भी नहीं तो प्रभुके दिग्दर्शन करने ! लगेगा। ज्ञान के नाते इसका यह सम्बन्ध बन जाता है कि वह कामना उत्पन्न होना स्वाभिक हो जाता है।

सबसे प्रथम जब कामना उत्पन्न हुई तो यह जो प्राण है इसकी पांच प्रकार की धाराएं

बना दीं जिनको हमारे यहाँ प्राण, अपमान, उदान, समान और व्यान कहते हैं। यह पांच धाराएं बन जाती है। इस मनीराम ने इन पांचों प्राणों को कार्य भी अर्पित कर दिया। प्राण को कहा कि हे प्राणतुम नाभि चक्र से और घ्राण के द्वारा अन्तरिक्ष में ! से ऊँचे परमाणु लाओ और जो अशुद्ध परमाणु हैं उनको दूर ले जाओ। यदि कार्य प्राण को अर्पित कर दिया। अपान का सम्बन्ध पृथ्वी से हो गया तो यह जो गन्ध अग्रणिय है उसको त्यागना यह अपान का कार्य हो जाता है। व्यान का कैसा सुंदर कार्य कि मानव जो भी वाक्य उच्चारण करता है वह रसना द्वारा उच्चारण करता है क्योंकि रसना के पिछले विभाग में व्यान विराजमान है। व्यान के सम्बन्ध में कंठ से ऊपर मस्तिष्क का जो कार्य है वह सब व्यान का कहलाया जाता है। व्यान ही इस मानव शरीर में ज्ञान की उत्पत्ति करता है। सूक्ष्म सूक्ष्म धाराओं की उत्पत्ति होती रहती है। इसी व्यान के द्वारा ज्ञान की तरंगों को जाना जाता है। एक विवेकी पुरुष जो प्राणों पर संयम करने वाला है, वह वेद के वाक्य को जानता है कि अक्षण समय में ज्ञान की सहस्त्रों धाराएं उत्पन्न होती रहती है और धाराओं को क्या बनता रहता है यह सब कुछ कार्य इस मनीराम ने व्यान को अर्पित कर दिया। उदान उदर में रहने वाला है। जो भी अन्न इत्यादि पान करते हैं उस सबको पचा देता है, सुन्दर रस बना देता है और वह जो पांचवा सामान्य प्राण है उसे अर्पित कर देता है। यह सामान्य प्राण हमारे मानव शरीर से 82, 82, 10, नाड़ियों को रस प्राप्त करा देता है। 202

इस प्रकार जब यह कुछ कार्य हो गया अब एक सुन्दर भवन की रचना होने लगी। रचनाकार कौन है? ज्ञान के द्वारा जो महान मन है। अब मन और कामना उत्पन्न करता रहता है। भवन का निर्माण होने के पश्चात् इसमें गृह का प्रविश्ट होने लगा। कामना उत्पन्न होने लगी, उन कामनाओं के लिए पांच प्राण बना दिये। पांचों प्राणों से भी उसे शान्ति नहीं हुई। जब और अधिक कामनाएं हुई तो पांचों प्राणों के उपप्राण बन गएं जिनको हमारे यहाँ नाग, देवदत्त, धन्यज्य, किरकल और कुरू कहते हैं। मनीराम की कामना से यह पांच उपप्राण उत्पन्न हो गये। इनको कार्य अर्पित होने लगा जब मानव को क्रोध की मात्रा अधिक प्रबल हो जाती है तो वह जो नाग प्राण

है और मानव नाग के द्वारा जो विष अर्पित है उसे उगल देता है और अमृत को भस्म कर देता है। इसलिए क्रोध द्वारा मानव की अधिक से अधिक शक्ति नष्ट होती रहती है। इसलिए आचार्यों ने कहा है कि हे मानवतू क्रोध का पात्र न बन क्योंकि नाग ! जो प्राण विराजमान है उसको मनीराम ने ज्ञान द्वारा कार्य अर्पित किया है। आगे देवदत्त का सम्बन्ध व्यान से रहता है जो ज्ञान की धाराओंमें मिश्रित होता है। देवदत्त का सम्बन्ध शरीर में विराजमान होते हुए नाना लोक लोकान्तरों से होता है। धनञ्ज्य की जो सुगठितता है वह उदान से मानी गई है। उदान में भिन्न भिन्न कार्य करता है। कुरू का सम्बन्ध अपान से रहता है। इसकी व्याख्या विस्तार से तो किसी काल में ही करूंगा। आज तो केवल यह चर्चा करते चले जाएं कि इस मनीराम ने पांच प्राण और पांच उपप्राण बना दिये। इस प्राण के दस भाग हो गये। इस प्रकार इसको विभाजन कर दिया।

जब बेटाकामना सुचारू रूप से उत्पन्न हो गई तो इन प्राणों का कार्य इन्द्रियों द्वारा ! प्रारम्भ होने लगा। कहीं नेत्रों द्वारा दृष्टिपात करना, कहीं घ्राण द्वारा सुगन्धि को पान करना, कहीं श्रोत्रों द्वारा वाक् को श्रवण करना। वाक् का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से रहता है। घ्राण का सम्बन्ध पृथ्वी से रहता है, चक्षु का सम्बन्ध सूर्य से रहता है। इसी प्रकार एक विशाल बन करके सुन्दर रूप से निर्णायात्क गृह प्रविष्ट होने लगा। उसके निर्माण की जो चर्चायें थीं वह सुन्दरता से परणित होने लगी। आचार्यों ने कहा है कि इन्द्रियां बन जाने के पश्चात् कहीं घ्राण बन गया, कहीं भुज बन गये, सर्वस्व इन्द्रियां बन गई। इनको सबको कार्य अर्पित हो गया। चक्षुओं का दृष्टिपात करना, श्रोत्रों का कार्य वाक् ग्रहण करना घ्राण का कार्य सुगन्धि पान करना, त्वचा का कार्य स्पर्श होना। रसना का सम्बन्ध चन्द्रमा से रस का स्वाद लेना है इसी प्रकार ग्रीवा का मल को त्याग करना। यह सब सुगठितता उस महान मनीराम द्वारा इनको कार्य अर्पित हो गया, केवल ज्ञान के द्वारा।

इसी प्रकार आगे कामना उत्पन्न हुई और मन की शान्ति न हुई तो कामना और उत्पन्न हो गई। उस कामना का नाम हमारे यहाँ ऋषियों ने तृष्णा कहा है। जब तृष्णा

से मानव कार्य करने को चलता है तो यदि आज्ञा के अनुकूल कार्य होने लगा तो अभिमान की उत्पत्ति होती है और यदि आज्ञा से कार्य नहीं होता तो अपमान की उत्पत्ति हो जाती है मान और अपमान दोनों साथ साथ चले। अपमान के गर्भ में क्रोध होता है और मान के गर्भ में काम होता है। देखो, यह मानव का बाहरीय रूप बन गया। जहाँ आंतरिक रूप था वह केवल ज्ञान और प्रयत्न के रूप में था, आत्मा का स्वाभाविक गुण था। अब इस प्रकार सञ्चार रूप से इसकी बाहरी रूप बन गया। कहीं तृष्णा के रूप में क्योंकि कहीं मान है तो कहीं अपमान है। यह मानव का बाहरी स्वरूप बनता चला गया।

अब मनीराम ने बाहरीय रूप तो बना दिया परन्तु इसे यहाँ भी कोई शान्ति प्राप्त नहीं होती। यह विचारता है कि इस भौतिकवाद में, महान तृष्णावाद में, मान अपमान में मुझे कोई शान्ति प्राप्त नहीं होती तो अब मुझे क्या करना है? विचार विनिमय करता है और चाहता है कि मुझे कोई ब्रह्मवेत्ता प्राप्त हो जाएं और वही रूप बन जाएं जो मेरा किसी काल में था। उसे ब्रह्मवेत्ता की जिज्ञासा बनती रही है कि अब तू ब्रह्मवेत्ता के द्वारा चल जहाँ से तेरा विकास है जहाँ से तेरा इतना आंतरिक और बाहरिय रूप बना।

अब जब मानव आंतरिक रूप बनाना चाहता है, ब्रह्मावेत्ता बनाना चाहता है, विवेकी बनना चाहता है तो बेटासबसे प्रथम उसे मान अपमान को सामान्य विचारना होगा। ! उस काल में तृष्णा भी सूक्ष्म हो जाएगी। अब कामनाएं सूक्ष्म हो जाएगी और उन पर चिन्तन और मनन करने लगता है तो इन्द्रियों पर आ जाता है और इन्द्रियों के विषयों में व्यापकता ला देता है और उन सब विषयों की सामग्री बना ली जाती है और उन पांच उपप्राणों को एकाग्र किया जाता है तो इनकी आहूति प्राणों में सामूहिक हो जाती है तो अब वह पांच प्राण हो गएं और जब उसका वास्तविक रूप देखा तो केवल एक प्राण रूप रह जाता है जिसको हमारे यहाँ प्रयत्न कहा जाता है। मन और प्राण दोनों की संधि हो जाने का नाम ही मुक्ति कहा जाता है, उसी को मोक्ष कहते हैं। जब तक मन और प्राण की र्सिन्ध नहीं होती दोनों में विवाद रहता है और जब

तक दोनों का मिलान नहीं होता जब तक हम इस संसार में किसी वस्तु पर संयम नहीं कर सकते। आज ब्रह्मा की गोद में जाना चाहते हैं परन्तु उस काल तक नहीं होगा जब तक इन दोनों में मित्रता नहीं होगी। बेटाइस मन से प्रबल संसार में ! प्राण है।

हमारे यहाँ कहीं कहीं ऐसा कहा है कि इस मन के दो रूप हैं। एक सामान्य रूप है और एक विश्वेभान रूप है क्योंकि प्रकृति के गर्भ में, पृथ्वी के आँगन में जो विभाजनता प्रतीत होती है इसमें प्राण भी है और मन भी विराजमान है। यदि मन और प्राण नहीं रहेंगे तो उसी काल में यह जो विश्व संसार है यह सब समाप्त होता चला जाएगा। विभाजन कौन करता है? जिसमें ज्ञान होता है। ज्ञान का प्रतिनिधि मन है और मन जब विश्वेभान बन जाता है तो नाना लोक लोकान्तरों की रचना, उनका ज्ञान यह सब उस महान मन के द्वारा प्रतीत होने लगता है। सूक्ष्म सी भूमि में नाना प्रकार की वनस्पतियां अर्पित की जाती है परन्तु भिन्न भिन्न प्रकार का रस स्वाद है। अरे, इस रस का विभाजन कौन कर रहा है? उसमें उग्र होना सूक्ष्म होना यह तो प्राण की गति है और उसमें जो रस का विभाजन हो रहा है, विभाजन करने वाले को हमारे यहाँ मन कहा जाता है जिसे विश्वेभान मन कहते हैं। सर्वस्व ब्रह्माण्ड में विश्वेभान मन ही कार्य कर रहा है। जितना उसमें सञ्चारता, उग्र बनाना, गति करना यह प्राण की महत्वता और जो विभाजन है यह सब हमें मन की महिमा प्रतीत होती है।

आज हम प्राण और मन के ऊपर कितना अधिपथ्य कर सकते हैं, विकास अधिकार हो जाता है इस पर वास्तव में विचार विनिमय करते चले जाएं यही हमारा एक मौलिक और वास्तविक विचार माना जाता है। आज हम मन और प्राण दोनों को जानने का प्रयास करें। इसी से मानव मुक्ति को प्राप्त होता है। इस मन को न जानकर मानव नाना गढ़ेले में चला जाता है। नाना कारागारों में (भिन्न योनियों में) चला जाता है।

हे मानवतुम्हें आत्मिक शान्ति प्राप्त करनी है तो कैसे होगी !? जब तक मन और प्राण

को नहीं जाना जाएगा तब तक आत्मिक शान्ति किसी भी काल में प्राप्त नहीं हो सकेगी। मानव का जीवन तो मन और प्राण से सुरक्षित रहता है। इसलिए हमारे आचार्यों ने कहा है कि जो विशेष मन और प्राण है जिसको हम ज्ञान और प्रयत्न कहते हैं आत्मा के स्वाभाविक गुण हैं और गुणों से गुणी कदापि दूर नहीं होता। जितने लोक लोकान्तर स्वाभाविक हैं यह सब प्राण की महिमा पर आधारित है, जितने प्राणों का विभाजन हो रहा है वह सब मन की महिमा है। दार्शनिकों ने कहा है कि जब हम यन्त्रों द्वारा परमाणुवाद पर दृष्टिपात करते हैं तो जैसे सूर्य मण्डल है उसके अंतर्गत लाखों लोक लोकान्तर भ्रमण करते हैं। इसी प्रकार एक रेणु इतना शक्तिशाली परमाणु होता है कि उसके अंतर्गत 1, 73, 52, परमाणु उसके 500 आँगन में भ्रमण प्रतीत हो रहा है यह सब प्राण और मन की महिमा प्रतीत होती चली जा रही है।

आज मैं अधिक चर्चा न प्रकट करता हुआ केवल यह कि आज हम प्रभु की महानता को जानते हुए ज्ञान और प्रयत्न दोनों को जानने का प्रयास करें जिससे हम प्रभु को अच्छी प्रकार जान सकें। आज हम अपनी आंतरिक भावनाओं द्वारा मोक्ष चाहते हैं जो हमें मन और प्राण दोनों की संधि करनी होगी। इसी का नाम हमारे यहाँ सांयकाल सूर्य और रात्रि का मिलान होता है, सन्धि है। इसी प्रकार जहाँ मन और प्राण दोनों की सन्धि होती है उसका वास्तविक नाम वास्तविक संध्या कहा जाता है।

बेटाआज का हमारा विषय जो आज से तृतीय समय में प्रारम्भ हुआ था वह समाप्त ! होने जा रहा है। आज हम गृह निर्माण चाहते हैं। गृहमें प्रविष्ट होने वालों का कितना विकास होना चाहिए, कितनी आकुंचता चाहिए यह सब कुछ विचार विनिमय करते हुए, प्रभु के चिन्तन में संलग्न होते हुए आत्मिक शान्ति के लिए प्रेरित होते चले जाएं। समय मिलेगा तो शेष चर्चायें कल प्रकट कर सकेंगे।

पूज्यपाद महानन्दः धन्य हो भगवन वाक्य तो बहुत ही सुन्दर परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म। !

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्यसमय मिलेगा तो शेष चर्चा इससे आगे कल !चलो बेटा ..... प्रकट कर सकेंगे। आज के वाक्यों का अभिप्राय यह है कि हम संसार में अपने

जीवन को किस प्रकार उत्थान में ले जाना चाहते हैं। दर्शनों में पहुंचाना चाहते हैं मानव जीवन का दिग्दर्शन चाहते हैं वह मन और प्राण को जानने से ही प्राप्त होता है। न जानने से संसार में कुछ नहीं जानते। अब वेदों का पाठ होगा इसके पश्चात् वार्त्ता समाप्त।

३१ अतिथि 001 पुष्प 09 उदारता

जीते रहो, देखो, मुनिवरोंअभी अभी हमारा पर्य !यण समय समाप्त हुआ। आज हम पुनः की भाँति कुछ वेद मन्त्रों का गान गा रहे थे। आज से पूर्व हमने कहा था कि जो हमारा वेद पाठ चल रहा है वह यजुंषि मुनि संहिता के मन्त्रों का पाठ चल रहा है। वह संहिता भी बड़ी महान है और उदारता के लिए हमें बारम्बार प्रेरित कर रही है। आज का पाठ वेद पाठ हमें पुनः से उदारता के लिए संकेत कर रहा है। मैंने कल भी उदारता के सम्बन्ध में कहा था।

मेरे प्यारे आओ !ऋषि मण्डल !ओर उस प्यारे प्रभु का गुणगान गाएं, जिसने इस महान संसार को रचा है। हे प्रभुतू वास्तव में हमें नि !यन्त्रण में धारण करने वाला है, संसार का कल्याण करने वाला है। हे परम देवआप इतने परम देव हैं !,कि आपके जो गुणगान गाता है, वह महान आनन्दित हो जाता है और सर्वोपरि हो जाता है।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझे संकेत कराया, कि पूर्व के मानव से आज का मानव बहुत विशेषज्ञ माना गया है और इन्होंने कहा कि आज का विज्ञान बहुत ऊँचा है, खान पान और व्यवहार के सम्बन्ध में ऊँची विचारधाराएं बना रहा है। परन्तु आज का मानव पूर्व के वाक्यों पर दृष्टि नहीं पहुंचाता, तो हमें ज्ञान ही कैसे हो सकता है, कि पूर्व यह संसार कितना ऊँचा था? आज से लाखों वर्ष पूर्व यह संसार कितना ऊँचा था? आज हमें संसार की तुलना नहीं करनी है, हमें तो यह उच्चारण करना है, कि मानव का विकास विद्या के द्वारा होता है, उदारता के द्वारा होता है। आज का मानव कितना पवित्र है, यह तो कल मेरे प्यारे महानन्द जी उच्चारण करेंगे, आज मुझे यह आदेश नहीं देना। मुझे तो केवल यह उच्चारण करना है, कि आज हमारा वेद पाठ क्या कर रहा था।

वेद वाणी

आज हमें बारम्बार वेद वाणी से संकेत मिल रहा है। हे वेद वाणीतू कल्याण करने ! वाली है। तू यह वेद वाणी है, जो सृष्टि में प्रारम्भ से संसार के कल्याणार्थ आई। हे वाणीतेरा जो अनुकरण करते हैं !, उनका वास्तव में कल्याण होता है। तू वह वाणी है, जो चन्द्रमा और सूर्य को प्राप्त हुई। हे वाणी तू वह वाणी है, जिसने यह संसार रचाया है। तू बड़ी उदार और पवित्र है। संसार में जो तेरा अनुकरण करते हैं, वह बड़े ऊँचे और पवित्र बन जाते हैं। वही उदार होते हैं।

हे परमात्मनमैं यह नहीं जान पा रहा था !, कि मैं उदार कैसे बन सकता हूँ? मेरी उदारता कहाँ है? आज मैं उदारता को पुकारता चला जा रहा हूँ। हे परमदेववह ! उदारता कौन से पदार्थ में है। वह उदारता तेरे गुण गान में है, या अपने मानव जीवन बनाने में है। उदारता आएगी या ऋषि मुनियों के सत्संग से प्राप्त होगी? हे प्रभुतू ! उदार बनाने वाला है, यह मुझे निश्चय हो चुका है। प्रभु उदारों के उदार आप है। यह संसार आपने रचा है। नित्य प्रति इसको चला रहे हैं, मानव आपको स्वीकार करें न करे, परन्तु आप अपने कर्तव्य को नहीं त्यागते। आपकी उदारता का आज संसार में कोई प्रमाण नहीं। आज हम तेरे रचाए हुए पदार्थ को अशुद्ध बनाते रहते हैं। परन्तु प्रभु! तू इतना उदार और पवित्र है, कि प्रातः काल में उसी पदार्थ को शुद्ध और पवित्र दे देते हैं। प्रातः काल में मानव को जीवन देते हैं। रात्रि में निद्रा अवस्था में उसे आनन्द देते हैं। उस प्रभु को कोई मानो या न मानो, परन्तु वह प्रभु अपनी उदारता में सूक्ष्मता नहीं करता। उसकी उदारता इतनी पवित्र है। नास्तिक हो, आस्तिक हो, परमात्मा की सृष्टि पर विचार करता हो, न करता हो, परन्तु वह अपनी उदारता में सूक्ष्मता नहीं करता।

उद्बोधन

हे मानवआज तूझे भी उदार बनना है और कैसा उदार बनना है !, कि संसार में कोई मान करे या न करे, परन्तु तू अपनी उदारता को न त्याग। यदि कोई तेरा अपमान कर रहा है और तू अपनी उदारता को त्यागता है, तो मानो तेरी मानवता शान्त हो

जाएगी। तुझे अपनी उदारता की रक्षा करनी होगी, यह लोकेष्णा ऐसी है, कि मान अपमान में आ करके, तेरी उदारता को सूक्ष्म बना सकती है। आज तुझे इन तंरगों में पार होना है। समुद्र में आई हुई इन तंरगों में आ गया, तो तू डूब जाएगा और ऐसे समाप्त हो जाएगा, जैसे जल के न रहने पर मीन शान्त हो जाती है। हे मानव तू अपनी उदारता को न त्याग।

माता का प्रिय बालक है, माता को नाना कष्ट देता है, एक एक वार्त्ता कई समय प्राप्त करता है परन्तु माता अपनी उदारता को नहीं त्यागती। यदि माता अपनी उदारता को त्याग देती है,तो पुत्र का जीवन बड़े कष्ट में हो जाता है। इसी प्रकार हे मानवजब ! तू अपनी उदारता को त्याग देता है, उस समय नाना प्रकार की आपित्तयां, तेरे समीप आ जाती हैं। तेरा किया हुआ कार्य पाप मूल बन करके, तेरे समक्ष आ जाता है। तेरा मानव जीवन, मानव जीवन नहीं रहता।

मुनिवरोंमैं उच्चारण ! कर रहा था कि परमात्मा अपनी उदारता नहीं त्यागता। नास्तिक हो, आस्तिक हो, दुराचारी हो, कोई भी हो, परन्तु वह अपनी उदारता को नहीं त्यागता और यह कहते हैं प्रभु की यह मानव अब भी मानेगा और इस रचाई हुई सृष्टि का अनुकरण करेगा, जिसे यह लेकर आया है और इन उद्देश्यों का पालन करेगा, परन्तु यह मानव इतना विचित्र है, कि उस प्रभु की याचना को इस प्रकार स्वीकार कर लेने के पश्चात् भी, यह मानव मानव नहीं रहता और किसी काल में अमानव बन जाता है।

कोई तेरा मान करता है तू आंनदित हो जाता है और तू कहता है कि मानव बड़ा प्रिय है परन्तु जो तेरा अपमान करता है उससे तुझे द्वेष हो जाता है। हे मानवजो ! तेरा अपमान करता है, वह भी तुझे संकेत कर रहा है, क्यों कर रहा है? जिससे तू अभिमानी न हो जाए। आज कोई मानव तेरा अपमान कर रहा है तो अपमान को अपने में धारण कर। यदि तूने अपमान को सहन नहीं किया, तो तू अभिमानी बन जाएगा और अभिमानी बन करके, तेरी मानवता समाप्त हो जाएगी। उदार बनना ही एक विशेषता है। उदार बनने से मानवका कल्याण होता है उदार बनने से मानव ऊँचा

बनता है। उदारता में पहुँचने के पश्चात् ऋषि मुनि बन जाता है।

ऋषि और मुनि में अंतर

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया कि ऋषि और मुनि में क्या अंतर होता है इसका मैंने संक्षेप में उत्तर दिया, आज भी में इसका उत्तर दे सकता हूँ मुनि उसे कहते हैं जिसने अपने मन रूपी तंरगों को शान्त कर लिया है। मन रूपी तंरगों को बुद्धि में रमण कर दिया हो। ऋषि उसे कहते है, जो महान इस बुद्धि और आत्मिक विज्ञान का अनुकरण करने वाला और आत्मिक विज्ञान को पाते पाते इतना परिपक्व हो जाता है, कि विज्ञान को त्याग करके, वह परमात्मा के उस आनन्दमयी कोष में पहुँच जाता है, जिसके पश्चात् उसे ऋषि उपाधि प्राप्त हो जाती है। तो मुनिवरोंआज ! हमें ऋषि बनाना है।

एक समय माता गार्गी से ऋषियों ने प्रश्न किया कि हे मातातू वास्तव में बड़ी उदार ! है। परमात्मा का हर समय अनुकरण करती रहती है। संसार में उदारता का कोई प्रमाण नहीं है। उस समय माता ने कही किमैं तो कोई उदार नहीं हूँ। यदि मैं उदार बन जाऊं, तो मेरा कल्याण हो जाएगा। मुनिवरोउसने इतना उदार होने के पश्चात् ! भी यही कहा कि मैं उदार नहीं हूँ आज अपने को शुद्ध कहने में ही मानवता नहीं, परन्तु जब यह संसार हमें शुद्ध कहेगा, तब हमारी मानवता है। आज हम अपने को यह विचार लगाए बैठे है। एक पापी मुनष्य भी कहता है कि मैं कोई पाप नहीं करता परन्तु मन के ऊपरी स्थान से कहता है। उसका अन्तःकरण इतना बड़ा अभिमानी है। अरे,जब तू अन्तःकरण से पापी पुकार रहा है तो तेरे द्वार पाप कहाँ रहा। पाप तो ! उस काल तक तेरे द्वारा जब तक तेरे द्वारा एक एक प्रदर्शन है। प्रदर्शन वह पदार्थ है, जो ऊपर ले स्थान से कहा जाता है। हमें प्रदर्शन नहीं करना है, भावनाओं से वाक्य उच्चारण करना है। अब आंतरिक भावनाओं से वाक्य उच्चारण करेंगें, तो हमारा प्रदर्शन समाप्त हो जाएगा। प्रदर्शनी हमारा जीवन नहीं है, जीवन तो हमारा यथार्थता और उदारता है। हम अपने को उस समय सुंदर कह सकते है, जब धन्य हम उस प्रभु की गोद में चले जाए। उस समय हम कह सकते है, कि हम पवित्र हैं, उदार हैं। परन्तु

जब तक हमने उस प्रभु के आँगन को देखा ही नहीं, उस प्रभु की सृष्टि पर विचार ही नहीं किया, उस पर अनुकरण नहीं किया और हम कहते हैं कि हम विचित्र भी और पवित्र भी है, सब ही कुछ हैं परन्तु कहने से मानव नहीं बनेगा। अरे, मानवतेरी ! उदारता, तेरी पवित्रता उस काल में है, जब तू प्रभु की गोद में चला जाएगा। माता का प्रिय बालक वही होता है, जो माता की गोद में रमण करता हुआ, आनंद को पान करने वाला हो। इसी प्रकार वही आत्मा ऊँचा, उदार औरा पवित्र होता है, जो प्रभु की गोद में जाता है।

वेद का प्रकाश

आज हम भी उदार बनने के लिए बड़े जिज्ञासु है परन्तु बनेंगे कैसे? उदार बनने का हमारे द्वारा कौन सा कार्य है? उदार बनने वाले वह होते है, जो नाना प्रकार की आपत्तियों को सहन करते हैं। सूर्य कितना उदार हैं प्रातः काल से सायं काल तक प्रकाश देता है प्रातः का सूर्य उदार, सायं का सूर्य का उदार। प्रातःकाल में हमें जीवन देता है, ज्योति देता है और आनन्दित कर देता है। चन्द्रमा हमें अमृत प्रदान करता है, शीतलता देता है, वह कितना उदार और पवित्र है। सर्वज्ञ रात्रि अमृत प्रदान करता रहता है। कृषि करने वाले वैश्यों की कृषि को उपजाऊ करता है और उसमें अमृत प्रदान करता है। माता के गर्भ स्थल में रहने वाले प्रिय पुत्र को भी अमृत देता है। देवगण प्रभु का चिन्तन करते है, उन्हें भी चन्द्रमा अमृत देता है। अमृत पान करके यहाँ मानव देवता बन जाता है। वेद हमें अमृत की शिक्षा दे रहा है। तुम अमृत को पान करो। वेद हमें देता ही क्या है? वेद हमें प्रकाश देता है। वेद नाम ही प्रकाश का है।

मुनिवरों हमारे द्वारा नाना समस्याएं हैं। बहुत से मानव यह कहते !है, कि चारों वेदों का नाम प्रकाश है। क्या चारों वेदों में चार प्रकाश हैं? परन्तु नहीं। वेद नाम ज्ञान का है। ज्ञान विज्ञान का नाम वेद है। वेद एक प्रकाश है। आज हमें प्रकाश में पहुँचना है। चारों वेद तो उसका अनुकरण कराते हैं, नाना प्रकार का ज्ञान विज्ञान देते हैं, परन्तु वेद एक ही होता है। वेद कहते है प्रकाश को। प्रकाश एक है, परमात्मा एक है,

प्रकृति एक है और यह सब कुछ एकता बन करके ही हमारा कल्याण कर रहे हैं। आज हमें पुनः से विचारना चाहिए और देखना चाहिए कि हमें कौन से मार्ग को जाना है। कौन से मार्ग के हम जिज्ञासु बने?

मैं कल महानन्द जी से प्रार्थना करूंगा कि वे भक्ष्य अभक्ष्य के सम्बन्ध में कुछ कहें। मुझे इस सम्बन्ध से केवल इतना उच्चारण करना है कि मानव को दुर्गन्धिदायक पदार्थों को पान नहीं करना चाहिए। उन पदार्थों को पान करना चाहिए, जिनमें सुगन्धि हो। जो सुगन्धि का आहार करता है, वह मानव पवित्र होता है, उसके अंग अंग में सुगन्धि उत्पन्न होती है और जो दुर्गन्धि वाला पदार्थ पान करता है, उसके अंग अंग से दुर्गन्धि आती है और दुर्गन्धि आ करके उसकी मानवता समाप्त हो जाती है। आज हमें सुगन्धिदायक पदार्थों का पान करना है। जब हम सुगन्धिदायक पदार्थ ग्रहण करेंगे, तो हमारे प्राणों का ऊँचा सञ्चार होगा। जब ऊँचा सञ्चार होगा, तो हम ब्रह्मचारी रहेंगे और जब हमारे अंदर ब्रह्मचर्य होगा, तो हम भी उदार होंगे। आहार व्यवहारों से हम उदार बनते है। जब हम मधु पदार्थ पान करते हैं, तो हमारी रसना मधुमय हो जाती है, हमारा आनंद मधुमय हो जाता है। जब दुर्गन्धिदायक पदार्थ पान करते हैं, तो मन कहता है, कि इसमें दुर्गन्धि है, परन्तु रसना का जो आनंद है, वह सुगन्धिदायक पदार्थों का पान नहीं करने देता, क्योंकि उसने अपने कर्त्तव्य के पालन को त्याग दिया है और रसना के आनंद में बड़ा ललाहित हो रहा है और ललाहित हो करके अपने कल्याण की वस्तुओं को एकत्रित कर रहा है।

मुनिवरोंआज हमारी संस्कृति क्या कह रही है !? संस्कृति हमें उदारता का पाठ पढ़ा रही है। आज हमे संस्कृति पर बल देना चाहिए। भगवान राम ने संस्कृति के ऊपर कितना बल दिया। उन्होंने संसार में अपनी संस्कृति का प्रसार किया। राजा रावण का राष्ट्र इस सर्वज्ञ संसार में फैलाया जा रहा था। इन्द्रपुरी को उसने विजय किया। पातालपुरी में अहिरावण राज्य करता था, नारायन्तक तक वह खर दूषण भी द्वितीय राष्ट्रों में राज्य करते थे। तात्पर्य यह कि उसने सब पर राज्य किया, परन्तु उसके द्वारा उदारता नहीं थी। भगवान राम ने सबको नष्ट कर, अपनी संस्कृति का प्रसार किया,

तो यह संसार सब उदार और पवित्र बन गया। आत हमें उदारता और पवित्रता को लाना है तो हमारी संस्कृति से आएगी।

हमारा वेदों का एक एक मन्त्र उन भावों से भरा हुआ है, जहाँ देव पूजा आती है, यज्ञ कर्म आते हैं, सब ही कुछ आता है। जहाँ हमारे आचार्यों ने बुद्धि की याचना की हो, वहाँ कितनी ऊँची संस्कृति है, कितना ऊँचा ज्ञान और विज्ञान है। हे मानवप्रातःकाल ! में परमात्मा से तू बुद्धि के लिए चिन्तन कर। तेरे द्वारा बुद्धि आएगी। जब तेरे द्वारा बुद्धि होगी, तो तेरे द्वारा मानवता होगी। बुद्धि तेरी विकासदायक होगी और महान कल्याण करने वाली बनेगी। आज तुझे बुद्धि से कार्य करना है। बुद्धि से ही तुझे मानव बनना है।

हे मानवआज तुझे मान अपमान में नहीं जाना। यह संसार तो ऐसा है !, कि यहाँ तो परमात्मा का भी अपमान होता है। यदि परमात्मा मनुष्य बन जाए, तो परमात्मा को कोई मनुष्य नहीं कह सकता। यह संसार तो ऐसा विलक्षण है। आज संसार के मान अपमान में न जाओ। यह तो ऐसा, कि आज जिस मानव की पूजा कर रहे हैं, ऊँची दृष्टि में देख रहे है, उसे अपने पगों से कुचल सकता है और जिसे आज हम नष्ट करने की सोच रहे है, उसकी पूजा भी कर सकते हैं। तो यह संसार तो ऐसा है। संसार के उस आँगन में न जाओ, जहाँ तुम मान अपमान से पीड़ित हो जाओ। उस आँगन को जाओ, कि मान हो, तो कुछ नहीं, परन्तु अपमान हो तो महान है। अपमान को सहन करने वाला मनुष्य ऊँचा बनता है। मान को ग्रहण करने वाला अभिमानी बन करके, संसार में विनाशता को प्राप्त हो जाता है। आज हमें विनाश के पदार्थों को एकत्रित नहीं करना है। उस क्षेत्र में जाना है, जहाँ न मान है और न अपमान है। वह क्षेत्र है ज्ञान, वह हमारा क्षेत्र है उदारता। उदार बनेंगे, तो हम ज्ञान के द्वारा बन सकेंगे। जब ज्ञान से मनुष्य उदार बनता है, तो मनुष्य के द्वारा उदारता आती है, न मान होता है, न अपमान होता है। वह मनुष्य विचित्र होता है।

मुनिवरोंभगवान कृष्ण कितने उदार थे। उनके मुखारविन्द पर उनकी निंदा होती थी !, दुष्ट कहा जाता था, परन्तु वह इतने उदार थे, कि सभी वार्त्ताओं को सहन करते और

आज संसार में वे पूजनीय हैं। यह उनकी उदारता का फल है। जब मनुष्य संसार में उदार बनकर रहता है, तो संसार में उसकी पूजा होती है। कहते हैं कि एक समय याज्ञवल्क्य महाराज तपस्या में थे। कुछ ऋषि आए और तपस्या में ललाहित देख पुष्प आदियों से उनका स्वागत किया। उस समय कुछ ऐसे दैत्य आए, कि उन्होंने पुष्पों को भी लिया और ठोकरों से ठुकरा दिया। याज्ञवल्क्य के मन में मान हो गया, कि वह ऋषि तो तेरी पूजा करके गए थे। परन्तु पापियों ने क्या किया और अपने मुखारविन्द से कहा, कि अरे, महापापियोतुम्हारा विनाश हो। वह वहाँ से बहते हुए ! माता गार्गी केद्वारा जा पहुंचे और माता से कहा कि आज मैंने वह तपस्या की हैं कि ऋषि भी मेरी पुजा कराते है माता गार्गी के आँगन में अपमान की वार्त्ता भी आ पहुँची थी। उन्होंने कहा कि हे ऋषिज !ो ऋषि तेरी पूजा करते हैं वह दुराचारी हैं, परन्तु कुछ मनुष्य तुम्हें ठुकराते भी है, उनके विषय में तुमने क्या विचार किया है। याज्ञवल्क्य बोले देवी !मैंने उनसे कहा है, कि तुम्हारा विनाश हो जाए। माता ने कहा तभी तो तेरा विनाश होगा, जो दूसरों के विनाश के लिए योजना बनाता है।

महर्षि लोमश

याज्ञवल्क्य को बड़ा आश्चर्य हुआ, कि इस महान देवी ने क्या कहा है। वहाँ से वह महर्षि लोमेश मुनि के द्वार जा पहुंचे। लोमेश मुनि बोले कि इस समय मुझे प्रतीत हो रहा है कि आप बहुत चिंतित हो रहे हैं। तब उन्होंने कहा कि मैंने अपनी पत्नी से कहा है, कि ऋषि मेरी पूजा करते हैं और जिन्होंने मुझे ठुकराया है उन्हें मैंने विनाश के लिए वाक्य कहा है। महर्षि बोले कि महाराज! आपने यह बड़ा कटु शब्द कहा है। यह नहीं उच्चारण करना चाहिए था। जब मानव मान अपमान में आ गया, तो उस समय ऋषि का ऋषित्व समाप्त हो जाता है। आज तेरा ऋषित्व कहाँ है जब तू मानियों में मानी है और अपमानियों में अपमानी है।

महर्षि लोमेश के जीवन की घटना मैं पूर्व उच्चारण कर चुका हूँ। आज भी स्मरण आ गई। कहते हैं कि एक समय महर्षि लोमेश एक सूक्ष्म सा आसन लिए भ्रमण कर रहे थे। उस समय कुछ आदि ऋषियों ने उनकी पूजा की और कुछ ने अपमान किया।

ऋषि एक रस रहे और आनन्द से मार्ग चलते रहे। उन्होंने उस मार्ग को अपना लिया था जिसमें कोई बाधा नहीं थी। जब वह आसन लिए जा रहे थे, तो महर्षि पापडी मुनि महाराज उनसे बोले कि महाराज यह क्या है? यह आसन आप क्यों ले रहे हैं? वह बोले यह आसन इसलिए ले रहा हूँ, कि जब मेरी इच्छा होती है, इस पर विराजमान होकर विश्राम कर लेता हूँ। उन्होंने कहा कि महाराज आपको विश्राम की आवश्यकता क्यों है? लोमेश बोले महाराजसूक्ष्म ! सी अवस्था है, जिसके लिए मैंने एक सूक्ष्म सा आसन ले लिया है, और उस आसन को अपनाया है, जो मान और अपमान दोनों को सहन करने वाला आसन है। मैं इस आसन को जो चुभने वाले पदार्थ हैं, वहाँ गिरा देता हूँ। वह मेरे नहीं चुभते और जहाँ पुष्प होते हैं, वहाँ इसको विराजमान कर देता हूँ, तो पुष्प मुझे अपनाते नहीं। आज मैं मान अपमान को नहीं अपनाना चाहता।

ऋषियों ने कहा कि महाराज इस आसन को लेने के लिए आपकी कितनी अवस्था है? उन्होंने कहा कि मेरी इतनी अवस्था, कि संसार में, जिसको ब्रह्म कहते हैं और उसका जो दिवस है, और जब उसकी सौ वर्ष की अवस्था हो जाती है, तो उसके पश्चात् मेरे शरीर का एक लोम शान्त हो जाता है। ऋषि बड़े आश्चर्य से बोले कि महाराज आप कैसे लोमश है? उन्होंने कहा कि मैं वह लोमश हूँ, जो प्रभु के आँगन के लिए ललाहित रहता हूँ। आज मुझे मृत्यु का भय नहीं, मान अपमान का भय नहीं।

मुनिवरोयह क्या है !? यह मुक्ति का प्रकरण है। किसी द्वितीय काल में इसे प्रकट करूंगा। जहाँ मनुष्य में मान अपमान व्यापता है, वहाँ मनुष्यत्व समाप्त हो जाता है, ऋषित्व नहीं रहता। वहाँ केवल राजस्वी भाव आ जाता है। आज हमें राज्य के काण्ड को नहीं जाना है। आज तो हमें आध्यात्मिक विज्ञान के काण्ड में जाना है, ज्ञान का प्रदर्शन करना है, जिससे हमारा विकास होगा, जीवन ऊँचा बनेगा।

देखो, याज्ञवल्क्य का वाक्य चल रहा !था। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज पुनः से तपस्या में आरूढ़ हो गए। कहते हैं कि अखण्ड तपस्या के पश्चात् उन्होंने मान अपमान को

शान्त करने का प्रयत्न किया। उसके पश्चात् जहाँ भी याज्ञवल्क्य मुनि महाराज उपदेश देते, वहाँ मान अपमान लिए पूर्व उपदेश देते थे, कि मान अपमान को सहन करने वाले बनो। मान आए, तो उसमें अधिक आनन्दित न हो जाओ और अपमान आए, तो उसमें दुखित न हो जाओ। यदि दोनों आ गए, तो तुम्हारा विनाश हो जाएगा।

गुरुदेव का जीवन

बेटाउच्चारण करते करते कितनी दूर चले ग !ए। उच्चारण कर रहे थे, कि परमात्मा कितना उदार और पवित्र है। मेरे प्यारेऋषि मण्डल !! आओ, और उस प्रभु की उदारता की महिमा का गुणगान गाए। मुनिवरोयज्ञशा !ला में विराजमान होने वाला, यज्ञमान कितना उदार होता है, कितना पवित्र होता है। यज्ञशाला में ब्रह्मा वह बनाता है, जो महान उदार हो। उदार ब्रह्मा संसार में कल्याणकारी होते हैं। कहा जाता है, कि जिस समय महाराज दशरथ पुत्रेष्टि यज्ञ करने के लिए, श्रृंगार ऋषि को कजली वन में लाए, वह कितने उदार थे। उस समय वह 284 वर्ष के अखण्ड ब्रह्मचारी थे। उदार इतने थे, कि जब कजली वन से आए, तो उन्होंने मनुष्य और मेरी प्यारी माताओं व देव कन्याओं को नेत्रों की ज्योति से दृष्टिपात नहीं किया था। अपने गुरु और अपने पिता के सिवाय उन्होंने इस संसार में कुछ नहीं देखा था। आए और अयोध्या के रहने वाले मनुष्यों और माताओं के सबके चरणों में ओत प्रोत हो रहे थे, और उच्चारण कर रहे थे, कि तुम कितने उदार और सुन्दर हो। अयोध्या को देव लोक कह कर उच्चारण कर रहे थे। यज्ञशाला में विराजमान कराया तो यज्ञशाला को देखो, सामग्री से कहा कि तू बड़ी उदार है। राजा के चरणों में कहता था, कि तुम बड़े देवता हो, परन्तु राजा लज्जित हो जाता। उदारता और विवेक से पुत्रेष्टि यज्ञ कराया गया और वह सम्पन्न हुआ।

मुनिवरोजब यह उदारता मानव के द्वारा होती है !, तो यज्ञ भी सम्पन्न होते हैं। राजा के द्वारा उदारता होती है, तो राजा का राष्ट्र भी पवित्र होता है परन्तु आज राजा के द्वारा यह उदारता नहीं। राजा के मन में इतना बल, इतनी उदारता और पवित्रता होनी चाहिए, कि वह जो भी वाक्य उच्चारण करे, वह इतना प्रभावशाली हो, कि प्रजा

को, राष्ट्र को ऊँचा बनाता चला जाए। राजा की उदारता क्या है? राजा की उदारता है अपनी रक्षा करना, अपने राष्ट्र की रक्षा करना। संसार में जो भी कर्त्तव्य का पालन करता है, वह उदार होता है।

सुखदेव

कहते हैं कि एक समय महर्षि व्यास अपने पुत्र सुखदेव को शिक्षा दे रहे थे। पुत्र ने पिता से पूछा कि भगवनमुझे गुरु किस काल में मिलेगा !? ऋषि ने सोचा कि यह मुझे अपना गुरु नहीं मान रहा है। इसलिए उससे कहा कि तुम राजा जनक के द्वार पर जाओ, वह तुम्हारे गुरु बनेंगे। इस वाक्य को पान करके वह वहाँ से जनक नगरी में जा पहुंचे, और द्वारपाल से कहा कि राजा से कहो, कि एक सेवक आया हुआ है। द्वारपाल ने राजा से जा कहा, राजा जनक ने योगबल से देखा, कि अरे,यह तो ! सुखदेव आया हुआ है और कहा कि उसे वहीं रहने दो। कहते हैं, कि उन्हें उसी प्रथम द्वार पर एक दिवस और एक रात्रि हो गई, परन्तु स्थिर रहे। उदारता उनके अंतःकरण में समाहित हो चुकी थी।

द्वितीय काल द्वारपाल ने राजा जनक से कहा कि महाराज! वह तो वहीं स्थिर है। उन्होंने कहा कि अच्छा आने दो। द्वारपाल ने आज्ञा दी, परन्तु द्वितीय द्वार आया, तो द्वितीय द्वारपाल से कहा कि इसे यहीं रहने दो। द्वितीय द्वार पर एक दिवस और एक रात्रि इसी प्रकार स्थिर रहे, अपनी उदारता को भंग नहीं किया। तृतीय समय हुआ तो द्वारपाल से कहा कि इसे तुम स्थिर कर लेना। वहाँ भी वह एक दिवस और एक रात्रि, इसी प्रकार स्थिर रहा। अन्त में राजा के द्वार जा पहुंचा और राजा के चरणों में ओत प्रोत होकर कहा, कि भगवनमुझे ज्ञान दो। उसके लिए मैं आपकी शरण में ! आया हूँ।

मुनिवरोमान अपमान नहीं था। इतने परम हंस जिसका कोई प्रमाण नहीं। अब ! राजा ने सोचा कि एक तो इसकी परीक्षा हो चुकी, परन्तु एक परीक्षा रह गई है। उन्होंने एकांत में स्थिर कर दिया और नाना अप्सराओं से कहा, कि इसकी परीक्षा करो। उस समय नाना अप्सराएं नग्न होकर के उस ऋषि बालक के द्वार पर पहुंची

और उसे नग्न कर दिया, परन्तु वह उदारता में डूबे हुए थे, वैराग्य हो चुका था, परमात्मा में ललाहित था, उसके आनन्द में मग्न था, वह उसी प्रकार रहा और रात्रि समाप्त हो गई। राजा जनक ने सब अप्सराओं से पूछा, तो कहा कि महाराजआपने ! हमें कहाँ स्थिर कराया, वह तो इतना उदार है, कि उसकी उदारता का कोई प्रमाण नहीं। राजा प्रसन्न हुए और सुखदेव से कहा कि तुम अब योग्य हुए। बालक उस रात्रि तुमने क्या देखा? उन्होंने कहा कि प्रभु! मैं कुछ नहीं देख रहा था, केवल यह देख रहा था, कि आज तेरे समक्ष तुझे नष्ट करने वाली मृत्यु तेरे निकट आ रही है। मैंने इन नेत्रों से और कुछ पान नहीं किया। आज मैं आपकी कृपा से मृत्यु से विजयी बन गया हूँ।

मुनिवरो इसका !नाम उदारता है। संसार में उदार वह हो सकता है, जो ज्ञान में डूबा हुआ हो। आज हम प्रभु से याचना कर रहे थे, कि हे प्रभुतू मुझे अपनी उदारता दे ! और उदार रहूँगा, तो संसार में कुछ कर सकूंगा| यदि मेरे द्वारा उदारता न रही, तो प्रभुमेरा जीवन नष्ट हो जाएगा। यह है आज का हमारा उपदेश। अब यह समाप्त ! “ होने जा रहा है।

पूज्यपाद महानन्दः ‘‘भगवनअभी तो आपका समय भी नहीं हुआ है। !’’

पूज्यपाद गुरुदेवः”नहीं, महानन्द जीसमय समाप्त हो चुका है। तुम्हें यह वाक्य ! उच्चारण करने का अभ्यास हो चुका है।“

पूज्यपाद महानन्दः “अच्छा भगवनतो कल प्रभु। !“

पूज्यपाद गुरुदेवः “जैसी इच्छा हो।“

पूज्यपाद महानन्दः “भगवनकल तो इच्छा थी कि कल आप हमें समय देंगे ही। !“

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..... “बेटाजैसी तुम्हारी इच्छा हो। !“

पूज्यपाद महानन्दः “अच्छा भगवन कल !आप अवश्य समय देंगे।“

तो मुनिवरोकल के लिए मेरे प्यारे महानन्द जी बहुत ही मग्न हो रहे हैं। कल मेरे ! प्यार महानन्द जी के उदारता पूर्वक विवेक सहित वाक्य होंगे। मैं महानन्द जी से कहूँगा, कि यह कटु शब्द न कहें। भक्ष्य अभक्ष्य के सम्बन्ध में उदारता में डूबे हुए

वाक्य उच्चारण करे। इनके वाक्य किसी काल में तो मुझे बड़ा प्रिय लगता है, कल देखेंगे, कि इनका कितना प्रिय वाक्य होता है।

तो मुनिवरोअब आज का हमारा आदेश समाप्त हो गया। कल मेरे प्यारे महानन्द जी ! बहुत ही ऊँचा आदेश देंगे। अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात् वाक्यसमाप्त।